स्वाधीनता प्राप्ति के बाद
उत्तरप्रदेश के कछार-अंचल की
समस्याओ, सम्बन्धों तथा
मूल्यो के तनाव, विघटन और
जीवन संघर्षों का
सजीव चित्रण





# जल टूटता हुआ

रामदरश मिश्र

मूल्य १५ रुपये



"इस जवार का जीवन भी तो जल ही है। लेकिन पहले एक साथ बहता था, बाढ़ में उमड़ता था, एक साथ गर्मी में सूखता था, एक था। अब तो नये-नये बाँध बँध रहे हैं उस जल के किनारे ये बाँध भी पोख्ता नहीं हैं, जगह जगह से दरक जाते हैं। जहाँ से दरकते हैं—थोड़ा पानी बह जाता है थोड़ा कहीं और दरकता है तो कुछ पानी और बह जाता है दूसरी दिशा को। और ये पानी कहीं मिल नहीं पाते, विपरीत या समानान्तर धाराओं में बहते ही चले जाते हैं हाँ टूट रहा है, तो यहाँ का जन। जो बराबर टूट रहा है। धारा धारा से बिछुड़ रही है, लहरें लहरों से टूट रही हैं बाँध हैं कि बँध रहे हैं लेकिन एक भी ऐसा नहीं, जो जल को समेट कर एक दिशा में प्रवाहित करे और उनमें से शक्ति उजागर करे बाँध जगह जगह दरक रहे हैं और जल टूट रहा है टूट रहा है।।"





# जल टूटता हुआ



रामदरश मिश्र



हिन्दी प्रचारक संस्थान
वाराणसी-१

JAL TOOTATA HUA
(Hindi Novel)
by
*Ram Darash Mishra*

संस्करण प्रथम
(२१००)
अक्तूबर १९६६

मूल्य
पन्द्रह रुपये मात्र

प्रकाशक
विजयप्रकाश बेरी
हिन्दी प्रचारक संस्थान
(व्यवस्था : कृष्णचन्द्र बेरी एण्ड सन्स)
पो बॉक्स नं १०६ पिशाचमोचन, वाराणसी-१

मुद्रक
दुर्गा प्रेस
पाण्डेय पुर, वाराणसी-२

अजू, शशी, बब्बे, बन्नो

को



# यह उपन्यास

'जल टूटता हुआ' अप्रैल १९६५ में पूरा हो गया था, किन्तु इसकी नियति देर से ही प्रकाशित होने की थी। यही मानने में सन्तोष है, नहीं तो इसके विलम्ब के साथ कुछ ऐसे भद्र चेहरे जुड़ कर सामने आ जायेंगे, जो लेखकीय स्वतन्त्रता और स्वाभिमान की रक्षा के लिए लेखक से प्रकाशक बन जाते हैं या प्रकाशन संस्थाओं से जुड़ जाते हैं और फिर स्वयं प्रकाशकों के उन्हीं जाने पहचाने पतरों से गुजरने लगते हैं। उनकी स्वाभिमान और स्वतन्त्रता की लड़ाई अपने ही तक सीमित रह कर एक सुखद व्यवस्था में बदल जाती है।

इस उपन्यास के बारे में मुझे कुछ विशेष नहीं कहना है, वह स्वयं कहे तो बेहतर! अपनी ओर से केवल इतना ही कि स्वाधीनता प्राप्ति के पश्चात् भारतीय गाँव के सम्बन्धों तथा मूल्यों के तनाव, विघटन और उसके जीवन-संघर्षों एवं व्यथा की कथा है—जल टूटता हुआ! इसका भू-भाग वही कछार-अंचल है जो 'पानी के प्राचीर' का है, किन्तु समय की चेतना दोनों को अलगाती है। इनके पात्र, इनकी कथाएँ, इनकी चेतना और संरचना सभी अपने अपने हैं। समय के फलक पर इन्हें एक भू-भाग का पूर्वार्द्ध और उत्तरार्द्ध कहा जा सकता है, किन्तु अपनी-अपनी सत्ता में सर्वथा स्वतन्त्र!

मैं अपने प्रकाशक मित्र कृष्णचन्द्र बेरी का बहुत आभारी हूँ, जो मेरी पुस्तक स्वीकारने, प्रकाशित करने और वितरित करने में सदैव मेरे लेखकीय स्वाभिमान का ध्यान रखते हैं।

१५-९-१९६९ —रामदरश मिश्र



जल : टूटता हुआ

•

# जल : टूटता हुआ

•

## : २ :

मास्टर सुगन तिवारी का पाँव जोर से फिसला, कीचड में गिरे और उनका सपना टूट गया ! आज १५ अगस्त है, आजादी की वर्ष गाँठ ! सुगन तिवारी—पडोसी गाँव—भाटपार के प्राइमरी स्कूल में हेडमास्टर है। स्कूल इंस्पेक्टर का आदेश है कि आजादी की वर्षगाँठ बडी शान से मनाई जाय। मास्टर सुगन ने कल स्कूल के सारे लडको को तीन बार आदेश दिया था कि कल साफ कपडे पहन कर आना। टोपी जरूर लगा लेना—नंगे सिर आना असभ्यता है और टोपी तो देश की इज्जत है। अगर लागो न टोपी ही उतार दी तो क्या बचेगा? कल राष्ट्रीय पर्व है, सभी लोग हँसी-खुशी के साथ आना।

'हाँ आज राष्ट्रीय पर्व है, सदियो की गुलामी की जंजीर टूटी था आज ही। गुलामी जो गरीबी हीनता, फूट, अनैतिकता की जड है। आजादी आज ही मिली थी, आजादी जो सुख-समृद्धि, प्रेम, आशा, विश्वास की भोर है! इसी भोर के लिए देश के नेताओ ने बलिदान किया। स्वय वह भी दो बार जेल हो आया। आह! कितना उन्माद था उस बलिदान मे। बलिदानी की आँखों के आगे एक रंगीन भोर कहकहा उठती थी। एक बडी चट्टान जसे सर से उठ गयी। आकाश में अन्धकार उगलते हुए बडे-बडे बादलो के पहाड जसे पिघल कर बह गये। मास्टर सुगन की आखो के सामने हरे-भरे खेत, बाढ की छाती पर दौडती सडकें, खोहो-खाइया की पीठ पर बठे हुए अस्पताल, स्कूल आदि चमक उठते थे। आज भी मास्टर का वह सपना हारा नही है।

कहनेवाले लोग देश मे शत्रु है, कहते है कि देश को आजाद हुए कई साल हो गये मगर कही कुछ नहीं हुआ। नेता लोग कहते हैं कि ऐसा कहने वाले देश के दुश्मन है जनता को बहका कर उनके मन से आशा और विश्वास को दूर करते है। ठीक ही कहते हैं नेता लोग। सचमुच ये देश

वे दुश्मन हैं। दुश्मन नहीं होंगे, तो क्या यह कहने कि नेता लोग स्वार्थी हो गये हैं—पद के लोभी हो गये हैं ! भला यह भी कोई बात है। जो नेता देश के लिए जेल गये, घर-द्वार सब गँवा बैठे, बाल-बच्चा का मोह नहीं किया—वे ही स्वार्थी, पद-लोभी हो जाएंगे यह भी कोई बात है ? नेता लोग ठीक ही कहते हैं कि पाँच बरस पर तो आम का फल आता है, फिर इतने बड़े देश रूपी वृक्ष में इतने ही समय में कैसे फल आ जाएगा ? हाँ जरा सोचने की बात है। सदियों का अज्ञान गरीबी बेकारी इतनी जल्दी कैसे खत्म हो जायेगी ? सचमुच देश के लोगों में निराशा भरनेवाले देश के विरोधी हैं। इन नेताओं के हाथ में देश का भविष्य सुरक्षित है।

मास्टर सुगन तिवारी की आँखों के आगे फिर खुल पड़ी है—नयी नयी तस्वीरें, आजादी की भोर की तस्वीरें—लहलहाते हुए खेत बाढ़ की छाती पर दौड़ती हुई सड़कें अभयदान की मुद्रा में खड़े अस्पताल, प्रेम के रस से सिंचे हुए देश के गाँव-गाँव से उठते हुए समवेत-कंठों के गान, दूर-दूर तक फैली हुई जड़ता की चट्टानों को चप-चप कर जगह जगह से झरते हुए ज्ञान और विद्या के झरने आज उसी आजादी की भोर की वर्षगाँठ है ।

छपाक से मास्टर सुगन कीचड़ में गिरे तो उनके सपने छिटा गये उनके सामने जल और कीचड़ से बोझिल पगडंडी साकार हो उठी और पगडंडी के अगल-बगल खेतों के बलबलाते हुए घास की तीखी अनुभूति उन्हें चौंका गयी।

मास्टर ने ऐसी आँखों से अपने कपड़ों को देखा जो रोना चाह कर भी रो न सकती हों। क्या करें घर लौट जाएँ ? मगर घर जा कर क्या करेंगे, दूसरा कपड़ा कहाँ है ? सोडा से धो धो कर बड़ी मुश्किल से सुखाया था इसे। यह कमबख्त पानी सात दिनों से लगातार बरस रहा है, बन्द होने का नाम ही नहीं लेता। कितना कुछ किया गया ? गाँव

भर मे काना[1] को रस्सी में बाँध कर मारा गया। पता नही यह पानी क्या करेगा ? सुना है राप्ती नदी जोर से बढ रही है नाले भी उफ्न रहे है हाँ वह देखो दूर-दूर के नाला का उफनता हुआ सफेद जल दिखायी पड रहा ह। पता नही क्या हो ?

उस की इच्छा हुई कि वह घर लौट जाय, मगर स्कूल का हेडमास्टर जो ठहरा ! नही जायगा तो इस्पेक्टर तुरन्त ही बरखास्त कर देगा। उसने फिर एक बार कीचड से सने अपने कपडा को देखा, उसे रुलाई आ गई। परसाल भी उसके पास एक ही कुर्ता था, इस साल भी एक ही कुर्ता है। उसे याद आया—उसके पास कभी भी दो कुरते और तीन धोतिया नही हुइ।

वह तालाव की ओर बढ गया। बचा-बचा कर कीचड का साफ किया। चला गीला हो गया तो क्या, अब कोई यह तो नही कहेगा कि मास्टर गिर गया था—कपडे बारिश में भीग ही सकते है।

उसके मन मे फिर एक बार सपनो का तार जोटना चाहा, किन्तु कीचड की आशका ने सारे तारो को छिन्न भिन करके बिखेर दिया था।

उस की आखा के आगे दूर-दूर उफनते हुए नाले का सफेद जल दिखायी पड रहा था। बाढ की छाती पर लोटती हुई सडकें, सुख-समृद्धि, फूलती-फलती हरियालियाँ और

और क्या ? मास्टर को लगा जसे उसके पेट में कही एक तीखी ऐंठन हो रही ह हाँ यह ऐंठन ही ह, खाली अतडियाँ ऐंठेगी नहीं तो क्या करेंगी ? उसकी आँखा में बीता हुआ कल उतरा गया। हाँ, पाँच

१ गाँवा में ऐसा विश्वास ह कि यदि गाँव भर के काना के नाम ले-ले कर एक रस्सी में गाँठें मार दी जायें और उन गाँठा को पीटा जाय, ता पानी बन्द हो सकता ह।

दिन पहले वह बाजार से कुछ मटर और जौ ले आया था, जो एक शाम को खत्म हो गया। बच्चों ने लिया सा कुछ चट सा गया उस और उसकी पत्नी को भूखे पेट सो जाना पड़ा। तीन महीने से तनख्वाह नहीं मिली, खेत में कुछ हुआ ही नहीं उधार कब तक चला करेगा ?

"भारतमाता की जय! मास्टर सुगनचंद को देखते ही स्कूल चिल्ला उठे।

स्कूल क्या था एक पुराना मकान था दूर के एक बस्ती के चौधरी का मकान जिसे जिला बोर्ड ने किराये पर ले लिया था। बरामदे में कुछ गांव के नागरिक और लड़के इकट्ठा थे। बाहर धीरे धीरे पानी बरस रहा था और बरामदे के किनारे एक बांस में लगा हुआ भारतीय ध्वज पानी में भीग कर लथपथ हो गया था। मास्टर ने पहुँचते ही लड़कों से पूछा—अभी बाबू साहब नहीं आये ?'

'नहीं मास्टर साहब, नहीं मास्टर साहब!

मास्टर साहब ने एक बार लड़कों पर दृष्टि फेरी—सबके सिरों पर टोपियाँ थी जिनके पास टोपियाँ नहीं थी उन्होंने कागज की टोपियाँ बना ली थी लड़कों के कपड़ों में कोई फर्क नहीं था, हाँ पानी में धो लिये गये थे। जिन्होंने नहीं धोये थे, उनके कपड़ों को बरसात ने धो दिया था। लड़कों की गंदी देह पर बरबस हँसता हुआ चेहरा टँगा था। हाँ मास्टरजी ने कल कहा था न कि हँसी-खुशी के साथ आना। किन्तु हँसी को पहने हुए चेहरों के भीतर गीली-गीली आँखें छिप नहीं पाती थी। उन आँखों में अकथ-कहानियाँ भरी हुई थी—ये आँखें बहुत रोई हैं साफ कपड़ों के लिए, टोपी के लिए और इन्हें और कुछ मिला हो या न मिला हो, घरवालों के तीखे थप्पड़ जरूर मिले हैं। ये हँसते हुए चेहरे बरबस मास्टर साहब पर हँसी उछाल रहे थे। उन हँसियों की चोट लगते ही मास्टर को एक तीखी वेदना हो रही थी। उन्हें लगता था हर हँसी के पीछे एक उपवास है एक बेबसी है—और मास्टर के सामने बाजार कल की सूनी सांझ, उधार आदि के चित्र उभर आते। मास्टर

अपने गीले कपडो के स्पर्श में हर लडके के गीले कपडा को चुभती हुई अनुभूति झेल रहे थे।

लडके एकाएक जोर से चिल्ला उठे—'बाबू साहब आ रहे हैं—भारत माता की जै !'

मास्टर अपने ख्याला से चौंक पडे—उन्होंने देखा कि बाबू साहब का इक्का कच्ची सडक को धीरे धीरे कुचलता चला आ रहा है।

मास्टर साहब ने लडको को सावधान कर दिया कि बाब साहब के आते ही खडे हो जायें और स्वागत-गीत गा उठें।

सभी लोग सावधान हो गये थे। भारी भरकम देहवाले बाबू महीप सिंह हाथ जोडे हुए हँसते हुए उतरे और लडके गा उठे—

स्वागत है, हे लाल भारत के !

महीप सिंह ने आज फर्स्ट क्लास सफेद खादी का कुर्ता, जाकेट, धोती और टोपी पहन रखी थी। इस शुभ्र वेश में देवता लगते थे। लोग उन्हीं को निहार रहे थे। वे एक पुरानी आराम-कुर्सी पर पसरे हुए बैठे थे, और लडके गा रहे थे—

छोड दिया सारा सुख अपना
ताड दिया फूला का सपना
हे मुसकाते भाल, भारत के

मास्टर सुग्गन तिवारी मुग्ध हो कर यह सारा दृश्य देख रहे थे। बाबू महीपसिंह लडका के स्वागत-गान के ताल-ताल पर स्वीकृति सूचक सिर हिला रहे थे।

गाना खत्म हुआ। मास्टर सुग्गन उठ खडे हुए—

'भाइयो !

कौन नही जानता है कि आज पन्द्रह अगस्त है, आज ही के दिन देश आजाद हुआ था। हमारा खोया हुआ भाग्य आज ही वापस लौटा था। हम गुलामी में बसे अभागे, बेवकूफ और नीच हो गये थे

` ( लड़कों ने जोर से ताली बजाई। मास्टर ने निरीह नेत्रों से लड़कों की ओर देखा ) लड़के कुछ समझे नहीं। मास्टर आगे बढ़े—'और आज ही के दिन हमने अभाग्य अशिक्षा, गरीबी फूट का सारा भार उठा कर फेंक दिया था, आज हम आजाद हैं! आज के दिन इस जर-जवार के नामी जमींदार भारतमाता के सपूत दानवीर बाबू महीपसिंह ने पधार कर जो कृपा की है, उसके लिए हम लोग बड़े ही खुश हैं। आज के दिन के लिए बाबू साहब से बढ़ कर और कौन नेता हमें प्राप्त हो सकता था। आप सब जानते हैं कि बाबू साहब डिस्ट्रिक्ट बोर्ड के सदस्य भी हैं हमारे स्कूल के सबसे बड़े हितैषी! अब बाबू साहब आपसे कुछ कहेंगे।'

मास्टर बैठ गये। बाबू साहब धीरे धीरे उठे और खाँस-खूस कर बोले—'भाइयो! आप लोगों ने मुझे आज सभापति का काम सौंपा है मैं तो एकदम इसके अयोग्य हूँ

( लड़के जोर से तालियाँ पीटने लगे। एक मास्टर जोर से बोल उठे अरे हाँ-हाँ, यहाँ नहीं ताली पीटते हैं!' पर लड़के कुछ नहीं समझे )।

खैर कोई बात नहीं मैं तो जनता का सेवक हूँ। आपने बुलाया, चला आया। ( कुछ खाँस कर ) आप जानते हैं आज पन्द्रह अगस्त है आज के दिन को लाने के लिए हमारे नेताओं ने कितनी कुर्बानी की थी। हमारा फर्ज है कि हम लोग त्याग और बलिदान में मिलनेवाली आजादी की रक्षा करें। आपस में प्रेम रखें गाँवों का सुधार करें। जय हिन्द!

बाबू साहब बैठ गये। लेकिन फिर उठ गये— भाइयो बच्चों के लिए मैं सरकार की ओर से ये मिठाइयाँ लाया हूँ, बाँट दी जाय। इतना कह कर उन्होंने नौकर की ओर संकेत किया। नौकर ने बड़ी-सी टोकरी ( जो कि बाबू साहब के साथ ही इक्के से उतारी गई थी ) ला कर वहाँ रख दी। बच्चों की जीभ चटर-मटर करने लगी। दो-तीन मास्टर आगे आये और टोकरी का लड्डू बाँटने लगे। लड़के लपक-लपक कर शोर करने लगे और मास्टर थप्पड़ों से उन्हें संयत करने लगे। बाबू साहब

इक्के पर बठे और चले गये। यहाँ मास्टर लोग वच्चो के लिए मिठाइयाँ वांटते समय अपने घरो के वच्चों को भी नही भूल सके। गाव के नागरिक ललचाई आखा से लड्डू की टोकरी की ओर देखते धीरे धीरे वहाँ से सरक गये।

धीरे धीरे पानी वरस रहा था। लड्डू खा खा कर लडके घर की ओर भागे। मास्टर सुग्गन तिवारी अपने अँगोछे में दो-तीन सेर लड्डू बाधे, टूटा छाते लिए बाहर निकले, तो पानी से लथपथ भारतीय ध्वज बाँस पर टँगा हुआ उन्हें दिखाई पडा। उन्हें एकाएक होश आया कि अरे 'जन-गन मन' ता हुआ ही नहो। उन्होने चाहा कि एक बार जोर से लडका को पुकारें कि जन गन मन गा कर जाओ, किंतु सभी लडके भागते हुए घरा की ओर जा रहे थे।

मास्टर सुग्गन का मन आज अजीब ढग का सूनापन महसूस कर रहा था। वे धीरे धीरे ताल के खेत की ओर बढ गये। रास्ते म धान कादो के पौदे नि:शंक भाव से हरी-हरी आभा फेंक रहे थे और दूर दूर नाले नदिया का सफेद जल क्रूर हँसी का हा-हाकार लिये इधर का चला आ रहा था। मास्टर सोच रहे थे—कितने सुखी ह पौदे जो अपने करोड़ मौत के हाहाकार को सुन कर भी इतनी निश्चिन्त हँसी हँस लेते ह! आदमी ता अपने सुखो की चरम स्थिति में भी दु:ख को आशका से काँप-काँप उठता ह। मास्टर अपने तालवाले खेत के पास पहुँच गये। कितना कीचड ह रास्ते म, चलना मुश्किल ह!

किन्तु इसी ताल के कीचड म ये धान के पौधे कैसे लहरा रहें ह! बादलो की सघन सजल छाया के नीचे ये पौदे कैसी मस्ती से झूम रहे हैं। मास्टर की आँखों में एक सपना तैर गया—उमडते हुए धान, सुनहली बालियाँ भरा हुआ खलिहान, भगवान! ठाठे मारती हुई यह धान की फसल यदि पार लग जाती, तो 'गितवा' की शादी इस साल कर देता। कितनी सयानी हो गई ह! सत्रहवाँ साल चल रहा ह उसका,

गाँव के लोग भी दबे छिपे व्यंग्य कर देते हैं, यद्यपि घर घर यही हाल है, कोई भी १७ १८ के पहले अपनी लड़की की शादी नहीं कर पाता। कन्यादान का पुण्य तो किसी को नहीं मिल पाता। शास्त्र में लिखा है कि चौदह वर्ष तक की लड़की के कन्यादान से पुण्य मिलता है। अब कौन इस पुण्य के फेर में पड़ कर लड़की को किसी कसाई के हाथ देवे। घर ससुरे तो सीधे मुँह बात नहीं करते। मगर यह फसल लग जाये तो कुछ हो!

हवा बह गई और से धान के बिरवे कुनमुना उठे जैसे कोमल स्वप्न से किसी बच्चे के राय। मास्टर सपने में डूबे थे। एक चील बड़े जोर से टें करके ऊपर से उड़ गई। उसके पंजे में एक मछली छटपटा रही थी। मास्टर का ध्यान भंग हुआ और फिर उनके सामने दूर दूर के नालों का उफनता हुआ जल खौलने लगा।

भारी पैरों से मास्टर मुगन घर को लौटने लगे। उन्हें पानी-पानी ठंडक बँध रही थी व हल्के-हल्के सिहर रहे थे। आज पन्द्रह अगस्त का सारा उत्सव उन की सिहरन में जैसे डूब गया था। इतने साल हो गये आजादी मिले हुए! यह अभागी जिन्दगी टस से मस नहीं हुई। पाला या तुषार कम ही हमारी फसलों पर पछाड़ खाती लोटती रहती है। इस साल तो यह पछाड़ सबों का हाड़ तोड़ कर रहेगी। रबी की फसल का भी जाने क्या हो गया है! जब खरीफ लुट जाती है तो रबी भी रूठ जाती है। जेठ गुजरे अभी तीन मास भी नहीं हुए कि सारा अन्न साफ! उफ लगा फिर अंतड़ियों में दर्द हो रहा है, हाँ भूखी अंतड़ियाँ दर्द नहीं करेंगी तो क्या करेंगी? उन्हें याद आया, आज घर पर कुछ खाने को नहीं होगा। बाजार से लाया हुआ अन्न तो कल ही खतम हो गया था। उनने बंडल से दो लड्डू निकाले और मुँह में डाल लिए। फिर जल्दी जल्दी घर की ओर बढ़ने लगा।

उसे लगता था कि आज का जल्सा पानी में भीग गया था। भीग ही नही गया था, छितरा कर काप रहा था—खुले आसमान में वेचारा पड़ा कैसा रुयपथ हो रहा था! उसकी आँखो मे स्कूल के बच्चो के करुण चेहरे, उदास आँखें फिर एक वार तैर गई। लड्डू पाने पर उनमें एक चमक-सी आ गई थी। पता नही कब इस इलाके का भाग्य जागेगा कब इन उदास आखो में स्थायी चमक भर उठेगी, कब इन एकाएक बाबू महीप सिंह आ कर सामने अटक गये। उसे लगा जैसे बाबू महीपसिंह का भारी भरकम देह यहाँ से वहा तक पसर गई है और अपने भारी वोझ के नीचे जमीन की सारी उग को दवोचे हुए है। वह जानता है महीपसिंह का और कौन नही जानता महीपसिंह का? इस इलाके के भारी जमीन्दार, ब्रिटिश सरकार के पक्के हिमायती, प्रजा के बड़े दुश्मन, अपनी धक मे अधे, कौन नही जानता उन्हें? जनता सोचती थी कि आजादी मिलने पर इन देशद्रोहियों को फांसी मिलेगी, इन की जमीन गरीबो में बाँट दी जायेगी, मगर इन वर्षों में कुछ और ही तस्वीर सामने आई। बाबू महीप सिंह काग्रेस के मेम्बर हो गये, नेताओ की निगाह में काग्रेस के प्रिय व्यक्ति। यही नहीं जिला वोर्ड के सदस्य भी बन गये। पहले ब्रिटिश सरकार के अफसरो को फलो की डालियाँ भेजते थे, अब आजादी के दिन स्कूल के बच्चों के बहाने काग्रेस सरकार को लड्डू की डालियाँ भेजते है। मगर यह भी कौन समझे कि ये लड्डू सरकार की ओर से है या महीपसिंह की ओर से। हो सकता है जिला बोर्ड ने बच्चो को मिठाइयां बाँटने के लिए पैसे दिये हो और महीपसिंह ने कुछ पैसे बचा भी लिए हो।

जिला वोर्ड के पास लड्डू बाँटने को पैसे है, मगर तीन-तीन चार चार महीनो से मास्टरों की तनख्वाह बाकी है, उसे चुकाने के लिए पैसे नही हैं आज का दिन उफनते हुए नाले, तीन महीने की तनखाह दुखती हुई अतड़ियाँ, महीपसिंह महीपसिंह इस अवसर पर ऐसे लगते थे, जैसे किसी की शादी में काई और दूल्हा बन कर आये। मगर महीपसिंह

को उसीने तो बुलाया था अध्यक्षता करने के लिए। हाँ, उसी ने बुलाया था, मगर उसने महीपसिंह को नहीं बुलाया था। बुलाया था कांग्रेस सरकार के प्रिय नेता और जिला बोर्ड के प्रभावशाली सदस्य महीपसिंह को। कैसे न बुलाता? उन्हीं की कृपा से तो इस जवार में सारे पाप-पुण्य होते हैं उन्हीं की कृपा से उसकी बदली रुकी हुई है चाहें तो तराई की ओर फेंक दें।—

मास्टर सुग्गन को लगा कि जैसे अपना ही बात का विरोध कर रहा है। स्कूल आते समय वह सरकार के खिलाफ सोचनेवाले को देश का दुश्मन कह रहा था, नेताओं की पवित्र वाणी उसके अन्तमन में गूँज रही थी कि इतने थोड़े वर्षों में इतने दिनों के कूड़ा-करकट को साफ कर इतना नव निर्माण कैसे हो सकता है। इस महान् देश का पुनर्जीवन देने में तो अनेक वर्षों का प्रयास जरूरी है। हाँ फिर भी इन वर्षों में सरकार ने बहुत कुछ किया है जमींदारी तोड़ी जा रही है स्कूलों का प्रसार करने जा रही है सबको बोलने की स्वतन्त्रता दी है सबको समान अधिकार दिया है। मताधिकार तो सबसे बड़ा अधिकार है सबको व्यक्तित्व प्रदान किया जा रहा है पंचायत राज की स्थापना हो रही है, लोगों के मन से भय को दूर किया जा रहा है। भय सबसे बड़ा पाप है गाँवों के सुधार की योजना बड़े जोर-शोर से काम कर रही है खेतों के विकास के लिए बिजली के कुओं का इन्तजाम हो रहा है हाँ ठीक ही तो बहुत है नहीं लोग, वे सारे काम हो रहे हैं एक साथ ही सब कुछ थोड़े न हो जायगा। कोई जादू का डंडा तो नहीं है सरकार के पास कि घुमाया और काम बन गया! आलोचना करनेवाले अब तक कहाँ थे? अंग्रेजी सरकार को तो सह लिया इतने दिनों तक किन्तु अपनी सरकार को इतने ही दिनों में भला-बुरा कहने लगे। यह वाणी की आजादी नहीं तो और क्या है? मजाल थी कि कोई ब्रिटिश सरकार के खिलाफ

इस कदर बोलता। तब तो ये निंदक कहीं कोने में मुँह छिपाये पड़े थे और आज चाहते हैं कि सरकार इन्हें थोड़े ही सालों में स्वर्ग दे दे ।

उसकी अंतड़ी में फिर दर्द हुआ। उसकी आंखों के सामने फिर छा गयी बाढ़, लुटती फसल, नेता महीपसिंह, तीन चार महीने की बाकी तनखाह, विद्यार्थियों के उदास गन्दे चेहरे लोग आलोचना करते हैं सरकार की आखिर वे भी क्या करें ? गलत तो नहीं कहते।

मास्टर को लगा जैसे वह कुछ स्पष्ट नहीं हो पा रहा है। उसके भीतर दो धाराएँ एक-दूसरे को काटती हुई बहे जा रही हैं, लगता है वह कहीं बहुत गहरे उलझ गया है बिखर गया है अपने ही भीतर। वह अपने को समेट नहीं पा रहा है ।

●

## : २ :

मास्टर सुग्गन के सामने ही कम्युनिस्ट नेता रामकुमार का मकान है। उसके सामने के ओसारे में गाँव की छोटी जातियों के लोग इकट्ठा थे। रामकुमार गोरखपुर बी० ए० में पढ़ता है वह शुरू में कांग्रेस का सदस्य रहा, फिर इच्छा हुई तो कम्युनिस्ट बन गया। उसने मार्क्सवाद का थोड़ा अध्ययन किया फिर उसे बहस करने की आदत-सी बन गई हर छोटे-मोटे मौके पर बहस का रंग हाथ से जाने न देता। गाँव के लोग उसे अधार्मिक समझते, मगर रामकुमार यही मान कर हँस देता कि ये सब अभी जमाने से बहुत पीछे हैं। रामकुमार घर आया हुआ था। उसने गाँव भर के लोगों को बुलाया १५ अगस्त की सभा करने के लिए किन्तु बहुत थोड़े लोग आये। किन्तु छोटी जातियों के काफी लोग जुटे क्योंकि वे जानते थे कि रामकुमार गोरखपुर से आता है, तो उनके लिए कुछ नये शिगूफे लाता है। रामकुमार ने पुराने कांग्रेसी कार्यकर्ता जग्गूराम हरिजन को अध्यक्ष बना कर सब को चौंका दिया। जग्गूराम ने बहुत हाथ-पाँव जोड़े कि रामकुमार बाबू बामनों के इस गाँव में मुझे क्यों काँटों में घसीटते हैं? किन्तु रामकुमार नहीं माना और जग्गूराम को हठ के ऊँचे आसन पर बैठा कर अपना कार्य शुरू कर दिया। मास्टर सुग्गन अपने दरवाजे पर हारे-थके बैठ गये थे।

रामकुमार बोल रहा था—हाँ आज पन्द्रह अगस्त है आजादी की वर्षगाँठ! कोई नेता आया इस इलाके में आज तक? ये जग्गू नेता बैठे हुए हैं इन्हीं से पूछा जाय क्या पाया इन्होंने? गांधीजी कहते थे सुराज्य होगा खेतहीनों को खेत मिलेगा मकानहीनों को मकान मिलेगा जिनके पास जरूरत से ज्यादा खेत हैं उनके खेत छिन जायेंगे जहाँ बंजर जमीन है वहाँ हरियाली लहलहायेगी बाढ़ में डूबी हुई धरती का बाराह का

तरह सरकार ऊपर खीच लायेगी, गोरी राशी के बीच छाती पीट-पीट कर रोती हुई अपार गरीबी के आँसू हँसने लगेंगे। क्या किया सरकार ने? क्या पाया हमने? आज भी बेगारी जारी ह, मजूरो को कम मजूरी मिलती ह, उनके लडके आज भी बडा-सा पेट लिए खाने के लिए रोया करते हैं। आज भी उनके बच्चो के लिए कोई शिक्षा की व्यवस्था नही हुई, आज भी हरिजनो को जमीन नही मिली और जमीदारी टूटने की बात कब से सुनी जा रही ह किन्तु जमीन कहाँ जा रही ह? किसे दी जा रही ह? दसगुना लगान ले कर भूमिधर बनाया जा रहा है—किसको बनाया जा रहा है। जिसके पास पहले से ही वे खेत मौजूद है और जो दसगुना लगान दे सकते ह। जो नही दे सकते, वे अपने घर की रही-सही सम्पत्ति बेच कर लगान चुका रहे हैं। कहाँ ह वह सुराज्य? कहाँ है वह समता की भावना गाधीजी जिसका सपना देखने थे? हत्यारो ने गाधीजी को पहले ही साफ कर दिया। अब मौज से मनमाना करते ह। मंत्रि-मण्डल क्या है, मूर्खो और स्वार्थियो का जमघट हो गया है। बड-बड जुल्मी जमीदार अब अपने को कही न पाकर काग्रेस में शामिल हो रहे ह। बहुत जोर-आजमाइश की काग्रेस से संघर्ष करने की, कानून को तोडने की, किन्तु हार मान कर काग्रेस मे लौट रहे ह और काग्रेस उनको सम्मान द रही ह। जो गरीब बेचारे अनाम रूप से काग्रेस के साथ खपते मरते रहे, उन्हें कोई पूछता ही नही—आज भी बाबू महीपसिंह की ही पूजा हो रही ह नेता जगूराम हरिजन की नही। क्या तमाशा ह! चन्द स्वार्थो की सिद्धि के लिए ऐसे ऐसे स्वार्थी आदमखोर जमीदार शिक्षा सस्थाओ में अध्यक्ष बना कर बलाये जाते ह। आज भी हमारा समाज भय, स्वार्थ और लाभ से ग्रस्त ह। बाबू महीपसिंह काग्रेस के प्रिय नेता हो गये ह खद्दर पहनते ह इनका पिछला इतिहास देख जाइए तो मालूम पडेगा कि आजादी क बाद हमने क्या पाया है क्या खोया ह? पाया ह महीपसिंह को खोया ह नेता जगूराम को। आज के दिन मिठाई बाँटने

गे या राष्ट्रगीत गा लेने से या झंडा फहरा लेने से हमारे कर्तव्यों की इतिश्री नहीं हो जाती—हमें सोचना है कि हम कहाँ जा रहे हैं? हम कहाँ जा रहे हैं यह किससे छिपा हुआ है। जयहिन्द।'

रामकुमार बैठ गया। ब्राह्मणों के परिवारों के भी कुछ लोग शामिल थे। जग्गू का सभापति होना उन्होंने किसी कदर झेल लिया था क्योंकि एक तो ये लोग भी जग्गू के साथ कांग्रेस आन्दोलन में भाग ले चुके थे, दूसरे वे कुमार की ताकत को पहले से ही जानते थे। एक थे उनमें सतीश तिवारी। उन्होंने बड़े ही निरुद्वेग भाव से प्रश्न किया—यह तो ठीक है कि सरकार को अभी बहुत सफलता नहीं मिली, विशेषतया हमारे इलाके में। यह भी ठीक है कि जनता की आशा के प्रतिकूल अंग्रेजी राज्य के हिमायती और देश के गद्दार अपार धन, प्रभाव और शक्ति के बल पर फिर कांग्रेस में छा रहे हैं। यह भी ठीक है कि हमारे यहाँ की समस्या जहाँ की तहाँ है किन्तु मैं यह नहीं समझ पाया कि इस इलाके की समस्या केवल हरिजनों के जीवन से जुड़ी हुई है कि और लोगों के साथ भी? रामकुमार ने बड़े जोर-शोर से हरिजनों के प्रति सहानुभूति व्यक्त की किन्तु मैं तो देखता हूँ इस इलाके में बामन, हरिजन मध्यवर्ग निम्नवर्ग सभी भूख और गरीबी के चक्के में बुरी तरह पिस रहे हैं। इस इलाके की एक सामान्य-सी समस्या है। कुमारजी व्यापक दृष्टि से समाज को क्यों नहीं देख पाते, क्यों उसे वर्गों को बाँट दे रहे हैं? हमें तो लगता है कि यहाँ हमारे इलाके में केवल दो ही वर्ग हैं—एक गरीब का और एक धनी गुंडों का और इन दोनों के खिलाफ भीषण प्रवृत्ति का। स्वाधीनता के शुभ अवसर पर हम चिन्तन तो करना चाहिए किन्तु वर्गवाद के नाम पर समाज के तमाम अंगों को आपस में बरगलाना नहीं चाहिए।' सतीश चुप हो गया। सतीश के कथन का सभी लोगों ने समर्थन किया। हरिजन मंडली चुपचाप सिर हिलाती रही, पता नहीं समर्थन भाव से या स्तब्धता से। कुमार कुछ बोलने के लिए फिर खड़ा

हुआ, लेकिन सभा में इस कदर बातें होने लगीं कि कोई अब भाषण सुनने के मूड में नहीं रहा। दान चीत जोर शोर से होने लगी। आखिर कुमार को बैठ जाना पड़ा। सभापति जग्गू बड़े पसोपेश में थे। संस्कार से कांग्रेसी थे और कुमार की बातें हरिजनों के पक्ष में कही गई थीं। किस की ओर से बोलें, क्या बोलें? आखिर वे उठ खड़े हुए और दोनों हाथ जोड़ कर बोले—'मालिक लोगो और भाइयो, म अदना आदमी आपके सामने क्या कहूं? दोनों मालिकों ने बातें कही हैं, वे ठीक ह। आप लोगन उस पर विचार करब। हम आज का सभा खतम होत है।'

सतीश उठ खड़ा हुआ। बोला—'सभा तो कर खतम हो गई, लेकिन अभी एक बात का फैसला करना रह गया। यद्यपि सभी लोग हाजिर नहीं हं, किन्तु चूँकि इस समस्या के साथ सब का सम्बन्ध ह अतएव सभी लोग इसका समर्थन करेंगे। हाँ, तो आप लोग देख ही रहे हैं कि पानी लगातार बरस रहा है, गारों और रास्तों में उफान आ रहा है। छोटे-छोटे नालों को तोड़ता पानी फैलने लगा है। सर्वनाश निकट ह। मथरिया नाले पर बाँध बाधना ह। इसका ऐलान करना चाहिए।

कुमार ने प्रतिवाद किया—'हर साल तो बाध बाधा जाता है, टूट जाता ह, फिर क्या फायदा ह इस मेहनत से?'

सतीश ने जवाब दिया—'मेहनत बेकार नहीं ह, कभी-न कभी तो वह रंग लायेगी ही। हर साल फसल बह जाती ह तो हम हर साल फसल क्या बोते ह, नहीं बोना चाहिए। किन्तु हमारी आशा बड़ी बलवान है। वह सोचती है, शायद इस साल बच जाये फसल। यह आशा न होती, तो मानव-जाति कब की खतम हो गई होती, रामकुमारजी! बाँध बँधना चाहिए तब तक बँधना चाहिए, जब तक वह एक दिन बाढ़ की प्रलयकारी मार को छाती पर झेल कर उसे तोड़-फोड़ न द।'

फैसला हुआ कि बाध-बँधना चाहिए। प्रत्येक घर स एक-एक आदमी एक सप्ताह तक बाध में मिट्टी डाले। देखा जाएगा।

लोग चले गये उठ कर। मास्टर सुगन अपने दरवाजे पर बैठे हुए
सुन रहे थे। सुन कर भीतर-ही-भीतर जड़ हो गये थे। बाबू महीपसिंह
का स्कूल में आना सुगन के स्वार्थ से सम्बद्ध है ऐसा संकेत लोग कर
गये हैं। वह अपने भीतर कहीं खो गया—कौन-सा स्वार्थ है मेरा!
स्वार्थ क्यों नहीं है? बाबू महीपसिंह जिला-बोर्ड के मेम्बर हैं, उनके चाहे
बिना कोई उन्हें भाटपार स्कूल से हटा नहीं सकता। और और भी तो
बातें हैं। सुगन मास्टर क्यों छिपा रहे हो अपने से। बाबू साहब इस
इलाके के प्रतापशाली आदमी हैं। जीवन मरन शादी-ब्याह में अवसर
पर इमदाद दे सकते हैं, देते भी रहे हैं। मगर सबसे बड़ी बात छिपा रहे
हो, सुगन मास्टर! हाँ हाँ वह भी सही है। बाबू साहब की प्रीति की
अपेक्षा भीति ज्यादा जोरदार है। वह जिसमें नाराज हो जाए, उसे कहीं
का न रखें। इस कांग्रेसी राज्य में भी? हाँ-हाँ इस कांग्रेसी राज्य में भी।
वे तो कांग्रेस के प्रिय नेता हो गये हैं। इसमें मेरा कौन-सा स्वार्थ है?
स्वार्थ भी है तो कितना छोटा! मगर मेरे जीवन के लिए कितना महत्व
पूर्ण। यदि कभी बदली तराई की ओर हो गई तो? इस आशंका से ही उसका
दिल दहल जाता। जवान बेटा, छोटा बच्चा और बीवी—ये मूरत उसकी
आँखों में उतरा जातीं। कौन सँभालेगा घर को? जब तक भाई के साथ
था दूर जाने में कोई हर्ज नहीं था, किन्तु अब तीन चार वर्षों से अलग हो
जाने पर समस्या विकट हो गई है। कई वर्षों से वह घर के आसपास
के स्कूलों में ही चक्कर काट रहा है और तीन साल तो भाटपार में ही
हो गये। यह बाबू महीपसिंह की जी-हजूरी का ही फल है। वह नहीं
सोच पाता कि इस निरीह स्वार्थ में कौन-सा पाप है? परन्तु हाँ यह भी
सही है कि बाबू महीपसिंह के अत्याचारों की स्याही अभी सूखी नहीं है।
खद्दर का जामा पहन कर भी वे अपने खूनी संस्कारों में धुल कर साफ
हो हुए हैं और ऐसे लोगों का ऐसे पवित्र अवसरों पर पवित्र मानी जाने
वाली शिक्षा-संस्थाओं में अतिथि के रूप में बुलाया जाना अपराध भी है।

मास्टर सुगन वा आँखें आद्र होती-होती वहीं खो गई—अखबार म हाहाकार मे ।

सन् '४७ का जमाना—पाकिस्तान हिन्दुस्तान का बँटवारा—आजादी की भोर में ही कौआ रोर ! चारो ओर से सनसनाती खबरें आती खबरें क्या थी—जैसे गाव का गाँव निगलती हुई लाल-लाल लपटें आ रही हो, जैसे कटे हुए हाथा, मुडा, धडो को उछलाती खून की धाराएँ दौड रही हो, भयानक भयानक आकृतिया जैसे गाँव के सिवान के सघन बागों से एक साथ चीख पडती हा ! खबरें आती थी कि 'आज यह ट्रेन लूट ली गई आज हिन्दुस्तान-पाकिस्तान को सरहद पर इतने गाव जला दिये गये इतनी बहू-बेटियों को बेइज्जत कर पड का डाला पर उल्टा टाग दिया गया। बापा के, माताआ के, सामने इतने पुत्रो को कत्ल कर दिया गया' खबरें आती थी—जैसे लू के झोंके आते हो लोग रात रात को सोते से जाग पडते और लाठी भाला ले कर तयार हो जाते ! अपने इलाके में मुसल्माना के केवल चार ही पाँच गाँव हैं लेकिन कुछ लोग रोज खबरें लाया करते कि गोरखपुर से मुसलमान आये ह, जो तमाम बन्दूका और तलवारो से सुसज्जित ह। उधर मुसलमानो में अफवाह उडती कि आज हिन्दू लाग उनके गाँवो पर हमला करनेवाले ह । एक भयानक भय, एक अनावश्यक सन्देह पूरे इलाके को खा रहा था ! बाबू महीपसिंह सस्कारा स कट्टर हिन्दू हैं। उन दिनो राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ और हिन्दू महासभा के बहुत से लाग यहाँ-वहाँ बिखर कर सभाएँ करते थे, और अनेक शहरा म मुसलमाना द्वारा होनेवाले अत्याचारो की आसू भरी कहानी उत्तेजना के साथ सुनाते थे। हा, वे कहते थे—"मुस्लिम लोगा का ऐलान ह कि एक हिन्दू मारने से मुसलमान को हजार बहिश्ता का फल मिलता ह। कुरान शरीफ का भी यही हुक्म ह, इसलिए मुसलमान निरीह हिन्दुआ को बेरहमी से कत्ल कर रहे हैं। हमारी सरकार कितनी हिजडा सरकार ह, जो मार खाते हुए हिन्दुओ का उपदेश पिलाती

है कि हिंसा पाप है, हिंसा का बदला हिंसा नहीं है। जो निरीह मुसलमान भारत में हैं, उन्हें मत मारो। कितनी अच्छी शिक्षा है सरकार की? हम लोग पाकिस्तान में पिटते रहें, हमारा जायदादें छीन ली जायें, जला दी जायें, हम वहाँ से खदेड़ दिये जायें और हम हिन्दुस्तान में मुसलमानों का दूध-हलवा खिलाते रहें। गांधीजो की भी अक्ल सठिया गई है अब उनकी आवश्यकता नहीं है।'

मास्टर सुमन सोच रहा था कि यह कैसा भयंकर समय था! हिन्दू महासभा और राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के नेताओं की साम्प्रदायिक वाणी सुन-सुन कर जनता के दिल में तूफान हरहरा उठता था। लोग यही सोचते थे—कहाँ मुसलमानों को पायें कच्चा चबा डालें। उधर मानपुर के सैयद ललकार रहे थे कि "किसी ने मुसलमानों पर हाथ लगाया तो गोलियों से भून कर रख दूँगा।" मजाल तो देखिए हिन्दुओं के इतने गाँवों के बीच मुसलमानों के चार-पाँच गाँव, तिस पर सैयद चीख रहा है कि हिन्दुओं को भून कर रख देंगे। भला किस नहीं ताव आये इस बात पर? एक बार हम लोग रोष से उत्तेजित हो जाते पूरी मुसलमान जाति के खिलाफ? किन्तु कौन किसे मारे? हमारे गाँवों के पास मुसलमानों का ही एक गाँव पड़ता है—जमालपुर! सब जुलाहे हैं। अक्सर रोष आते ही उस गाँव का ही चेहरा सामने आ जाता—ये हैं रमजान काका गाँव भर के लड़कों के शादी-ब्याह के अवसर पर मांगलिक कपड़े सीने वाले। शादी-ब्याह के हर कपड़े पर उनकी बूढ़ी आखों का आशीर्वाद चुभा है। ये हैं औरतों और पुरुषों के तमाम चेहरे, जो हमारे खेतों में कतार बाँध कर बैठे हुए हैं, गेहूँ-जौ की फसलें काट रहे हैं, होली के गीत गा रहे हैं। यह है अब्दुल्ला जो हमारी कितनी बहू बेटियों को स्टेशन से घर और घर से स्टेशन ले गया है। एक बार रास्ते में किसी गुण्डे ने एक गाड़ी को देख कर गन्दी बात बोल दी, अब्दुल्ला सिपाही ऐक्टर पिल पड़ा और उसकी मरम्मत करते हुए कहा 'हरामजादे आँखों

में बहू-बेटियों की आबरू मुख गई है। यह है एक मासूम गरीब चेहरा असगर, जो हमारे स्कूल में पढ़ता है। कितना गरीब और कितना तेज ? मैं उसे प्यार करता हूँ क्या वह समझता है कि वह मुसलमान है, जिन्ना का अनुयायी ? वह मेरे बेटे के साथ पढ़ता है, मेरे घर भी आता है, खेलता है। एक हैं मौलवी करीमुद्दीन ! हमारे गाँव के कितने लड़के उनसे तालीम हासिल कर चुके हैं। उनका ज्ञान, उनका भद्र व्यवहार उनके शागिर्दों के मन में एक स्थायी संस्कार बन कर छा जाता है। किसे मारा जाए किसे मारा जाए और एक दिन उसका कलेजा मुँह को आ गया। एक दिन सिंहपुर ( महीपसिंह के गाँव ) का एक अहीर मेरे पास आया। दंगे की तमाम ऊँची-नीची बातें करते हुए उसने धीरे से कहा, 'मास्टर तुम्हारे घर वह छोकरा आता है न !' 'कौन !' मैंने पूछा था। 'अरे वही जमालपुरा का असगरवा !' 'हां हां, असगरवा ! वह मेरे लड़के का दोस्त है मेरे स्कूल में पढ़ता है। वही न !' 'हां हाँ वही।' अहीर बड़े रहस्यमय ढंग से मुसकराया। 'क्या काम है ?' मैंने कुछ डरते हुए पूछा था। 'आजकल और क्या काम है मास्टर, आजकल तो इन साँपों और साँपों के बच्चों को कुचल कर रख देना है।' मैं एक दम दहल कर रह गया था। मैं समझ गया कि ये सब उस छोकरे की हत्या करना चाहते हैं। मैं कुछ नहीं बोला, भय से आखें फाड़ कर उसे देखता रहा। फिर उसी अहीर ने कहा कि 'मास्टर वह तुम्हारे घर आता है एक दिन पकड़ कर उसे बस हाँ !' उसने गले पर हाथ फेर कर एक वीभत्स इशारा किया।

मैंने उसे डाँटते हुए कहा कि कैसे कठोर आदमी हो जी, असगर मेरा प्रिय विद्यार्थी है और मेरे बेटे का दोस्त ! अपने घर आये हुए आदमी के साथ यही बताव करने को सिखा रहे हो। छि छि !'

लेकिन वह अहीर हतप्रभ हुए बिना कहता गया—'मास्टर तुमको मालूम नहीं है यह जाति कितनी दगाबाज है। शेखपुर के सैयद ने इसी

प्रकार अपने लड़के ने हिन्दू दोस्त का खातम कर दिया। गोरखपुर से तमाम खबरें आई हैं कि मुसल्मानो ने दोस्तो के नाम को बदनाम किया है। अपने घरा म छिपे हुए हिन्दू दोस्तो को पकड़वा दिया है उनको आँखो के सामने ही दोस्तो की लाशें तड़प कर बिछ गई हैं। तुम कहते हो कि हम कठोर हो रहे हैं। क्या हमी लाग नको का सारा ठीका लिए बठे हैं।'

मैंने जोर से डाँटा— देखो, उस लड़के का बाल भी बाँका हुआ तो ठीक नही होगा।' 'हे मास्टर!' वह अहीर बोला, तुम अपनी खैर मनाओ। यदि तुम उसे मार नही सके तो और कोई मारेगा। हम लाग चाहते रहे कि यह पुण्य तुम्ही लूटो।'

उसन फिर धीरे से मुस्करा कर मेरे कान के पास मुँह ला कर कहा— तुम्हें नही मालूम मास्टर, यह बाबू महीपसिंह का हुक्म है।' 'ऐं!' मैं हतप्रभ रह गया—बाबू महीपसिंह का हुक्म है!! बड़ा अनर्थ हुआ। असगर की जान खतरे में है।

मास्टर सुगन सोच रहा था—मैंने असगर को स्कूल में आने से मना कर दिया। वह बोला—'क्यो मास्टर साहब?' भला मैं क्या जवाब देता? मैंने कहा— यो ही बेटा। आजकल दगा-फसाद का समय है, कोई मार-वार दे ता अच्छा नही है।

मुझे कोई क्या मारेगा, मास्टर साहब! मैंने किसी का कुछ नहीं किया। मैं नही आऊँगा तो मेरी पढ़ाई कैसे होगी?

'नही बेटा, तेरी पढाई हो जाएगी कल से मत आना।

असगर पाव पकड़ कर रोने लगा— मास्टर साहब! मेरी पढ़ने की बहुत इच्छा है, मेरे अब्बा नहीं रहे मास्टर साहब! माँ है, अकेले काम करते-करते थक जाती है। मैंने उसे कह रखा है, मास्टर साहब कि पढ कर मैं तुम्हारी गरीबी दूर करूँगा माँ! मेरी पढाई मत छुड़ाइये मास्टर जी। वह पाँव छोड़ता ही नहीं था।

लेकिन मैंने कठोरता से कह दिया कि 'नहीं तुम स्कूल भी मत आना और घर से बाहर भी मत निकलना। तुम्हारी जान को खतरा है।'

असगर उस शाम चला गया। लगता था कि वह बार-बार यही सोच रहा था कि क्यों उसकी जान को खतरा है? उसने किसी का क्या बिगाड़ा है?

मास्टर सुगन की आँखें गीली हो आई थी, उन्होंने पोछा। वे जब-जब अपने लल्लू को देखते हैं, उनकी आँखें असगर की तस्वीर से भर जाती हैं। हाँ, दो-चार दिनों बाद असगर की लाश एक नाले में पड़ी पाई गई। मास्टर को बाबू महीपसिंह से घृणा हो गई—कितना बड़ा नर राक्षस है। एक लड़के की जान लेकर ही रहा, एक क्या अभी तो कितनी जानें जाएँगी। मास्टर की आँखों में असगर की विधवा मां का विक्षिप्त प्रलाप हाहाकार कर उठा—मां! अभागिनी माँ, मां तो सबकी एक ही होती है, माँ तो ससार भर की माँ है। क्या असगर की और क्या लल्लू की? क्या सयद की और क्या महीपसिंह की?

उसे याद आया मुहर्रम का दृश्य! क्या मुहर्रम और क्या होली? पवित्र त्योहारों को भी आदमी ने साम्प्रदायिक कीचड़ में सान रखा है। दगा-फसाद की आँधी में आया मुहर्रम। जवार के ताजिये जमालपुरा के पासवाले टीले पर इकट्ठे होते हैं—वहीं दफनाये जाते हैं। धर्म और मजहब, मजहब और धर्म—ये तो केवल दिखावे के सामान रह गये हैं, प्रधान रह गया है आदमी का दम्भ! हरसाल यही दम्भ प्रधान हो उठता है, अब यह भी कोई धर्म है कि जिस रास्ते ताजिया जाता है उसी रास्ते जायेगा लोगों के प्रति इतना मोह? भरी हुई फसल को रौंद कर ही ताजिया ले जायेंगे, फले हुए पेड़ों की डाल काट कर ही ताजिया ले जाएंगे, जरा हट नहीं सकते, जरा-सा झुक नहीं सकते। संयोग से बाबू महीपसिंह के खेत रास्ते में पड़ते हैं। शेखपुरा के मुसलमान भरी फसल को रौंद कर ले जाने में ही धर्म की शान समझते हैं। ले ही जायेंगे और बाबू साहब भला अपनी

फसल क्या रौंदवायें ? सही भी है, क्या रौंदवायें ? फसल का नुकसान होता हो इतनी ही बात नहीं, बात तो यहाँ भी दम्भ की ही है। उनका दम्भ कुचल जायेगा, यदि ये ताजियावाले खेत से गुजर गये तो ! इसलिए बाबू साहब के सकड़ा आदमी लाठी से लैस होकर छावनी के पास छिपे थे।

वक्त से ताजियों की कतारें आई। भरी फसल के बीच से ही उनका पुराना रास्ता है उनका धर्म फसल के बीच से ही होकर गुजरता है। पहले की तकरार के बाद किसी तरह ताजिये आगे बढ़े, तो बीच में आम की डाल आ गई। ताजिये वहीं अड़े तो अड़ ही गये। ताजिये झुक नहीं सकते। एक मुसलमान पेड़ पर टाँगी लेकर चढ़ने लगा, डाल काटने के लिए। बाबू साहब के—एक लठैत ने आगे बढ़ कर उसकी बाँह पकड़ कर नीचे खींच लिया। वह आदमी पके आम की तरह भदाक से नीचे गिरा और उस पक्ष के—तमाम लाल-लाठी ले कर बाबू के लठैत पर पिल पड़े। इधर के लोग भी सावधान थे ही। अब तक का रहा सहा बाँध टूट पड़ा और दोनों धाराएँ आपस में भिड़ गई। औरतें चीख-पुकार करती भागीं। पायक लोग धन धन घटी घनघनाते इधर उधर बिखर गये, ताजिये लाठियों से छिन्न भिन्न होने लगे। उन्माद में कितनों के सर फूटे, कितने के हाथ-पाँव टूटे, कितने वहीं साफ हो गये इतने दिनों का घिरा हुआ साम्प्रदायिक उन्माद घुर्री घुर्री आमने-सामने था, अब उसकी सीमा भी क्या हो सकती थी ! चारों ओर हाहाकार मच गया। दोनों ओर के लोग धमकियाँ देते-देते धीरे धीरे बिखर गये। कितने लोग धर्म के नाम पर मरे किन्तु धर्म के रक्षक बाबू साहब और सय्यद साहब धर्म की रखवाली में घर में ही पड़े रहे धर्मात्मा बने रहे। उन्हें न चोट आई न उनके परिवारों का कोई आहत हुआ और धर्म की रक्षा भी हो गई।

मास्टर सुनते रहे थे—अतीत की तमाम ऐसी घटनाओं को, जो प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप में बाबू साहब के साथ जुड़ी हुई थीं। ये कांग्रेस के नेता हो रहे हैं—कांग्रेस ! गांधीजी की कांग्रेस के नेता !

●

# : ३ :

तिवारीपुर के तमाम लोग मँझरिया नाले पर बाँध बाँधने के लिए टूट पड़े। दूर से राप्ती का छलकता हुआ सफेद-सफेद जल दिखाई पड़ रहा था। लोग एक बार इस उफनते हुए जल को देखते थे, एक बार अपनी उफनती हुई फसलों को। सतीश तिवारी ने देखा कि मास्टर सुगन टोपी लगाये सबसे कतरा कर दक्षिण की ओर भागे जा रहे थे। उसने सुगन को टोका—'क्या मास्टर! तुम्हारे खेतों को बाढ़ नहीं पूछेगी क्या? न तुम आये और न हलवाहे को भेजा। और नहीं तो उलटे दक्खिन को भागे जा रहे हो।'

सुगन मास्टर भीगे स्वर में घिघियाए—'सतीश भाई, हलवाहा तो कई दिन पहले छोड़ कर भाग गया, रोज रोज खर्ची मांगता है, कहाँ से दूँ? रहा मैं सो क्या बताऊँ जरा कस्बे की ओर जा रहा हूँ। अभी लौट कर स्कूल भी तो जाना है।'

'सवेरे-सवेरे कस्बे जाने की क्या आफत आ गई?' कहते-कहते सतीश रुक-सा गया। उसने देखा कि मास्टर के हाथ में एक झोला है, उसमें से कुछ खनकती हुई आवाज आ रही है। सतीश की आँखें भीतर भीतर गीली हो आईं, 'जाओ मास्टर!' कह कर वह खप्प-खप्प कुदाल चला कर मिट्टी खोदने लगा। मास्टर कस्बे जा रहा है हाथ में औरत के जेवर हैं चाँदी के। चौधरी के यहाँ जा रहा है मास्टर! जमुना भौजी (मास्टर की पत्नी) के जो जेवर जवान बेटी गीता के तन पर जाने चाहिएं, वे कस्बे के चौधरी की तिजोरी में जा रहे हैं, जहाँ पड़े पड़े एक दिन अपना अधिकार खो बैठेंगे।

लोग सुगन मास्टर को ले कर तरह-तरह की बोलियाँ बोल रहे थे, किन्तु सतीश की आँखों में गाँव से कस्बे की ओर जाते हुए घर घर के जेवर उतरा गये थे।

सोचते-सोचते सतीश थक-सा गया। कुछ लोगों ने कहा 'सतीश भाई! अब आप आराम करें, यह काम हराठिया का है, आप जैसे लिखने वाले आदमी का नहीं।' सतीश पास की पाकड़ की छाँह में बैठ गया। ऊपर काले-काले बादलों के पहाड़ भागते गये, नीचे मँझरिया नाले में रास्ते की ओर से फेना के रूप में पूरा-पूरा पानी आ रहा था। सतीश दूर निकल गये मास्टर सुमन की छाया देख रहा था। उस कस्बे के चौधरी की काली-काली भारी आकृति तिजोरी में चाँदी के तमाम जेवर फेंकती नजर आई इन जेवरों के बीच में उसे अपनी माँ और पत्नी की सूनी सूनी कलाइयाँ, सूने-सूने पैर, सूना-सूना गला और सूने-सूने कान छटपटाते नजर आए। और फिर गाँव भर जवार भर की औरतों के सूने-सूने अंग चौधरी की तिजोरी में काँपने दिखाई पड़े।

सतीश डूबते-डूबते डूब गया अतीत की गहराइयों में। कछार की गीली धरती पर अपने मोटे-मोटे पद चिह्न छोड़ती हुई तीस-पैंतीस बरसातें गुजर गई हैं। सतीश को पहली बरसातें आज याद आ रही हैं। वह देख रहा है, बारह-तेरह साल के तमाम लड़कों को, जो फटी धोतियाँ और फटे कुर्ते पहने स्कूल जा रहे हैं। अपने को वह इस भीड़ में पहचान लेता है। सबके चेहरों पर जड़ उदासी है, नहीं शायद आँसू भी नहीं क्योंकि आँसू बहाने की अज्ञानता को धीरे धीरे परिस्थिति-बोध का वास्तविकता ने पीस दिया है। गाँव के चारों ओर खेतों में पानी ही पानी है, छाती भर पानी! पानी में जानवरों और आदमियों की लाशें उतरा उतरा कर बही जा रही हैं। हाहाकार करती हुई हवा लहरों को उठा उठा कर फेंकती हुई यहाँ से वहाँ तक भागी जा रही है। गाँव के सयाने लोग गाँव में बन्दी हैं। लड़के स्कूल जा रहे हैं। आध मील की दूरी पर भाटपार का प्राइमरी स्कूल है लड़के पढ़ने जा रहे हैं। सबों ने बस्ते और बदलने के लिए फटे-फटे अँगोछे सिर पर बाँध रखे हैं।

धीरे-धीरे पाँव जमाते हुए लडके पानी फाड रहे हैं। स्कूल पहुँच कर कपडे बदल लेते हैं। दोपहर होते-होते पेट के एक कोने म पडी हुई दो एक जौ-मटर की रोटियाँ जवाब दे जाती ह, भूख तन मन को तपा देती हैं। मास्टर हिसाब पढा रहा है व्यवहार-गणित का—रुपये-पैसे का हिसाब, मन-सेर-छटाँक का हिसाब, हजारो रुपये, हजारो मन गल्ला पर भूख उभर आई है और मास्टर हिसाव पढा रहा ह।

बाजार का दिन ह आज। स्कूल के पास बाग की सूखी जमाम पर आज बुद्धवारी बाजार लगता ह। पानी का चीरते हुए दूकानदार चले आ रहे हैं, कही कोई रुकता नही, बाजार कसे रुक सकता ह? वह तो आस पास के गाँवो की जिन्दगी की नसो म खून पहुँचानेवाला ममस्थान ह। खरीदनेवाले भी आ रहे ह, हाथ में मिट्टी के तेल की बोतलें लटकाए, गन्दे-गन्दे कपडे सिरो पर लपेटे।

छुट्टी हो गई ह, लडके बाजार में घूम रहे ह। मिट्टी के तेलकी-सी गध पूरे बाजार से फूट रही है। सामने हलवाइयो की दूकानें खुली है, जिनके गट्टा, बताशा, पेडो और लडडुआ पर हड्डो की भीड वजवजा रही है। भूख से आखें दुख रही ह, लडके बार-बार हलवाइया की दुकान का चक्कर काट रहे ह, हट्टे मिठाइया का रस ले रहे ह, बच्चे उन्हें देखते हैं और जीभ चटखार लेते हैं। एक लडका ताक-तूक कर धीरे से कुछ गट्टे ले भागता ह, साथियो के बीच अपने विजय के गव से फूल जाता ह। दूसरा लडका भी अनुकरण करता ह किंतु हलवाई उसे पकड लेता ह और भूख से पीडित चेहरे पर जलते हुए दो-तीन चाटे जड देता है। वह लडका अपमान से तिलमिला कर भाग कर भीड में खो जाता ह। सतीश को लगा कि वे चाँटे अभी भी उसके गालो पर रेंग रहे हैं। वह इस पुरानी घटना की याद से एक क्षण के लिए अव्यवस्थित-सा हो गया। लडको के घर के लोग बाजार म आये ह। कोई चार सेर्ई जो

खरीद रहा है, कोई दो सेर्ई मटर ले रहा है, कोई इस फिराक में है कि उसको पहचान का बनिया उधार दो-एक सेर्ई अन्न दे दे। किन्तु वह बनिए की खिड़की ख्वा कर दूसरी ओर चला जाता है। क्या होगा अगर बनिए ने उधार नहीं दिया तो? इस बाढ़-बूड़ा में हफ्ते में एक ही दिन का बाजार लगता है वह भी आज खाली हाथ निकल गया तो क्या खायेंगे घर के लोग? कई दिनों के भूखे परिवार की आशा बन कर यह बुधवार आया है भगवान यह भी जायेगा क्या? लड़के अपने पिताओं या भाइयों के पीछे चक्कर काट रहे हैं काश उन्हें कुछ खाने को मिल जाता—एक डली गुड़ ही सही! किन्तु यहाँ तो खाने के लिए अन्न का ही ठिकाना नहीं है, मिठाई और गुड़ की बात कौन करे? लड़के अपने घरों की मजबूरियाँ समझते हैं।

सतीश खोज रहा है—अपने पिता कमलेशजी को। नहीं दिखाई दे रहे हैं—शायद कस्बे से नहीं लौटे होंगे। हाँ, वे आज सुबह ही सुबह कस्बे गये हैं माँ ने उन्हें कुछ चाँदी के जेवर दिये थे। माँ की आँखें गीली थीं। कह रही थीं—जब ये खतम हो जायेंगे तो क्या खाया जायेगा! वे मेरा मुँह देख कर रो पड़ी थी छोटे भाई को गोद में खींच लिया था। पिताजी नहीं लौटे कस्बे से या देर से घर आये होंगे किससे पूछे? उनके साथ जो दस-बारह आदमी गये थे उनमें से कोई नहीं दीख रहा है। बाढ़ का दिन, नदी पार करनी पड़ती है कई गहरे-गहरे नाले हैं, आते जाते शाम तो हो ही जाये। बूँदा-बाँदी होने लगी दूकानदार दूकान समेटने लगे। लड़के मायूस चेहरे लटकाये भूखा-अँतड़ियों से जल चीरते घर लौटने लगे। घर आकर सतीश ने देखा कि पिताजी आ गये थे और माँ पूछ रही थी कि 'तोला भर चाँदी की हँसुली के लिए चौधरी ने सिर्फ पाँच रुपये दिये हैं, कैसा बेईमान है यह!' पिताजी शान्त भाव से सुना रहे थे—'बेईमान पहले तो चार ही रुपये दे रहा था, कहता था कि

हँसुली सोलह भर है। बहुत सकपर हुई, तो किसी तरह पाँच रुपये निकाले। तोल म भी मारता है और भाव में भी। खैर कम रुपये दे रहा ह, तो छुड़ाने में भी तो आसानी रहेगी।' 'छुड़ा चुके!' माँ बोल रही थी—'जब से आई हूँ तभी से तो बेच रहे हो। अग-अंग नगा कर डाला, और करतबी इतने कि खेत में कुछ होता ही नही है। तीन-चौथाई खेत रेहन पड़े हैं!'

सतीश को गाँव से कस्बे की ओर जाते हुए अमलेश तिवारियों को कतार सी दिखाई पड़ी, घर में अग-अग उघारती हुई माताओ की गोली आँखें सीलन भरी अधगिरी दीवारों के बीच तड़पती नजर आइ। आजादी मिले इतने वर्ष हो गये, किन्तु आज भी यह गाव सुगन तिवारी के रूप म कस्बे जा रहा ह, आज भी जमुना भाभी के रूप म गाँव की माताएँ अपने तन का छल्ला छल्ला उतार कर बेटी के तन की शोभा बढाने की जगह चौधरी की तिजोरी में दफना रही हैं। बड़ा-सा पेट, काली ठिगनी मोटी सी आकृति, छोटी छोटी आखें, सिर पर छोटे-छोटे बाल, आगे खुली हुई लाल बही और बिखरे हुए जवार भरके गहन चौधरी की बीभत्स आकृति सतीश की आखो के सामने खड़ी हो गई। सतीश ने बढ़ कर उसके पेट पर जोर से लात मारी और हुँकार उठा—'कमीन! तू अभी भी जिन्दा ह, आजादी मिलने के बाद भी!' चौधरी पट पर हाथ फेरता हुआ हँसा—'मारा, और मारो। यह पेट तो तुम्हारा हा ह तुम्हारे गहना स भरा हुआ ह यह, चाट मुझे नही तुम्हारे गहनो को लग रही है। आजादी से क्या होता-जाता ह, म अपनी जगह पर बदस्तूर कायम हूँ और मुझे ही क्यों दखत हो, तुम्हारे नेताओ म भी तरह-तरह के चौधरी निकल आये ह।'

बूद पड़ने लगी। सतीश अपनी कल्पना मे जाग पड़ा। देखा—नाव का खुला हुआ मुँह बाध दिया गया ह और लोग थक कर लथपथ हो गये

हैं। सतीश ने कहा—'भाइयो! आज इतना ही, पानी भी आ रहा है। कल फिर।'

बड़ी-बड़ी बूँदें पड़ने लगीं। लोग कुदाली-खाँचो ले कर घर की ओर भागने लगे। सतीश मंझरिया के बँधे हुए मुँह और उसमें आते हुए फेन मय गरम-गरम पानी—नालों को साथ देखने लगा। देखें क्या होता है? मनुष्य और प्रकृति का यह संघर्ष कब से चलता आ रहा है, कब से   सतीश घर लौटने लगा, तो उसके गोइड़ के खेत में कपसते धान के पौधे उसे पुकार उठे। मस्ती में झूमते हुए, वर्षा में मस्त हो कर भीगते हुए ये खेत   और राप्ती और गार्रा का चला आता हुआ फुफकारता जल   ।



# : ४ :

नाग पचमी का दिन !

गाव ने बडी कोशिश की, मझरिया नाले का मुँह बाँधने की—लेकिन ऊपर की रोज रोज की बारिश और नीचे से नाले के उफनते हुए जल के दुहरे दबाव म बाँध फूट ही गया। उफनती हुई फसलें देखते-देखते डब गई। जैसे किसी बाप के सामने उसका लडका मार डाला जाये ! लाग आखो में अकथ दद भरे अपने-अपने दरवाजा पर पडे हुए थे। त्योहार आ गया ! शाम से ही इस जड सन्नाटे म एक हलकी हलकी धडकन जाग पडी। बा' को फाडते हुए लोग भाटपर के माली के यहाँ गये, मेंहदी खरीद लाये। मेंहदी तो लगनी ही चाहिए त्यौहार के दिन !

कल शाम को लडके-लडकियाँ थोडी-थोडी महदी हथेलिया पर चिपकाए नाच-नाच कर गाते रहे—'अतवला क पनिया पतलवा जा, हमार मेंहदिया झुरा जा।'

पानी पाताल नहीं गया और मही तो ऊपर से ही बरसता रहा, फिर भी लडके उछल-उछल कर गात ही रहे—

अतलवा क पनिया पतलवा जा
हमार मेंहदिया झुरा जा।

पाना नही थमा, तो भी महदी की लाली तो हथेलिया पर लग कर ही रही, इतनी भी लाली इनके थके-हारे मन को रग ही गई। आज सवेरे से ही कुछ सयाने लाग अपने बच्चो के लिए डडे काटने के लिए पानी हल हल कर बाग-बगीचा में जा पहुँचे है। बच्चे इन डडो को रग रहे है—काजल से हलदी स। गुतरी पीटेंगे इनसे पानी में छपाक-छपाक !

हाहाकार करता हुआ पानी यहाँ स वहाँ तक थर्रा रहा है लडके दीनदयाल तिवारी के दरवाजे के सामनेवाले बडे से मदान में जुट रहे हैं

दिखाई खेलने में लिया। सतीश कुछ साथियों के साथ दीनदयाल के दरवाजे पर जा बैठा है। वह अनुभव कर रहा है कि गाँव के लड़कों में चिक्का-कबड्डी खेलने का वह उत्साह नहीं रहा जो उसके जमाने में था। पहले तो सयाने लोग भी इस अवसर पर जी खोल कर खेल में टूट पड़ते थे। जो नहीं खेल सकते थे, वे आकर दर्शक के रूप में बैठ जाते थे, किन्तु अब कुछ रंग ही और हो गया है। अब तो बच्चे बाहरी स्कूलों में पढ़ लिख लेने के नाते इन खेलों को गँवारू चीज समझते हैं, शहरी नकल करते हैं किन्तु ये गाँव के छोकरे न देहात के काम के रह पाते हैं और न शहर के सीख पाते हैं। देहातों में पलनेवाले लड़के भी अब अपने दरवाजे पर बने रहने में शान समझते हैं। उनके घरों के सयाने लोगों से यही चीज उन्हें संस्कार के रूप में मिल पाती है। घरों के सयाने लोग अपने अपने घर काम में लगे रहना ही आज जीवन समझने लगे हैं यहाँ तक कि पड़ोसियों के यहाँ पड़नेवाले शादी-ब्याह या सामाजिक त्योहारों के दिन भी उनमें कोई उमंग नहीं आती जी खोल कर गा नहीं पाते, खेल नहीं पाते, मिल नहीं पाते, जैसे इन्हें वे फालतू चीजें समझते हैं बस अपने काम से काम। सतीश ने दीनदयाल के दरवाजे पर जाते समय देखा था कि गाँव के धनी कहे जानेवाले लोग (जो कभी किसी के दरवाजे पर न जाना ही अपना बड़प्पन समझते हैं) अपने दरवाजों पर बैठे हुए मूँज ले कर रस्सी बट रहे हैं या बैल की देह में से किलनी निकाल रहे हैं या अपने हलवाहे को दिये गये अन्न और पैसे के सूद का हिसाब कर रहे हैं। त्योहार की आवाज और भैंस की आवाज में इन्हें कोई फर्क नहीं जान पड़ता। सतीश ने देखा—दीनदयाल के दरवाजे पर वे ही लोग जुटे हैं, जो बूढ़े हैं या जो गाँव के काम-काजियों में अधिक गिने जाते हैं, बाहर से आनेवाले कमाऊ पूत अंग्रेजी स्कूलों के विद्यार्थी गाँव के धीश लोग, मास्टर लोग दिखाई नहीं पड़ते, कभी-कभी आते भी हैं तो लगता है कि खेलनेवालों की भीड़ पर मेहरबानी करके दर्शन

देने आते हैं, दो क्षण ठहर कर किसी लड़के को स्वीकार कर चले जाते ह। सतीश बदलती हुई पीढ़ी के बदलते हुए रूप को एक विरक्ति के साथ देख रहा ह। जिबके का शोर मचा हुआ है और पास ही बाढ़ का हाहाकार उस शोर को निगले जा रहा ह।

लड़कियो ने पुरानी साड़ियों को धो धो कर धानी रग में रग लिया है। बादल घिरे हुए हैं किन्तु पानी नहीं बरस रहा ह। वे झुण्ड-की-झुण्ड हो कर कजली गा रही ह। मास्टर सुगन तिवारी अपने दरवाजे पर बैठ हुए एक दर्द भरे कण्ठ का गीत मन मे सुन रहे हैं। कण्ठ गीता का ह—

हरि हरि पवन बहे पुरवइया नदिया डोले ए हरी!
जुल्मी बदरा घिरि घिरि आवे
पापी तड़पि तड़पि डरवावे
हरि हरि पिया पिया पपिहरवा
बनवां बोले ए हरी!

गीता का कण्ठ है कितना दर्द ह इसके गले में! मास्टर सुगन को लगा जैसे सारे कछार का दर्द गीता के कण्ठ से फूट रहा ह। मास्टर को लगा, जसे उनके घर का सारा अभाव गीता के कंठ में तड़प रहा ह मास्टर को लगा—जसे गीता के जीवन का अनकहा दर्द गीता के कण्ठ से गीत बन कर फूट रहा ह

नदिया डोले ए हरी
पवन बहे पुरवइया,
नदिया डोले ए हरी!

हा, गीता भी तो अब नदी ही ह न। सत्रह साल की हो गई। ये घिरे घिरे बादल यह सामने बहती हुई बाढ यह डोलती हुई पुरवइया और गीता की उमर मास्टर सुगन को लगा कि गीता के भीतर की मौन नदी पुरवइया के झोंके में हहरा उठी ह। लड़की

सत्रह की हो गई ! गाँव के लोग बार-बार ताने मारते हैं—चढ़ी हुई नदी की तरह बेटी की उमर ठाठें मार रही है और यह मास्टर कुछ समझता ही नहीं। औरों का पढ़ाता होगा ज्ञान की बातें और उस अपने घर की खबर नहीं। मास्टर सुगन इन बातों की भनक पाता तो मर्माहत-सा रह जाता। ऐसा नहीं है कि उसी के घर लड़की जवान हुई हो या उसी के घर गरीबी हो या वर पाने म उसी को कठिनाई महसूस होती हो। घर घर यही हाल है, किन्तु सभी एक-दूसरे की टीका टिप्पणी करने से बाज नहीं आते। स्वयं उसकी बीवी जमुना इतनी मुँहजोर है कि कब किसको क्या कह दे, इसका ठिकाना नहीं। सहना तो जानती ही नहीं। यदि स्वयं इन टीका टिप्पणियों को किसी के मुँह से सुन ले, तो उस की सात पुश्त की इज्जत बना कर रख दे। मौका पड़ने पर मर्दों से ढेला-ढेलौवल भी कर ले। किन्तु यह सब कहा-सुनी हो या न हो सत्य तो जहाँ का तहाँ है—गीता शादी के लायक हो गई है कब से ! गाँववाले न कहें तो क्या मुझे आँख नहीं है ? किन्तु करूँ तो क्या ? मेरे भीतर बहते हुए दर्द को कौन पहचाने कितने वर्षों से वर खोज रहा हूँ, मर-जी कर कुछ पैसे इकट्ठे करता हूँ तो ऐसा कोई काम निकल आता है कि सबके सब पैसे उसी में फुँक जाते हैं। बाढ़ ही बाढ़ ! किसी भी साल तो फसल बच पाती। दस-पन्द्रह वर्षों से खरीफ की फसल तो नहीं ही बचती रबी की फसल भी नहीं लग पाती क्योंकि कार्तिक म खेतों में से पानी जल्दी हटता नहीं, बाढ़ खेतों म रेत छोड़ जाती है पाला पाथर मार जाता है, रही-सही फसलों पर चोर-चाइ भिड़ जाते हैं पशुओं की मेहरबानी हो जाती है। आखिर फसल हो तो कहाँ से ? स्वराज्य स्वराज्य स्वराज्य की बहुत बड़ी आशा थी। स्वराज्य होते ही हमारी फसलें सुहागिनी हो जाएँगी। हमारे दुख-दलिद्दर दूर, हो जायेंगे कई-कई साल तो हो गये। बाढ़ का मुँह रोकना तो दूर किसी ने इस ओर झाँका भी नहीं फसल होती हो नहीं तो कोई क्या

खाये ? तनख्वाह के पैसे मिलते ही कितने है, चालीस रुपये ! सो भी टाइम से नही । खरीद कर खाना साल भर—खेतो की मर-मजूरी, तर त्यौहार, मरन-जीयन यह सब भी तनख्वाह में से ही करना पडता है । खेतो में डाले हुए बीज और लगाई गई मर-मजूरी के पैसे भी डाँड चले जाते हैं, इससे तो अच्छा था कि आदमी खेत बेच-बाच कर नौकरी करे मजूरी करे

'नदिया डोले ए हरी !'

दूर से गीता का यह राग फिर चीरता हुआ मास्टर के दिल तक पैठ गया । यह भयानक गरीबी यह अभाव , मगर लडकी की शादी तो करनी ही पडेगी तीन चार साल से तो खोज रहा हूँ, पर कोई मिले तब न ! दहेज दहेज दहेज सुना था कि स्वराज्य मिलने पर देश सुधरेगा, समाज में क्रान्ति होगी, सरकार दहेज लेनेवालो को कडी सजा देगी, लेकिन पद्रह साल पहले बहन की शादी के समय जो परेशानी हुई थी, वह तो आज और बढ गई है । जो लडका जितना ही पढ़ा-लिखा मिलता है, उसका भाव आज उतना ही तेज है । लगता है आज के समाज के लोगो की शिक्षा और प्रतिष्ठा केवल दहेज लेने तक सीमित है । मास्टर को वर खोजते समय के कई परिवारो के चित्र याद आ गये—ये हैं सुकुलपुरी के सुकुल जी—ये मामखोर के सुकुल है । बेटा मिडिल स्कूल मे कई साल से फेल हो रहा है, दरवाजे पर एक बैल है, दहेज माँगते हैं डेढ़ हजार सुकुल हैं मामखोर के न ! कुरकुरा सुकुल ! सुना है, लडके का चाचा पक्का चोर है, कई बार जेल काट आया है, किन्तु इससे क्या ? सुकुल तो है ? ये हैं मिसरौली के मिसिर जी, दो-बैल की खेती है किन्तु लडका मेट्रिक पास करके किसी दफ्तर में साठ रुपया पा रहा है। बाप कहता है कि लडका साहब है, माँगते हैं दो हजार ! ये हैं बैंधपुरा के दूबेजी—ताघड्ङ्ग ! अपने बेटे की शादी के लिए बडा जोर मार रहे हैं किन्तु क्या है उसके पास ? लडका अपढ़, दो

धोये रोत ! क्या खिलायेगा गीता को ? और कुछ हो भी, तो दूबे-पाँडे के यहाँ कौन शादी करेगा ? चाकरों के यहाँ ।

एक बीभत्स चेहरा—पचास साल का दुबाह ! यही दीनदयाल ले आया था—इस शादी का प्रस्ताव, उसके रिश्ते में था होता है। खेती बारी से खुशहाल है वो, कुछ देने को भी तयार था। नीच दीनदयाल हम गरीबों का अपमान करता है। गरीब हूँ तो क्या भला के समान अपनी बेटी को इस खूसट बूढ़े के गले बाँध दूँ ?

मास्टर का मुँह इस बूढ़े की कल्पना से तीता हो गया। गीता का मासूम-मासूम सुशील चेहरा आँखों में लहरा, फिर खूसट बूढ़े का करंगो के समान बुझा हुआ चेहरा उभरा। मास्टर ने दीनदयाल तिवारी को मन-ही-मन यही गाली दे कर तिक्तता से थूक दिया—साला पाछे पड़ा था मेरे कि यह शादी कर ही दूँ ! पैसे पास नहीं हैं, तो क्या बाप का दिल ना है न !'

लड़कियाँ गाती हुई घर लौट रही थीं। लगता है पुतरी पीट दी गई। मास्टर ने देखा कि गीता का कण्ठ अभी भी आगे है

मास्टर के मन में पुरवइया का झोंका बह रहा है, एक नदी काँप रही है—यहाँ से वहाँ तक सारी धरती पानी में डूबी हुई है !

•

## : ५ :

तह पर तह जमी हुई भादो की अँधेरी रात कछार में फली हुई थी। गाँव के बाहर पानी हहरा रहा था, झपटी चल रही थी, झिमिर झिमिर पानी बरस रहा था। कुछ ही लोग ऐसे थे, जो अपने घरो में निश्चिन्त सो रहे थे अधिकाश घरो में लोग रात भर चारपाई यहा से वहाँ और वहाँ से यहाँ कर रहे थे। दीवारें टूटी हुई थी, जगह-जगह थूनियाँ लगा कर गिरती कड़ियों और धन्नियो को रोका गया था। छतें आठ-आठ आँसू रा रही थी। कही-कही घर के गिरे हुए अशा को टाटी से घेर कर आड कर दिया गया था। इन्हीं अभागे घरो में गाँव के अनेक अभागे परिवार निशा-जागरण कर रहे थे। बसी तिवारी का घर इन्ही घरो में से एक था। बसी का छोटा भाई और महावीर दूबे पडोसी के दरवाज पर सो रहे थे, किन्तु बसी की बीवी और दो बच्चियाँ घर में सोई था। सभी जगह पानी चू रहा था। झपटी के कारण टाटी को चीर चीर कर पानी की बौछारें अन्दर आ रही थी। बसी की बीवी घर के सामान कभी यहा टालती, कभी वहाँ टाल्ती। रहा-सहा अन्न कही भीग कर बरबाद न हो जाए, इसलिए हाडी-सीके में रखे कुछ पिसान और दाल को कभी छीटे से तोपती, कभी यहाँ सरकाती, कभी वहाँ सरकाती। अपने भाग को कोसती भी जाती—'मरद काले पानी की सजा भुगत रहा है। कितनी बार कहा कि घर छवा डालो किन्तु कोई सुनता ही नही। बरसात की यह बैरिन रात काटे नही कटती।

बसी की औरत ( सलोना ) कभी अपने भाग्य को रोती, कभी महावीर दूब को कोसती, कभी चौवाइ-झपटी में हुहकारते हुए बाढ के शोर को सुनती, कभी अपने जीवन के बीते वर्षो के अधकार और सघर्ष से भरी हुई रातों की आवाज सुनती। सलोना की आँखो ने मानो इन भादों की रातो के अलावा कुछ देखा ही नही था।

पानी कुछ थम गया था। सलोना ने मिट्टी में बुझ का दिया जला लिया था, उसे एक ताख में रख कर डलिया की आड़ कर दी थी ताकि हवा से बुझ न जाए। उसने पुआ पर यहाँ-वहाँ गड्ढा में जमा हो गये हुए पानी को काछा और एक चटाई बिछा कर लेट गई। बाप लोग पहले से थोड़ी-सी सुरक्षित जगह में सिमट कर सो रहे थे। सलोना को नींद आने लगी, दिया बुझा कर सो गई। आँख लगे आधा घंटा भी न बीता होगा कि छोटी बच्ची जोर से चीख उठी। सलोना अचकचा कर जाग गई, उसने झट से दिया जलाया और प्रकाश होते ही जोर से चिग्घाड़ उठी—उसने देखा कि छोटी बच्ची के पाँव के अंगूठे से तर-तर खून चू रहा है और तीन हाथ का एक गेंहुवन टाटी का चीर कर भागा जा रहा है! सलोना जोर-जोर से पुकारने लगी— दौड़ो लोगो साँप साँप साँप। इसके आगे वह कुछ कह नहीं पाती थी।

सलोना की आवाज भय के कारण इतनी बेधक हो गई थी कि बादल की बज-बजाहट और तेज झपटी की सन-सनाहट से कसे हुए अंधे वायु मण्डल को फाड़ कर आस-पास के घरों तक जल्दी ही पहुँच गई। महावीर दूबे और छोटा भाई अर्जुन दोनो दौड़े हुए आये पास पड़ोस के और लोग भी आ गये। दूसरी बच्ची पारवती बदहवास हो कर चिल्लाए जा रही थी। महावीर दूबे ने बच्ची को उठा लिया और पड़ोसी के ओसारे में उठा लाये। बच्ची पीड़ा से ऐंठ-सी गई थी।

आस पास के दो चार दस आदमी इकट्ठे हो गये थे और एक-दूसरे को सुना-सुना कर कहने लगे कि 'भाई साँप झाड़नेवाले को बुलाओ! अपने गाँव में तो बनवारी बाबा हैं, किन्तु इनसे जाबिल झाड़नेवाला भाटपार का सिवधनिया चमार है, वह चमरिया पूजे हुए हैं, वह चमरिया उसके मन्त्र में पैठ कर सारा जहर चूस लेता है।' किसी ने प्रतिवाद किया कि 'जा-जा अपने बनवारी बाबा को पायेगा सिवधनिया चमार! बनवारी बाबा तो दूर-दूर तक जाते हैं झाड़ने के लिए, अपने गाँव में वे

घलुवा बने हुए हैं उनको भी बरम बाबा सिद्ध हैं।' पड़ोस के एक बुजुर्ग ने डाँट कर कहा कि 'तुम लोगों को बहस सूझी है और लड़की की जान पर बन आई ह। ऐ अर्जुन ! जा बनवारी भाई को बुला ला।'

'अरे भाई ! बनवारी बाबा को रतौंधी आती ह, उनका निकलना मुश्किल ह।'

'मुश्किल क्या ह, मेरे घर से चोरबत्ती ले लो और जाओ बाँह पकड़ कर बुला लाओ।' अर्जुन चोरबत्ती ले कर अधकार में गायब हो गया। किसी ने सुझाव दिया कि सिवधनिया भी आ जाये, तो बहुत अच्छा रहे। 'हाँ अच्छा तो रहे, मगर आधी रात को उसे बुलाये कौन और वह आये कसे ? यहाँ तो घर से बाहर पाँव रखना मुश्किल हो गया है, इस अँधेरी रात में बाढ़ से खिलवाड़ कौन करे ? हाँ, एक बात हो सकती ह कि बाढ़ के पास खड़े हो कर दो-तीन आदमी जोर से पुकारें सिवधनिया को और कहें कि साँप काटे हुए है।'

'तो भी क्या वह आयेगा ?' एक नये लड़के ने जिज्ञासा व्यक्त की— 'इस भयंकर रात म वह बाढ़ के मुँह में उतरना चाहेगा, सुन कर भी अनसुनी कर देगा।'

'अजी कसे पढ़नेवाले हो तुम लोग ! सिवधनिया कोइ वकील, डाक्टर नहीं है जो आने के लिए सवारी और फीस मांगेगा। यह धरम की बात ह कि यदि साँप झाड़नेवाले के कान में किसी के साप काटने की बात पड़ जाए, तो वह किसी भी तरह आयेगा ही, उसे आना ही होगा।'

नये लड़के ने सोचा, 'सचमुच यह धम का शासन कितना कठोर ह, किन्तु कितना अच्छा ! सुन लिया तो उसे आना ही होगा। किन्तु ये लाग जो गाँव के आदमी को नहीं बुलाने जा सकते, उम्मीद करते ह कि सिवधनिया आये, उसके कान में बात डाल दी जाए तो उसे आना ही पड़ेगा चाहे वह बाढ़ में फिर डूब ही क्यों न जाए। शायद उसकी जान का उतना महत्व नहीं है क्योंकि चमार ह वह।'

पानी कुछ थम गया था। सलोना ने मिट्टी के तेल का दिया जला लिया था, उसे एक ताख में रख कर डलिया की आड़ कर दी थी ताकि हवा से बुझ न जाए। उसने फर्श पर यहाँ वहाँ गड्ढों में जमा हो गये हुए पानी को काछा और एक चटाई बिछा कर लेट गई। बाप लोग पहले से थोड़ी-सी सुरक्षित जगह में सिमट कर सो रहे थे। सलोना को नींद आने लगी, दिया बुझा कर सो गई। आँख लगे आधा घंटा भी न बीता होगा कि छोटी बच्ची जोर से चीख उठी। सलोना अचकचा कर जाग गई, उसने झट से दिया जलाया और प्रकाश होते ही जोर से चिग्घाड़ उठी—उसने देखा कि छोटी बच्ची के पाँव के अँगूठे से तर-तर खून चू रहा है और तीन हाथ का एक गेहुँवन टाटी को चीर कर भागा जा रहा है। सलोना जोर-जोर से पुकारने लगी—'दौड़ो लोगो साँप साँप साँप!' इसके आगे वह कुछ कह नहीं पाती थी।

सलोना की आवाज भय के कारण इतनी वेधक हो गई थी कि बाढ़ की वज-वजाहट और तेज झपटों की सन-सनाहट से कसे हुए भरे वायु मण्डल को तोड़ कर आस-पास के घरों तक जल्दी ही पहुँच गई। महावीर दूबे और छोटा भाई अर्जुन दोनों दौड़े हुए आये पास पड़ोस के और लोग भी आ गये। दूसरी बच्ची पारवती बदहवास हो कर चिल्लाए जा रही थी। महावीर दूबे ने बच्ची को उठा लिया और पड़ोसी के ओसारे में उठा लाये। बच्ची पीड़ा से ऐंठ-सी गई थी।

आस-पास के दो चार दस आदमी इकट्ठे हो गये थे और एक-दूसरे को सुना-सुना कर कहने लगे कि 'भाई साँप झाड़नेवाले को बुलाओ। अपने गाँव में तो बनवारी बाबा हैं किन्तु इनसे जाबिल झाड़नेवाला भाटपार का सिवधनिया चमार है, वह चमरिया पूजे हुए है, वह चमरिया उसके मन्त्र में पैठ कर सारा जहर चूस लेता है।' किसी ने प्रतिवाद किया कि 'जा-जा अपने बनवारी बाबा को पायेगा सिवधनिया चमार! बनवारी बाबा तो दूर-दूर तक जाते हैं झाड़ने के लिए, अपने गाँव में वे

घलुवा बने हुए हैं  उनको भी  वरम बावा सिद्ध हैं।' पडोस के एक बुजुग ने डाँट कर कहा कि 'तुम लोगा को बहस सूझी हैं और लडकी की जान पर  वन आइ है। ऐ अर्जुन ! जा बनवारी भाई को बुला ला।'

'अरे भाई ! बनवारी बाबा को  रतौंधी आती हैं, उनका निकलना मुश्किल है।'

'मुशकिल क्या है, मेरे घर से चोरबत्ती ले लो और जाओ बाँह पकड कर बुला लाओ।  अजुन चोरबत्ती ले कर अधकार में गायब हो गया। किसी ने सुझाव दिया कि सिवघनिया भी आ जाये, तो वहुत अच्छा रहे।' 'हाँ अच्छा तो रहे, मगर आधी रात को उसे बुलाये कौन और वह आये कसे ? यहा तो घर से बाहर पाव रखना मुश्किल हो गया है, इस अँधेरी रात मे बाढ से खिलवाड कौन करे ?  हाँ, एक वात हो सकती ह कि बाढ के पास खडे हो कर दो-तीन आदमी जोर से पुकारें सिवघनिया को और कहें कि साँप काटे हुए ह।'

'तो भी क्या वह आयेगा ?' एक नय लडके ने जिज्ञासा व्यक्त की— 'इस भयंकर रात में वह बाढ के मुँह में उतरना चाहेगा, सुन कर भी अनसुनी कर देगा।

'अजी कसे पढनेवाले हो तुम लोग ! सिवघनिया कोई वकील, डाक्टर नहा है जो आने के लिए सवारी और फीस माँगेगा। यह धरम की बात ह कि यदि साँप झाडनेवाले के कान में किसी के साँप काटने की बात पड जाए तो वह किसी भी तरह आयेगा ही, उसे आना ही होगा।'

नये लडके ने सोचा, 'सचमुच यह धम का शासन कितना कठोर है, कि तु कितना अच्छा ! सुन लिया तो उसे आना ही होगा। किन्तु ये लोग जो गाँव के आदमी को नहीं बुलाने जा सकते, उम्मीद करते ह कि सिवघनिया आये, उसके कान में बात डाल दी जाए तो उसे आना ही पडेगा चाहे वह बाढ़ में फिर डूब ही क्या न जाए। शायद उसकी जान का उतना महत्व नही ह क्योंकि चमार है वह !

तीन-चार आदमी एक साथ बाढ में किनारे खड़े हो कर पुकारने लगे—

सिवधनिया रे ऽ ऐ ऐ !

अरे वसी के बटी का साँप काटे ह ऐ ऽ ऐ !!

बार-बार मे लोग इसी पुकार को दुहरा रहे थे। बाढ़ की ऊँची ऊँची लहरें फन फुफकारती हुई उठती थी और अपने ऊपर उडती इन नाचीज आवाजों को अपनी साँसा से खींच कर निगल लेती थी, जसे कोई विशाल अजगर ऊपर उडती एक फतिंगी को निगल ले। इन लोगो की बेचारी आवाजें टूट-टाट कर इस विशाल जल-प्लावन में कहाँ खो जाती थी, कौन कहे? केवल 'रे ऐ ऐ' यहाँ से वहा तक बज रहा था।

कुछ देर के बाद आवाजें देनेवाले लौट आय, शायद यह विश्वास करके कि सिवधनिया के कान में आवाज पड़ी होगी तो आयेगा नही तो कोई चारा नही है। कौन जान दे कर आय इस बाढ से खल्ने?

अर्जुन बनवारी बाबा का हाथ पकड़े ले आ रहा था। रास्ते के लोग कुछ जाग गए थे, वे चारपाई पर पड़े-पड़े पूछ लेते थे—'अरे भाइ किसको साँप काटे ह, किसको साप काटे ह?

'वंसी भइया की छोटकी लडकिया का—संक्षिप्त सा उत्तर द कर अर्जुन बनवारी बावा को खींचता-सा आगे बढा जा रहा था। लोग सुनते और बड़बड़ा उठते—'बड़ा बुरा जमाना आया ह, भइया! इस बाढ में न जाने कहा-कहाँ के साप आ लगे ह? कब किसे काट लेंग क्या खबर?'

'अरे भाई! बाढ म बह कर आनेवाले साप इतने बदमाश नहीं होते ये तो अपन घरों के ही साँप है। कितने पुराने मकान ह हम लोगो के और बंसो के मकान को तो बात हा मत पूछो! इन पुराने मकानों की नरिया-नरियाके नीचे साँप छिपे हं जहाँ गर्मी शुरू हुई कि कमबख्त लगते ह घरो में घूम घूम ति ति ति ति बोलने! सरे आम रस्तों-चौरस्तों पर

घूमते ह। जब हम लोगो का घर ही खाई, खदक, नदी-नाला के बीच बसा ह तो क्या किया जाय? कही साँप ह, कही बिच्छू है, कही कुछ है, कही कुछ। जहाँ चैत लगा। किसी को बिच्छू काट रहा ह, किसी को साँप काट रहा ह ।'

कोई भी आदमी बरसात की इस रात में कीचड भरे रास्ता के डर से आने का नाम नहीं ले रहा था।

अजुन के हाथ में टार्च थी, तो भी वनवारी बाबा का सतुलन सभालने के कारण उसका चलना मुश्किल हो रहा था। पतली-पतली गलियाँ बहते हुए नावदान। घुटने घुटने भर कीचड और नावदान का पानी पाव ह व हब्ब गंदे कीचड में धँस जाता था। वनवारी बाबा गिरते-गिरते बच जाते, तो भद्दी-सी एक गाली उगल दते। रास्ते में अहीरा के तीन चार घर पडते थे। बरसात में सबसे विकट जगह वही होती था। रास्ते म ही सट कर अहीरों की भसो के नाद थे, नाँद के पास यहाँ से वहाँ तक भसे खाहन कूटती थी। उनकी खुरो की रगड से एक बित्ते के बराबर गहरा गदा कीचड बजबजाया करता था, साथ ही अहीरों के नाबदान भी उनक दरवाजा से ही होकर बहते थे, जो बरसात में फैल कर दूना तिगुना चौडा हो जाया करते थे। उनमें भी घर का गदा पानी और कीचड सडता रहता था। किन्तु इस रास्ते के अलावा कोई चारा नहीं था। अजुन वनवारी बाबा का ब त सँभाल कर यह महासागर पार कर रहा था, वनवारो बाबा 'भुन भुन भुन भुन' अपना असतोष और आक्रोश व्यक्त करते आ रहे थे। पता नही बरसात पर या अहीरा पर या बुलानेवाला पर ।

बहुत सँभालने पर भी वनवारी बाबा का पैर बहुत तेजी से हब्ब से भास में गिरा और बचाते-बचाते भी भास में भहरा पडे। उन्हें सँभालने के फेर में अजुन भी छपाक से गिर पडा। वनवारी बाबा चीख पडे—अरे, ये ससुरे अहीर सब जान लेकर छोडेंगे। घर के सामने खाई-खन्दक खोद रखा ह!' एक भस चिहुँक कर उठी और पूँछ घुमा कर भरपूर वग

से अपनी देह पर मार बठी। कीचड़ के छींटे इन दोनों के चेहरा पर बिखर गये।

दुदशा भोगते हुए बनवारी बाबा बसी के पडोसी के यहाँ पहुँचे। उन्होंने राई मँगवा ली, लडकी को बठा दिया गया। लडकी का हाथ राई की कूरी के पास स्थित कर दिया गया। बनवारी बाबा ने पहले भूत प्रेत चुड़ैल का मत्र पढा। थोडी देर में आश्वस्त हो गये और हँस कर कहा—'नहा भूत परेत नही ह!'

अजुन ने प्रतिवाद किया, 'अरे बाबा भूत प्रेत तो नहीं ही ह भौजी ने साफ-साफ देखा कि चार हाथ का गेंहुवन काट कर भागा जा रहा था।

बनवारी बाबा थोडा-सा मुस्कराये, अरे बच्चा! तुम क्या समझोगे। ये भूत परेत साँप का रूप धर कर भी घूमने ह। बनवारी बाबा फिर झटके से जोर-जोर से मत्र पढ़ने लगे—

इद्र राजा चले बियाहन
बाहें मकड बाहें के
नेउरा कहे मोर नेउरी देखा दे
हत्त हिरिया जिरिया बगालिनि
राजा जनमेजय।'

बच्ची का हाथ सरकने लगा और आगे-पीछे घूमने लगी। बनवारी बाबा ने विश्वास की हँसी हँस कर कहा—हुँऽ बडा जाबिल ह, लेकिन भाग कर जायेगा कहाँ? बोकराता हूँ इसे अभी! और वे जोर-जोर से बोलने लगे—

इद्र राजा चले बियाहन
बान्हें कक्ड बान्हें के
।'

कई घंटे बीत गये, लडकी को होश नहीं आया, उसका शरीर ऐंठता गया। घर में उसकी माँ रो रही थी कोई समझा रहा था—'घबरा क्यों

रही हो बहू, बनवारी बाबा का हाथ बडा जसो हैं, वे साँप को हरा कर ही छोड़ेंगे।'

बनवारी बाबा मंत्र पढ रहे थे और कुछ लोग बातें कर रहे थे— अरे भाई! सिवघनिया नहीं आया, वह तो कान ऐसे जोर से पकडता है कि साँप को रो देना पडता है। मगर बाढ में कौन लाये ?'

'सिवघनिया क्या ह जी! सरजूपुर में दो कुरमी हैं, जो बगाल से आए हैं, वे कौडी फेंक कर साँप को पकडवा मँगाते हैं और साँप आ कर विष चूस लेता ह। मगर चार पाँच कोस इस बाढ-बूढा में कौन जाए, कौन ले आए और आते आते कम से कम दो दिन लग जाएंगे।'

'इन्द्र राजा चले वियाहन
बान्हें ककड बान्हे के ।'

अजुन शून्य आँखो से सारा व्यापार देख रहा था। वह सत्रह साल का बालक गाँव के कुछ क्रातिकारी विचारावाले पढे लिखे लोगो के सम्पर्क में उठता-बैठता था। स्वयं भी बडी जिज्ञासु रुचि का विद्यार्थी था आठवीं में पढ़ता था। वह सुन चुका था और विश्वास भी करने लगा था कि जादू-टोना, मंत्र-तंत्र झूठी चीजें ह। वह खडा-खडा समझने की कोशिश कर रहा था कि जो विष शरीर म फैल गया है, वह बातो से कैसे उतर सकता ह। इस प्रसग पर वह गाँव के कुछ सुपठ लोगो की बहस सुन चुका था। ठीक ही तो कह रहे थे वे लोग कि शरीर का दर्द तो दवाइयो से ही जा सकता ह। डाक्टरो ने बडे-बडे सापो का जहर चीर-फाड करके और दवाएँ दकर उतारा ह। सचमुच मंत्र तो केवल बात ह, बात स शरीर का जहर कसे उतरेगा ?

वह इन विचारो को ठीक से सँभाल नही पा रहा था क्योकि उसी की भतीजी सामने विष का शिकार हुई थी। वह बनवारी बाबा के मंत्रा से रोमाचित हो उठता था और ऐसा लगता था कि अब ये मंत्र साँप का विष पी जायेंगे। मंत्र! शायद सही ही होते हो! बनवारी बाबा का

विश्वास, मन्त्र-जाप, ये सब मिल कर अर्जुन के अविश्वास को दहला रहे थे। हाँ, लोग कहते हैं कि बनवारी बाबा ने बहुत से साँपों का विष झाड़ा है, खतरनाक से खतरनाक साँपों से आदमी को उबारा है, तो यह सब क्या है?

और डाक्टर! यदि यह सच भी हो कि डाक्टरी दवाओं से ही विष उतर सकता है, तो कहाँ हैं डाक्टर हम लोगों के लिए? कहाँ है अस्पताल हम लोगों के लिए? कहाँ है भगवान, कहाँ है? यहाँ से वहाँ तक बाढ़ का शोर और कुछ नहीं!

लड़की मुरझा कर गिर पड़ी। महावीर फफक कर रो पड़े—'बन्द कीजिए तिवारीजी! सब कुछ खतम हो गया...!!' एक भयानक चीख बस्ती के घर की छत को तोड़ कर सन्नाटे में फैल गई। सभी लोग फफकने लगे।

बनवारी बाबा का चेहरा पत्थर के समान जड़ हो गया। बुझी हुई आँखों से शव को घूरते हुए भरे कंठ से बोले—'जीवन में यह मेरी पहली हार है! लगता है मेरे आने में देर हो गई।'

भादों की रात रो रो कर खतम हो रही थी। उषा के उभरते हुए धुँधलके में पुराने टूटे हुए घरों, बजबजाते रास्तों और गलियों की आकृतियाँ उभर रही थीं।

माँ का ममवधी चीत्कार, उजले-उजले फेन उगलती हुई बाढ़ की लौटती लहरें और लहरों पर बहती एक नन्ही लाश! हाँ, तिवारीपुर में सुबह हो गई थी।

•

: ६ :

सतीश को महीपसिंह ने ऊपर कोठे पर बुला लिया। सतीश ऊपर जा कर एक चौकी पर बठ गया। महीपसिंह पूजा पर से उठे थे। अंदर से खबर आई कि 'आज न कोई खवास ह न कोई कहार। चौके का काम काज कैसे हो ? रसोइया पाडे महराज क्या करें क्या न करें ?'

महीपसिंह ने एक बूढे सिपाही को बुलाया, आदेश दिया—अरे, कहाँ मर गये रमपतिया, जगपतिया और रमवा-समवा साले ! साला को पकड तो लाओ। सिपाही बोला—'बबुआ ! रमपतिया तो कही भाग गया कमाने। आ ए बबुआ जगपतिया क तबियत खराब ह, ऊ नही आता ह। आ रमवा-समवा गये है भार लेके। बबुआ जमाना कितना खराब आया है कि अब ई नान्ह जाति के लाग मालिक लोगो को कुछ लतियाते ही नही ह। मालिक ई सुरेश जूताक अदमी है।'

'चुप रह ओ जूता के साले ! बक-बक मत कर, जा जगपतिया को पकड ला।'

'अच्छा-अच्छा मालिक, अच्छा मालिक ज ज जाता हूँ सरकार!'

बूढा सिपाही मनराज अदब से सिर झुका कर चला गया, भुन-भुनाते हुए—

'हुँऽहुँ कितना खराब जमाना आया है राम! मालिक बने बैठे हैं। किसी नौकर चाकर को न भरपेट खाने का मिलता ह न तलब-तनखाह मिलती है लेकिन मलकई का रोब नही छूटत। रमवा-समवा भार न ढोयें तो करें का? इनकी नौकरी में भूखा मरें रमपतिया कमाने न जाये तो क्या माटी खाये ? तिस पर तो इनका गुस्सा देखो, जब जी में आया मार दीहें लातन मुक्कन! जब जो में आया सात पुस्त क फजीहत करके रख दीहें। अब मैं ठहरा बूढा नौकर, सात पुस्त क नौकर, जिन्दगी भर नमक खा आया तो कहाँ जाऊँ ? लेकिन अब जवान लडकवे त नाही इनके खिदमत में

आपन जिनगी गवइहे ! बुढ़ौती में ई मालिक निकाले दें तो कहाँ ठेकान लगी। एही लिए तो मालिक क जी-हजूरी करनी पड़त है, समुरी जिनगी भर क आदत पड़ि गई है !'

सतीश महीपसिंह के पास बैठा रहा—सोचता रहा शायद कोई काम बताएँ। लेकिन महीपसिंह उठ कर अन्दर चले गए। सतीश से कुछ कहा नहीं, तो वह जहाँ था वहाँ बैठा रहा। सोचता रहा—'यह निरुद्देश्य भी जिन्दगी गले पड़ी है, न उठते बनता है न बैठते बनता है।'

मनराज जगपतिया को बुला लाया। जगपतिया को जुकाम हो गया था, उसकी आँखें लाल-लाल हो गई थीं उसकी आँखों में भय की सिहरन नहीं थी, एक दृढ़ निर्भीकता थी। सतीश को यह अच्छा लगा। उसे आश्चर्य हुआ कि बाबू साहब की बुलाहट पर भी जगपतिया घबराहट या मार खाने की आशंका से परेशान नहीं है वरन् उसमें एक आक्रोश भरी लापरवाही है।

बाबू साहब खबर पाकर बाहर निकल आये। आते ही उछल पड़े —कहाँ था रे साला! आज घर का काम कौन करेगा तेरा बाप? रमपतिया साले को नौकरी पर भेज दिया और तू साला बहाना बनाये घर बैठा है।'

जगपतिया दृढ़ आँखों से देखता हुआ बोला—बबुआ, गाली मत दीजिए! रमपतिया नौकरी पर गया है तो क्या हो गया? नौकरी नहीं करेगा तो हम लोग खायेंगे क्या?

बाबू साहब ने जगपतिया का नया रुख देखा, तो कुछ सहम-से गये, लेकिन उनका जमींदारी संस्कार अपने को सँभाल कर बोला—'क्यों रे साले, मेरी नौकरी नहीं है? बक-बक करेगा तो मार जूतों के हाड़ तोड़ दूँगा। चार बीघे खेत दिये हैं तो क्या मुफ्त दिये हैं। खेत मेरा जोतेगा और नौकरी करने जायेगा अपने बाप की!

बाबू साहब क्रोध के मारे मुँह से थूक फेंकने लगे, किन्तु जगपतिया उसी ढग से उत्तर देता गया—'बबुआ! गाली दे लीजिए यह तो शोभा है आप लोगों की, लेकिन यह सही है कि आपके यहाँ हमारे खानदान की परवरिश नही हो सकती। कितने महीने हो गये, मुझे एक पाई भी नही मिली, एक मेरा ही पेट तो नही न ह कि आपके यहाँ इसे जिया लूँ। घर के लोग क्या खायेंगे? खेत तो आपने हमारे बाप दादा को उनकी नौकरी में दिया था, कोई एहसान तो नही है। खेत में कुछ होता ही नही ह। हम दोनो भाई आपके यहाँ खटते हैं, तो खेतों में क्या अपने-आप अन्न पैदा हो जायगा? और कुछ होता भी ह तो बाढ़ में क्या, पहली बरखा ही में डूब जाता ह, ताल में तो खेत दिया ह।'

बाबू साहब को बड़ा गुस्सा आया—एक अदना-सा नौकर उनसे साड़ा-तोटी कर रहा ह। अभिजात संस्कार कैसे इसे बर्दाश्त कर सकता था? वे उबल कर जूता निकाल बैठे।

सतीश को ये सारे दृश्य बहुत खराब-खराब-स लगे। यद्यपि वह इन दृश्यों को पन्द्रह वर्षों से देखता आ रहा था, किन्तु अब ये दृश्य कुछ-कुछ अच्छे नहीं लगते, आउट ऑफ डेट लगते। बाबू साहब जब किसी को मारते या गाली देते, तो किसी की हिम्मत नही होती थी—बीच में पड़ने की। तटस्थ दर्शक की तरह सभी लोग ये वीभत्स दृश्य देखा करते। सतीश परम्परा के अनुसार बीच म तो नही बोला, किन्तु जगपतिया मार न खा जाए इसलिए उसे डाँट कर बोला—'क्या साड़ा-तोड़ी मचाये है, जा कर चुपके से काम कर।

जगपतिया बाबू साहब के तने हुए जूते को लापरवाही से देखता हुआ बोला—'बाबा! काम से कौन भागता ह। जिनगी भर से लात-गारी खा कर काम ही तो करते आ रहे हैं। लेकिन तबीयत ठीक नही है तो का करें?'

'अबे साले, नवाब के नाती ! थोड़ा-सा सर्दी-जुकाम क्या हो गया, तो मौत आ गई। करनी है मजूरी और नखरे दिखाने लगा है नवाबों की तरह ! अब ये साले दरिद्र नान्ह जाति—नवाब के नाती बने फिरते हैं। साली कांगरेसी सरकार क्या हो गई, इन बदजातों का हौसला बढ़ गया ! जुखाम हुआ है राजा साहब को।'

बाबू साहब जूता लेकर आगे नहीं बढ़े, स्तम्भ भाव से आँखों से गुर्राते खड़े रहे, लेकिन जगपतिया ने उसी दृढ़ भाव से जवाब दिया—'सरकार लोगों को, औरों की पीर नहीं मालूम पड़ती। यहाँ तो दरद से मेरा माथा फटा जा रहा है सारी देह टूटी जा रही है और आपको सब बहाना ही लगता है।'

बाबू साहब अपना गुस्सा नहीं रोक सके जूता फेंक कर जगपतिया के सिर पर दे मारा और फिर लपक कर उसकी गरदन पकड़ ली और ताबड़-तोड़ लात-मुक्का से उसे मारने लगे। आज जगपतिया निरीह हो कर चिचिया नहीं रहा था, बल्कि लात-मुक्का खाकर भी एक अजीब आक्रोश भरी आँखों से बाबू साहब को देख रहा था जैसे वह चेतावनी दे रहा था कि अब मैं उतना असहाय नहीं हूँ, जितना तुम समझते हो। यह जो मैं सह रहा हूँ वह मेरी भलमनसाहत है नहीं तो तुम्हें इसी सीढ़ी पर उठा कर पटक सकता था। वह पिटता रहा। बाबू साहब की शक्ल बीभत्स हो गई थी—क्रोध से। अंत में उसे धकेल कर गरजे—'जा साला, ठीक से चौके का काम कर। नहीं तो उखाड़ दूँगा और काट कर फेंकवा दूँगा।

जगपतिया बाबू साहब का उत्तर दिये बिना धीरे धीरे सीढ़ियाँ उतर गया। बाबू साहब गरजते रहे—'ऐ कमीना सुनता है कि नहीं, जा घर के अन्दर कार-बार कर, नहीं तो समझ ले।'

लेकिन जगपतिया उपेक्षा की चाल चलता हुआ अपने घर की ओर लौट गया। न जाने उसके सीने में कितना क्रोध, कितनी घृणा दबी हुई

आग की तरह मुलग रहा हो—जिस पर मजबूरियां की परतें बिछी हुई थी।

बाबू महीपसिंह जैसे मार कर भी हार गये थे। सतीश के सामने ही अपनी यह अजीब पराजय पा कर उन्हे आहत हुए। फुफकारते हुए अन्दर चले गए। सतीश समझ गया कि अब ये दो घंटा से पहले नहीं निकलनेवाले हैं। वह वहां से उठ कर धीरे धीरे नीचे के दीवानखाने में चला आया।

उसका मन एक विचित्र खिन्नता से भर गया था कोई काम नहीं है यहां, बुलाता है यह निकम्मा आदमी—पास बठाता है कुछ बोलता नहीं, घंटा चुपचाप बठे रहो, कोई काम धाम नहीं ऐसे वैसे जिन्दगी चलेगी? और नहीं तो रोज रोज की यह मारा-मारी जी उबा देती है। लेकिन आज जगपतिया ने जो रूप प्रगट किया—वह बहुत ही बहादुर रूप था। यह जड़ आदमी बदले हुए जमाने को नहीं समझता। भीतर से सब कुछ टूटता जा रहा है लेकिन बाहर अभी जीवन का वही रोब-दाब बनाये रखना चाहता है। जगपतिया बदले हुए जमाने की आवाज है लेकिन बाबू महीपसिंह के कान बंद हैं आँखें मुँदी हैं, इनके पास बस गालरी है, मुक्का है लात है और और!' सतीश को लगा कि जगपतिया उससे कहीं बड़ा है। सतीश कितने दिनों से सोच रहा है कि छोड़ दूँ यह नौकरी। नौकरी है ही कहाँ? जमींदारी टूट गई लगान वसूली का काम खत्म हो गया, अब इस तख्ते से उस तख्ते पर बठने के सिवा और काम ही क्या है? वह सोच रहा है कि इस निठल्लेपन को छोड़ कर अपनी गृहस्थी में जुट जाए, उसने कई बार संकेत से महीपसिंह से कहा भी कि कोई काम धाम नहीं है यहां, इतने लोग यहां बेकार बठे रहते हैं।'

महीपसिंह ने एक बेहूदे गुस्से से डांट कर कह दिया कि 'तुम्हारा इसमें क्या जाता है मैं सबको बठा कर तनखा दूंगा।'

किन्तु सतीश जानता है कि महीपसिंह क्या तनखा देते हैं। दो रुपये महीना और खाना कपड़ा। मगर दो रुपये तनखा होती ही कितनी है। पहले जमींदारी थी, आमदनी में सौ जरिए थे। अब इस दो रुपल्ली पर बैठ कर कौन अपनी जवानी पायमाल करे? और यह दो रुपल्ली भी किसे मिलती है। बेचारे सिपाहियों की तनखाह कब से पड़ी हुई है। गाली और डर के मारे कोई बोलता नहीं। दो बार चार बार ये सब अरज करते हैं, मेरा जी खाते हैं किन्तु मेरे पास अब रहा क्या? तब जमींदारी थी, लगान के सारे पैसे मेरे पास आते थे सारे सिपाहियों कहारों, खवासों की तनखाह लगान के पैसों में से चुका दिया करता था। अब तो यह ठनठन गोपाल है। सभी लोग इस निकम्मे सूनेपन में छटपटा कर मर रहे हैं, न भागते बनता है न रहते बनता है। सभी लोग चाहते हैं कि इस जेल से छूटें, लेकिन डर कर सामने नहीं आते। यह जमींदार टूट रहा है उजड़ रहा है मगर इसकी जड़ता नहीं टूट रही है, केवल किसी को मार मरवा सकता है किसी को बेइज्जत कर सकता है। और ये सिपाही जो अलग-अलग रूप से छूटने की कोशिश कर रहे हैं, इस राक्षस का आदेश पाते ही गोल बाँध कर टूट पड़ते हैं अपने ही किसी सहयोगी पर। नहीं तो कोई इस अकेले जमींदार से डरता क्या? कोई भी सिपाही इसे पटक कर मार सकता है!

सभी अलग-अलग दुःखी हैं मेरे पास आ कर रोते हैं मैं भी तो रोता हूँ किन्तु किसके सामने रोऊँ? जो कोई सिपाही छुट्टी ले कर घर जाता है दस-पाँच दिन घर रह कर अपनी खेती-बारी सँभालता है उसे बुलवा लिया जाता है। लोग झख मार कर आते ही हैं। क्या करें, आयें कैसे नहीं! कितने सिपाहियों को खेत दे रखा है बिना लिखा पढ़ी के। लोग डरते हैं कि खेत छीन लेगा—कानून से या बल से। जो कोई इससे अलग होता है उसे यह काट कर फेंक देना चाहता है, उसकी सेवाओं का ख्याल किये बिना। सिपाही मरौवत भी तो करते हैं वे इसे अपना

मालिक समझते हैं। जिन्दगी भर इनके यहाँ खाते-खेलते आये, दो-चार वर्ष और सही बड़े आदमी हैं कौन इनसे रिश्ता तोड़े।

और यह है कि सात पुश्त से सेवा करनेवालो की सातो पुश्त एक पल में तार दे।

जाहिलो की तरह सिपाही लाठी लिए यहाँ-वहा बैठे है। कभी इस सिपाही की पुकार होती है, कभी उस सिपाही की, कभी सतीश की पुकार होती है, कभी चाकर मल की। बस पुकार ही पुकार है। लोग जा कर सामने बैठते है या खड़े होते है, तो बस बैठे रहते हैं, खड़े रहते हैं, और जब महीपसिंह उठ कर कही चले जाते हैं, तो लोग धीरे से सरक कर अपनी-अपनी उदास जगहो पर लौट आते है।

दो रुपये महीने और खाना कपड़ा। दो रुपये तो गये चूल्हे भाड़ मे, खाना कपड़ा भी मयस्सर नही। सिपाहियो के फटे अँगरखे, फटी धोतियाँ उसकी आँखो में उभर आई।

खाना भी क्या मिलता है? आज-कल सिपाही उपवास कर जाते हैं। वे दिन अब कहाँ रहे, जब सैकड़ो आदमियो के लिए अच्छा चावल और अच्छा आटा पकता था। अब तो जौ का आटा और कोदो का भात भी सिपाहियो के लिए नही मिल पाता है। आधा पेट खा कर उठ आते हैं। महीप बाबू का क्या खबर? वे तो सोचते है कि जहा से हो वहा से कारिन्दा लोग इन्तजाम करें। कारिन्दा लोग कहा से इन्तजाम करें, अपने सिर से। लगान अब आती नही, जमीन्दारी टूटने के पहले ही इसने दो तिहाई खेत बच दिए और बेच कर खा गया। बनिया के यहाँ से उधार माल आ रहा है महीनो से। अब वे भी देने मे आनाकानी करने लगे है। सिपाही बचारे आधा पेट भोजन भी नही पायेंगे, तो क्या पायेंगे?

किन्तु बाबू साहब को किसी की क्या परवाह? वे नौकर रखेंगे ही नये नये कारिन्दे रखेंगे दुनिया भर के लोग अपना ढेंढ कमण्डल थम कर

रहे हैं और ये साहब हैं कि जमाने की आवाज से बेखबर अपनी ही वैयक्तिकता में बसे हैं, सुझाव भी किसी का नहीं मानते, अपने को दुनिया से होशियार जो समझते हैं।

सतीश अपनी मानसिक उलझनों में रुलता-रुलता थक गया था। कई महीने हो गए इस तरह अपने में रुलते हुए, किन्तु इस फन्दे से वह साफ-साफ निकल नहीं पा रहा था। जगपतिया ने बाबू साहब को जो जवाब दिया, वह सतीश के दिल को हल्का कर गया। लगा जैसे जगपतिया की आवाज उसकी अपनी ही आवाज हो, लगा जैसे जगपतिया के रूप में वह स्वयं बन्धन तुड़ा कर भाग निकला हो।

किन्तु उसे बड़ा अफसोस हो रहा था कि जो काम वह नहीं कर सका, उसे जगपतिया ने कर दिया। वह सोच रहा है, केवल सोच भर रहा है महीनों से, किन्तु जगपतिया ने बिना सोचे विचारे उसे कर लिया।

सतीश को लगा कि यह जाति-पाँति, पद और पैसा का बड़प्पन अन्याय को सह लेने का एक मिथ्या संस्कार सिखाता है, अपमान का झूठा भय भोग देता है।

जब महीपसिंह अपनी अन्य छावनियों पर घूमते रहते तो सतीश रोज शाम को घर चला आता किन्तु जब वे सिंहपुर में होते तो सतीश घर नहीं आने पाता। पता नहीं उन्हें कब कौन-सा काम पड़ जाए? सतीश जी मसोस कर गाँव से एक मील की दूरी पर ही स्थित सिंहपुर में रुक जाता।

किन्तु वह आज नहीं रुका, जिद करके छुट्टी ले ली। और यह भी साफ-साफ कह दिया कि मैं चार-पाँच दिन तक नहीं आऊँगा, जोताई-बोवाई का काम शुरू हो गया है, सारा काम पिछड़ रहा है।'

उस दिन महीपसिंह बहुत जिद नहीं कर सके, न जाने क्यों? वे कुछ आहत स्वर से इतना ही कह सके—अच्छा जाओ, सभी लोग मुझे छोड़ कर चले जाओ।

• ७ •

रामकुमार कस्बे से घर आया, तो सीधे बैलों के पास चला गया। देखा नाद पर बैल चुपचाप खड़े हैं, बित्ता भर हाथ में। कुकरौंछों के काटने से वे हाथ में कूद-कूद कर पूँछ से अपनी देह पट्ट-पट्ट पीट रहे थे। नाद में झांक कर देखा तो बिना पानी का भूसा बसा हुआ था। गोबर अनकाढ़े यहाँ-वहाँ फैला था।

बैलों की चरनों से दरवाजे पर आया, तो देखा दरवाजे पर सरहर नहीं लगा है, कूड़ा करकट यहाँ से वहाँ तक बिखरा है। बनवारी बाबा खाट बिछा कर लेटे हैं और एक छोटी बच्ची को बैठा कर भूत की कहानी सुना रहे हैं। बच्ची भय से सिहर सिहर कर भी कहानी में रस ले रही है। दरवाजे पर अंधकार है। रामकुमार ने आते ही पूछा— रामप्रकाश कहाँ है?

बनवारी बाबा ने रामकुमार की आहट पाते ही कहानी बंद कर दी और खाट पर उठ बैठे। उनके बोलने के पहले ही लड़के बोल उठे— 'भइया मैदान गये हैं।

रामकुमार मारे गुस्से के जल भुन गया। जोर से एक खाट पटक कर उस पर बैठ गया, लड़की अन्दर भाग गई यह बताने के लिए कि बाबूजी आए हैं। रामकुमार की माँ लोटे का पानी और गुड़ लेकर बाहर आई। रामकुमार ने झटके से सारा पानी पैर पर डाल लिया और पूरा गुड़ मुँह में ठूँस लिया, फिर लड़की की पीठ पर मुक्का मार कर कहा, 'जा पानी ले आ, बैठा क्या है?

उसी बीच रामप्रकाश लोटा लिए आ पड़ा। उसके आते ही रामकुमार उस पर बरस पड़ा— क्या रे कमीन घर बैठा-बैठा करता क्या है? मारे-के-मार अधिके घर पर इकट्ठा हो कर नाव तक हूरते हो और

कोई भूत की कहानी कह रहा है, कोई लाटा ले कर दो घटा मैदान म घूम रहा ह। किसी को यह खबर नहीं कि भूख पर बल नाद के पास कीचड में मडिया मार रहे हैं। बिना पानी के सानी ठूँस दिया गया ह नादा में। किसी को ह चिन्ता कि बल मरेंगे कि जियेंगे। बस अपना पेट भरना चाहिए। गोबर यहाँ से वहाँ तक फला ह दरवाजे पर कूडा बिखरा हुआ ह, अब ये सारे काम मैं स्कूल स आ-आ कर दिया करूँ।'

रामप्रकाश ने चिचियाती-सी आवाज म उत्तर दिया—म क्या करूँ? इन्होने ही मुझे शाम को भगनहा के बाजार भेज दिया सुरती के लिए। कहा कि हम बल-वल खिया लेंग, गोबर-वोबर काढ लेंग। म थाडा देर पहले आया, तो इन्होन कहा भी नहीं कि बला का हटाया या खिलाया पिलाया नहीं गया ह।'

रामकुमार न रामप्रकाश को डाँट कर कहा—तुम सुरती और भली के लिए मत जाया करो। जिन्दगी भर ये सुरती भेली के पीछे घर को बरबाद करते रहे, ऐसी अकारथ जिन्दगी भगवान किसी को न दे। बल नाद पर भूखे मर जायेंगे, मगर सुरती की जुगाड जरूर होगी।' बनवारी बाबा अब तक चुपचाप सिर गडाय सुनते रहे। एका एक उबल पडे—'दुनिया भर के लोग बाहर स आते ह तो घर आ कर सान्ती से सुख-दु ख की बातें करते ह, आ एक तू आते हा ता गरमइले आत हो। दुनिया भर के लोग अपने बाप को न जान क्या-क्या खिलात ह और इहाँ दो पइसा की सुरती मगा ली ता महाभारत मच गया। म ही जिन्दगी भर काम करता रहूँ? रतौंहा आती ह तो क्या करू? जब मेरी जवानी था तो अनम्हारे पास काम के लाके रख दता था अब नहीं सूझता ह ता क्या जान लागे तुम लाग मिल-जुल कर। हह! एक म हा मिला हूँ इधर से आवें ता हूँसा, उधर से आवें तो हूँसा। कभी ला कर कोई चीज हाथ से दो नहीं दू पइसा की सुरती मँगा लो तो आँखा में किरकिरी की तरह गड रही ह।

वनवारी बाबा ने गुस्से में अपनी थली में से सुरती निकाल कर फेंक दी और गरगरा कर चुप हो गये। रामकुमार माथा पकडे बैठा रहा। उसकी माँ ने वनवारी बाबा को डाट कर कहा— का आहर ठकुर बनास भूके, तुम्हारी सुरती को कौन टोकता ह, बात समझे-बूझे बिना लगते हो पुँवाने। बात क्या हो रही ह और ले कर क्या बठ गये? लडिका बने बठे हैं जिनगी भर कि इनके हाथ पर ले आ कर कोई गट्टा बतासा रखेगा। बढ हो गये लेकिन समझ नही आयी। नाद पर खडे खडे बल मरते रहेंगे इनकी बला से, इन्हें तो बस अपने पट की फिकर रहती ह।

वनवारी बाबा भभक उठे—'आ तू तो और कूटनी बनी बठी है, तू ही यहाँ की बात वहाँ और वहाँ का बात यहा लगाती ह, तू ही कोहलाधार कराती ह, मेरा पेट निहारती ह, सभी लोग मिल कर मुझे मार डालो झझट खतम हो जाएगी। म ही हूँ इस घर में एक काँटा— जब देखा तब मुझी को हूँसा इधर से उधर से । जिसके बेटे जवान हों, लायक हा—वह बाप काम करे, धिक्कार ह ऐसे बाप को और ऐसे बेटा को! तू मेरी औरत हो कर मेरा खाना निहारती ह, तुझे नरक में भी जगह नही मिलेगी ।'

'चुप रहिए जो!' रामकुमार तडप कर बोला—'आप मौज कीजिए, लडका का मर जाने दीजिए। मेरी आज तक की सारी कमाई निकम्मेपन में फूँक दी, अब और क्या चाहते ह? बस भूत की कहानी कहेंगे, घूम घूम कर साँप और कँवरू झारेंगे, मेला-हटिया करेंगे, पहुनाई करेंगे और जोर जोर से चीख कर गाँव के लोगा को घर का हाल सुनायेंगे।'

वनवारी बाबा की वाणी खुल गई थी, खुलती था तो रुकने का नाम नहीं लेती थी। वह फिर यहाँ-वहाँ की बातें मिला कर बोकरने लगे।

रामकुमार माथा थामे खाट पर बैठा था—'ओह अरे ब लि रे लि ! ऐसी कच्चाइन दुनिया में कहीं नहीं होती होगा। ई बूढ़ा घर सर्वनाश करके ही छोड़ेगा।'

बनवारी बाबा बके जा रहे थे। माँ ने रामकुमार से कहा—जा ठो पता—चल कर भोजन कर ला इन्हें यही चिचियाने दो।

रामकुमार उठ कर खाने चला गया, बाहर बहुत देर तक बनवारी बा स्वगत चिल्लाहट करते रहे।

रामकुमार खा कर आया, तो उसका क्रोध ठंडा हो गया था और नवारी बाबा का भाषण भी धीरे धीरे मुरझा चला था। रामकुमार रपाइ पर लेट गया।

उसकी आँखों में नींद नहीं आ पा रही थी। वह थका हो कर भी पने घर के भविष्य के बारे में सोच रहा था—क्या होगा इस घर का? घर को दो पग आगे बढ़ाता हूँ तो ये घरवाले चार पग पीछे ढकेलत । गाँव में तमाम लोग जी-जान से मेहनत कर अपना घर बना रहे ह और हमारे घर के लोग ह जो कि निकम्मेपन में डूबे रहे ह। न मुसीबतों से रास्ते बना बना कर मैंने इस घर को सुख और सम्मान दर्जे तक पहुँचाया है किन्तु घर के लोग ह जो हमेशा आलस का दामन पकड़े रहे।

रामकुमार को नींद नहीं आ रही थी। उसके जीवन के सारे पछे सपने उसे घेरते हुए अंधकार में विलीन हो रहे थे। आकृतियाँ आकृतियाँ आकृतियाँ! डरावनी असुखद और अप्रीतिकर!! जब से उसने होश सँभाला अपने को अंधकार में ही डूबा हुआ पाया।

धीरे धीरे न जाने कब नींद की गोद में लुढ़क गया। परिवार में ह था, उसके पिता बनवारी थे, उसकी माँ थी उससे तीन साल छोटा क भाई था, बड़े चाचा धनपाल तिवारी थे बड़ी चाची थीं और उनका।

लडका बसी था और कुछ छोटे छाटे सदस्य। रामकुमार बडा था धमी छाटा। चाचा धनपाल और चाची अतरबासी दोनो एक-दूसरे से बढ कर थे झगडियागी म। बनवारी अपने बडे भाई धनपाल को इज्जत करते थे या उमसे डरते थे, कुछ कहना मुश्किल है। व धनपाल के सामने कभी जबान नही खोलने। धनपाल बनवारी को बेइज्जत कर देता गाली बकता किन्तु बनवारी चू नही करते।

होश सँभालते ही रामकुमार के स्वाभिमानी हृदय को चाचा चाची का व्यवहार बडा असह्य मालूम पडने लगा, अपने पिता का इस तरह डरे हुए पिल्ले की तरह पूँछ दबा कर फिरना उसे रह रह कर धक्का मार जाता।

खेती-बारी अच्छी था, अच्छा फसल उगती था। चाचा धनपाल जवार के पुराने किस्म के अच्छे वद्य थे साथ-ही-साथ मौके पर पाथी-पत्रा भी सँभाल लेते थे। उनकी बडी-बडी मूँछें, सख्त आखें, संयत हँसी और कमा हुआ मझोला कद साँवला रग—सब उनकी जागरूक कमठता के परिचायक थे। दूसरी ओर पिता बनवारी गेहुएँ रग के लम्बे पुरुष थे, जिनकी आँखो म तरल भावुकता तरती रहती वे बात-बात पर भभा-कर हँसते। धनपाल के प्रतिकूल उन्हें गाने बाजार, हटिया-मेलो म घूमने, किस्सा-कहानी कहने, खेलकूद में सरवर करने तथा लाठी म तेल लगा कर मटरगश्ती करने म बडा रस मिलता था। धनपाल मौके-बमौके बनवारी का डाँट देते थे, किन्तु अक्सर व इनकी स्वच्छन्द वृत्ति पर अकुश नही लगाते थे। किन्तु जब बेइज्जत करते तो बुरी तरह करते। बेइज्जत करने का कारण बनवारी की अवारागर्दी नही होती, वरन् बनवारी की पत्नी का व्यवहार होता।

धनपाल का ही तरह धनपाल की औरत भी बडी नामाकूल थी। वह गरबरी कर्कशा था। धनपाल स्वभाव से कुटिल हो कर भी गम्भीर थे,

कम बोलते थे। किन्तु उनकी औरत बड़ी मुहज़ोर थी, बात-बात में कुमार की माँ की बेइज्जती कर देती। जेठानी होने का उसे गौरव प्राप्त था, उस गौरव को किसी भी क्षण वह विस्मृत नहीं कर पाती। कुमार की माँ यदि किसी बात पर विरोध करती, तो उसे झाटा पकड़ कर पाट देती। कुमार इन सारे दृश्यों को देखता, तो उसका दिल माँ की व्यथा से भर आता और साथ-ही साथ एक लाचार क्रोध चाचा के परिवार के प्रति उसके तन मन को तपा जाता।

जेठानी धनपाल से कुमार की माँ के खिलाफ ज़हर उगलती कि 'ऐसी ह यसी है, कबही है न जाने किस घर से यह डायन आई है न ढंग न महूर, बस दिन रात झगड़ा!

धनपाल एक का तीन सुन कर आग बबूला हो जाता। उसे लगता कि बनवारी की पत्नी तेज है बनवारी का कान फूंक कर कभी आग लगा देगी और एक दिन ऐसा आयगा कि ये सब हमारे अधिकार से बाहर हो जायेंगे, इसलिए धनपाल बनवारी को डाँटता—कैसे मेहर मउगे हो कि जोरू का दिमाग बढ़ा रखा है उसे न लाज है न लिहाज। बड़ों के मुँह लगती है तुम्हारी भउजी को तो कुछ खतियाती ही नहीं।'

बनवारी इसी पर आग-बबूला हो जाता बात का समझे-बूझे बिना भाई के सम्मान की रक्षा के लिए पत्नी को जूतों जूता पीट देता। पत्नी लाज के मारे रो भी नहीं पाती। आँखों में सारे आँसू पी कर रह जाती। कुमार इन दृश्यों को देखता, तो माँ की गोदी में सहमता हुआ गिर आता। माँ उसे जोर से छाती में भींच कर फफक पड़ती। कुमार की आँखें प्रतिहिंसा की आग में लाल हो जातीं—'माँ, माँ, मैं मैं!' वह आगे की बात उसे नहीं कह पाता।

धनवारी धनपाल के लिए जान देता, क्योंकि धनपाल ने बनवारी को अवारागर्दी के लिए काफी छूट दे रखी थी। बनवारी इस छूट को भाई का असीम प्यार समझता। लेकिन धनपाल ने भाई को छूट देकर उसे

निकम्मा बना देना चाहता था, घर की वास्तविकताओं से एकदम बेखबर। घनपाल अच्छी खेती कराता। गल्ला बेच कर रुपये बटोरता, रुपये कर्ज देता—छोटी-छोटी जातियों के लोगों को, सूद बटोरता, बैदकी से भी कुछ न कुछ मिल जाता, उसे बटोरता, बस बटोरना-बटोरना और कुछ नहीं। बनवारी को मालूम भी न होता कि घर कैसे चलता है। लेकिन कुमार की माँ इन सारे व्यापारों को बड़े गौर से देखती, वह आनेवाली मुसीबत का अन्दाज लगा कर कभी-कभी बनवारी को धीरे से समझाती भी कि जरा बाल-बच्चों के प्रति सावधान हो जाओ, आवारागर्दी छोड़ कर गृहस्थी में मन लगाओ। इन उपदेशों से बनवारी बिगड़ पड़ता। भाई के प्रति वहबूदी दिखाने के लिए चिल्ला चिल्ला कर पत्नी को मारने लगता—'फलनवा की नानी आयी है मेरा घर फोड़ने! देवता के समान भाई के खिलाफ जहर उगलती है, छिनरझप खेलती है मुझसे। जानती नहीं है मेरा नाम बनवारी है।'

घनपाल का लड़का बसी था, कुमार से एक साल छोटा। बसी की बड़ी बहन की शादी बड़ी धूमधाम से हुई थी। तब के जमाने में घनपाल ने एक हजार दहेज दिया था और बड़े जोर शोर से बारात आई थी। कुमार की माँ भीतर-ही भीतर छाती पीट कर रह गई थी—घर की बरबादी होने में क्या कसर है। घनपाल ने सब कुछ अपने जमा किए हुए रुपये में से खर्चा किन्तु उसने सबसे कह दिया कि उसने कस्बे के बनिया से कर्जा लिया है। कर्जा भरने के लिए वह हर साल अनाज बेचता और अपनी तिजोरी में डाल लेता। बनवारी कान में लुरकी पहन, लुटकी काढ़े हुए तेल से मजा साटा लिए हुए अपनी उसी मस्ती में घूमते रहते।

बंसी जन्म से ही चट था। पढ़ने-लिखने में निपट बुद्धू किन्तु मार-पीट में शैतान, बिगड़ा हुआ दुलरुआ! कुमार और बसी दोनों माटपार के स्कूल में पढ़ते थे। बसी अकसर स्कूल से भाग जाता, जिस दिन

भागने नहीं पाता, उस दिन दिन भर पिटता। हिसाब, भूगोल, भाषा सभी में धुल हुआ भाक। मास्टर हेराए गदहे की तरह उसे पीटता दोय दोय।

कुमार अपनी तेजी म मानो नहीं रखता था। बडी ही बारीक बुद्धि का विद्यार्थी था यह। शरीर म दुबला पतला कि हड्डी-हड्डी गिन ला किन्तु उसका अंग-अंग स्फूर्ति से नाचता रहता। मास्टर उस की बडी तारीफ करते। बंसी तन और दिमाग दानो म समान भाव से मोटा था। वह एक ओर पिटता दूसरी ओर कुमार की तारीफ सुनता। उसके मन म कुमार के प्रति ईर्ष्या की ग्रंथि बनती जा रही थी। यह इस बात से और भी नाराज रहता कि कुमार उसे क्या नहीं नकल करा देता है। वह रार ठान कर कुमार को पीट देता। घर आने पर घर म कौआरोर मचता। बंसी की माँ चिल्ला कर कहती—अभी माँ है बमा ही दम! दाना सम्बरी नाव। हाय हाय देखो ता मेरे लाल का पाठ म मरकी-नवना मास्टर के डंडा की साठ पड गयी है। उसका ताउन ल आ उसकी सात बहिना सीतला मइया उठा ल जा और इस दहिजरा का ता दना खडा बडा भाई को पिटवाता है यह नहीं कि बड़ा करा है इनने म ही छोटा है पर है मरजाई की तरह तीता। आ कभी भला नहीं हागा मेरे लाल का अनभल चाहनवाली का।

कुमार की माँ वह पर कभी भी अनिष्ट या अपशकुन की मार बरदास्त नहीं कर सकती थी वह जेठानी का टोक देती। बस कुह-राम मच जाता।

बंसी धनी बाप का बेटा है और कुमार गरीब बाप का। लडके आपस में कभी कभी इस सत्य को उछाल देते। घर एक ही है लेकिन एक का बाप गरीब है एक का धनी। यह कभी अजीब धनी-गरीबी! किन्तु है क्षा है। बंसी का माँ चारा चारो उसे मिश्री सभी, छाहार देती उसके लिए लाल लाल पोशाक बनवाता स्कूल जान के लिए

पैसे देती, मेले-हटियों के दिन वह रुपया तक पा जाता, कभी-कभी वह अपनी मां के बक्स म से कुछ मार भी लाता। वह उद्दंड हो कर घूमता, काचुर-काचुर मुँह चलाता, आँखें मटकाता, मुँह बिराता और जिस तिस को मार बठता। उसके दोनो हाथो म दो भाटे मारने गुजटे पड़े थे, उन्ही का किसी के सिर पर द मारता। स्कूल म यदि यह काड होता तो मास्टर उसकी अच्छी पिटाई करता और यदि स्कूल के बाहर होता और कोई आरहन ले कर उसकी मा के पास जाता ता उसकी माँ समझा-बुझा कर कभी दो एक पसा द कर दरहम-बरहम करने की कोशिश करती।

उस दिन मास्टर ने उसे कितना पीटा था जब बसी ने राह चलते समय एक बडा सा ढटा ले कर मैले के ढेर पर द मारा था और मले के तमाम छोटे-छोटे छींटे उसके साथ चलते हुए उस धोबी के बच्चे के ऊपर फल गये थे। धोबी के बच्चे मनबोधना ने मास्टर से सवाल दाग दिया। मास्टर बसी से तग आ गया था, उठा उठा कर पटकना शुरू किया और मनबोधना के सारे कपडे बसी से धुलवाये, बसी से मनबोधना को नहलवाया भी। किन्तु बसी फिर जस का तस! शाम को छुट्टी हुई तो बसी ने मनबोधना को खदेड लिया। मनबोधना भी भागने में बडा तेज था। भागा लोमडी की तरह भुडकी मटाता हुआ। बसी दौडते दौडते हाँफ गया मनबोधना को नही पा सका ता गाली दे कर कहा—'अच्छा साले धाबी, आना कल।

कुमार का बसी की ये हरकतें बडी घिनौनी लगती। वह शुरू से ही अपने पढने लिखने में मशगूल रहनेवाला लडका था। स्कूल से घर घर से स्कूल। घर आ कर वह घर के काम म पिस जाता जब कि बसी घर आ कर यहाँ-वहा भटकता। दिन भर मे पचास उलाहने आते—बसी ने मेरा पाजामा फाड दिया ह, बसी ने मेरे लडके का सर फोड दिया ह, बसी ने चाकू से मेरा अमोला काट लिया ह बसी ने मेरे बल छोड कर पता नही कहाँ हाँक लिये ह मेरा लडका रामनाई बना रहा

भागने नहीं पाता, उस दिन दिन भर पिटता। हिसाब, भूगोल, भाषा सभी में धुला हुआ साफ। मास्टर हेराए गदहे की तरह उसे पीटता धाँय धाँय !

कुमार अपनी तेजी में सानी नहीं रखता था। बड़ी ही बारीक बुद्धि का विद्यार्थी था वह। शरीर से दुबला पतला कि हड्डी-हड्डी गिन लो किन्तु उसका अंग-अंग स्फूर्ति से नाचता रहता। मास्टर उस की बड़ी तारीफ करते। बंसी तन और दिमाग दोनों में समान भाव से मारा था। वह एक ओर पिटता दूसरी ओर कुमार की तारीफ सुनता। उसके मन में कुमार के प्रति ईर्ष्या की ग्रंथि बनती जा रही थी। वह इस बात से और भी नाराज रहता कि कुमार उसे क्या नहीं नकल करा देता है। वह रार ठान कर कुमार को पीट देता। घर आने पर घर में कौआरोर मचता। बंसी की माँ चिल्ला कर कहती—जैसी माँ है वैसा ही बेटा। दोनों नम्बरी नाव। हाय हाय देखो तो मेरे लाल की पीठ में मरकी नबना मास्टर के डंडा का साठ पड़ गयो है। उसका काउन न जा उसकी सात बहिना सीतला मय्या उठा ले जा और इस दहिजरा का तो दवा खड़ा-खड़ा भार का पिटवाता है यह नहीं कि नकल करा दे देखने में ही छोटा है पर है मरचाई की तरह तीता। जा कभी भला नहीं होगा, मेरे लाल का अनभल चाहनवाले का।

कुमार की मा उसपर कभी भी अनिष्ट या अपशकुन की मार बरदाश्त नहीं कर सकती थी वह जवानी का टोक देती। बस कुहराम मच जाता !

बंसी धनी बाप का बेटा है और कुमार गरीब बाप का। लड़के आपस में कभी कभी इस सत्य को उछाल देते। घर एक ही है लेकिन एक का बाप गरीब है एक का धनी। यह कमी अजीब धनी-गरीबी। किन्तु है तो है। बंसी की माँ चाग-न्यारी उसे मिश्री गरी, छोहार देती। उसके लिए लाल-लाल पोशाक बनवाता, स्कूल न जाने के लिए

पैसे देती, मेले हटिया के दिन वह रुपया तक पा जाता, कभी-कभी वह अपनी माँ के बक्से म से कुछ मार भी लाता। वह उद्दंड हो कर घूमता, काचुर-काचुर मुँह चलाता, आँखें मटकाता, मुँह बिराता और जिस तिस को मार बठता। उसके दोनों हाथों म दो मोटे-मोटे गुजटे पड़े थे, उन्हीं को किसी के सिर पर द मारता। स्कूल म यदि यह काड होता, तो मास्टर उसकी अच्छी पिटाई करता और यदि स्कूल के बाहर होता और कोई ओरहन लेकर उसकी मा के पास जाता तो उसकी माँ समझा बुझा कर कभी दो-एक पसा द कर दरहम-बरहम करन की कोशिश करती।

उस दिन मास्टर ने उसे कितना पीटा था जब बसी ने राह चलते समय एक बडा सा डटा ले कर मले के ढेर पर दे मारा था और मैले के तमाम छोटे-छोटे छींटे उसके साथ चलते हुए उस धोबी के बच्चे के ऊपर फल गये थे। धोबी के बच्चे मनबोधना ने मास्टर से सवाल दाग दिया। मास्टर बसी से तग आ गया था, उठा उठा कर पटकना शुरू किया और मनबोधना के सारे कपड़े बसी से धुल्वाये, बसी से मनबोधना को नहलवाया भी। किन्तु बसी फिर जस का तस। शाम को छुट्टी हुई तो बसी ने मनबोधना को खदेड लिया। मनबोधना भी भागने में बडा तेज था। भागा लोमडी की तरह भुडकी कटाता हुआ। बसी दौडते दौडते हार गया मनबोधना को नही पा सका, तो गाली दे कर कहा— अच्छा साले धोबी, आना कल!

कुमार को बसी की ये हरकतें बडी घिनौनी लगतीं। वह शुरू म ही अपने पढ़ने लिखने में मशगूल रहनेवाला लडका था। स्कूल से घर घर से स्कूल। घर आ कर वह घर के काम म पिस जाता जब कि बंसी घर आ कर यहा वहा भटकता। दिन भर म पचास उलाहने आते— बसी ने मेरा पाजामा फोड दिया है, बसी ने मेरे लड़के का सर फोड दिया है, बसी न चाकू से मेरा अमोला काट लिया है, बसी ने मेरे बैल छोड कर पता नहीं कहाँ हाक दिये हैं मेरा लडका गदनाई बना रहा

था तो बसी ने आ कर सारी रोशनाई ढरका दी और भाग गया। बसी खेत मे ढूंका लगा था, शाम को मेरा लडका आ रहा था तो भूत की बोली बोल कर डरा दिया लडका बीमार पडा हुआ है। फेंकू बाबा कुएं पर गगरा छोड कर वासुदेव को जल दे रहे थे कि बसी कुएं म गगरा डाल कर भाग गया। बसी आज महादेवजी को उठा कर खलिहान के पास फेंक आया है बसी ने आज स्कूल में मार खाई तो बरम बाबा की पीढी पर दो लात मार कर वहाँ पेशाब कर दिया, बसी बसी बसी !

और इस बसी को पहनने के लिए बढ़िया कपडे मिलते, खाने को अच्छी चीजें मिलती और कुमार की देह पर एक मला-कुचला कुर्ता पडा होता। फीस माँगते समय बडी कचकच होती। खाने के लिए उसे रूखा-सूखा मिलता। जो कुछ मिलता कुमार चुपचाप निगल लेता, उसकी आंखों म एक अद्भुत प्रकार की तरलता और दीनता तैरती रहती। बसी मेला में जा कर रुपये फूंकता। तब कुमार अपनी इकन्नी दबाए हुए सौ बार सोचता कि इसका क्या लूं क्या न लूं। और अन्त में वह इकन्नी लिए हुए घर लौट आता।

माँ की छाती फटती यह सब देख-देख कर कुमार कुछ नहीं बोलता। किन्तु माँ का हृदय कुमार के दिल के सारे दर्द को पी लेता। वह रह रह कर अपने निकम्मे पति से लड बैठती।

कुमार तेरह साल का हो गया था। दर्जा पाँच म पढता था भाट पार के मिडिल स्कूल में। सर्दी की रातों में लडकों को स्कूल जाना पडता। स्कूल मास्टर दूर का था। स्कूल पर ही ठहरता था, अत वह सारे लडकों को रात को पढ़ने स्कूल बुलाया करता था। बसी दर्जा चार में ही रह गया था। उसके भी मास्टर लडकों को पढने बुलाया करते थे। अक्सर सर्दी की रातों में लडके फटे-पुराने कम्बल ओढे स्कूल पढ़ने और रात को टाट पर ही सो जाते। कुमार के पास कम्बल भी नहीं था एक पुराना सूती दोहर था कई साल से उसे

ओढ़ता आ रहा था। उसकी माँ बनवारी से कई बार कह चुकी थी कि 'लड़का सर्दी में स्कूल जाता है, उसे एकाध कम्बल ले दो।' बनवारी भाई से कहने की हिम्मत नहीं करते। वे सोचते— भाई को खुद सोचना चाहिए कि इस सर्दी-पाला में लड़का एक दोहर से कैसे काम चलाएगा — इधर पत्नी बार-बार कोंचती। इसी बीच बसी के लिए एक नया कम्बल और कुछ नये कपड़े आ गए। कुमार की माँ आँगन में बसी की माँ को सुना कर बड़बड़ाने लगी 'किसी को कम्बल के रहते हुए भी कम्बल आये जब जो चाहा वैसा कपड़ा आये और कोई एक कुरता और दोहर से काम चलाए। भला इस तरह कैसे घर चलेगा? एक ही घर में दो आँख की जानी हैं मानो एक बच्चा पेट से निकला है दूसरा पीठ से।' दम बसी की माँ तैयार थी इस घटना के लिए। हाथ चमका कर बोला—'तो तू भी बनवा ले, तुझे मना कौन करता है? बाप के घर से रुपया लाई हो, तो खोल दे गाँठ से। बसी के कपड़े-लत्ते तो मैंने अपने पैसे से बनवाये हैं। क्या कोई इस घर की कमाई से ये तैयार हुए हैं? बड़ा सुख दिया है इस घर ने हम लोगों को। तेरी आँख फूट जाए जो मेरे बच्चे का इस तरह खाना-पहनना निहारती है, चुड़ैल कहीं की।

कुमार की मां ने बात म बढ़ा कर केवल इतना ही कहा—'मैं खूब समझती हूँ कि ये पैसे कहाँ से आ रहे हैं, मुझे समझाने की जरूरत नहीं। फिर वह अपने कमरे में बैठ कर रोती रही— कैसा निकम्मा मरद पाले पड़ा है पास में जो कुछ पैसा था वह सब इसने दूह लिया। मेरा हीरा जैसा लाल इस सर्दी में एक अच्छे कपड़े के लिए तरस रहा है और दूसरी ओर इस आवारा बसिया के पीछे पैसा पानी की तरह बह रहा है। मेरे पास पैसे होते, तो आज यह दशा होती? ना अब इस तरह काम नहीं चलेगा।

कुमार को सर्दी लग गई। बुखार आया फिर निमोनिया हो गया। माँ ने छाती पीट ली। वह जोर-जोर से हुबसने लगी 'यह घर मेरे

बच्चा का गला जाएगा। कब से भूँक रही हूँ कम्बल के लिए लेकिन कौन सुनता है? मेरे लाल को निमोनिया हो गया। अब सभी लोग अपनी छाती ठंडी कर लें।' निमोनिया के नाम से उस की छाती दहल गया 'बड़ा भयंकर रोग है—यह क्या हो गया हे परमात्मा?

धनपाल चिल्ला कर बोले—अरे इसे कम्बलों में बड़ा भारी ओम वायु में रखें। रोग-ग्लानि [illegible] हो जाता है। [illegible] रहा हूँ ठीक हो जाएगा। वे अपनी गालियाँ लिए आ गये थे।

उसी दिन बनवारी ससुराल पहुँचे थे। आते ही पत्नी ने दहाड़ कर कहा—लो घूम घूम कर तमाशा-वाशा अब [illegible] हुआ था। कब से कम्बल के लिए कह रही थी लेकिन अब तुम लोग तो इस घर में भार हैं। लो अब छाती ठंडी हुई न! बेटा निमोनिया में पड़ा हुआ है।'

बनवारी पत्नी की इस ममवेधी चोट से तिलमिला नहीं—वे धीरे से अपना सामान-वोमान सरका कर कुमार की खाट के पास आ बैठे। गाल पर हाथ रखे पाटी पर बैठ गये। उनका चेहरा मुरझा गया था। आँखों में आँसू छलक आये थे। निमोनिया की भयंकरता उनके दिमाग में अनिष्ट की आशंका बन कर सनसना रही थी।

बनवारी का मन आज जैसे बहुत दूर का चक्कर लगा कर घर लौट आया था। पहली बार उन्हें एहसास हुआ कि वे बाहर के भटकाव से थक गए हों, उन्हें एक जगह चाहिए घर के भीतर।

ससुरालवालों ने इस बार बनवारी की अच्छी फिचाई की थी। ससुर ने इतना डाँटा और समझाया कि बनवारी ससुराल में ही रो पड़े थे, जैसे उनके सामने यथार्थ के कई लिपटे हुए स्तर खुल गये थे। बनवारी उसी मानसिक स्थिति में घर लौटे तो कुमार की बीमारी ने उन्हें आज भारी कर दिया। वे चारपाई की पाटी पर उदास बैठे पुत्र की दयनीय दशा देख रहे थे। देखनेवाले आते थे और बड़े गम्भीर स्वर में चिन्ता के साथ कह जाते थे—बनवारी भाई सँभालिएगा यह

बडी खतरनाक बीमारी है।' किसना ने तो बडी सहानुभूति के स्वर में व्यग्य भी किया—'बेचारा लडका कितना सन्तोषी है, जाडे की रात में केवल सूती दोहर से काम चला लेता है और इस साल सर्दी है कि तीर-सी हाड बेधे देती ह।

बनवारी चुपचाप सब सुनते रहे और आँसू बहाते रहे। धनपाल कुमार को गोलियाँ खिला रहे थे। बनवारी ज्यो-के-त्यो बैठे हुए थे।

गोली खिला लेने के बाद धनपाल ने स्नेह से कहा—'अरे बनवारी दूर से आये हो, जाओ हाथ मुँह धो लो, पानी पी लो यह क्या औरतो की तरह गाल पर हाथ धरे बठे हो?' उसने बनवारी का हाथ पकड कर आँगन में कर दिया। आँगन में आने पर धनपाल ने कहा—'घबराने की बात क्या है थोडी सर्दी लग गई ह, गोलियाँ दे रहा हूँ ठीक हा जाएगा। मगर कुछ भी करो, इस घर में बदनामी के सिवा कुछ हाथ नहीं लगता!' बनवारी एकदम चुप रहे। धनपाल ने बनवारी के चेहरे की ओर देखकर प्रतिक्रिया जाननी चाही। बनवारी का चेहरा शून्य था। धनपाल को एक नई बात दिखाई पडी। दूसरा समय होता तो बनवारी पूछता—क्या हुआ? किसने आपको कुछ कहा? फिर पत्नी पर गुर्राता और उसे पीट कर भाई के प्रति सुर्खरू बनता। किन्तु आज वह चुप है।

धनपाल ने घटना के तीखेपन का बोध कराने के लिए कहा—'तुम्हारी औरत लडती है कि तुम्हारे बेटे को खाना-कपडा नही मिलता है। और '

बनवारी चुप रहा। धनपाल ने मानो बनवारी को झकझोरते हुए कहा 'कि सर्दी का मौसम है कौन नहीं बीमार पडता है, देह ही तो है कभी नरम कभी गरम। यह बीमारी नही होती तो इन वैदो की क्या जरूरत होती? मगर इस घर क लोग हैं जो मुझे बदनाम करने के

लिए एक-एक वजह ढूंढ लेते हैं। कुमार बीमार पड गया क्योंकि इसके पास कपडा-लत्ता नही है, यह तो घर फोडने और तोडने के लक्षण हैं।'

बनवारी फिर नही कुछ बोला। कुछ देर चुपचाप खडा रहा, फिर यह कहता हुआ हट गया कि 'ठीक ही तो है।'

'क्या ?' धनपाल चीख से उठे। 'क्या तुम भी इस षडयन्त्र में शामिल हो। थोडी दूर से बनवारी बोला—माफ करें भाई साहब, यह षडयन्त्र नही सचाई है। सभी लोग कह रहे [illegible] कि कुमार को ठण्डक लग गई है क्योंकि उसके पास इस ठण्डक में भी ओढने के लिए सूती दोहर के अलावा कुछ नही था।'

'तो तुमने कहा क्यो नही ? तुम्हें तो आवारागर्दी से छुट्टी मिल तब न।

'मै क्या कहता ? आप खुद घर की हर चीज देखते हैं। बसी के लिए कम्बल ले आये तो कुमार के लिए भी ला सकते थे।

तो बसी तुम्हारी आख में गड रहा है, मैं तो तुम्हें एसा नही समझता था। बसी के लिए तो उसकी माँ ने कम्बल मँगाया है, मुझे तो खबर भी नही। लेकिन मै तो तुम्हें ऐसा साँप का पोआ नही समझता था। दिन रात मर मर कर गृहस्थी का काम सभालता हूँ, और तुम घूम घूम कर आवारागर्दी करते हो, तब तो नही आते हो बराबरी करने। और बसी के लिए एक कम्बल आ गया तो मानो प्रलय उतर आया। लानत है तुम्हारी बेवफाई पर।'

धनपाल की पत्नी का भी मुँह खुल गया। वह कुमार की माँ के बाप और भाई का नाम जोड-जोड कर गालियाँ उगलने लगी। किन्तु बनवारी और उसकी पत्नी दोनो हल्ला-गुल्ला के डर से चुप रहे। लडका बीमार है और ये लोग झगडा करने पर तुले हुए हैं। हाय भगवान, कसे ज़ालिम लोग हैं।

बनवारी के ससुर ने सुना है कि कुमार बीमार है तो अपने इलाके के एक नामी वैद को लेकर आ धमके। वे जानते थे कि धनपाल खुद वद है, लेकिन उन्हें मालूम था कि धनपाल ऊपरी झाड-फूंक वाले वद हैं, वे कीमती दवाएँ भी नहीं दे सकते, शायद जानवझ कर भी रोग को भुठलाते रहें।

कुमार के नाना अपने जवार के नामी धनी आदमी थे, वद को लेकर वही दस दिन तक ठहर गये।

कुमार अच्छा हो गया। नाना अपनी बेटी को कुमार के स्वास्थ्य के लिए कुछ रुपए देकर बिदा हो गये।

किन्तु परिवार में अब गाँठ पड गयी, रोज रोज यह परिवार कहीं-न-कहीं टकरा जाता। बसी कुमार में झगडा, धनपाल की बनवारी पर धौंस, जेठानी-देवरानी में कहा-सुनी! बस झगडा ही झगडा घर नरक-सा बन गया।

आस-पास के घर-पट्टीदारी के लोग रोज पचायत करने पहुँचते।

आखिर एक दिन तग आकर धनपाल ने कह ही दिया—'अलग हो जाओ और मरो।

बनवारी भी मानो इसी निर्णय के लिए बठा था—उसने चुपचाप इस फसले को स्वीकार कर लिया।

धनपाल ने मनमाना बँटवारा कर दिया। बनवारी को जगह जायदाद की कुछ भी जानकारी नही थी, जिस ढग से धनपाल ने बाँट दिया बनवारी ने स्वीकार कर लिया। घर को आधा-आधा बाँटने के स्थान पर यह पसद किया गया कि इस घर में धनपाल का खानदान रहे और पच्छिम टोले में धनपाल ने जो पट्टीदारी की मरी हुई विधवा का पुराना मकान तिकडम से ले लिया है, उसमें बनवारी का परिवार जाय।

अलगा विलगा हो गया। बनवारी को खेतों की जानकारी नहीं थी। बाद में गाँव के लोगों ने उसे उसकी सारी जमीन की जानकारी

दी, तो मालूम हुआ कि कई बीघे खेत धनपाल ने पहले ही अपने नाम करा लिए थे, उनका बटवारा नहीं किया। उसने बताया कि ये खेत मेरी बीवी के उन रुपया से खरीदे गये हैं, जो वह नहर से लाई थी। आधा-तीहा पाकर बनवारी की पत्नी धनपाल को नीचता और पति की निष्क्रियता पर बहुत तिलमिलायी, किन्तु फिर भी एक राहत की साँस ली, चलो पिण्ड तो छूटा।

कुछ लोगों ने सुझाया कि मुकदमा दायर कर दो इन खेतों के लिए, किन्तु बनवारी परिवार फिर कोलाहल में नहीं पड़ना चाहता था। धीरे-धीरे सब कुछ शान्त हो गया।

कुमार के घर खाने के लाले पड़ने लगे, उपवास होने लगे। भाटपार में मिडिल स्कूल था, मिडिल स्कूल पास करने में कोई दिक्कत नहीं हुई किन्तु उसके बाद! कुमार का ननिहाल गोरखपुर से चार मील की दूरी पर स्थित एक गाँव में था। नाना ने कुमार को अपने घर बुला लिया। कुमार रोज चार मील की दूरी त करके गोरखपुर जाता और आता। जुबली स्कूल में उसका नाम लिख गया था। वह बड़ा तेज विद्यार्थी था। हाई स्कूल फर्स्ट डिवीजन से पास किया। कालेज में गया, उससे बड़ी-बड़ी सम्भावनाएँ थीं। लेकिन धीरे धीरे उसे राजनीति का चस्का लग गया। विद्यार्थियों के नाम नेताओं की पुकार उसका दिल हिला देती थी। धीरे-धीरे वह युवक कांग्रेस का मेम्बर हो गया। कालेज से छूटने के बाद वह युवक कांग्रेस के दफ्तर में जाता, वहाँ कुछ काम करता और काफी देर से ननिहाल पहुँचता। नाना पूछते तो कहता कि गांधीजी की पुकार है कि देश को आजाद करने के लिए विद्यार्थी सामने आयें। देश को आजाद करना हमारा पहला धर्म है। पढ़ाई-लिखाई बाद में। नाना कुछ समझते, कुछ नहीं समझते, असन्तोष व्यक्त करके रह जाते। मन-ही-मन उन्हें लगता कि लड़का बहक रहा है।

और जब इण्टर का रिजल्ट आया तो नाना को बडा धक्का लगा। कुमार थर्ड क्लास में पास हुआ था। नाना का रुका हुआ आवेग फूट पडा। पढाई करना कोई हँसी-ट्ठा है—चार कोस रोज चलना और फिर पढाई लिखाई छोडकर इन झण्डावालो के पीछे आवारागर्दी करना, इससे भला पढाई होती है। फस्ट क्लास पाते रहे हैं, थर्ड क्लास मिला। अब आगे से यह भी नहीं मिलेगा। मैंने सोचा—लडका पढ लेगा घर का दुख-दलिद्दर दूर होगा, लेकिन अभाग साथ कहाँ छोडता है ?

कुमार का बहुत बुरा लगा—ये गँवार लोग राजनीति और राष्ट्र-प्रेम क्या समझें ? इन्होंने सौ-पचास दोन गल्ला जमा कर लिया ह, तो समझते ह कि जीवन की सारी समझदारी इन्हीं के पल्ले पड गयी है। थर्ड क्लास पास होऊँ, चाहे फेल होऊँ—देश-सेवा तो कर रहा हूँ। सारे नेता अपनी जमी-जमाई नौकरी छोड कर घर-बार त्याग कर कूद पडे हैं इस महासागर में। बहुत बडे-बडे विद्यार्थी पढ़ाई छोड कर देश-सेवा के काम मे जुटे हुए ह, ये गँवार लोग क्या समझें इस प्रवाह को ? कालीप्रसाद पाडे पुराने काग्रेसी नेता थे, वे युवक काग्रेस के परामर्शदाता थे—बडे दबग आदमी, मझोले कद की स्वस्थ देह, आँखें सूजी-सूजी-सी दीखने वाली नाक लम्बी मगर ठोर पर चपटी-सी, चाल में एक अकड, बात करते तो चुटकी बजाते। सारे युवक नेता उनसे बात-बात में परामर्श लेते।

कुमार उस दिन बहुत उदास-सा पाडेजी से मिला। बोला—'मेरा काग्रेस का काम करना नाना जी को नही अच्छा लगता। वे मेरे थर्ड क्लास आने पर बहुत भला बुरा कहते रहे। देश काम को वे आवारागर्दी समझते ह। मेरा मन तो हुआ कि आज ही उनका घर छोड कर चला जाऊँ, मगर जाऊँ कहाँ ?'

पाडेजी सिर पीछे की ओर तानते हुए बोले कि 'अरे अरे इसमें इतना घबराने की क्या बात है ! गोली मारो नाना-नानी को ( गोली के

उच्चारण के समय उन्होंने ग पर विशेष जोर दिया ) ये सबके सब गुलाम दिमाग के कीड़े हैं, तुम कांग्रेस के दफ्तर में आ कर रहो, काम करो, खाओ-पीओ और पढ़ो लिखो। देश-सेवा के पीछे पढ़ाई लिखाई कौन पूछता है ? सारा गाँव भागा जाए भगमनिया कहे मोर मौग टौकि दे।'

पाण्डेजी ने एक चुटकी बजायी और आगे बढ़ गए।

कुमार का इन्तजाम कांग्रेस के दफ्तर में हो गया, वह कालेज के नेताओं म से एक हो गया। शहर के बड़े-बड़े लोगों तक उसकी पहुँच हो गयी, कभी बड़े मियाँ साहब के यहाँ चाय पीता, कभी रघुनन्दन दास के यहाँ, कभी वकील वर्मा के यहाँ कभी मिस्टर सेन के यहाँ। और वह बड़े गर्व से अपने परिचय के विस्तार की बात साथियों के बीच कहता। कालेज में हड़ताल कराना, यूनियन के इलेक्शन में जोरदार प्रचार करना, जोरदार भाषण करना, कालेज म दलबन्दियाँ कायम करवा देना इन्हीं कामों म कुमार के दिन अधिक बीतते।

बी० ए० में कम्पार्टमेंटल आ गया। फिर कुछ पढ़-पढ़ा कर परीक्षा म पास हो गया।

पॉलिटिक्स मे एम० ए० ज्वाइन किया तो सन् ४२ का आन्दोलन हो गया उसमें पढ़ाई छोड़ छाड़ दी। जल हो आया।

घर की हालत खराब थी तो खराब रही। लोग कुमार की प्रतिभा का यह विनाश देख कर हैरान रह गये। लेकिन कुमार का भी तर्क था कि म अपने बूते पर पढ़ लेता हूँ और देश-सेवा भी कर लेता हूँ, यह क्या कम गौरव की बात है ? फर्स्ट क्लास और थर्ड क्लास कौन पूछता है ? देश-सेवा मूल चीज है। कुमार बड़ा हो गया था। उसकी कई शादियाँ आइ, मगर वह शादी के लिए तयार नहीं हुआ। उसने बार-बार यही कहा कि अभी तो देश की सेवा की आवश्यकता ह शादी वादी की बला कौन सिर पर ले ? किन्तु सच बात तो यह थी कि वह गाली ल इकी से प्रेम करता था। मिस्टर सेन गोरखपुर के एक

प्रसिद्ध वकील थे। उनकी लडकी भी कांग्रेस में काम करती थी—कालेज-इलेक्शन वगरह में मिस सेन कुमार के साथ काम करती। बडी सुन्दर और सुशील थी मिस सेन और तेज भी खूब। परीक्षाओं में वह प्रथम श्रेणी म ही आती, कांग्रेस का काय करने के बावजूद। कुमार के साथी कुमार को उकसाते—'वाह भाई, बाजी मार ली, मिस सेन तो तुम पर फिदा है।' कुमार मुस्करा कर साथियो को धौल जमा दता—'दुष्ट देश के काम के आग यह प्रेम-वेम का चक्कर वाहियात ह।' किन्तु वह मन-ही मन समझ रहा था कि मिस सेन उसे प्यार करती ह। इसीलिए देश-सवा के नाम पर शादो टाल रहा था। घर पर उस पर अकुश रखनेवाला काई नही था। वह सबसे बडा लडका था और लायक यानी पढवया और नेता, बडे-बड लोगो से उसकी दोस्ती ह यह बहुत बडा दबाव घरवालो पर छाया हुआ था। किन्तु घर को एक ही चिन्ता थी कि रामबिचार भी बडा हो गया ह और पढाई में इसका मन लगता नही मिडिल स्कूल में ही कई साल से फेल हो रहा है। अगर इसी तरह फेल होता गया तो इसकी शादी हो चुकी। मगर जब तक बडे लडके की शादी न हो जाए छोटे की कस की जाए? मगर कुमार ने जब यह आखिरी फसला कर दिया कि वह शादी नहो ही करेगा बिचार की शादी कर ही दी जाए तो घरवालो ने रो धो कर इसे मान लिया और बिचार की शादी हो गई। बडा विचित्र लगा लोगो को, किन्तु कुछ पढे लिख लोगो ने बताया यह कुछ भी विचित्र नही ह, ऐसा होता है आजकल।

कुमार का वह साल खराब गया। कुछ दिन तक जेल में रहा। वहाँ से निकल कर शहीदोंकी-सी शान में कालेज में घूमता फिरता।

दूसर साल फिर वह एम० ए० के पहले साल में ही रहा। मिस सेन का वह फाइनल था। मिस सेन फस्ट क्लास मे एम० ए० पास

हुई और कुमार को पहले साल थर्ड क्लास के मार्क मिले। अब मिस सेन से कालेज में मिलना नहीं हो पा रहा था। एक दिन वह कांग्रेस के किसी काम के बहाने मिस्टर सेन के बंगले पर गया। मिस्टर स ? परिवार के साथ घूमने चले गये थे, केवल मिस सेन घर पर थी। कुमार को सन्तोष हुआ। मिस सेन ने हँस कर स्वागत किया और आदत के अनुसार हँस हँस कर बातें करने लगी। 'अब तो आप आतो नहीं, अच्छा नहीं लगता कालेज में आपके बिना। कुमार बोला।

'क्यों भाई, मुझमें क्या खास बात है, जो मेरे बिना अच्छा नहीं लगता ?'

कुमार अपने को सभाले हुए था। मिस सेन की हंसी और आँखों की अदा उसे बेकाबू कर रही थी।

'मिस सेन !' उसकी आवाज कांप रही थी, सचमुच आपके बि ? मुझे अच्छा नहीं लगता, बड़ा अकेला महसूस करता हूँ।

मिस सेन न कुमार की आँखों में झांक कर कहा— अच्छा तो कभी कभी आप यहाँ आ जाया कीजिए।'

मिस सेन की मुलायम लम्बी लम्बी पतली उँगलियाँ कुर्सी की बाँह पर फली हुई थी। कुमार उन्हें देख रहा था और एकाएक उन्हें अपने हाथ में लेकर झटके से कह उठा— मिस सेन मै तुम्हें प्यार करता हूँ।'

मिस सेन ने अपनी उँगलियाँ छुड़ा कर एक भरपूर तमाचा कुमार के गाल पर दे मारा— तो यह बात ह अपनी हसियत नहीं देखते ! थर्ड क्लास पास होते हैं, और फिर घर की हो हसियत क्या ह ? मेरे साथ प्यार करने को आप ही रह गये ह ?' वह उठ कर अदर चली गई। कुमार तमाचे की तिलमिलाहट लिये लौट आया।

कुमार को लगा कि कांग्रेस पार्टी दकियानूसो की पार्टी ह, विचारों की उदारता और क्रान्ति की गर्मी के स्थान पर इस पार्टी म परम्परा-

वादिता और समझौतावादिता है, नेताओ के विचार देश के फोड का सहलानेवाले हैं चीरनेवाले नही। वह सोशलिस्ट पार्टी में चला गया। उसके वृत्त से मित्र तो पहले से ही चले गये थे उन्होने इसका स्वागत किया। कुमार स्टडी-सर्किल में मार्क्सवाद सुनने लगा और अपने कच्चे अनुभव म मार्क्सवाद के समाजवादी सिद्धान्तो का ठूसकर उगलने लगा। अब वह विद्रोही नेता हा गया। सारी परम्पराओ, वेशभूषा, रहन-सहन को बदल कर सब कुछ नया ओढ लिया, हर चली आती हुई चीज को बदलने की धुन में था। अपने साहित्यिक मित्रो की पीठ ठोक कर कहता—'अरे बदलो यार, जमाना कहाँ स कहाँ चला गया—अरे छोडो यह प्रवृत्ति और प्रेम की कविता, कुछ विद्रोह की बातें करो और सच पूछो ता साहित्य में रखा क्या ह? साहित्य तो मन बहलाव है, भावुकता है कुछ दिमागी काम करो। क्या हृदय-हृदय चिल्लाते हो हृदय नामक कोई चीज ह भी? जिसे तुम हृदय कहते हो वह निरा मासपिंड ह।'

इस प्रकार यह विद्रोही नेता छलांग लगा कर धीरे धीरे चलनेवालों स कई मील आगे निकल गया और उनके पिछडेपन पर व्यग्य से मुस्कराने लगा।

गाँव के लोगो न इसे कतई नही समझा और समझ भी कसे सकते ह! रूढियों और आप्त वाक्यों की माला पहन कर घूमनेवाले गँवई लोग सब कुछ उतार फेंकनेवाले नेता को कहाँ से समझें—तरह-तरह की शिकायतें करने लगे—'ईसाई हो गया, क्रिस्तान हो गया, मुसलमान हो गया, वह सिगरेट पीता ह, शराब पीता ह, मुसलमान के यहाँ खाता ह, मुर्गा खाता ह, जनऊ नही पहनता, खडे खडे पेशाब करता ह, अरे वह ता एक ईसाई लडकी के पीछे पडा ह।'

कुमार सुनता तो केवल मुसकराता—हँस लो बेवकूफो, तुम्हें इसके सिवा आता क्या ह? हँसते-हँसते थक जाओगे तो समझोगे म क्या हूँ?

एक दिन मैं जयप्रकाश नारायण की तरह बड़ा नेता बन जाऊँगा तो लोग इस गाँव को मेरे ही नाम से समझेंगे और तुम लोग बकर-बकर मुँह ताकोगे। जयप्रकाश लोहिया एक सपना एक सुन्दर भविष्य।

कुमार एम० ए० गिरते गिरते थर्ड पास हुआ। लोगों ने टीका टिप्पणी की कि नेताजी थर्ड पास हुए हैं। कुमार केवल मुस्कराता सोचता कि कौन किसी ने मेरी सहायता की है। इतने संघर्षों में एम० ए० कर लिया यही क्या कम है? सतीश काका तो संघर्ष से घबरा कर साहित्यरत्न पास करके छोड़ बैठे थे। हुत साहित्यरत्न भी कोई डिग्री है। मैं भी यदि पूर्व जञ्जाल में फँसा होता तो मैं भी किसी जमींदार का नौकर होता किसी प्राइमरी स्कूल का मास्टर होता—पिताजी तो चाहते रहे कि मैट्रिक पास करके कहीं नौकरी कर बैठूँ कौन नौकरी मिलती तब और कौन जानता होता मुझे तब। जिन्दगी भर धोपार गांधी टोपी लगाये चमरौधा जूता पहने कंधे पर अंगोछा लटकाए बुद्धू की तरह प्राइमरी स्कूल की मास्टरी करता और लड़कों से सत्तू पिसान बटोरता पास कराई वसूलता। आज मुझे कौन नहीं जानता, एम० ए० थर्ड पास हुआ यह भी कोई सोचने का ढंग है। हाँ मिस सेन ने भी यही कहा था—कम्हो है साली वह भी! बुर्जुआ बाप की पुत्री बुर्जुआ ही होगी न। वह भारी कांग्रेसी नेता बने फिरते हैं मिस्टर सेन, लेकिन वकालत से इतने पैसे कहाँ से आते हैं खून चूसते हैं गरीबों का। शोषक हैं शोषक की बेटी भी वैसी ही होगी, अच्छा हुआ साली से दूर हट आया। कुमार को लगा कि मिस सेन का थूका उसके गाल पर तैर रहा है, उसने जल्दी जल्दी अपना गाल रगड़ कर साफ कर दिया—अब लो। कुमार मिस सेन की स्मृति से दूर भागने लगा। लेकिन उसे लगा कि मिस सेन की बड़ी-बड़ी मादक आँखें उसका पीछा कर रही [redacted] । [redacted] साली बड़ी जान-लेवा, कुमार बुदबुदाया।

कुमार के सामने सवाल था कि अब क्या करे? नेतागिरी या नौकरी? बहुत से लोगों ने नौकरी को लात मार कर नेतागिरि की है

जिन्दगी भर को है—क्या मैं नहीं कर सकता ? शायद नहीं कर सकता ! घर की परिस्थितियाँ ऐसी हैं कि मुझे नहीं करने देंगी। पार्टी-दफ्तर में जितने लोग हैं, वे या तो घर के खुशहाल हैं या बेघर हैं, या विद्यार्थी हैं या दीन-दुनिया से बेखबर हैं, मैं तो शायद इनमें से कुछ भी नहीं। लेकिन नौकरी करना क्या मेरे नेतागिरी के रास्ते में बाधक नहीं होगा। और यह शान के खिलाफ भी लगता है। क्यों न गाँव गाँव घूम कर पार्टी का प्रचार करूँ ? मजदूरों को संगठित करूँ ? इनमें अपने को मिला दूँ, लोग मेरी पूजा करेंगे। जय प्रकाश, लोहिया ये सभी लोग नौकरी करते हैं ? नहीं नौकरी नहीं करूँगा। लेकिन घर का गरीबी का क्या होगा ? एक विचार है जो परिश्रम करके कुछ खाने पीने भर को खेतों में से निकाल लेता है, तो भी गरीबी की उदासी नहीं टूटती। गाँव के निकम्मे से निकम्मे लोग भी अपने घर की देख भाल कर रहे हैं, लायक बन गये हैं और मैं इतना पढ़ लिख कर इतना सक्सफुल हो कर भी घर को मौत के मुँह में झोंक दूँ। बचपन की सारी बीती बातें अपनी समस्त तिक्तता के साथ उसके दिल को हल की नोक की तरह चीरती चली गयी। तह में बैठी हुई सारी आर्द्रता भरभरा कर खुल गयी।

और तभी वज्रपात हुआ। रामविचार बीमार पड़ा। जाड़ा लग गया था, बुखार था। पूस की ठढक तिस पर एक रात जोर की बारिश आ गयी। इतनी जोर की बारिश कि पूरा घर चूने लगा। कोशिश के बावजूद रामविचार पानी से बचाया नहीं जा सका, पूरा घर चूता हो, तो कहाँ ले जाया जाय ? बुखार निमोनिया हो गया। रामकुमार को मालूम हुआ तो दौड़ा भेड़ा एक सोशलिस्ट डाक्टर के यहाँ गया और उनसे निवेदन किया कि मेरे छोटे भाई को निमोनिया हो गया है आप चलकर देख लेते, तो उसकी जान बच जाती। डाक्टर ने कहा—अरे भाई इतनी दूर कछार में जा पाना कैसे सम्भव होगा। न कोई सवारी का रास्ता न कहीं कुछ, पैदल चलना तो मुश्किल हो जाएगा मेरे लिए।

और दूसरे दो दिन का यही-हज होगा मेरा भी और मेरे रोगियों का भी।' डाक्टर साफ टाल गया और मानों बहाने से पूछा हो कि है तुम्हारे बूते की बात मेरे दो दिन की पूरी फीस चुकाना। डाक्टर ने कुछ दवाइयाँ दे दीं। कुमार बहुत हताश हुआ—तो ये हैं सोशलिस्ट डाक्टर—मीटिंग में किसानों और मजूरों के उद्धार की बड़ी-बड़ी बातें करते हैं, पोल्ट-बक पर विशेष जोर देते हैं और बखार में चलना हुआ तो छट्टी का दूध याद आ गया। आर्थिक समानता की बात करते हैं, सेवा की बात करते हैं और पार्टी के एक सदस्य के यहाँ बिना फीस लिये जाने को तैयार नहीं हुए, बहाने से निकल गये। यह सब ढकोसला है, सभी अपने-अपने घरों को पकड़े हुए हैं, मैं ही मैं ही एक सपना देख रहा हूँ।

मगर नहीं, बिचार को बचाना पड़ेगा। वह दौड़ा हुआ घर गया। रामबिचार की हालत ठीक नहीं थी। रामबिचार बेहोश था। कुमार ने डाक्टर की दवाई देनी शुरू की। लाभ हुआ। धीरे धीरे रामबिचार नीरोग होने लगा। कुमार बाहर लौट आया। फिर एक आदमी घबड़ाया हुआ आया बोला—बिचार की हालत अच्छी नहीं है, फौरन चलिए।' कुमार ने फिर डाक्टर की दवा ली और तेजी से भागा घर की ओर। उस आदमी ने बताया कि बिचार अच्छा हो गया था लेकिन अच्छा होने के बाद पथ्य बिगड़ गया। बीमारी के बाद भूख तो लगती ही है। भूख में अच्छा भोजन मिलना चाहिए। बिचार को भूख लगी थी और अच्छे पथ्य का इन्तजाम नहीं हो सका था। पास में ही मटर रखी थी, बिचार खा गया। लोगों ने सुना तो माथा पीट लिया। मगर अब तो खा गया था। निमोनिया ने दुहरा दिया। बीमारी का दुहरा देना बड़ा खतरनाक है दो दिन से बिचार बेहोश है अनाप शनाप बक रहा है!

कुमार हड़बड़ाया हुआ घर की ओर भागा जा रहा था, रह रह कर कोई चीज उसके दिल में हूल मार रही थी घर के पास पहुँचते

ही लोगो के चिग्घाड़ने की ध्वनि उसे सुनाई पड़ी और वह कटे पेड़ की तरह भाई की लाश के पास जा कर गिर पड़ा। उसे देखते ही माँ, बाप, विचार की बहू और बच्चे सभी और जोर जोर से चीखने लगे। छोटी बच्ची अपनी मा की अस्त-व्यस्त गोद में भूख से गला फाड़-फाड़ कर अहक रही थी। और बहू बेसुध हो कर छाती पीटे जा रही थी। बच्ची गोद से गिर गयी, बहू को खबर नहीं थी किसी ने बच्ची उठा ली। वह हाथ पाँव फेंक-फेंक कर नसें तान-तान कर कुहराम मचाये थी परन्तु उस चीख चिल्लाहट रोने धोने के क्षुब्ध सागर के बीच इस तड़पती हुई एक लहर को कौन देखता? आस-पास की औरतें जुट आयी थी, सभी राग में राग मिला कर रो रही थी।

धनपाल आगे बढ़े धीरे से कुमार को उठाया—'बेटा तुम पढ़े-लिखे हो, तुम इस डूबते हुए घर को सहारा दो, तुम यदि खुद ही डूब गए तो फिर क्या होगा?'

कुमार ने धनपाल की ओर एक बार सूजी हुई स्तब्ध आँखो से देखा और दहाड़ मारते हुए उनकी छाती पर टूट पड़ा—'चाचा आ-आ!' धनपाल ने उसे छाती में भींच लिया और स्वयं बिलख बिलख कर रोने लगे। यह क्या हो गया हु हमारे घर को हे प्रभु? क्या हो गया? इस जवान लड़के को उठा लिया! हे मेरे ईश्वर तुमने क्या किया?'

उन्होंने फिर कुमार को धीरे-धीरे छाती पर से हटाया और भरी आवाज में समझाने लगे— बेटा, जो हो गया सो हो गया, अब सब तयारी करो। बनवारी, उठो भाई जा हो गया सो हो गया, प्रभु की मरजी।'

धनपाल ने बनवारी का हाथ पकड़ कर खींचा। बनवारी फूट पड़े 'इहि हि हि ई ई ई। और धनपाल से लिपट गये।

धनपाल की औरत कुमार की माँ को सँभाले स्वयं रोती जा रही थी, सबसे जोर-जोर से

कुमार ने देखा—विचार की छोटी-छोटी बच्ची तड़प रही है उसने उसे लेकर छाती में चिपका लिया, लेकिन बच्ची नहीं मानी चीखती गयी। कुमार ने माँ को टूटे हुए स्वर से पुकारा—'माँ बहू से कह दो कि बच्ची को सँभाले, बहुत भूखी है।' किसी ने बहू की गोद में बच्ची को ठूस दिया। बहू ने आँचल से ढक कर बच्ची को दूध पीने के लिए छोड़ दिया।

लाश उठाई जा रही थी, माँ ने टिकटी पकड़ ली—'अरे कहाँ लिये जाते हो मेरे लाल को, अब कहाँ मिलेगा मेरा लाल, ओ दइया रे दइया बहू दौड़ी-दौड़ी आयी और टिकटी पर रख पति की लाश पर भहरा पड़ी। उसका मुँह खोल कर टिकटी पर अपना माथा पटकने लगी—'ओ मत ले जाओ, मत ले जाओ मेरे रजवा को आहा हा मत लेजाओ।'

लोगों ने जबरदस्ती टिकटी उठा ली—रामनाम सत्य है।

पूरा घर फिर एक बार जोर के क्रंदन से हाहाकार कर उठा। रात भर माँ और बहू फेंकरती रही, जाड़े की भीगी भारी रात मानों यहाँ से वहाँ तक थरथराती आवाजों से घुल उठी हो।

कुमार ने आज अनुभव किया कि जस इन सारी घटनाओं के लिए कहीं वही जिम्मेदार है, वह घर को छोड़ कर कहाँ कहाँ भटकता फिर रहा था? वह चिता जला कर लौटा था और गाल पर हाथ धर जर्जर मकान को एकटक निहार रहा था। इस मकान के भीतर से फूट-फूट कर पुरानी स्मृतियाँ बह रही थी। और अब नयी जिम्मेदारी उसे पुकार रही थी—छोटे भाई की बहू, उसकी संतानें नहीं इन्हें जिन्दा रखना है, इस घर को रखना है वह नौकरी करेगा।

और वह नौकरी के लिए भटकने लगा। उसे अपने परिचय का बड़ा विश्वास था। अनेक प्रोफेसर अनेक प्रिंसिपल, अनेक अफसर उसके परिचितों में से थ सबसे मिला, सबने अफसोस जाहिर किया कि कालेज में थर्ड क्लास को कैसे लिया जा सकता है? अफसर कहते कि अब अपने

हाथ में कुछ नहीं रहा, कम्पटीशन में बठो। कुमार को बड़ा धक्का सा लगा। ये प्रोफेसर, ये प्रिंसिपल उसके प्रशंसकों में से रहे ह, कई उसको पार्टी के मेम्बर भी हैं लेकिन कोई कुछ नहीं कर सकता। सभी डिवीजन चाहते हैं। उसने देखा कि उसके साथ के फर्स्ट डिवीजन में पास होनेवाले विद्यार्थी या तो कहीं प्रोफेसर हो गए ह या किसी उच्च सरकारी नौकरी में चले गये हैं या स्कालर शिप पाकर आगे के अध्ययन के लिए विदेश चले गये हैं और वह है जो अपना थर्ड क्लास लिये दर दर नौकरी ढूँढ रहा ह। उसके मन में छेद हो गये। आज उसे अनुभव हुआ कि डिवीजन का क्या महत्त्व ह? हा, नेता बनना हो तो बात और है लेकिन नौकरी के लिए डिवीजन नौकरी ही के लिए क्यों प्यार के लिए भी डिवीजन। हाँ मिस सेन ने ठीक ही कहा था कि थर्ड क्लास-वाले के साथ फर्स्ट क्लासवाले का क्या सम्बन्ध?'

आज कुमार को रोना आ गया। उसे लगा जसे उसने पूरा विद्यार्थी-जीवन गलत रास्ते बिता दिया, उसने अपनी प्रतिभा का कहीं गलत उपयोग किया—मिडिल में वह चालीसादर पास हुआ था—और आज वह थर्ड क्लास का खोटा सिक्का लिये दिये बाजार में दूकान-दूकान घूम रहा है।

वह थक चुका था ऊँचाइयों पर भटकते भटकते। तब उसे समझौता करना पड़ा नीची घाटियों से। वह एक हाई स्कूल में काम करने लगा, अब वह एक टीचर था। यों तो गोरखपुर में भी कई हाई स्कूलों में उसे जगह मिल रही थी किन्तु उसने पसन्द किया गाँव से पाँच मील की दूरी के कस्बे के एक नये बने हुए हाई स्कूल में। नजदीक होने से वह समय-समय पर घर आ सकता था, इन्तजाम सँभाल सकता था, अपने सैलानी पिता की हरकतों पर नियन्त्रण रख सकता था।

कुमार जी-जान से नौकरी करने लगा। नेतागिरी ने उसे एक ही अच्छी चीज भेंट में दी थी, वह थी वक्तृत्व शक्ति। वह स्कूल में पढ़ाता,

कुछ टघूशन करता, पसे बटोरता था, उन्हें घर की तरक्की में लगाता। अपनी वक्तृत्व-शक्ति के नाते वह बडा लोकप्रिय हो गया था, तथा एक सफल अध्यापक माना जाने लगा।

वह स्वय के लिए कुछ नहीं खच करता, सिगरेट भी छोड दी, नशा नही मानता तो सुरती खा लेता और धीरे धीरे सुरती खाने लगा। कपडे-लत्ते में उसका कोई विशेष खच नही था। कस्बे के एक सम्पन्न ब्राह्मण के यहाँ रहता था, लकडी वगरह का काम उसका वसे ही चल जाता था। जी-जान से कुमार न पसे बचाय और घर को सवारा। भाई का परिवार सदव उसके उत्तरदायित्व को पुकारता रहता।

लेकिन बनवारी बाबा पैसा पा कर फिर उभरते गये। अभी तक गरीबी ने उन्हें इतना लाचार बना दिया कि ठण्क से सारी इन्द्रियाँ सिकुडी हुई थीं, किन्तु धीरे धीरे पैसे की धूप पा कर ये इन्द्रियाँ खुलती गइ और फिर उनकी पहली आवारागर्दी शुरू हो गयी। घर के जरूरी काम धाम छोड कर मेलों-हाटियों चले जाते काम के खेतो के मौसम में नातेदारी करते, सुरती खाने के लिए पूरा गाँव छान मारते। दूसरे गाँव जा कर सोनारों लोहारों के यहाँ बठ कर घण्टो बातें करते। गाँव की औरतों के गहने बनवाते उनके प्राइवेट सामान लाते और रामलीला में अपना सारा काम धाम छोड कर हनुमानजी का अभिनय करते।

कुमार को बडी कोफ्त होती। वह प्राय तीसरे-चौथे घर आता, सारे खेत देख आता सारी व्यवस्था समझ लेना और समझाता मगर वह देखता कि उसकी योजना के अनुसार एक भी काम पूरा नहीं हुआ है। उसे लगता कि उसके सारे पैसे व्यथ जा रहे हैं। इसलिए वह चिड-चिड़ा हो गया। बनवारी से हर बार की अवाई में कहा-सुना हो जाती। कुमार की माँ समझाती— अरे बेटा, ये तो जनम स ऐसे हैं, अब क्या कोई सुधारेगा इन्हें ? अपना काम करो।' कुमार मन मार कर रह जाता।

कस्बे के ही एक ब्राह्मण की लडकी थी जो गोरखपुर के किसी स्कूल से मट्रिक पास करके घर आ गयी थो। कुमार के सामने शादी का प्रस्ताव आया। अब कुमार 'नही' नही कर सका। शादी हो गयी। एक लडका भी उसे हुआ।

छोटे भाई का बडा लडका रामप्रकाश अब भाटपार के मिडिल स्कूल में पढता था सातवी मे। बडा होनहार और खूबसूरत लडका था। कुमार की इच्छा थी कि इसे खूब पढाये लिखाये। कोई अच्छी नौकरी मिले, मेरा दायित्व पूरा हो। यो केवल दायित्व की ही बात नही थी, कुमार उसे प्यार भी खूब करता था। एक लडकी ह, ठीक ह थोडा बहुत पढा कर कही शादी कर देंगे, कौन बडी समस्या ह, लडकी तो लडका ही ह। लडकी के बारे में उसके ख्याल बहुत आगे नहीं बढ सके थे।

आज की घटना नित्य होने वाली घटनाओ की एक कडी मात्र थी।



: ८ :

सुबह-सुबह सतीश ने कुरता पहना छड़ी ली और चल पड़ा सिवान के खेत की ओर। क्वार आ गया था बादल की हट गयी थी, यहाँ से वहाँ तक बस सफेद-सफेद नंगी धरती दिखाई पड़ रही थी यहाँ-वहाँ नीची जगहों में पानी अब भी चिपचिपा रहा था। नंगी धरती को किसान अब धीरे धीरे चीरने लगे थे।

क्वार था तो भी हल्का-हल्का झीसा पड़ रहा था। सतीश हल्का हल्का भीग रहा था सामने फैले हुए नंगे खेत बादल की बरसात का मौन कथा कह रहे थे। हाँ नंगी धरती धरती का जड़ सन्नाटा सन्नाटे के भीतर सोया हुआ संघर्ष टूटने बिखरने का भयानक नाद जड़ सन्नाटे को चीरते हुए ये हल बैल, जड़ता की छाती में बिखरते हुए बीज, लहलहाते अंकुर, झूमती फसलें और फसलों के कट जाने के बाद का सन्नाटा सतीश को लग रहा है कि जैसे यह धरती का जीवन उसके जीवन का प्रतीक बन गया है।

हल्का-हल्का झीसा पड़ रहा है सतीश को अच्छा लग रहा है। उसे उमस को चीरते हुए ये झींसे हमेशा से अच्छे लगे हैं। कितनी उमस है इन दिनों क्वार आ गया किन्तु रात रात भर उमस हो रही है। मच्छड़ काटते हैं सो अलग से। हाँ यह हल्की-हल्की फुहार अच्छी लग रही है, सामने फैला हुआ धरती का नंगा सन्नाटा, इक्के दुक्के चलते हुए हल। सतीश अपने खेत के पास आकर बैठ गया, उसके हल उसी खेत में चल रहे थे। मिट्टी के भीतर से गंध उठ रही थी। सामने लम्बा सन्नाटा खुला था धरती का और सतीश की स्मृतियों का जिसके भीतर तरह-तरह के शोर बज कर सो गये हैं—

वह एक बार अपनी सारी विगत समृद्धि को कल्पना की आँखों में भर कर विह्वल सा हो गया। फिर होश सँभालते ही जो अपार अभाव

उमे ताडता हुआ दिखाई पडा, उसको तीखा अनुभूति से भर गया। लोग कहते ह कि इसका खानदान जवार मे एक नामी गिरामी तथा खुशहाल जमीदार परिवार रहा ह। धीरे धीरे टूटता-टूटता टूट गया। लोग इस सारी बरबादी का मूल कारण उसके पिता को बताते हैं, उसके पिता ने अपने निकम्मेपन से सारी जायदाद बेच-बेच कर खा डाली। लोग तरह-तरह की बातें करते ह—उसके पिता के बारे में मगर जो भी हो सतीश को अपने पिता के प्रति परम पूज्य भावना ह, वह कभी भी उनके प्रति आक्रोश से साथ हो नही पाता यद्यपि जानता ह कि पिता जी के ही जमाने म घर उजडा ह, खेत उजडे ह और क्या-क्या नही उजडा ह। कभी वह पिता का निष्क्रियता के प्रति अजीव तरह से बेचैन हो जाता ह बडा तीखा-तीखा अनुभव करने लगता है, बरबादी देख कर छटपटाता ह, किन्तु पिता के प्रति कुछ ऐसा भाव ह जो उसे खुलने नहीं देता भीतर-ही भीतर विचित्र प्रकार का द्वन्द्व पीता रहता ह। उसने इतना कमाया तो भी घर की बदइन्तजामी से कुछ बात बनी नही, कुछ स्थापित नही हो पाया, पैसे आते गये, बहते गये। और अब एकाध साल बाद क्या होगा ? सतीश उन खेतो के पास स गुजर रहा था जा कभी अपने थे। कितने उपजाऊ खेत थे, मगर बिक कर पराये हो गये ह। रेहनवाले खेत तो उसने छुडाए मगर जो बिक गये उनका क्या करे ? इन सार बिके हुए खेता के साथ पिता की निष्क्रियता उसे जुडी हुई दिखी, किन्तु ऐसी क्या चाज ह जो उसे पिता के प्रति कभी रोष करने नही देती बल्कि उसे सहज क्षणा में अपने पिता पर गर्व ही हाना ह।

सतीश के पिता जगदीशप्रसाद तिवारी अमलेश अपने जवार के एक मम्मानित पुरुप हैं। वे कभो भो किसी स्कूल में नही गये परन्तु संस्कृत, फारसी और हिन्दी के अच्छे विद्वान ह। वे हिंदी के अच्छे कवि भी हैं विशेषतया समस्या पूर्ति स्कूल के। पुरानी पत्र-पत्रिकाओं में

'अमलेश' जी का बड़ा सम्मान था। पिछड़े साधनहीन देहात में रहने के
बावजूद 'अमलेश' जी ने पाण्डित्य और कविता में जो सम्मान प्राप्त
किया था वह किसी के लिए भी ईर्ष्या का विषय हो सकता था। अप
जमाने में वे अपने जिले के दो तीन प्रसिद्ध कवियों में से थे। पंडित त
इतने बड़े कि सभाओं में बड़े बड़े पगड़ीधारी संस्कृत पण्डितों के दाँ
खट्टे कर देते हैं। ये पगड़ीधारी संस्कृत पण्डित भी कितने भावशू
होते हैं? सतीश को एक घटना याद आ गयी। वह विशारद क
तैयारी कर रहा था—एक देहाती स्कूल से। उसने वैकल्पिक विषय
रूप में संस्कृत ली थी। रघुवंश का तेरहवाँ सर्ग कोर्स में था। व
आस पास के तमाम आचार्यों के पास गया कुछ पंक्तियों का अर्थ पूछ
के लिए, लेकिन व्याकरण के आचार्य पण्डित अन्वय की सतह के नी
घुस ही नहीं सके जहाँ भावों का अगाध जल बह रहा था। सतीश क
स्वयं अपने पिता की शक्तियों का परिचय तब उतना नहीं था। व
घर आया, तो रघुवंश की उन्हीं पंक्तियों को दुहरा रहा था और उनक
उल्टा पुल्टा अर्थ (जैसा कि पण्डितों ने बताया था) कर रहा था
'अमलेश' जी कहीं बाहर जा रहे थे आवश्यक काम से। सुन लिया
चौंक कर बोले—क्या? क्या अर्थ कर रहे हो, जरा फिर तो कहना
तुम तो कालिदास की हत्या करके ही मानोगे।

अमलेश जी जमकर बैठ गये और लगातार दो-तीन घण्टा तक ज
कालिदास की वाणी का मर्म खोलते रहे वह अद्भुत था। सतीश के
सामने उन अनेक मौन पंक्तियों के भीतर से फूट-फूट कर भाव सौंदय
अर्थ-गौरव और अलंकार-संगीत बहता रहा। सतीश विस्मय से अप
पिता के पाण्डित्य और सहृदयता तथा कालिदास की महानता का रस
पीता रहा।

हलवाहा हाँफता हुआ आया—'मालिक आपने गजब कर दिया
जुते हुए खेत सूख रहे हैं, सारी आर्द्रता (आद्रता) मर गयी आप बोय

( बोज ) लेकर आनेवाले थे। मेरा लडका कब से बाबू साहब के यहा आपको अगोर रहा था। खेत तो भर गया।'

अरे यहाँ कालिदास मर रहे थे तुम्हें खेत भरने का चिंता बनी हुई ह। मै तो आ ही रहा था लेकिन बीच में कालिदास जो आ पट। जाओ खेत को हेंगा कर ( हेंगे से बराबर करके ) छोड दो, कल देखा जायेगा। इतना हाफते क्या हा ? मानो प्रलय आ गया हो।'

सतीश को अब लगा कि उसके पिता कितने जरूरी काम से बाहर जा रहे थे लेकिन उनकी साहित्यिकता ने रास्ता रोक दिया। सतीश एक दुहरे भाव से भर गया था—काम नहीं होगा तो क्या कालिदास खाने को देंगे ? इसी कालिदास ने लगता ह सारे खेत बिकवाये ह गरीबी ला पटकी ह घर का सम्मान बरबाद किया है। यह भी कोई बात ह कि खेत उकठ रहे हो और ये बैठ जाएँ कालिदास पढाने का। सताश को अभी भी याद ह कि उनका वह आक्रोश भाव स्थायी नहीं रह सका था, आक्रोश का चीर कर पिता की मुस्कराती हुई, साहित्य रस से छलछलाती हुई और दुनिया के तमाम बाहरी सुखों की उपेक्षा कर आत्म सुख म दमकती हुइ आँखें उभर आइ। यह मस्ती, यह लापरवाही, निष्क्रियता नहीं ह बल्कि जावन का अधिक गहराई से पाने की निरंतर चेष्टा ह। गवार लाग केवल बाहरी भाग-दौड का जावन का गति समझते ह वे अपने को बडा सपूत और कमठ समझते है। ये गँवार लाग हा 'अमलेश' जी को निकम्मा और नालायक बेटा कहते ह। सतीश को लगा था कि घर इज्जत की बरबादी का यह ठोक अथ नहीं ले सका हूँ। इज्जत धन दौलत और पाडित्य दोना से बढती ह। बल्कि पाडित्य की इज्जत अधिक सही होता ह। उसके पिता जिले के नामी कवि हैं, पडित ह, बड-बड लाग उन्हें जानते ह, उनका आदर करते हैं, ये जवार ■ दो चार दान जौ-गेहूँ इकट्ठा करके धनी और सम्मानित बननेवाले गवार-गुरवा लाग हमारे घर की इज्जत नहीं करते, तो क्या बनता

बिगडता ह ? मगर सवाल इज्जत का ही तो नहीं ह। कोई इज्जत करे या न करे खाने को अन्न तो चाहिए रहने को अच्छा मकान तो चाहिए, इज्जत के साथ लडके-लडकियो का शादी-ब्याह करने के लिए साधन तो चाहिए, बच्चो को पढाने के लिए पैस तो चाहिएँ, पहनने को कपडे लत्ते तो चाहिएँ। यह सब कहा से आयेगा ? यह सब सोचत सोचते सतोश की आँखा के सामने बोस साल पहले का उसका पारिवारिक चित्र उभर आया।

एक बडा सा तीन खडो का मकान जिसकी अधिकाश दीवारें जजर हो गई थी, कुछ दीवारें ढह गई थी, मिट्टी के बने हुए बडे बखार खाली पडे हुए थे लगता था कि वह कई वर्षो स इनमें अन नही पडा, भूखे खडे ह बडे-से दरवाजे पर बडा-सा भुसौला बना हुआ था जिसका चौथाई पेट भी भूसो से नहीं भर सका था। चरन पर खडे दो बल इस विस्तत चरन में खो से गये थे। बल अक्सर नाद पर झूमते ही रहते। हलवाहे का लडका सानी पानी का काम करता था। कमलेश जी दरवाजे पर बने हुए पूस के बगले में रामायण या गीता या महाभारत या किसी सस्कृत कवि का काव्य लिये या सुकवि, माधुरी या विशाल भारत की प्रति लिये खोये रहते। जब उनकी निगाह नाद की आर जाती ता जार स पुकारत— अर ओ रघुपतिया! रघुपतिया न जान कहाँ चला जाता है यह सम्पतिया का बेटा। अरे कहाँ गया र ओ रघुपतिया!

रघुपतिया पास की किसी गली में गोली खेलता हाता। आवाज सुन कर हँसता हुआ निकल आता और नाद की ओर चल जाता यह जानने के लिए बल क्यों खड हैं और कमलेश जी स्वगत बडबडाते रहते— कहाँ चला जाता है तू। तू बला का पीडा नहीं समझता। बेबस ये बेचारे टकटकी लगाये तेरे आसरे खड हैं और तू है कि बार बार लुप्त हो ही जाता है और बच्चों को खेलना तो चाहिए ही किन्तु खेल और कम का अनुपात भी तो एक वस्तु ह उसका बोध भी तो तुम्हे हाना ही

चाहिए। तू नहीं जानता कि ये बैल खेती के प्राण हैं, ये ही भूखे रहेंगे तो धरती माँ रूठ जाएगी।'

रघुपतिया नाद में भूसा डाल कर या भूसी डाल कर या बैलों को अलग कर फिर लापता हो जाता और अमलेश जी बडबडाते रहते, फिर खो जाते अपनी पुस्तकों में। सतीश इधर उधर से कभी आ जाता या स्कूल से लौट आता तो अमलेश जी का यह स्वगत प्रवचन सुनता। उसे लगता कि क्या ये स्वय नहीं इन बलों को नाद पर से हटा सकते हैं। सतीश स्वय यह सब काम कर लेता और रघुपतिया यदि उसके सामने पड जाता तो झापड मार कर गरज उठता, 'साले दिखाई नहीं पडता ह कि बल कब से भूखे-प्यासे नाद पर खडे ह घूम घूम कर गोली खेलता ह और बाप ह कि राज अनाज पताई के लिए अँगोछा फैलाये रहता ह। ठीक से बलों की देख भाल किया कर, नहीं तो तेरी गोली खेलना निकाल दूँगा।'

सतीश के सामने पडते ही रघुपतिया घबरा उठता और उसकी लताड और हल्की मार खाकर रुआसा मुँह लिये काम में लिप्त हो जाता।

अमलेश जी उसे समझाते— नहीं बाव, इस तरह छोटे बच्चों पर नहीं बरस पडते हं, सारा काम शाति स लेते ह। बच्चों के लिए तो यह खेलने का ही समय ह। शाति से काम लिया करो बाबू! दुनिया का कोई काम नहीं रुकता—बस शाति बनाये रखनी चाहिए।

सतीश के मन में कोई बडी कडवी बात बाहर कहने को अकुला उठता— हा शांति से ही काम लेते लेते तो घर इस दरिद्रावस्था में पहुँच गया ह।' लेकिन वह कह नहीं पाता। कहीं कुछ ऐसा दवाव था जो मन पर परतें बन कर छा जाता। पिता की उपदेश—वाणी सुनकर सतीश वहाँ से चुपचाप सरक जाता।

लेकिन सतीश अनुभव करता—जसे सचमुच उसके पिता ने जीवन भर शान्ति की साधना की हैं। उसे याद ह अनेक भयकर-से भयकर

अवसर, जब अमलेश जी उसी शान्ति और धीरता से सब कुछ हल्ल को शामिल करते रहे हैं। उसे एक भी ऐसा क्षण याद नहीं है जब अमलेश जी उद्विग्न हुए हों या परेशान नजर आये हों। लोग कहते हैं कि अमलेश जी बिल्कुल जाहिल हैं, उन्हें घर के बनने बिगड़ने का कोई गम नहीं। सतीश को भी ऐसा अनुभव होता रहा कि किसी भी समस्या का वे गम्भीरता से लेते ही नहीं हैं जब-जब स्कूल की फीस चुकाने की बात आयी या परीक्षा के लिए फीस दाखिल करने का समस्या उपस्थित हुई, सतीश ने अनुभव किया कि अमलेश जी ने उसकी बात सुन ली और फिर पुस्तकें पढ़ने लगे। सतीश को बड़ा धक्का-सा लगा उनकी इस उपेक्षा वृत्ति पर। वह रोज राज फीस के लिए तकाजे करता रहा और अमलेश जी यही कहते रहे कि हो जायेगा प्रबन्ध उद्विग्न क्यों होते हो? और सतीश ने अनुभव किया कि हमेशा आखिरी तिथि को बुला कर अमलेश जी ने उसे पैसे दे दिये हैं। सतीश सोचता रहा है कि ये क्या वाहियात आदत है इनकी कि हर काम आखिरी मौके पर ही करते हैं।

लेकिन सतीश ज्यों-ज्यों बड़ा होता गया त्यों त्यों परदा उसके सामने से हटता गया। उसकी माँ बताती है कि अमलेश जी ने उनसे कह रखा था कि देखो बच्चों के सामने अपनी परेशानियाँ मत रखना। उनके कोमल चित्त पर काली-काली छाया न पड़ने पाये। अमलेश जी इन सारी काली छायाओं को अकेले पीने के लिए प्रयास करते रहे हैं तो भी—हँस कर।

माँ बताती है कि कैसे बड़ी-बड़ी समस्याओं के आने पर वे रात रात भर बेचैन रहे हैं और उन्हें हल करने के लिए कितनी कितनी कोशिश करते रहे हैं किन्तु औरों के सामने होते हो उसी लापरवाही भरी हँसमुख मुद्रा को बिखेर देते रहे हैं। लोग उनके भीतर के दर्द को न पहचान कर केवल उनकी लापरवाही भरी मुद्रा को देखते रहे हैं।

कठोर-से-कठोर सघर्षों को झेलते हुए जब कभी वे बाहर गये हैं—किसी प्रकार का हल ढूंढने के लिए, तो भी लोगो ने समझा ह कि ये घूमने जा रहे हैं।

सतीश महसूस करता गया कि पिता की इस मुस्कान इस सैलानी वृत्ति के पीछे कोई गहरी पीडा ह, जिसे वे कभी खोलना नही चाहते, किसी को दिखाना नही चाहते, उसे अकेले भोगना चाहते ह, और बिखेरना चाहत ह—मुस्कान, साहित्य, रस करुणा और सहानुभूति लेकिन सतीश ज्यों-ज्यों बडा होता गया, पिता की पीडा उस पर खुलती गयी और सतीश के मन में जो यह सस्कार बन गया था कि पिता घर का मुसीबता से अचेत हो कर केवल मटरगश्ती करते हैं, वह टूटता गया।

फिर भी सतीश मन की गहराई मे यह जरूर सोचता रहा कि पिताजी ने ही सुख-समृद्धि से भरे घर में यह अभाव, यह पीडा बोया ह। ये पीडाएँ जरूर झेलते ह हँस कर सहते ह किन्तु यदि ये परिस्थितियो के प्रति शुरू से जागरूक रहते, गृहस्थी के काय को तत्परता से पूरा कराते रहते स्वय भी इस रईसी चाल का छोड कर थाड और गतिशील रहते तो घर को ये दिन न देखने पडते। गाँव के साधारण से-साधारण लोगो ने अपना जागरूकता से घर बना और बसा लिया। थोडी-सी खेती स ही वे श्रम और लगन से सोना पैदा करते हैं, जिनके पास थोडी-सी भी अकल और शिक्षा है वे दौड धूप कर कोई-न-कोई डाल पकड बठे और अपनी उखडी गहस्थी बसा ली, किन्तु यहाँ तो जमी जमायी गृहस्थी टूट कर बिखर गई। और तब केवल सहने ■ क्या होता ह ? सहते तो सभी लोग ह आ पडने पर, कोई रो कर सहता ह कोई हँस कर।

किन्तु नही अमलेन्दु जी सहने के लिए नहीं सहते ह। परिस्थितियाँ उनके निकम्मेपन से आ गयी हो और फिर उन्हें वे एक अनिवार्य स्थिति समझ कर सह रहे हो, ऐसी बात भी नही ह। वे इन परिस्थितियों को

सहते हुए अपने उसी मानवतावाद के रास्ते चल रहे ह, जिस पर चलने से ये परिस्थितिया आती ह और मनुष्य को बहुत कुछ भोगना पडता ह। पिता अपने विकास की सीमाओ मे सच्चे हृदयवादी ह शुद्ध भाव के चाहक, मानवतावादी।

सतीश को याद आय अनक चित्र गाँव के तमाम घरा के, स्वय महीपसिह के दरबार के। मजूर मजूर नही ह यन्त्र ह। काम करते करते जरा सा किसी के हाथ थम गय मालिक गालिया का बौछार करने लगा। कोई मजूरिन अपन नन्हे-से बालक को दूध पिलाने क लिए उठ गयी तो गाली तो मिली ही मजूरी भी काट ली गयी। कोई मजूरिन काम की चट्टान को थोडा हल्के करने के लिए किसी सखी सहेली से बात करन लगी तो मालिक के घर क बच्चे भी गरज उठे— 'क्यो री! फलनियाँ, तरा यह करा तेरा वह करा, बात करने के लिए पैसा पाती ह। बाब से कहता हूँ न कि तू काम नही करती ह खाली बात करती ह। ये छोटे छोटे मालिक बड मालिक बनते है संवेग शून्य मालिक काम करने करानवाल यन्त्र।

लोग उसके पिता पर हँसते ह। ये भद्र पुरुष अपने को लायक समझत ह क्योंकि ये मजूर को आदमी नहीं समझते दो आने मजूरी देकर मजूरों के जीवन रस का आखिरी कण निचोड लेना चाहते ह। हाँ लायक ही ह ये लोग। और अमलेन्दु जी इनके साथ नालायक, निकम्मे।

उसे याद आयी एक मामली सी घटना। घटना भी उस क्या कहें एक दृश्य ही कहें—

घर की पश्चिमी दीवार गिर गयी थी नयी उठायी जा रही थी। काम पर आठ दस लडके लडकियाँ लगे थे। व काम कम करत थे, विनोद अधिक। दीवार बनानेवाला बार बार डाँटता था कि 'अरे यहा अकाज हो रहा है और तुम साले मकला रहे हो! अमलेन्दु जी अपन यहाँ आये हुए एक साहित्यिक मित्र स साहित्यक चर्चा कर रहे थे।

दीवार बनानेवाले को डाट-डपट जब कई बार सुन लेते, तो एक बार बीच में बोल पड़ते—'अरे, हरे-हरे बदमाशो, काम करने आये हो या मकलाने। अच्छा-अच्छा नहीं मानते हो, तो देख लेना शाम को सबकी मजूरी काटूँगा।

लेकिन लड़के लड़कियाँ उसी प्रकार खिलखिला खिलखिला कर एक दूसर के ऊपर कीचड़ का निशाना लगाते रहते, थवई भूँकता रहता और अमलेश जी चमकती आखा से यह सारा दृश्य देखते रहते, जैसे इन सब बच्चा के रूप म उनका ही बचपन छलक आया हो।

सतीश को याद ह कि वह स्कूल से लौटा था। जब उसे यह सब बर्दाश्त नहीं हुआ, तो एक लड़के को जोर का थप्पड़ जड़ दिया था और उसके बाद ता सारी चुहल खतम हो गयी थी और बड़े वेग से सारा काम चलने लगा। थवई ने कहा था—हा बाबू, ऐसे काम मे आप की ही जरूरत ह।'

सतीश को लगा कि अमलेश जी ने यह पसन्द नहीं किया, क्योंकि उनकी आखें नाराजगी स उसे देखने लगी थी। महीपसिंह के यहाँ काम करत-करते सतीश को यह अनुभव हुआ कि सचमुच बिना मार क काम होता नहीं ह, सीधे अँगुली घी नहीं निकलता, लगान के लिए छूट देते जाओ हसे जाओ, बस सिर पर चढ गये, और हा चुकी लगान की वसूली, जहाँ मुर्गा बनाया और दस लातें जमाइ, बस दूसर दिन लगान उगल देंगे। गाँव में हो देखा जो बदमाश ह, जिनसे कुछ बिगड़ने का डर ह—उनके काम पर मजूरे दौड़ते हुए जायेंग, किन्तु भले आदमिया की तो कुछ गणना ही नहीं करते।

सतीश के सामने बिजली की गति से उसके जलते हुए सारे चाँटे चमक गये। और जल स भर हुए छोटे-छोटे गड्ढा की तरह उभर आइ अनेक आँखें।

सतीश को बडी कडुवाहट मालूम पडी इन स्मृतियो से। ये उभरी हुई आँखें उसके अंग-अंग पर या चिपक गयी, जसे साँप की दोनों कन पटिया पर मन्त्र की कौडी चिपकती है। उसने आवेश मे केवल सत्य का एक ही पहलू देखा था, दूसरा पहलू तो मन शान्त होने के बाद ही दिखाई पडा—ऐसा था बरसते हुए जलते चाँटे और लगान उगलते काश्तकार, यन्त्र की गति से भागते हुए मजूरो के पाँव, चलते हुए हाथ। और एक सत्य बन गया कि लात खाने पर ही ये छोटे लोग काम करते हैं या पसे उगलते है, बात तो सुनते ही नही। सतीश को यह संस्कार कहाँ से मिला ? इतने उदार बाप का बेटा हो कर वह ऐसा काम-काजी और निर्दय कसे हो गया ? वह कभी-कभी सोचता है और पाता है कि शायद पिता की अति उदारता और सासारिक कार्यों के प्रति उदासीनता की ही प्रतिक्रिया के रूप में बचपन से ही यह संस्कार उसके मन में उग रहा था। धीरे धीरे परिस्थितियो ने उसे एक ऐसे घेरे मे जकड दिया, जहाँ उसके ये संस्कार अनजाने ही पक्के होते गये।

नहीं ऐसा नही है कि उसे पिता के संस्कार नही मिले हैं। उसे याद आ रहे है वे सारे क्षण जब उसने सत्य के एक पहलू को देखने के बाद दूसरा पहलू भी देखा। जब-जब चाँटे मार कर वह अपनी सफलता के मद में चूर अपने सहज स्वरूप में अपने घर लौटा तब तब उसने लगान उगलती, यन्त्र की गति से दौडती भागती आकृतियो के पीछे घर का भाडा-बरतन बेचती मजबूरियो, डबडबाई आँखो और रात भर नस-नस में छटपटाती व्यथाओ को अपनी ओर निहारते हुए पाया। उसे लगा है कि सारी सफलता ऊपरी है, स्वत्व अनाधिकारी। उसे अपने पिता पर गर्व है कि उन्होंने हमेशा सत्य के दूसरे पहलू ( जो कि अधिक आन्तरिक और गहरा है ) को देखा है। उन्होंने सफलता की अपेक्षा शान्ति को प्यार किया है, पैसे की जगह मित्रों को प्यार किया है। इस प्यार में स्वयं लुट गये किन्तु किसी और को नहीं लूटा प्यार का

मूल्य उन्होंने चुकाया है भरपूर और उसका पुरस्कार भी पाया है—शान्ति, मन की शान्ति !

सतीश बँटा हुआ है अपने में। सत्य उसे कहीं से तोड़ता है कहीं से जोड़ता है। सत्य स्वयं कई टूटे खण्डों में उसमें बिखर गया है। वह पिता है कहीं भीतर से, लेकिन सम्पूर्ण वही नहीं है, चाहे भी तो नहीं हो सकता, कुछ ऐसा है—जो उसे वह नहीं बनने देता जो उसके पिता हैं। और कुछ ऐसा भी है—जो वह नहीं छीन पाता जो उसके पिता में है। यह द्वन्द्व सतीश को बुरी तरह साडता है। उसे स्वयं लगता है कि वह पिता का सम्पूर्ण रूप नहीं चाहता, वह जैसे कहीं अधूरा है वर्तमान परिस्थितियों में। केवल भीतर की शान्ति नहीं, बाहर का सुख भी चाहिए। बाहर के सुखों के अभाव में भीतर की शान्ति कब तक पकड़े रखेगी ? इसीलिए तो सतीश ने घर को बदलने के लिए इतना संघर्ष किया। इस संघर्ष में पाप कितना है, पुण्य कितना है इसकी व्याख्या करना मुश्किल है, हाँ इतना सत्य है कि यह संघर्ष अनिवार्य था इसलिए सतीश को करना पड़ा।

मिडिल पास करते ही उसे इच्छा हुई कि वह कहीं नौकरी कर ले। उसकी पढ़ने की इच्छा नहीं थी ऐसी बात नहीं, बल्कि वह तो बहुत थी, किन्तु घर की अवस्था ने उसे बार बार कोचा कि वह कुछ कर दिखाये लेकिन अमलेश जी ने साफ 'नाहीं' कर दिया। अमलेश जी की इच्छा थी कि वह पढ़े। क्या पढ़े ? गोरखपुर हाई स्कूल में भेज कर खर्चा चलाना मुश्किल था। दूसरे अमलेश जी ठहरे साहित्यिक व्यक्ति। उनकी इच्छा रही होगी कि मेरा बेटा भी साहित्य का साधक हो, विद्वान हो हिन्दी का। अतः उन्होंने चौदह मील की दूरी पर चलनेवाले एक प्राइवेट स्कूल में भेज दिया सतीश को—विशेष योग्यता, विशारद और साहित्यरत्न पास करने के लिए। अमलेश जी खुद भी पढ़ा कर पास करा सकते थे किन्तु अध्ययन नियमित नहीं हो पाता और पुस्तकें नहीं

उपलब्ध हो पाती, इसी डर से शायद उन्होंने इस दूर के स्कूल में भेज दिया था। इस स्कूल का नाम था— राष्ट्रभाषा विद्यालय सोनइला।' सोनइला के पास के गाँव के एक द्विवेदीजी—यह स्कूल चलाते थे क्या नाम था उनका? हाँ शिवमूर्ति द्विवेदी। द्विवेदीजी थे तो साहित्यरत्न पास, लेकिन बड़ी योग्यता से और बड़े परिश्रम से तीनों कक्षाओं को पढ़ा लेते थे। वहीं एक संस्कृत पाठशाला भी थी। संस्कृत पाठशाला के सामने ही 'राष्ट्रभाषा भवन' बनवाया गया था, यह मकान द्विवेदीजी के परिश्रम और प्रभाव का फल था। उसे याद है कि द्विवेदीजी का व्यक्तित्व बड़ा ही दबंग और साथ ही साथ बड़ा ही शिष्यवत्सल था। नाराज होते भरपूर मात्रा में, और प्यार भी करते भरपूर मात्रा में। गाँव की सीमा में विकसित हो कर भी उनकी रुचि और ज्ञान व्यापक और बहुमुखी था। डाँट से पढ़ाते, शाम को कुश्ती लड़वाते, वालीबाल खेल-खेलवाते, वालीबाल की टीम ले कर दूर-दूर तक खेलने जाते, बैडमिंटन कोर्ट भी बना रखा था, सप्ताह में लड़कों का डिबेट कराते कविताएँ लिखने को प्रेरित करते और सुनते सुनाते। सतीश कविताएँ भी लिखता था। पंडितजी उसे बहुत मानते थे। बात बात में उसकी तारीफ करते उसकी राय माँगते और उसके सुंदर भविष्य की कल्पना करते।

शुरू-शुरू में जब सतीश ने घर छोड़ा था, बड़ा उसे खराब-खराब लगा था छाती में पूरी बरसात भर गयी थी। लगता था अब वह रो पड़ेगा, तब रो पड़ेगा। उसे अपने गाँव की जमीन पुकारती रहती छोटे छोटे त्योहारों से भी उसका इतना सगा परिचय हो गया था कि गाँव नहीं पहुँच पाने पर वे छाती में भर भर आते। हर छोटे बड़े त्योहार के दिन उसे एक विशेष गंध से गमकता अपना गाँव याद आता माँ के हाथों का विशेष स्वाद लिये भिन्न भिन्न प्रकार की खान की चीजें उसके मुँह में भर आतीं, त्योहारों के क्रिया-कलापों से सम्बन्धित पेड़-पौधे,

खेती-बारी, घर-द्वार, मेले-हटिए सभी उसके तन-मन में महक उठते और घर न पहुँच पाने पर उदास हो जाता। बड़े बड़े त्योहारों पर तो छुट्टियाँ होती ही थी, किन्तु छोटे छोटे त्योहार तो अनेक होते हैं और बहुत से तो केवल औरतों के होते हैं ऐसे अवसरों पर छुट्टी माँगने पर सभी लोग हँसते 'तीज, जिउतिया, पिंडिया, छठ वगैरह तो औरतों के व्रत के त्योहार हैं, क्या करोगे तुम जाकर ?' लेकिन सतीश को लगता कि इन सारे त्योहारों की एक एक गंध का वह भोक्ता रह चुका है अब वे सभी स्पन्दन बन कर उसके तन-मन में व्याप गये हैं बुलाते हैं और न पाकर उदास कर जाते हैं।

धीरे धीरे उसका मन सोनइला की जमीन में रम गया। उसे लगा कि यह जमीन भी ऐसी है, जैसी उसके गाँव की है। उसकी छाती में भरी भरी बरसात पिघलने लगी। उसे मिडिल स्कूल के साथियों से बिछड़ कर नये लोगों के बीच आने पर एक अजब परायापन महसूस हुआ था, चाहता था कि काश वे ही साथी हमेशा साथ होते किन्तु अब नये दोस्तों के बीच उसे अनुभव होने लगा कि उसने कुछ नया पाया है। ये सब पराये और अनजाने नहीं हैं बल्कि उसी के समान दुःख दर्द सुख दुःख की धरती के पुत्र हैं। सतीश उनसे घुल मिल गया तो छुट्टियों में घर रहना उसके लिए भारी पड़ने लगा।

स्कूल के बरामदे में पढ़ाई होती थी और जो तीन-चार कमरे बने थे उनमें विद्यार्थी रहते थे। सतीश को अब लगता है कि कैसे इतने विद्यार्थी एक साथ एक कमरे में रह लेते थे, एक ही लालटेन के नीचे बैठ कर हजहज-हजहज सभी विद्यार्थी हजहजाया करते थे पाठ याद करते थे। और वह दृश्य तो भयंकर था—एक ही कमरे में छ-सात चूल्हे सुलगते थे और इस कदर धुँआ छा जाता था कमरे में कि आँसू-खाँसी एक साथ सारे विद्यार्थियों के भीतर से फूट पड़ती थी। कभी-कभी कच्ची लकड़ी सुलगती ही नहीं थी, लाल आँखों से आँसू झरते हुए विद्यार्थी फूँक पर फूँक

मारते थे, और चूल्हा बुस बुस जाता था। सतीश को एकाएक गुस्सा आ गया, उन लोगों की याद से जो बाहर जाकर भी कुछ नहीं जानते अपने पश्मीनेदार की तरी हुई धनुष हाशियारी से संभाले फिरते हैं। ये थे कुछ लड़के जो कामचोर थे हमेशा काम के वक्त घर-हाजिर होजा-भेजो करने वाले। ये नाम अपना जांगर चुराने में ही होशियारी समझते थे। उनके चूल्हे में ही एक था सुकुल—काला काला भस की साग की तरह तनी हुई देह वाला बरुए की पीठ-सा चिकना तना ऐसा पट लिये सारा हुँरी में प्रवीण। कोई भी काम करने का कहो तो बस यहा जवाब कि मने तो इतना किया है अब तुम लोग करो। मौके से कहीं तरक जाना और भोजन तैयार होने पर हाजिर। भाजन परोसन के लिये तयार। दबा-दबा कर भात अपनी थाली में भर लेता और औरों की थाली में थोड़ा-सा भात फुलफुला कर डाल देता। कभी-कभी तो मारे गुस्सा के और लोग भी खाना बनाना छोड़ देते तो उपवास करके सो रहते। हर चल्हे में एस लोग थे। पडितजी को मालूम होता तो बना फिचाई करते या खुद आकर बनाने लगते तो औरों को शरम आती। ऐसे ही कामचोर आगे बढ़ कर गांव के नागरिक बनते हैं होशियार सुशहाल।

कितने कड़े दिन थे वे किन्तु तब तो खास नहीं लगा अब। उनकी अनुभूति बड़ी तीखी होती है। हर दसवें-पन्द्रहवें चौदह-चौदह मील पैदल चल कर सिर पर आटा दाल लादे हुए स्कूल पहुँचते थे। पहली बार तो सदूक और बरतन भी लाद कर ले जाना पड़ा था। शाम का देह कितनी दुखती थी और कभी कभी तो रात भर नींद नहीं आती थी ऐंठन के मारे। कभी-कभी तो मन भी ऐंठ जाता था। सतीश शुरू से ही कुछ उभरी हुई तबियत का रहा है, हमेशा वह ऊँचे लोगों का देखकर वहाँ तक पहुँचने के लिए लालायित रहता। वह देखता कि पडितजी के गाँव के कुछ लड़के (जो बनारस इलाहाबाद पढ़ते थे) घर जाते समय स्कूल में पहुँच जाते थे। क्या ठाठ थ उनके? वे अपने साथ के छोटे-मोटे सामान भी

स्कूल पर छोड जाते, यह कह कर कि नौकर आयेगा तो ले जायेगा। सतीश का मन होता—'काश म भी इसी तरह अच्छे कपडे पहन कर खाली हाथ स्कूल आता और कोई नौकर यह आटा-दाल पहुँचा जाता।' इन अनुभूति के क्षणो में आटा-दाल की गठरी उसके व्यक्तित्व को पासती मालूम पडती। उसकी इच्छा होती कि रास्ते में कोई भी गाँव नहा पडता, कोई देखनेवाला न होता। उसे लगता कि सभी लोग उसे पहचानते हैं और उसका उपहास कर रहे हैं। मुसीबत यह थी कि सोनवरसा की सस्कृत पाठशाला ही मशहूर थी, 'राष्ट्रभाषा विद्यालय' कौन समझता है। रास्ते में औरतें पूछतीं—'ए बाबू कहाँ पढते हो ?'

'सोनहला।'

'सस्कीरित इस्कूल में।'

'नहीं राष्ट्रभाषा विद्यालय में।'

'अरे हाँ-हा ऊहे एक्के चीज है।' अब सतीश किसे-किसे समझाता कि नहीं यह एक्के चीज नहीं है, दो चीजें हैं। उसे सस्कृत पाठशाला का विद्यार्थी कहे जाने से बडी चिढ होती। सस्कृत के विद्यार्थियों का स्पष्ट चित्र उसके मन में था और वह समझता था कि कहनेवालों के मन में भी वही चित्र है। लोग मुझे भीख माँग कर पढनेवाला विद्यार्थी समझें, यह कितनी हीन बात थी। आखिर जिस बात से वह भागता रहा, वह उसके कान से टकरा ही गई। उस दिन घर से स्कूल जा रहा था आधा म्लाद हुए। उस गाँव की औरतें बैठी थी। वह थोडा-सा आगे बढा कि एक औरत ने बडी हमदर्दी से भीगी आवाज में कहा कि 'बेचारा सस्कीरित पढ़ता है। सनीचर को आता है, इतवार को माँगता है और सामवार का बटोर-बटोर कर इसकूल जाता है। म कई महीने से देख रही हूँ।'

सतीश ने सुना। उसकी इच्छा हुई कि चिल्ला कर कह दे कि—'ए काका, भाई म भीख नहीं माँगता घर से ले आता हूँ। मैं सस्कीरित का नहीं, राष्ट्रभाषा का विद्यार्थी हूँ।' लेकिन उसे ज्ञात हुआ कि कहने म

क्या फायदा ? ये जड काकी माई बडे भोलेपन से  वह देंगी—'आरे, ऊहे, एकरे मइल !' उसे बडा दु:ख होता कि लोग यह क्यों नहीं समझते कि राष्ट्रभाषा हिंदी में भी पढ़ने लायक चार्ज़े हो सकती हैं। वह किसे किसे समझाये कि मैं विशेष योग्यता पढ रहा हूँ। समझे भी कौन ? और नहीं समझने गाँव के लोग, तो इनका दोष भी क्या ? वह हिन्दी का उच्च अभ्यास कर रहा है और लोग उसे कुछ समझते ही नहीं। अंग्रेजी पढ़ने वाले लडका का पढना लाग 'पढ़ना' समझते हैं किन्तु उसका पढ़ना कोई पढना ही नहीं ! उसे अजीब हीनता का अनुभव होता और सोचता—'काश ! मैं भी अंग्रेजी पढ़ सका होता। लोग मुझे भी बी०ए०, एम० ए० कहते किसी दिन।'

लेकिन क्या हुआ जो मैं राष्ट्रभाषा पढ़ रहा हूँ ! 'विशारद' बी० ए० है। 'साहित्यरत्न' एम० ए० है। अपनी राष्ट्रभाषा की पढाई से तो और गर्व होना चाहिए, ये गँवार नहीं समझते हैं तो न समझें।

गाँव के कुछ कमासुत बुजुर्ग पूछते थे—व्यग्य में कि 'कहो सतीश क्या करोगे विशारद-साहित्यरत्न पास करके ?'

सतीश को बडा बुरा लगता, इन प्रश्नों को सुन कर। वह राष्ट्रभाषा पढ रहा है, साहित्यरत्न होने के बाद पत्रकार बन सकता है, साहित्यकार बन सकता है और बहुत कुछ बन सकता है। एक अजीब-सी भावुकता की बहक उसके मन में थी। और अब साहित्यरत्न पास हो गया, तो जैसे सहसा एक रास्ता खत्म हो गया है एक घने जगल में। रास्ते के अत पर आ कर एकाएक वह ठिठक गया, और सोचने लगा अब कहाँ जाये ? आगे तो घनी झाडियाँ ही झाडियाँ हैं।

ठीक कहते थे वे लोग। अब कहाँ जाऊँ ? अंग्रेजी पढने की सामर्थ्य नहीं और अब ! —अब तो घर की पुकार अनसुनी नहीं की जा सकती। पिताजी कुछ कहते नहीं, जैसे कोई जहर पीकर चुप हो, लेकिन अब मुझसे घर की अवस्था नहीं देखी जाती, कुछ करना पड़ेगा। पिताजी का भी

उद्देश्य पूरा हो गया। साहित्यरत्न पास हो गया। उसके बाद की पढ़ाई के आगे उनकी कल्पना हो नही गयी। कल्पना गयी भी हो, तो बार-बार यथार्थ की चट्टान से सिर टकरा कर टूट गयी हो—कौन जाने ? लेकिन अब वे भी मौन भाव से मेरी नौकरी करने की लालसा को स्वीकृति दे रहे है। नौकरी नौकरी नौकरी! बस अब कुछ नही। सतीश की इच्छा थी कि किसी अखबार में काम करे। उसके मन में पत्रकारिता के बारे में बडे ऊँचे सपने थे। साहित्यरत्न पास कर लेने पर वह अपने को बहुत योग्य समझने लगा था। काशी की एक राष्ट्रीय सस्था में उन्ही दिनों पत्रकारिता का स्कूल खुला। सतीश ने सोचा कि चलो यही कोर्स पूरा कर लें। वहाँ जाने पर उसे कुछ और ही अनुभव हुआ। आचार्य ने पूछा कि आपकी क्या योग्यता है? 'साहित्यरत्न'—गर्व से सतीश ने उत्तर दिया।

'इगलिश कितनी जानते हैं ?'

'सो तो बिल्कुल नही जानता।'

'तब कैसे आप पढ़ाई कर पायेंगे? यहाँ तो अधिकाश लेक्चर इगलिश में होंगे।' वह निराश होकर लौट आया था। उसे तब जान पडा कि हाँ सचमुच इगलिश की पढ़ाई ही 'पढ़ाई'-है,—राष्ट्रभाषा की पढाई का मूल्य तो राष्ट्रीय सस्थाओ में भी नहीं है।

तब वह हाई स्कूलो में भटका हिन्दी टीचर बनने के लिए। वहा भी अंग्रेजी की माँग! पचीसों स्कूलो को छानता फिरा, परिचय के बिना कोई सीधे मुँह बात नहीं करता था, और यदि बात भी करता था तो अंग्रेजी का सवाल खड़ा करता था

सोचा—किसी तरह अंग्रेजी पढ़ूँ। पिताजी से बातचीत की थी कि शहर जाकर किसी प्रकार ट्यूशन वगैरह करके इंगलिश पढ़ूँगा और तभी एक घटना घटी। कमलेशजी ने बेटी की शादी में पाँच सौ कर्जा लिया था

दीनदयाल तिवारी से। यह बढ़कर १५ सौ हो गया था। दीनदयाल तिवारी ने बार-बार तकाजा किया, अमलेश जी नहीं दे सके। दीनदयाल ने मुकदमा दायर कर दिया। प्रोनोट था ही, अतः डिग्री हो गयी। कर्जा चुकाने की मियाद खत्म हो गई, तो कुर्की कराने लिए कुर्क-अमीन के साथ दीनदयाल तिवारी आ पहुँचे। अमलेश जी अपनी उसी स्थित मुद्रा में बैठे थे। और समझा रहे थे— दीनदयाल जी! कुछ दिन की मुहलत और दो, हम कोई गैर हैं? गाँव के ही तो हैं। गाँव में इतना भी भाई-चारा न हो, तो फिर गाँव और शहर में फर्क ही क्या रहा?'

दीनदयाल तिवारी ने अपनी मीठी वाणी से अमृत बरसाते हुए कहा—'अरे जगदीश काका! मैं तो आपका उपकार कर रहा हूँ, यह कर्ज बढ़ता ही जायेगा और आप कभी दे सकेंगे, इसमें मुझे शक है। मेरी भी झंझट दूर हो और आपकी भी, इसलिए मैंने यह सीधा उपाय सोचा है। कुर्क-अमीन साहब! काम होने दीजिए, जगदीश काका तो वर्षों से यही कह रहे हैं। अरे, जो आदमी अपने हाथ बैलों को सानी-पानी नहीं कर सकता, वह किसी का कर्जा कैसे चुकायेगा?'

सतीश आँखों से यह सारा दृश्य देखता रहा। गरीबी इतनी बड़ी बेइज्जती बन कर कभी नहीं आयी थी। लगता था कि वह फूट-फूट कर रो पड़ेगा। तब तक अमलेश जी गरज पड़े। सतीश के लिए पिता का गरजना एक नया अनुभव था। उसने पिता के गरजने से सुख और जी में कुछ हल्कापन महसूस किया। अमलेशजी गरज रहे थे—'सुनो दीनदयाल! तुमने मुझे समझा क्या है? तुम्हारे जैसे कमासुत लोगों को चाहूँ तो रोज पैदा करूँ। तुम्हें अपने पुरुषार्थ पर बड़ा गर्व है लेकिन यह पुरुषार्थ नहीं है, यह पक्की नीचता है। पाँच सौ रुपये का पंद्रह सौ बना लिया, तुम इसे होशियारी समझते हो। तुम्हारे जैसे होशियार लोग केवल दूसरों का थूक चाटने के लिये होशियार बनते हैं। तुम्हें अपनी अकल का बड़ा गर्व है और तुम मुझे बेवकूफ समझते हो। हिम्मत हो तो आ जाओ किसी भी

मैदान में—साहित्य पर बहस कर लो, हिसाब लगा लो, खेत नाप लो किसी सभा-सोसायटी का इतजाम कर लो, गाव और देश की राजनीति पर बातें कर लो, है हिम्मत ? नही ह, मै जानता हूँ । तुम्हें एक ही चीज आती है—बस ठगी करके रुपया कमाना ! वह मुझे आएगा नही ! ठहरो, तुम बडे हौसले से मेरा घर कुक कराने आये हो, अभी यह हौसला पिटा कर रखे रहो। तुम तो कल के धनी हो, तुम्ह धन का अपच हो रहा हैं मने अपने हाथो धन लुटाया ह और आज फिर अपनी जमीन लुटा रहा हूँ। बोलो मजूर ह ? फाड डाला अपना प्रोनोट और लाओ, लिखा पढी अभी किये देता हूँ।'

अमलेशजी क्रोध से हाफने लगे थे। सतीश को पिता का यह ओजस्वी रूप बडा अच्छा लगा था, किन्तु दो बीघे जमीन और चली गयी। किन्तु इस वक्त और कोई चारा नही था। घर की इज्जत दाँव पर थी।

दीनदयाल उसी मीठे स्वर में अमृत झारते हुए बोले—'जगदीश काका, आप नाहक मेरे ऊपर नाराज होते ह। आखिर रुपया दिया है तो वसूली भी करनी ही होगी। मने आपकी बराबरी भला कब की, आप पंडित, कवि और मस्त व्यक्ति, म एक अदना-सा आदमी—खेती-बारी सँभालने में ही जिन्दगी बितानेवाला देहाती। खर, आप बडे चाचा हैं आप की बात का क्या बुरा मानना ? ठीक ह, आपके खेत लेकर ही मैं सतोष कर लूँगा। लिखा-पढी हो जाये। कुक-अमीन साहब, आप भी जरा बैठिए।'

अमलेश जी फिर गरजे—संतोष कर लोगे ! जसे उपकार कर रहे हो। पाँच सौ रुपये देकर दो बीघे खेत ले रहे हो, संतोष कर लोगे !!

सतीश ने पहली बार इतने निकट से अनुभव किया कि दीनदयाल इतना मीठा किन्तु भयंकर नीच आदमी है। उसने सामने जो देखा, वह बडा हृदय विदारक था। इतने बडे प्रतिष्ठित खानदान की सबके सामने कुर्की हो और सो भी एक अदना-से आदमी के कर्जे के कारण ! गरीबी

सबसे बडा अपमान ह, यह तेज, विद्या, बुद्धि सब छीन लेती है। यह अपमान जब कभी दीनदयाल जसे दो कौडी के कमाऊ पूतो के रूप में आता ह, तो विद्या-बुद्धि कुछ नही कर पाती और उसस एक वार विरक्ति-सी हो जाती है। सतीश को पढाई से विरक्ति सी हो गयी, पैसा चाहिए पसा उसने ठीक ही पढा था—'सर्वे गुणा काचनमाश्रयते' पसा चाहिए पैसा, घर की इज्जत के लिए, छोटे भाई को पढाने के लिए, मकान के लिए, खेत के लिए और दीनदयाल जसे मोचो के मुँह पर थप्पड मारने के लिए

वह पैसे की खोज में निकल पडा। पैसा उससे दूर भागता गया। उसे याद आइ रोती हुई बरसातें, नस-नस में अकडती सर्दी की सुबहें, जेठ की धूल से बलबलाती हुई राहें और उसकी भूखी-प्यासी असफल यात्राएँ, खाली जेब भारी भारी शामें, और सामने रिक्तता का विराट सन्नाटा! वह किसे किसे याद करे क्यो याद करे? कोई भी तो याद प्रीतिकर होती कितनी कितनी शकलें याद आ रही ह! अस्पष्ट एक-दूसरे को ढकेलती हुई, जसे लहरो को लहरें इनमें से कोई भी अपना नहीं हो सका, हाँ उस दिन उस ज्योतिषी ने ठीक ही कहा था कि 'सैकडों मील तक दौड आओ, कुछ हाथ लगने को नही। घर के पास ही तुम्हें सुख-सन्तोष मिलेगा!'

कौन गा रहा यह, यह तान तो कुजू की ही हो सकती ह—

"हाथ गोड फूलि जइहें, पेटवा निकरि जइहें
बँगला क पानी ही खराब रे विदेसिया।"

कुजू बडा अच्छा गाता ह, कितना गहरा दर्द बिखेर गया यह अपनी तान से। ये सारे दृश्य ज्यो-के त्यो सतीश के सामने साकार हो उठे। बिदेसिया का यह गीत जस यहा के हर आदमी के कठ का दद हो। प्रियतम विदेस जा रहा ह, विदस यानी बगाल— जहा चटकल जहा जादू ह, जहाँ खराब पानी ह जहाँ बीमारी ह। कोई प्रिया अपने पति को कसे परदेस जान दे? जादू ह, जादू जाननेवाली बगालिनें ह, भेडा

बना देंगी और प्रिया अनंतकाल तक बैठी हुई प्रियतम का इंतजार करेगी। आठ-आठ आँसू रोयेगी। कहीं जा भी नहीं सकती हैं, केवल खिडकी से दिखाई पडनेवाले रास्ते को दूर-दूर तक निहार सकती है, मौसम आ-आकर किवाड खडका जायेंगे, किन्तु वह अभागिनी किवाड का पल्ला भी नहीं खोल सकती, न आनेवाले किसी राही से पूछ ही सकती है, बडी शैतान होती हैं ये जादूगरनें! पानी भी खराब है बंगाल का। जादू से बचे तो पानी से कहाँ बचकर जायेंगे—हाथ-गोड फूल जाता है, पीला-सा पेट निकल आता है, बडा खराब पानी है बंगाल का फिर भी उत्तर भारत के तमाम लोग कलकत्ते में भरे पडे हैं जाते हैं, उन्हें जाना पडता है। उनके घर की रिक्तता, खेतों का उजाडपन, गरीबी की असूझ उदासी उन्हें ठेलती है, चटकल की ओर चटकल जिसमें कितने लोग आँख, हाथ, पाँव, गँवा कर फिर उसी सूने में लौट आते हैं—और भी असहाय बन कर, लेकिन तो भी वे जाते हैं उन्हें जाना ही होता है। प्रिया आँखों में आँसू भरे दामन पकड कर अनुनय करती रहती है—'मत जाओ प्रिय! मत जाओ मुझे अन्न धन नहीं चाहिए, मुझे पति चाहिए ।'

कुंजू फिर एक तान लहरा रहा है—

"सेर भरी गहुँवा बरसि पीसि लइबो
पियऊ जामे ना देबों हो
साहका पूरबी बनिजिया, पियऊ जाये ना देबो हो !"

इस जाने देने में प्रियतम को खोने का कितना डर रहता है, हाय! कोई सौतिनि लूट न ले। हाय कोई बीमारी न लग जाय। किन्तु एक ऐसा कठिन मजबूरी है, जो सारी मजबूरियों के ऊपर छा जाती है। पत्नी भी देखती है—उसके इर्द गिर्द रोता हुआ सन्नाटा, भूखे बच्चों की पथरायी आँखें धीरे धीरे उसकी पकड ढीली पड जाती है, पति का दामन छूट जाता है और बहकती आँखें मौन रूप से विदा देती हैं—कब आओगे परदेसी, नहीं जानती पर जाओ, जाओ !

उस रात की ये सारी घटनाएं साकार हो उठीं रात भर दा आँसें रोयी थी, सुबह हा यह उठ कर कलकत्ता जानेवाला था, आस-पास की सारी सम्भावनाओं को आजमा कर देख लिया था, कलकत्ता जानेवाला था, वहाँ पिताजी के एक सुपरिचित थे—पिताजी न उन्हें लिखा था उन्होंने बुला लिया था। उसे यह भी पता नहीं कि नौकरी कौन-सी होगी क्या तनखा होगी, किन्तु उसके लिए इस बेकारी म नौकरी का आश्वासन ही बहुत बड़ा होगा। नौकरी के स्पष्ट मधुर चित्र लिये कलकत्ता जाने का उत्साह उसकी रग रग म प्रवाहित हो रहा था किन्तु घर छोड़ने की अनुभूति से उसका जी कसा कसा हो रहा था। इतना दूर वह अभी कहाँ गया था। जवार का एक आदमी कलकत्ता जा रहा था, उसी के साथ उसे हो लेना था। पिताजी-माताजी की आँखों में एक अजब दर्द तर रहा था किन्तु उसकी पत्नी तो रात भर रोती रही, उसका दामन थाम कर। न जाने कितनी अकथ कथा थी उन हवसती आँखों में। तब तो शायद आँखों को पढ़ पाने की इसमें शक्ति भी नहीं थी, केवल भाषा समझता था मौन भाषा की पहचान उसमें कहाँ रही होगी। आज लगता है कि उन आँखों में कितना कुछ तर रहा होगा। तब वह उन्नीस साल का था लेकिन उसकी शादी तो बारह वर्ष में ही हो गया थी उसे कुछ भी नहीं मालूम कि शादी इतनी छोटी उम्र में क्यों कर दी गयी, शादी म क्या हुआ? हाँ इतना जरूर याद है कि एक दुबला-पतला लड़का गुड्डे की तरह जामा और पगड़ी में सजाया गया था, हाथ म गुजटा और पैर में पाइहरा पहनाया गया था, डोली में सवार हुआ था बाजा गाजा बजा था और वह लड़का एक अनजाने घर में कई वक्त रहा—औरतों के हँसी मजाक के बीच सिमटा सिमटा-सा। अपने बारे में इससे आगे वह कुछ भी नहीं याद कर पाता। इतनी छोटी उम्र में क्या शादी की गयी? इतनी छोटी उम्र में प्रतिवाद करने की भी शक्ति कहाँ होती है नहीं तो उसने विरोध किया होता। सुनता हूँ कि तब छोटी उम्र में लड़के का

ब्याह कर देना घरके बडप्पन का लक्षण था, पाँच साल बाद गवना हुआ। और पत्नी आयी। तब वह कुछ समझने लगा था कि पत्नी क्या चीज है। प्रत्येक पुरुष के लिए पत्नी का होना अनिवार्य है, इतना समझने लगा था। इससे आगे वह कुछ खास नही समझ पाता। उसे याद है कि उसमें यौवन-बोध कितनी देर से जगा था। विशारद साहित्यरत्न पढते समय जब बिहारी के दोहे पढता था तो उसे कुछ नही लगता था। कुछ बड़े लडके कुछ गन्दे सकेता से हँस पडते थे और पडित जी कभी-कभी क्रुद्ध होकर उन्हें मारने लगते थे, वह नही समझ पाता था कि ये लडके क्यों हँसते है और पडित जी उन्हें क्यो मारते है ? वह तो बिहारी और तुलसी की कविताओ म कोई अन्तर नही स्थापित कर पाता था।

अब वह महसूस करता था कि वे लडके क्यो हँसते थे और पडित जी उन्हें क्यों मारते थे। वह कितना रूखा था या कि अबोध था यौवन से। उसे एक घटना याद आ रहा है। सगी पटटीदारी की एक नयी-नयी भाभी थी। होली के दिन सतीश उसके घर गया था। खडा था कि भाभी महावर लेकर आयीं और उसके पाँव पर चुपके से महावर लगाने लगी, सतीश को क्रोध आ गया उसने आँखें टेढी कर भाभी की उगली दबा दी। मुझे यह नहीं अच्छा लगता है, कह कर वह चला आया था। उसने सुना भाभी रात भर रोती रही। उसे उस समय भाभी के रोने का कारण यही जान पडा कि भाभी की उँगली शायद जोर से दब गयी थी किन्तु बाद के हालिया में उसने अनुभव किया कि भाभी का क्या दब गया था।

कलकत्ता जा रहा है, माँ ने चाहा कि सतीश बहू से मिल ले। वह सोचता है उन दिनों को जब पत्नी से मिल पाना कितना कठिन था। दस-पन्द्रह बीस दिन में किसी एक रात पुरुष पत्नी के पास गया, इस ढग से पाँव दबाकर कि कोई जाग न जाए, कोई आहट न पा जाये, कही किवाड न भडक जाए, कितना सकोच था पत्नी से मिलने में। अपने घर में ही आदमी पराया था बाहर चाहे वह कुछ भी करे। होली भी लोग औरों

की पत्नियों से खेलते थे। अपनी पत्नी से कोई होली खेले, बाप रे बाप! इतनी बड़ी सामाजिक बेशर्मी कौन कर सकता था?

सतीश तो तब स्वभाव से ही सकोची और यौवन-बोधहीन व्यक्ति था। पत्नी से बहुत कम मिल पाता। यद्यपि उसके बड़े-से घर में काफी एकांत था, रहनेवाले भी कुछ खास नहीं—माता पिता और एक छोटा भाई। फिर भी उसके पाँव पत्नी के कमरे की ओर उठते ही नहीं थे। गाँव की औरतें चर्चा करती थीं कि सतीश का बहू बहुत सुंदर और सुकुमार है, नाक सुग्गा का ठोर ह ओठ पान की पत्ती है आँख आम की फाँक है, लिलार दूज का चाँद ह, मुँह वग-वग वरता ह, काले-काले बाल कमर के नीचे तक लहराते हैं। लेकिन दो साल हो गये सतीश ने कभी भी अपनी पत्नी का मुँह ठीक से नहीं देखा। जब कभी दिये के प्रकाश में देखने की कोशिश की, पत्नी ने मुँह छिपा लिया। सतीश ने भी जिद नहीं की क्योंकि उसे खुद सकोच होता था। लेकिन माँ ने उसे पत्नी के पास बहाने से ढकेल दिया और पत्नी उसे देखते ही फफकने लगी। सतीश ने देखा पत्नी के तन पर जो साड़ी ह वह पेवन्दों से भरी ह लेकिन साफ है। साड़ी के अलावा और कोई वस्त्र तन पर नहीं है। दिये के मन्द मन्द प्रकाश में पत्नी के खुले हुए अग दमक रहे ह और आँखें बरस रही ह। पत्नी ने उस दिन अपना मुँह नहीं छिपाया—पति की बाह में डाले बह-कता रही। सतीश ने प्यार से उसे भरपूर भर लिया, उसके समस्त मासल अग जस सतीश की बाहों में अँट गए। पत्नी के खुले हुए अगो का स्पर्श सतीश के रोम रोम में घर का परिचित प्यार बन कर छा रहा था। उसके तन की गध घर गाँव की गध बनकर उसके प्राण के कण-कण में कस रही थी, उसकी आखा को मासूमियत गाँव का हरियाली बन कर रास्ते क आगे खड़ा था। सतीश क्या बोलता, वह सकोच से एक बार वह सका था—'रोओ मत जल्दी ही आऊँगा।' उसे आज लगता ह कि

कितना पिटा पिटाया यह विदा वाक्य है। हर प्रेमी अपनी प्रेमिका से इसी भाषा में बोलता है

वह कलकत्ते जा रहा था। उसके सिर पर एक गठरी थी, आवश्यक सामानों की। इस गठरी से उसके सिर का पुराना सम्बन्ध बन गया है। वह घर से निकल रहा था, माँ दरवाजे पर खड़ी थी, जैसे पूरा मुँह किसी आवेश को बड़े वेग से रोक रहा था, मुँह तन आया था उस तनाव में भी एक अद्भुत निरीहता थी। वह ज्यों ही प्रणाम करके मुड़ा, माँ अन्दर चली गयी और देर से रुका हुआ पानी बह चला। उसने सुना मां जोर-जोर से हबस रही हैं। यह हबस दुहरी होती जा रही है। लगता है दो कंठ हैं। रात का चित्र सामने घूम गया था। छोटा भाई माँ की नकल में रोने लगा। अमलेश जी ने कहा—चलो स्टेशन तक छोड़ आऊँ। अमलेश जी उसे यही समझाते रहे 'बेटा कभी भी निराश मत होना बाहरी परेशानियों में मन का धैर्य खो देना मरदानगी नहीं है। परदेस का मामला है, सौ तरह की दिक्कतें आयेंगी, अकेला-अकेला-सा लगेगा लेकिन घबराने की बात नहीं, उस अकेलेपन को अपने अनुकूल बनाने की कोशिश करना ही जीवन है। अब मुझी को देखो—एक तरह से हमेशा गाँव में ही रहा। गाँव में—जहाँ मैं पैदा हुआ, जहाँ के सारे लोग पीढ़ी-दर पीढ़ी से सगे हैं, जाने पहचाने हैं, जहाँ की जमीन, हवा, पानी सभी अपने हैं फिर भी मैं अकेलापन महसूस करता हूँ। मुझे लगता है कि इन तमाम लोगों के बीच मैं अकेला हूँ, नहीं कोई चीज है जो मुझे इन लोगों से अलग काट देती है, मेरे भीतर कोई ऐसा स्वर है जो अपने अनुकूल स्वर खोजता है औरों में, नहीं पाता। ऐसा लगता है कि औरों के स्वरों की भीड़ में मेरा स्वर अकेला पड़ गया है। तो भी मैं सबके साथ हूँ अपने भीतर के सारे अकेलेपन को लिए दिए मैं इस समूह में समूह की जिंदगी जी रहा हूँ। बेटा, अकेलापन तो अन्तर की अनुभूति है, पराये

देश में आकर भी वह अजनबीपन अनुभव कर सकता है और अपने घर में भी वह परदेशी बना रह सकता है।

सतीश अनुभव कर रहा था कि इस उद्वेग के बीच-बीच में पिता जी का कंठ भारी हो उठता था और तब वे किसी दूसरी दिशा को देखने लगते थे। शायद वे अपनी आँखों में आये आँसू छिपाना चाहते थे। जब सतीश की गाड़ी चलने लगी तो अमरेश जी ने लड़के से मुँह फेर लिया। सतीश खिड़की से एकटक देख रहा था आँखों में आँसू भरे। अमरेश जी ने फिर एक बार आँखें फेर कर गाड़ी की ओर देखा। सतीश देख कर दंग रह गया कि पिता जी का चेहरा आँसुओं से भीगा हुआ है।

और चार महीने बाद वह लौट आया बीमार होकर। नौकरी तो नहीं मिली, बीमारी अलबत्ता चढ़ बैठी। उन तंग गन्दी गलियों, बहती नालियों, उनके पास बनी हुई तंग चालियाँ और उनमें बसे हुए लोगों की याद से उबकाई आने लगी। कितना खुला-खुला मौसम, कितनी खुली-खुली जमीन, कितनी ताज़ी-ताज़ी हवा और नदियों के बीच नावों की तरह खिलखिलाती ज़िन्दगी। गाँव के उन्मुक्त वातावरण में पलने वाले आदमी के लिए यह सब तमाशा कब सह्य हो पाता? पिता के मित्र ने एक कपड़े के व्यापारी सेठ की दूकान पर लगवा दिया था सीखने के लिए। हाय, कलकत्ता की गन्दगी क्या कम थी कि सेठ की दुकान पर लगा दिया। दुकान की सारी ज़िन्दगी उसे अद्भुत घृणा से भर रही थी। और यह सब कुछ न सँभाल सकने के कारण सख्त बीमार पड़ गया। कुछ दिन वहीं पड़ा रहा फिर घर भेज दिया गया। एक आदमी घर आ रहा था। वह साथ हो गया था। झुंझू ठीक गा रहा था—हाय गोड़ फूलि जइहैं, हाँ, हाय गोड़ फूल गया था, पेट भी निकल गया था, पूरी देह पीली हो गयी थी। बंगाल का पानी खराब नहीं तो क्या है? कुछ लोगों ने काना-फूसी की कि शायद किसी बंगालिन ने जादू मारा हो। पत्नी ने भी दबे स्वर से कुछ ऐसा ही व्यक्त किया था। मैंने कभी

इशारे से कभी स्पष्ट ढंग से कह दिया था कि नहीं-नहीं यह वाहियात बला मेरे ऊपर नहीं है। पिता जी भी इस तरह की बातों से चिढ़ते थे। बुखार अधिक चढ़ा था, मैं हल्के-हल्के होश में था पिताजी की आवाज मेरी बेहोशी में उभर रही थी। नहीं भाई नहीं, आप लोग जादू टोने की बात करते हैं, इसमें मेरा विश्वास नहीं है। बंगालिनें जादू-टोना नहीं जानतीं। जादू-टोना की बात सच है, लेकिन दूसरे अर्थ में। बात यह है कि उधर की औरतें हमारे यहाँ की औरतों की अपेक्षा अधिक आजाद हैं, वे सुन्दर खूब होती हैं, बड़े-बड़े बाल, बड़ी बड़ी आँखें जैसे आँखों में जादू का देश भरे हों। वे हमारे यहाँ के पुरुषों को मोह लेती हैं। यहाँ के जो आदमी बंगाल में जाते हैं वे वहाँ अकेले ही रहते हैं, और अकेलेपन की भूख उन्हें सताती ही है। टूट पड़ते हैं, उनके हो जाते हैं। घर-बार भूल जाते हैं। बस लोग कहते हैं कि बंगालिनों ने जादू मार कर इन्हें भेड़ा बना लिया है। मैं बंगाल गया हूँ एक बार देखा है उसे।

पता नहीं पिता जी की बात को कितनों ने समझा किन्तु मुझे ऐसा लगा कि पिता जी की व्याख्या एकदम सत्य है।

पिता जी दवा लेने गए थे गोरखपुर। फिर उस दिन कुछ गहरे बुखार में उतर गया था। मुझे एकाएक ऐसा लगा कि मेरे सिरहाने कोई रो रहा है। आँखें खोल कर देखा तो पाया पास-पड़ोस के कई आदमी खड़े हैं और इस ज्वार के मामी ओझा पड़ोही पाँसों पचरा गा रहे हैं और बीच-बीच में जादू-टोना बंगालिन का नाम लेकर अभुवा रहे हैं। मुझे बहुत बुरा लगा। हाथ के संकेत से मना किया तो लोगों ने समझा कि ओझौती का कुछ असर हो रहा है। मैं व्यंग्य से मुसकराया तो ओझा साहब गरगलाते हुए तड़पे—'हत्त रॉड बंगालिनि लड़के को दबोच कर हँस रही है, बेसरम कहीं की। मैं अभी तेरा हँसना निकालता हूँ।' और वे जोर-जोर से पचरा गाने लगे। मैं बुखार में भी भभाकर हँस पड़ा था और देर तक हँसा था। कुछ लोग तो डर कर भाग गए। ओझा साहब

मह वह घर पल्ला को कि यह आज हुँस रही है, जो भर भर कल रोयेगी

सतीश को यह सारी बीमारी एक स्पष्ट चित्र बन कर याद आ रही है। ऊपर निरंतर आशीर्वाद और करुणा बनकर बरसती हुई माँ-बाप की आँखें सेवा में यंत्र की तरह लगे हुए पत्नी के दो हाथ, असीम व्यथा से भरी हुई दो आँखें अंग अंग उघार होता जा रहा था उसका। सतीश सोचता है कि बीमारी ने उसे बहुत करीब ला दिया था। अब वह मुँह नहीं छिपाती थी, अपने अंगों को चुराने का अनावश्यक प्रयास नहीं करती थी वह, जैसे जो कुछ है पति का है। सहज भाव से अर्पन देने को ही आकुल थी। ऊपरी छिपाव बनाव की अनावश्यक उलझन में वह उस समय को नहीं खोना चाहती थी जो सम्पूर्ण भाव से पति को देने के लिए था, वह सम्पूर्ण भाव से उसे दे रही थी, अपने भीतर का सारा रस पति के लिए निछावर कर रही थी।

सतीश को बड़ी चोट पहुँची, अपने ऊपर धिक्कार छूटा। वह गया था कमाने, लेकिन घर की रही-सही पूँजी भी हाथ कर बैठा। कई महीनों से लगातार उसकी दवा और पथ्य में पैसे खर्च हो रहे हैं। ये पैसे कहाँ से आते हैं ? वह सोचता, निश्चय ही घर का रहा-सहा अन्न बिक रहा है, माँ के गहने तो पहले ही बिक गये थे अब बसन्ती के (हाँ, यही नाम तो है उसकी पत्नी का, सुना था कभी) गहने बिक रहे होंगे। क्या मालूम उसके पास कितने गहने हैं, कौन-कौन से बिके ? यथार्थ के भय से उसे पूछने की हिम्मत नहीं हो रही थी। शायद कोई बताये भी नहीं और कोई करे भी तो क्या ? बीमारी में पैसे तो लगेंगे ही। कहाँ से आयेंगे ये पैसे ?

और उस दिन शाम को उसने जब पत्नी के कान की ओर नजर डाली तो उसका जी उदास हो गया। लगता है रखे हुए सारे गहने बिक गए। अब शरीर पर पड़े हुए गहनों की बारी है। बसन्ती रात भर

जागती रहती थी, बीच-बीच में थोडी झपकी ले लेती थी। उस दिन शाम को ही मने दर्द भरे दिल से कहा था—'कितना अभागा हूँ मैं। म घर के लिए कुछ कर तो नहीं ही सका, उल्टे घर की सारी पूँजी बिकवा दे रहा हूँ। देखो न तुम्हारे तन का छल्ला छल्ला बिक गया। लगता ह तुम्हारा ऐरन भी आज चला गया।'

और वह बहुत देर तक रोयी थी—'आप मुझे गैर समझते हैं न। मेरे वास्ते आपसे बढकर कौन सिंगार पटार है? ऐरन तो क्या मेरा तन भी आपके लिए बिक जाए तो क्या परवाह? आप मुझे अपना नहीं समझते इसीलिए न ऐसी खराब-खराब बात मुँह से बोलते हैं।' वह हुबसती रही।

मने समझाया—'नहीं-नहीं तू रो मत, मेरा ऐसा कोई मकसद नही था। मैं सचमुच बडा छोटा अनुभव करने लगा हूँ कि इस घर के लिए कुछ नहीं कर पा रहा हूँ। देख-देख अब मत रो। तू मेरी कितनी अपनी ह, उसे क्या जबान से कहलायेगी?' सतीश को अच्छा होते-होते और सँभलते-सँभलते छ महीने हो गये। क्या अजीब जवार ह हमारा भी? सतीश सोच रहा था। इतने बडे इलाके में कोई डाक्टर नही। ले देकर दो तीन वैद है एक अपने धनपाल, दूसरे भाटपार के परसादी दूबे। बद भी क्या ह, बस दो-चार प्रकार की पुडिया बना रखी है जिसे हर मज में दते हैं। वे दवाएँ इतनी निरीह होती है कि किसी मज म नुकसान नही करती। इन वैदो की पोथी में केवल एक ही रोग ह बुखार। नाडी पकडी, देर तक नाडी टिपटिपाते रहे, बाद में ऐलान कर दिया कि बुखार है पुडिया दी कुछ अनाज नपवाया और चलते बने। मियादी बुखार इनकी दवाओं से क्या अच्छा होता। पिता जी गोरखपुर से दवाएँ लाते थे। तब कहीं कुछ ठीक हुआ। अब तो खर कस्बे में सरकारी अस्पताल खुल गया है किन्तु तब की तो बात ही और थी। अंग्रेजी सरकार स्वास्थ्य लेना ही जानती थी। देने कहाँ आता था उसे?

जाता और किसानों से बातचीत करता तो उसे लगता कि अभी भी उसका लगाव जिंदगी के कच्चे रस से है।

महीपसिंह जब कभी उसे बुलाते, तभी उनके पास जाता और काम की बात करता अथवा अपने काम में मशगूल रहता। और एक थे मनेजर साहब, छड़ी की तरह देह वाले हमेशा बीस रुपये जोड़ी धोती और मलमल चाड़ हुए बाल सवारे हुए पान मे आठ तर किए हुए, छोटी छोटी भूरी आँखों में सुरमा लगाए हुए मुंशी छल बिहारी जी मुंशी की याद से सतीश का मन घृणा से भर आया—साला मक्कार धूर्त, लम्पट, बेईमान और चापलूस। औरों की—शिकायत करके ही वह महीपसिंह का प्यार पाना चाहता था। कई बार उसने सतीश की भी शिकायत की। सतीश ने सफाई से अपना काम दिखा दिया, महीपसिंह कुछ न कर सके।

उसे अनेक चेहरे याद आ रहे हैं जो दरबार में आये सम्मान से, गये अपमान से। यहाँ किसानों की ही नहीं पिटाई होती है, दरबारियों की भी पिटाई होती है। उसे याद है कि यह मुंशी छल बिहारी कम से कम तीन बार लात मुक्कों से मार कर निकाला गया होगा, और हर बार आक्रोश में धमकियाँ देता हुआ यह गया है किन्तु तीन चार महीने बाद जहाँ बाबू साहब ने 'तू-तू' किया कि यह दुम हिलाता हुआ आ पहुँचा। अदभुत है यह कुरसी ही जाति का कुरसी ही तो है। इसका बाप महीपसिंह के यहाँ बरतन साफ करता था। कहते हैं कि इसने महीपसिंह के चचेरे भाई की जान लेने में महीपसिंह के पिता का मदद की थी इस लिए त्राण के रूप में इस परिवार का मैनेजर बना दिया गया था। बड़ी शान में चलता था यह कुरसी। हाथ में छड़ी भाँजता हुआ जब मटक-मटक कर चलता तो रास्ते में किसी की ओर देखता भी नहीं। इतनी शान थी कि टकरा गया था सरकारी शासन से। उन दिनों एक बहुत भयंकर दारोगा आया था इस थाने पर। सतीश कहीं बाहर गया था। उसने आने

पर सुना कि मुंशी सुबह को कहीं घूमने निकला था। एक किसान था जो मुंशी को देखता तो हँस पड़ता। उसे मुंशी जनखा-सा लगता इसलिए हँस पड़ता। मुंशी को देखकर हँस पड़ा। मुंशी ने अपने साथ के सिपाहियों से बड़े रोष मे कहा—इस साले को पकड़कर इतना मारो कि इसका हँसना भूल जाए। सिपाहियों ने उसे इतना मारा कि अधमरा हो गया। किसी ने थाने में रपट कर दी। शाम होते होते हेड कांस्टेबल तीन चार सिपाहियों के साथ तहकीकात के लिए आया। मुंशी तो रुआब में था बोला—तुम कुत्ता को यह हिम्मत कि बाबू महीपसिंह के मैनेजर के कामों की तहकीकात करने आओ। एक एक का पिटवाऊँगा, तबीयत दुरुस्त हो जाएगा। हेड कांस्टेबल ब्राह्मण था, ताव में आकर बोला—खबरदार जो अनाप शनाप बके—कुरमी की जाति, मैनेजर बने हैं। सरकारी हुकुम से तहकीकात करने आये हैं, तुम्हारे बाब साहब सरकार से भी बढ़ गए?' मुंशी ताव खा गया और अपने सिपाहियों को हुकुम दे दिया बाँध कर मारो इन कुत्तों को। महीपसिंह के पचीसों सिपाही पिल पड़े और ये सरकारी सिपाही बुरी तरह पिट गये।

रात का सन्नाटा, दो बजे का समय। घोड़ों की टापों से सन्नाटा कुचल उठा। दारोगा ने तीस चालीस सिपाहियों के साथ पूरी छावनी घेर ली। मुंशी छल बिहारी चादनी में बाहर खाट बिछा कर सोया हुआ था। दारोगा ने बूट की ठोकर से उसके पाव में मारा। मुंशी अचकचा कर जाग पड़ा और रोव में तड़पा—कौन है जो यह बदतमीजी कर रहा है। जानता नहीं है कि मैं कौन हूँ।'

'तेरा बाप।' कह कर दारोगा मुंशी पर टूट पड़ा और मुंशी को उठा उठा कर गेंद की तरह फेंकने लगा। फिर एक पासी सिपाही को आदेश दिया—साले के मुँह में पेशाब कर दे। दारोगा ने महीपसिंह के और भी तमाम सिपाहियों को पकड़ कर पिटवाया और सबको बाँध कर थाने पर ले गया।

महीपसिंह कभी भी एक जगह नहीं रहते थे। इस छावनी से उस छावनी तक घूमते रहते थे। संयोग से उस समय वे यहीं और गए थे। आये तो मुंशी और सिपाहियों को छुड़वाया और दो महीने में ही दारोगा की बदली हो गयी।

मुंशी कुछ दिन तो थोड़ा घरमाया रहा फिर जस तस हो गया।

मुंशी ही नहीं बहुत से ऐसे चेहरे दरबार को कसे हुए थे। किस-किस को याद करे? अपने ही कार्यों को विभिन्न आकृतियाँ कम हैं कि औरों को इतना याद करे? उसके दिल में कितने कितने अरमान थे जीवन के। कितने कितने सपने थे? उसे लगा कि इस दुनिया में आने पर उसके सारे सपनों पर धूमिल छायाएँ लिपट गयी हैं। यह एक ऐसी दुनिया है जो चाहे-अनचाहे आदमी को अपने तंग दायरे में कसती ही जाती है। कहाँ वह साहित्य का विद्यार्थी और कहाँ यह जमींदार की पैसा उगाही? कहाँ संवेदनाओं की कोमलता और कहाँ यह क्रूरता का नर्तन? वह कारिंदा बन गया और धीरे धीरे उसे लगा कि वह मात्र कारिंदा ही शेष है। पैसा उगाही बेगारी किसानों की धर-पकड़ मार-पीट, गरीबी के अधकार को सँभाले अनगिनत आँखें उसे लगा कि कभी कभी तो उसे उन आँखों में झाँकने की भी फुरसत नहीं रह गयी थी। उसने उन आँखों को दुहा है लेकिन अपने लिए नहीं, जमींदार के लिए—जिसके खेत जोते हैं इन किसानों ने। वह दोहन के लिए मजबूर था। दोहन में सख्ती भी करनी पड़ी है किन्तु उसका जहाँ तक बस चला है उन्हें छूट भी दी है, एक साल दो साल तीन-तीन साल तक दी। अपनी पाव—तियाबन उसने किसी गरीब किसान से नहीं ली है। जिससे बेगार ली है उसे पूरा खाने को दिलाया है। किसान उसे प्यार करते रहे हैं उसने उन्हें बहुत बार पीटा है तो भी। कितने भूखे हैं ये किसान प्यार के? थोड़ा-सा प्यार मिला कि अपने को लुटा बैठे। उसे बहुत-सी क्रूर घटनाएँ आज सता रही हैं। लेकिन उन क्रूर घटनाओं के लिए वह क्या करे, एक

ऐसी जिन्दगी उसके सामने खुली थी, जिसमें यही सब सभव था तो भी उसे लगता है कि इन क्रूर घटनाओं के साथ-साथ पिता की आत्मा की तरलता उसमें हमेशा तैरती रही है इसीलिए वह अपने को बचा सका, नहीं तो वह भी मुशी हो गया होता, या महीपसिंह की नकल बन कर रह गया होता

पैसे कमाये उसने। कम नहीं कमाये। लेकिन उसके पैसो का सदुपयोग नहीं हो पाया। पिता जो पैसे सँभाल नही सके। खेत छुडा लिए गए, कर्जा चुका दिया गया लेकिन मकान पूरा नही तयार हो पाया और जितना बना उतना भी पोख्ता नही है, जगह जगह अभी दरारें फट गयी है, लोग कहते है गिर जायेगी दीवार। अब गिरी तो पैसे कहा है बनवाने के लिए। पिता जी हद से अधिक लापरवाह है। वे सब कुछ मजदूरो पर छोड देते है। उन्हें मनुष्य में अगाध विश्वास है। विश्वास का ही फल है कि दीवारें अभी से फटने लगी। तमाम मजूर कर्जा खाये बैठे हैं, देने का नाम नहीं, कुछ संचय ही नही हो पाया, सारे पैसे खाने पीने में उड गए।

सचय—हाँ, एक ही सचय है वह है चन्द्रकात की पढाई ? एम० ए० कर रहा है। हर क्लास में फस्ट आता है, इस साल तो काम चल जायेगा लेकिन अगला साल कैसे चलेगा? आमदनी का जरिया नही रहा। जमीदारी टूट गयी । जमीदारी नौकरी अपने आपमें चाहे कसी बुरी रही हो लेकिन उसमें से चन्द्रकात फूटा है। लेकिन अगले साल क्या होगा ? कसे पढेगा ? और यहाँ तो बाढ से खाने के लाल पड गए है। ये खेत पढाई के लिए क्या दे सकते है ?

'बाबा'

सतीश अपने ध्यान से टूट कर अलग हो गया। देखा—मनराज पीछे खड़ा है।

'क्या है मनराज!' यों सतीश मनराज को देखते ही समझ गया कि निकम्मेपन का बुलावा आ गया। आया था चार दिन की छुट्टी लेकर लेकिन एक रात भी नहीं गुजरी कि यह भूत सवार।

'बाबा! बबुअन आपको बुलाये हैं, कहीं बाहर जात हैं।' मनराज बोला।

झुँझलाकर सतीश बोला—'बाहर जा रहे हैं तो क्या मुझे भी ले जायेंगे? जाकर कह दो कि मैं अभी नहीं आ पाऊँगा।'

'अच्छा, अच्छा ऐसा कह दूँ बाबा! तो ऐसा कह दूँगा। मनराज चलने को हुआ।

'मनराज सुन।' सतीश ने पुकारा। 'सुन मनराज कह देना कि सतीश बाबा नहीं मिले कहीं गये हैं।'

'ऐसा, अच्छा तो एसा कह दूँगा बाबा।' लेकिन बाबा बबुअन का आडर है कि जहाँ मिलें उहीं सनेस कहि के हो आना। आप ना जानत हैं बबुअन का, हमार जान ले लीहैं।'

'अच्छा तो सुन कह देना मैं अभी थोड़ी ही देर में आ रहा हूँ।

'हूँ हैं बाबा ई ठीक है। ता अइसा कह दूँगा।



: ए :

'नीलक्ठ निलवारो बारी, सिता से कहिह् भेंट अक्वारी, हमार नात्र किसुनमुरारी।'

बच्चे नीलकठ देखते ही उसके पीछे पीछे दौड पडते ह्—नीलकठ निल्वारी वारी वारी और नीलकठ टें टें करता हुआ इस पेड से उड कर उस पेड पर जा वठता ह मानो वह भी अपना मह्व आज समझता ह्।

लडके आज सुवह से ही बड खुश ह। हलकी हल्की शीत के जाल को वेध कर लाल लाल किरणें फूटी, उघर बच्चा के मन की जमी हुई उदासी का फोड कर यह त्योहार फट पडा—हा आज दशहरा ह। बडी लशनुमा धूप चारों आर फैली ह, जैस काइ अस्पताल में कइ महीने रहने क बाद मुक्त हो जाए।

लडके लडकिया अपने केले वाले सिल्क के घराऊँ कपडे धूप में सुखा रहे ह्। उनमे एक धूपायित गध फूट फूट कर विखर रही ह। कैसी जीवन गध ह इस धूप में। आह, इघर तो कई वर्षों स यह धूप अकेली प- गयी ह। धान, मवके, कादो फसला के विना यह धूप निस्सग हो गयी ह। इसी धूप में मवके की लाल लाल स्वस्थ वालिया फैली होती थीं रस्सिया पर, छता पर, खाटो पर। इसी धूप में घान कोदो की पकी हई गध पकती थी और जीवन मह्क उठता था एक छोर से दूसरे छोर तक। गाँव के गुडसाल वाजारों की तरह आवाद रह्ते थे दिन भर पट पट पुट पुट मवके के दाने भाड में वजते रहते थे। आज यह कुछ भी नही ह। सपाट घरती की चिकनी पीठ पर सुनहली धूप फली हु है फिर भी यह धूप अकेली नही ह। यह जीवन शक्ति से गधित है वह यही गध धीरे धीरे धरती के रस में बो रही ह 'नीलकठ निल बारा बारी

हाँ तो आज दशहरा है। नीलकंठ भागने हैं और लम्बे पीछा करते हैं। सीता से भेंट अकवार वह रह ह य। सीता बद हैं रावण के यहाँ आज ही मुक्त होगा। सीता धरती की बेटी ह, धरती की बेटी बद ह, धरती के नोपक क यहाँ। धरती के वटे बचन हैं, अपना बहन से मिलन के लिए, उन्हें मालूम ह कि आज राम उद्धार करेंगे सीता का। भेंट अकवार कह देना सीता से ओ भाई नीलकंठ! तुम्हीं कह सकते थे, परिन्दे हो, और शिव के प्रतिरूप हो। हमारे भीतर के शिवत्व का सदेश वाहक तुम्हें छोड कर और कौन हो सकता है। हाँ सीता हमारी धरती पुत्री जहाँ भी हो, सदेश कह दना, हाँ नाम मत भूलना मेरा नाम किसन मुरारी ह।

विश्वास ह कि नीलकंठ संदेश ले जाएगा और सीता हजार हजार धरती पुत्रों की भेंट अकवार से आज लद जायेंगी। हाँ सीता आज मुक्त हो रही ह धरती पुत्री आज मुक्त हो रही है।

किन्तु यह नीलकंठ शहरो में बद कर लिया गया ह। बहेलिया इस पिंजडे में बद करके दर दर घुमाता ह और धम प्राण नगर जन दर्शन करते हैं, अपने पाप-ताप का शमन करते हैं। वे इस नीलकंठ से सीता के लिए भेंट अकवार नहीं कहते। उह दूसरों क लिए भेंट अकवार कहने की क्या आवश्यकता। अपने से तो फुरसत मिले, यदि वे कहें भी तो पिंजडे में बन्दी नीलकंठ सदेश क्या ले जाएगा? बहेलिये का नीलकंठ दो पैसे में धम बाँटता फिर रहा ह।

नीलकंठ मिल्वारी भारी दो मील की दूरी पर रामलीला का मेला लगता ह। उसी की तयारियाँ हो रही ह। मेले की गध कई दिनो स मन में महमहा रही ह। अन्न की गध नही ह, दिन का आँगन भरा-भरा-सा नहीं लगता, फिर भी कोई चीज है जो सन्नाटे को काट कर तमाम बिखरे हुए मनों को एक में जोड देती है। लडके, लडकियाँ, वयस्क, बूढे मेले में जा रहे हैं। आसपास के गाँवों के बनिये पीठ पर

अपनी जिन्दगी लादे रास्ते में बहते चले जाते हैं। धूप आकाश में रेशमी कपड़े-सी सूख रही है।

मगर ये रास्ते कुछ खाली-खाली लगते हैं। कभी कभी ये भर जाते हैं अरहर के झपसते हुए खेतों से, मुईदार गन्ने की फसलों से। तब हर रास्ता एक गली-सा लगता है, दूर दूर तक कुछ दिखाई नहीं पड़ता। जी होता है कि इन खेतों में पैठ जायें और भटकते हुए कहीं से कहीं निकल जाएँ। बच्चे गन्ने की फसलें देखते हैं तो तोड़ने के लिए ललच उठते हैं। गन्ने का सारा स्वाद उनकी जबान पर कसमसा उठता है मगर आज कई वर्षों से ये रास्ते ऐसे ही सूखे दिखाई पड़ते हैं

मेले का शोर दूर से ही सुनाई दे रहा है। यह मानव शोर कब से बजता आ रहा है बरसात की छाती पर। बरसात ने लोगों के लिए कुछ नहीं छोड़ा लेकिन इनकी सामूहिक आवाज वह नहीं छीन सकी। सभी लोग इस सामूहिक आवाज में मिल जाने के लिए तेज-तेज कदम बढ़ाते हैं। मेले के पास ही एक नाला है, अभी भी इसका वेग कम नहीं हुआ, नहीं भी हुलांन नहीं। दो नावें इस पार उस पार को जोड़ने के लिए बीच में भटक रही हैं। लोग एकाएक लद जाते हैं, मल्लाह चिल्लाता है कि नाव डूब जाएगी। कोई नहीं उतरता, नाव के पेंदे से पानी अन्दर भर रहा है, एक मल्लाह पानी उलीच रहा है। मल्लाह खेवा माँगता है सभी एक दूसरे का मुँह ताकते हैं—कुछ देते हैं कुछ नहीं देते। किसी कदर नाव सरकती है, पार होती है दोनों तटों पर कीचड़ ही कीचड़ है। कुछ उत्साही लोग नाव का इन्तजार करके पानी में उतर पड़ते हैं एक अंगोछी पहन कर और पार ।

सतीश अनुभव करता है कि अब मेले का वह जोर नहीं रहा जो पहले था। यही वह मेला है जो अपनी भीड़ और वैभव के लिए दूर दूर तक विख्यात था अब पूरे मेले में भीड़ के बीच एक अजब बिखराव दीखता है। राम, लक्ष्मण, रावण के ठाट-बाट की जगह एक दरिद्र

सूनापन दौड़ रहा है। लगता है कि बस कुछ आकृतियाँ हैं जो दौड़ रही हैं मेरे मन से। मेले में तरह-तरह के लोग आज भी हैं किन्तु अलग-अलग बँटे हुए। गाँव के लड़के शहर में पढ़ते हैं वे मेले में आते हैं एक अजनबी की तरह, मानो वे गाँव वालों से सम्मान पाने के लिए अपने को भीड़ में से अलगाये खड़े रहते हैं और जब गाँव के आदमी उनकी ओर सम्मान से देखकर उनके बड़प्पन के बारे में बात करते हैं तो वे उपेक्षा-सी दिखा कर उनकी बातें सुनते हैं। सतीश के साथ उसका छोटा भाई चन्द्रकान्त भी है, इस जवार का सबसे तेज विद्यार्थी विश्वविद्यालय में टाप करने वाला। एक सादी धोती और सादे कुरते में। सतीश का गर्व है उसपर वह देख रहा है कि चन्द्रकांत कालेजियन और स्कूली विद्यार्थियों के पृथक सम्प्रदाय से न मिलकर देहात के अपने उन हमजोलियों से मिल रहा है जिन्होंने प्राइमरी मिडिल में उसके साथ पढ़ाई की थी मगर अब छोड़कर अपने अपने धंधे में पड़ गए हैं। स्कूल और कालेज के बहुत से विद्यार्थी पैंट बुशर्ट और हैट में हैं, बहुत से कुर्ता पायजामा में हैं ऊपर से धूप वाला रंगीन सस्ता चश्मा लगाए हुए। झुंड के झुंड घूमते हैं, लड़कियों का पीछा करते हैं, आँख मारते हैं। दूसरी ओर गाँव के सलोने युवा, झोलदार रेशमी कुर्ता पहने, दो बाउ मारे हुए, हाथ में लाठी लिए हुए दल के दल रास्ते से गुजरते हैं। सामने पड़ने वाला सुकुमार भीड़ को देखते हुए, अश्लील बिरहा गाते हुए।

रामायण का कम्पटीशन ज़ोरों पर है। उधर अलग अलग पार्टियों की सभाएँ जुड़ी हुई हैं। उधर कम्युनिस्ट बोल रहा है उधर सोशलिस्ट, उधर कांग्रेसी और वह मास्टर सुग्गन का बेटा दिनेश राम बन कर रावण को मारने की कोशिश में है—बेचारा दिनेश राम बना है। अभी कल ही मास्टर सुग्गन कुछ पैसे उधार माँगने आये थे खर्चों के लिए, हाँ दिनेश राम बना है खाली पेट और इस इलाके का शातिर चोर

गरजनवाँ पासी रावण बना है भयकर विशाल आकृति किंतु राम मारेंगे इस रावण को अभी रावण का पुतला जलेगा लका विजय के लिए इतने सारे वानर पूँछ खोंसे हुए, चेहरा लगाए हुए लडाई लड रहे ह। कहाँ-कहाँ से पकड लिए गए हैं ये। हाँ, लका विजय करेंगे और अभी रावण के मरने के बाद अपने नकली चेहरा में दूकान दूकान से लाई, गट्टा, बताशा, साग सब्जी वसूलेंगे जस सुराज के जमाने में जगू हरिजन वगैरह किया करते थे। आज भी नेताओ को यह वसूली जारी है लेकिन अब जगू की नही बडे बडे नेताओ की। अब सरकार जायदाद बाँटती ह और बडे-बडे नेता नकली चेहरा फैलाकर वसूल कर रहे हं। कौन जाने राम के वानरो ने भी ऐसा ही किया हो हर जीत पर पुरस्कार बँटते ही ह

कुजू मेघनाद बना ह। बेचारे कुजू को किसने मेघनाद बना दिया। लक्ष्मण मारते ह उस, गिर पडता ह, उसे गिरना पडता ह। राक्षस परिवार में हाहाकार मच जाता ह, लडके चिल्लाते ह कुजुआ गिरा—कुजुआ गिरा

कुजू करे नीनो नीना गावेला मचारी।
गाँव की कुतियवा कुजू से करे यारी।

कुजू दम साधे लेटा ह गाँव की कुछ लडकियाँ खडी है—हाय-हाय—देखो कुजू मर गया बेचारा । बदमिया की आँखें भर आई हैं। लगता है वह रो देगी। रुलाई दबाने से उसका मुँह लाल हो उठा ह वह धीरे से भीड में से सरक जाती ह और छिप कर खडी हो जाती ह। घबराई आँखों से निहार रही ह कुजू को कुजू उठ खडा होता ह बदमिया की आँखें हँस पडती ह। लडके चिल्लाते है कुजू जी उठा, कुंजू जी उठा । कुजू किसी की परवाह नहीं करता। वह जीकर मेले में घुस जाता ह। भीड में बदमिया की आँखो से उसकी आँखें टकरा जाती हैं। पूछता है 'क्या लेगी रे?' 'हटो जाओ तिवारी कुछ

राम करो, कोई देख लेगा तो क्या कहेगा ?' 'किसका देखना बाकी है रे, सब तो देख चुके, सब तो कोस चुके हैं, अब क्या रहा है देखने कोसने को। चल तुम्हें कुछ मिठाइयाँ दिल्वा दूँ।'

*'जाओ तिवारी, तुमसे नहीं बोलती, बड़े वैसे हो, देखो ये सब देख रहे हैं जाओ जाओ।'*

'अच्छा बोल घर चलते समय मेरे साथ हो लेगी। बड़ा मजा आएगा।'

'अरे राम कितने बेशरम हो तुम साथ की लड़कियाँ क्या कहेंगी मुझे खोजेंगी घर जाते समय ।'

तू मूरख है कोई किसी को नहीं खोजता, सभी को अपनी-अपनी पड़ी होती है। मेले में हार थक कर सभी धीरे धीरे अपने घरों को सरक जायेंगी तुझे कोई नहीं खोजेगा। अच्छा जा तुझे डर लगता है न, जा, कुजू अकेले ही रास्ता काट लेगा।

बदमी आँख तरेर कर डाँट बैठी। कुजू मुसकरा पड़ा।

'कब घर जाओगे तिवारी अब तो समय हो रहा है ?'

'अरे तुझे क्या ? जब मेरी इच्छा होगी तो जाऊँगा।'

'तो भी' बदमी ने मुसकरा कर पूछा।

'बस यहीं आधे घन्टे में चल दूँगा। अब दिन डूबने में देर ही कितनी है, जा तू भाग जा कोई देख लेगा न।

बदमिया ने हूठा दिखाया और भीड़ में सरक गयी। कुजू गा उठा—

दिनवाँ कटेला तोर रहिया जोहत सइयाँ
रतिया कटेल रोइ रोइ रे बिदेसिया
गउँवा नगरिया सब भइलें दुसमनवाँ से
तोरे बिना हमरा के होई रे बिदेसिया

[ हे सइयां, तेरी राह जोहते जोहते दिन कटता है, रोते रोते रात कटती ह, सारा गाँव गिराव दुश्मन हो गया, तेरे बिना मेरा अपना कौन हो सकता ह ? ]

कुजू की रागिनी से आस-पास को गतिमान भीड थोडी देर के लिए ठहर गई। वदमो जाते-जाते एक क्षण के लिए रुकी और भरी आँखो से जसे कहा—'पापी।' फिर सरक गयी।

वाह वाह कुजू ह न, अरे भाई खूब गाता ह। हाँ, भाई जरा हो जाए, लोगों ने उसे घेर लिया। कुजू बिना कुछ कहे सुने भीड में से अलग हो गया।

रावण मर गया, मर गया, कागज का रावण जल रहा है, लडके उसे ढेले मार रहे हैं कुजू बुदबुदाया—मेरा बाप मर गया और म तो पहले ही मर चुका था। उसे हँसो आयी अपने मेघनाद बनने पर। कहाँ मेघनाद, कहाँ म। दोनों को चाल-ढाल में कोई समानता ह ? यह तो मेले के मालिक साधू महाराज कहने लगे—कुजू बन जाओ मेघनाद, हमारा मेघनाद बीमार पड गया है। सो बन गया मेघनाद। क्या-क्या बनना पडता ह इस दुनिया में ?

मेला खतम-सा हो गया था, काफी भीड छँट गयी थी, इक्के-दुक्के लोग अब आ जा रहे थे। कुजू घर की ओर चल पडा। शाम का सन्नाटा धीरे धीरे फैल रहा था, कभी-कभी मेले से लौटते लडको के मिट्टी के धुधुके की आवाज खेतो में दौड जाती थी। कुजू अकेले ही लौट रहा था। दशमी का चाँद खेता के ऊपर अपनी हलकी-हलकी भीगी किरणो को छींट रहा था। कुजू लौट रहा था। सन्नाटा काटने के लिए उसने एक राग छेड दिया था बसी पर। बसी की दर्दीली आवाज चारा ओर बाढ के पानी की तरह रेंग रेंग कर पसर रही थी। कुजू अपनी ही तनहाई की रागिनी से थक गया और बसी को कुरते की थली में खोंस लिया।

हाँ तो ऐसी ही भयंकर बाढ़ परसाल भी आयी थी। यही दिन है, इस नाले का पानी इस साल से भी अधिक गहरा था। शाम झुक रही थी नाव में बड़ी भीड़ थी, मल्लाह चुन चुनकर आस पास के गाँवों के लोगों (जिनसे जवरा पाता था) का, विशेषतया बड़े आदमियों को उतार रहा था। तिवारीपुर की कुछ छोटी जात की लड़कियाँ औरों की देखा देखी घाट से थोड़ी दूर हट कर पानी हेल कर नाला पार कर रही थी। बदमिया भी उनमें थी। पानी कमर से ऊपर था। उसके पाँव अगल-बगल के एक गड्ढे में पड़ गए और वह सतुलन खोकर गिर पड़ी। पानी का बहाव उसे बहा ले चला। लड़कियाँ चीखने लगी। घाट पर तिवारीपुर के कुछ लोग भी थे, किन्तु किसी की हिम्मत जल में उतरने की नहीं हो रही थी क्योंकि इस रास्ते से थोड़ा दूर पर एक जमकातर है जहाँ का भोला पानी देखते ही प्राण सूख जाते हैं। बदमिया उसी ओर बही जा रही थी—कौन अपनी जान दे इस कहार की बेटी के लिए ?

फुजू मेले से लौट रहा था। उसने शोर सुना, सारे चेहरों को देखा जमकातर की ओर देखा, गहरी आँखों से निहारा, लहरों पर उठती गिरती आकृति का अन्दाज लगाया और छपाक से कूद पड़ा नाले में। नाले की लहरों को रौंदता जमकातर का मुंह पकड़ने के लिए पानी पर दौड़ने लगा। और जमकातर के भोले जल के पास जाकर बदमिया की बाँह पकड़ ली और धारा को तिरछा काटता हुआ किनारे की ओर बढ़ा। थाह जल में आकर उसने बदमिया की पूरी देह बाँहों में समेट ली और किनारे पर लाकर उसे बिछा दिया, स्वयं हार गया था, बुरी तरह हाँफ रहा था, कुछ लोग जुट आये थे, लोगों से कहा—इसे नचा कर इसके भीतर से पानी निकालो स्वयं लेट गया हरारत से। लोग कुछ उलटे सीधे ढंग से बदमिया की देह को नचा फिरा रहे थे। साथ की लड़कियाँ रोये जा रही थीं यह जान कर

कि बदमिया मर गयी। एक भले आदमी बार-बार उसकी नाडी देख रहे थे मानो इस ख्याल से कि चलो मर गयी छुट्टी हुई। कुजू घबरा कर उठा और लोगो से बदमिया की लाश छीन ली और उसे औंधा किया, ढग से उसे गोलाकार फिराया, उसके भीतर भरा हुआ पानी उसके मुँह से पिचकारी की तरह फूट चला। कुजू ने धीरे धीरे उसके तलवों और हथेलियों को रगडना शुरू किया, बदमिया का धीरे धीरे होश आने लगा, उसने आखें खोल दी, सखियाँ प्रसन्न हो गयी। धीरे-धीरे एकत्र लोग वहाँ से सरकने लगे, शायद यह सोच कर कि अब कौतूहल नाम की चीज ही क्या रही ?

बदमिया धीरे धीरे उठ बठी लेकिन अशक्ति से फिर लेट गयी, ठढक के मारे वह काँप रही थी। धीरे धीरे शीत उतर रही थी—क्या हो अब ? यह प्रश्न सभी चेहरा पर टँगा था। कुजू ने बदमिया को उठा कर कधे पर टाग लिया और लडकियो से कहा चलो, रात हो रही ह। लडकियाँ जो कुजू को आवारा और निकम्मा समझती थी आज एक दूसरे ही भाव से उसकी ओर देख रही थी। उन्हें लगता था कि गाँव के सारे शरीफ चेहरा म कुजू का चेहरा कही अलग ह, सबसे अधिक बदनाम लेकिन सबसे अधिक तरल और तब से कितनी घटनाएँ घटी कितने सम्बध बने, बिगडे बदमिया और कुजू को लेकर कुजू सब याद कर रहा ह। हा, आज ही के दिन उसे पाया था, मौत के मुँह से पाया था। दुनिया ने उसे खो दिया था। मैंने उसे पाया, वह मेरी है, मात्र मेरी है। फिर भी लोग क्यो उस पर अधिकार जताते ह। मुझ पर क्या एहसान ह उनका ? हम दोनो चाहे जसे रहें उनका क्या।

कुजू देख रहा है पास के एक पोखरे को, जिसके चारा ओर घास सफेद-सफेद फूली हुई हैं और कोई जलपाँखी होले-होले ऊपर चक्कर काट रहा ह टिर्र-टिर्र चाँदनी में जलपाँखी किसे खोज रहा ह, लो

यह उधर से आ रहा है शायद इसका जोड़ा है, दोनों मिल गए हैं और चक्कर काट रहे हैं इस शान्त पोखरे पर। पूरी रात इनकी है, पूरा आसमान इनका है, पूरा ताल इनका है, ये पेड़ इनके हैं। कोई तो नहीं रोकता इन्हें साथ-साथ उड़ने से, कोई नहीं रोकता—

'ए तिवारी

कुञ्ज चौंक उठा। पेड़ की आड़ से बदमिया निकल कर सामने आ गयी थी।

'अरे तू है रे।'

'हूँ'

'तूने तो मुझे डरा ही दिया।'

'सच'

'हाँ'

'तुम भी डरते हो तिवारी ?

'क्यों नहीं तेरी बड़ी-बड़ी कँटीली आँखों से तो जरूर डरता हूँ, कैसा घाव करती हैं ये डाइनें।'

'सच'

'हाँ'

'और जब मेरे लिए जमकातर में कूद पड़े थे तो नहीं डर लगा था।'

'अरे सच कहता हूँ बदमी, मैं दुनिया में किसी से भी नहीं डरता हूँ लेकिन तेरी आँखों से डरता हूँ बड़ा जुलुम करती हैं ये, तड़पाती हैं सोता हूँ तो आँखों में भर आती हैं आँखें बन्द हो नहीं हो पातीं और जागता हूँ तो इन्हीं जुलमी आँखों को खोजता हूँ। प्यार तेरे बहुत नजदीक आने से डरता हूँ ।'

'क्यों तिवारी, डरते क्यों हो ?

'डरता हूँ कि जिस चीज को मैंने मौत के मुँह में से पाया है उसे कहीं खो न बठूँ। बहुत नजदीक जाने पर मेरे अभागे जीवन की

छाया तुझे कहीं निगलने न लगे। बहुत अभागा हूँ बदमी, जिसे छूता हूँ वही अपनी नहीं रह पाती, उलटे टूट-फूट जाती है। मैं नहीं चाहता प्यारी कि तू टूटे फूटे, मुझे न मिले न सही, मगर तू सलामत रहे।'

कुजू की साँस गीली हो आयी, वह चाँदनी की भीगी आभा में बदमिया के भरे भरे यौवन पर चुपचाप भरी भरी आँखें बरसाने लगा। बदमिया कुजू के गाल पर एक ठुनकी मार कर काँपती आवाज में बोली—अन्याव मत करो तिवारी अपने साथ, तुमने तो मुझ जैसी अभागिनी को एक सहारा दिया है। सचमुच तुमने मौत की धारा में मेरी बाँह थामी है। मैं तो खतम हो गया थी, तुमने मुझे बचाया, अपनी पीठ पर लाद कर घर लाये, तुम मेरे राम हो मेरे तिवारी, मैं तुम्हारी सीता। तुमने जमकादर के रावण से मेरा उद्धार किया था तिवारी, मैं तुम्हारी हूँ, कहाँ कहाँ की ठोकर खाकर आयी हूँ, मैंने तुम्हारे मरदों की दुनिया में लात-मुक्का, बदनामी, भूख घृणा के अलावा क्या पाया? सचमुच जब मैं उस दिन नाले में पड गयी थी तो भीतर भीतर अच्छा ही लगा था, चलो आज इस भटकते हुए पापी जीवन का अंत हो गया, लेकिन तुमने मुझे बचा कर बडा भारी जुलुम किया तिवारी, बडा भारी जुलुम' बदमिया धीरे धीरे हुबसने लगी

कुजू ने बदमिया का हाथ पकड लिया—सचमुच बदमिया मैंने सचमुच जुलुम किया, तो सजा दे प्यारी, यह अकारथ जिन्दगी किसी के भी तो काम नहीं आ सकी।'

'हाँ तुमने जुलुम किया है मेरे राजा तुमने मुझे नई जिन्दगी देकर नये सिरे से इसमें दरद जगा दिया है। पहले तो अंग अंग में मार और भूख का ही दरद होता था अब एक दूसरा दरद होता है मेरे मालिक! अंग-अंग दुखता है मगर अच्छा लगता है। तुम्हें कभी नहीं छमा करूँगी, तुम्हें सजा मिलनी ही चाहिए।

बदमिया हाँफने लगी। उसका भरा भरा वक्षस्थल काँप-काँप कर टूटने लगा, उसकी बड़ी-बड़ी पलकों से टप टप आँसू चरने लगे, उसकी साँसों की गरमाहट कुजू के चेहरे पर थपेड़े मारने लगी। 'हाँ-हाँ सजा दे बदमिया, सजा द जो तेरी इच्छा हो

बदमिया, मेरे मालिक कहती हुई कुजू की विशाल छाती पर टूट पड़ी। कुजू ने अपनी बलिष्ठ बाहों में बदमिया का समूचा शरीर कस कर समेट लिया और इतने जोर से दबाया मानो बदमिया के तन मन के सारे बन्धन चटक चटक कर टूट जाएंगे। एक बार बदमिया को पूरा ऊपर उठा लिया और एक भारी-सा चुम्बन उसके फूले हुए गाल पर चँसा कर छोड़ दिया।

बदमिया को ऐसा लग रहा था कि इस आलिंगन में उसके भरे भरे तन का सारा दर्द दुह उठा हो। बरसे हुए बादल की तरह हल्का हल्का अनुभव कर रही थी।

'चलो घर चलें बदमिया, अतिकाल हो रहा ह। लोग क्या-क्या सोचने लगते हैं।

'चलो तिवारी, मुझे ऐसा लग रहा ह तुम्हारे नजदीक आकर कि पहली बार किसी मरद के पास आयी हूँ।'

'हूँ?'

हाँ तिवारी वसे तो कई मरद मेरी जिनगी में आये लेकिन मुझे लगा कि यह जाति ही हिजड़ों और राक्षस ह - औरत पर तो ऐसे बीर बन जाएंगे कि कुछ न पूछो और जब औरत की आबरू का सवाल आयेगा तो भाग खड़े होंगे। औरत का मन भी कोई चीज है, इसे नहीं जानते, बस इसके तन को भोगेंगे और भोगने के बाद लात मार कर ठेल देंगे। भोगने के समय तो ऐसा लगेगा कि यह तन समर्पित है, पाँव पकड़ेंगे, हाथ जोड़ेंगे, जीभ चाटेंगे, पूरी देह को अपने पवित्तर सिर पर ओढ़ लेंगे और जहाँ जाया ठंडा पड़ा ताड़ा के चुक्कड़ की तरह उठा

कर फेंक देंगे। हम ताडी हैं मरदों के लिए, बस एक नशा की चीज इसलिए जहाँ इस नशे की चीज पर कोई बलवान आ धमकता है वहां भाग खड़े होते हैं ये बहादुर। औरत को तो डंडों से मार-मार उसकी पीठ की खाल खींच लेते हैं लेकिन बाहर अपने बाप को देखते ही सियार बन जाते हैं'

कुंजू गंभीर होकर सुन रहा था और धीरे धीरे गाँव की ओर चल रहा था।

'मैं बहुत दुखिया हूँ तिवारी। बुरा मत मानना, मैं तुम्हारी जाति की शिकायत कर रही हूँ। तुम्हारी बात और है, मैं कई मरदों के पाले पड़ चुकी हूँ इसलिए जो जहर पिया है उसे तुम्हें देखकर उगलने की इच्छा हो रही है, अगर तुम्हें तकलीफ होती हो तो बोलो तिवारी मैं नहीं कहूँगी। मैं नहीं चाहती कि मैं अपनी गंदी जिनगी की कहानी तुम्हारे मन पर कतवार की तरह फेंकूं। यह जहर मैंने मन ही मन पी रखा था आज न जाने क्या ऐसा लग रहा है तिवारी, कि नहीं कहूँगी तो फट जाऊँगी। शायद मन इतने दिनों से किसी ऐसे आदमी को तलाश में था जिस पर वह बिसवास कर पाता, चाहे सुख हो चाहे दुख, सबसे तो नहीं कहा जा सकता तिवारी।'

कुंजू चुपचाप चलता रहा। बदमी चुप हो गयी और फिर अपने आप बोल उठी—जानते तो होगे तिवारी, मेरा सौतेला बाप भजन मेरी माँ को रामघाट से भगा लाया था। कहते हैं मेरा बाप मेरी माँ को बहुत मारता था, भूखा रखता था। एक दिन वह ताड़ी पीकर कुएँ में गिर कर मर गया। मेरी माँ रो धो कर चुप हो गयी। भजन उसे फुसला कर इस गाँव में ले आया। भजन की पहली बीवी से एक लड़का था, वह पन्द्रह वर्ष का हो गया था। अरे वही मुरतिया उसे अपने पिता का यह बियाह बहुत बुरा लगा। मैं बारह साल की थी। वह मुझसे जलता था और मुझे रह रह कर मार देता था। मेरा सौतेला

पिता जब मेरी माँ से यह समाचार सुनता तो मुरतिया को पीट देता। मुरतिया अपमान से ऐंठ कर रह जाता, उसके मन में मेरे और मेरी माँ के लिए गाँठ बनती गयी। तुम तो जानते हो तिवारी, मेरा सौतेला बाप भाटपार के पराइमरी स्कूल में चपरासी था—इसीलिए उसे मुरतिया को पढ़ाने का सउख (शौक) चर्राया हुआ था। मुरतिया बड़े घराने के लड़का को देखता तो उसे भी बाबू बनने का साध बँध देता, वह घर में आकर अच्छे कपड़ों के लिए जिद करता। कहार की जाति कहाँ से बाबुआ की तरह कपड़े ले आयगी ? माँ बाप से कहती और वह गुस्से में आकर उसे पीट देता। वह गुस्सा उतारता मुझे पीट कर। कभी कभी माँ को धमकाता— देख लूँगा तुझे, पता नहीं कहाँ से चली आयी मेरा घर तारने कुलच्छिनी कहीं की।' मेरी माँ रो पड़ती। जब कभी वह भाड़ झोंकने के लिए पत्ते बटोरने की बात कहती तो वह गुर्राता— 'मैं मिडिल में पढ़ता हूँ पत्ता बटोरने के लिए।' जब किसी काज परोजन में मेरा बाप उससे कहता कि देख बड़ा काम है आज तेवहार के दिन, अपनी माई के साथ जाकर बाबा लोगों का कामकाज कर देना तो गुर्राता— मैं इन बामनों का पानी-वानी भरने के लिए नहीं हूँ, मैं पढ़ लिख रहा हूँ कहारी करने के लिए, चौका-बरतन करने के लिए डोली ढोने के लिए ?'

'हाँ हाँ जानता हूँ मुरतिया को साला पढ़ लिखकर अपने को लाट समझने लगा है, वह तो जनम का ही मूड़स और घमंडी है।

'हाँ जानोगे क्यों नहीं, एक ही गाँव की कहानी। लेकिन मैं तुम्हें अधिक भीतर से बता रही हूँ। मैं अपनी माई के साथ रहती बड़की काम करती और वह सड़ा-मुछड़ा छैला बना घूमता।'

'जानते हो तिवारी जब मैं तेरह साल की हुई तो सादी कर दी गयी। और उसी साल कुछ महीने के बाद मुझे बिदा भी कर दिया गया। हाय, मुझे क्या मालूम था कि सादी बियाह का क्या मतलब

होता है और जब मतलब सामने आया तो मैं मारे लाज और तकलीफ के मर गयी। वह मडा मुसडा घर में अकेला था। जहाँ से आता था मुझी पर टूट पडता था। मैं उसको परछाइ से साँप की तरह बचती थी, एक थी उसकी अधा माँ सो वह ओसारे में पडी रहती थी। जब कभी मैं उसे मना करती थी—लात-मुक्का से कूटने लगता था और मारते मारते मुझे अधमरा कर देता था और तिसपर भी नहीं मानता था।'

'तिवारी, तुम्हारे गाँव के लोग तो यही कहते हैं कि बदमी अवारा है, और कुलच्छिनी है जहाँ गयी, नहीं पटी, या तो भतार खा गयी या छोड भागी मगर तुम्हारे इन बामना कौन समझाये? वे भी तो मरद हो हैं न। मरद-मरद ही होता है चाहे किसी जाति का हो, और औरत की भी एक ही जाति है औरत की। औरता का दरद औरतें ही जानती हैं मगर कसी दुनिया है तिवारी कि औरतें यह दरद भोग कर भी एक दूसरे पर हँसती है बल्कि वही अधिक हँसती हैं, मुझ पर भी हँसने वाली ये औरतें ही ज्यादा हैं।'

'मेरा दुलहा बडा हट्टा-कट्टा था तिवारी, पेड की तरह, सब्बर की तरह बाधा डाता था और पूरे जवार में अपनी खुराक और काम के लिए मशहूर था। लेकिन बडा कुचाली था। अरे तुम तो जानते हो जतनपुर का, जहाँ कहारा, पासियों और अहिरो की बस्ती अधिक है। यह गाँव उस जवार म अपनी नगई के लिए बदनाम है। सभी के सभी अखाडे लडते हैं, भसें पालते हैं, अपने पास जायदाद ता है नहीं, दूसरे गाँव वाला के खेतों म अपने पशु छोड देते है और उनकी फसलें काट लेते हैं, सेंध लगात है। मेरा मुसडा भी उसी दल म था। मने मना किया तो उसने झगडा कर लिया और एक दिन म अड कर खडी हो गया—नहीं मैं तुम्हें नहीं जाने दूँगी, हराम का कमाई लाने के लिए। तुम्हारे पास जाँगर है, तुम मिहनत करके खाओ खिलाओ। मैं तुम्हारी हराम की कमाई

नहीं खाऊंगी।' 'तो मत खा र हरजाई भूखी रह' कह कर उसने एक लात मेरी कमर में जमाई और म गिर कर बेहोश हो गयी।

उमा गाँव म बनारे एक परोफसर रहत थे। अपना जमीन जायदाद कारिंदा पर छोड़ कर बनारस में पढ़ाते थे बड़ भऊ आदमी, सो ये सब चार उन्हीं की फसल काट ले आते थे, उन्हीं के फूल तोड़ लेते थे उनके बैल चुरा लेते थे। बचार परोफेसर ने कितना समझाया लेकिन ये सब तो अपन बल क मात हुए थ उनका मारने की भी धमकी दे देत थे। उस दिन भी उन्हीं की फसल पर धावा था। परोफेसर साहब कारिन्दा के बुलाव पर घर आये। बड़े आदमी ठहर कलट्टर से कह दिया कलट्टर ने इन्सपट्टर स कह दिया, इन्सपट्टर सकड़ों सिपाहियों को लेकर रात को गाँव में आ धमका और सबका घेर कर बाँध लिया। सभी भेड़-बकरी का तरह बँध गये और सिपाहियों की मार खा खा कर चाँ-चाँ करन लगे। सिपाहियों न औरतों को भी पकड़ लिया और इन मर्दों के सामने औरतों की छाती पर लाठी का हूरा कोंच कोंच कर गिरा देने लगे और ऐसी ऐसी घराऊँ गालियाँ उगलने लग कि सुन कर पाथर भी एक बार गुस्से में आ जाए। लेकिन ये बहादुर मरद अपने सामन ही अपनी बहन बेटियों और बहुओं की यह हालत देखकर रस्सियों में बँधे टुकर-टुकर ताकते रहे। मुझे इन नपुंसक मरदों पर धिक्कार छूट रहा था। मेरा मुसंडा भी उसी म बँधा था। मेरी जलती हुई आँखें पूछ रही थीं—वाह रे बहादुर मरद, तेरी मरदानगी कहाँ गयी? बस मुझी को मारन के लिए तेरे पास इतना जाँगर है पेटलू कहीं का? और सिपाहियों का क्या कहूँ तिवारी? आखिर वे भी तो मरद ही हैं न। औरतों को पकड़ ले आये। जुलुम काई करे लेकिन पीसी जाती ह औरत ही। मरद-मरद को गाली भी देगा तो उसकी माँ-बहन-बेटी को जोड़कर। ये सिपाही औरतों को क्यों पकड़ लाये यह मैं नहीं समझ पायी। जस मरद का कोई भी जुलुम का जग औरत की आहुति के बिना पूरा नहीं होता। वो

तो बेचारे परोफेसर साहब आ गये तो पता नहीं क्या इ सपेट्टर को अंगरेजी में डाँटने लगे। और तभी ईसपेक्टर ने सिपाहियों से कहा, 'छोड़ दो इन औरतों को और इन बदमाशों को जूतों से मारो।' भला हो परोफेसर को, वे औरतों को बेआवरू नहीं देख सके। लेकिन अपने मरदों को मार खाता हुआ देख औरतें हाहाकार कर उठीं, और पुलिस सारे बहादुर मरदों को बाँध कर थाने पर ले गयी। मुकदमा चला और सबको दो-दो एक-एक साल की सजा हो गइ। म तो कहीं की न रही तिवारी, बूढ़ी सास भी दो-तीन महीने में मर गयी। अकेली म जिनगी की उदासी में डूब गयी। भस थी उसको सँभालना, एक बीघा खेत था उसको सँभालना, और औरत की जाति के लिए सबसे मुशकिल होता ह उसकी इज्जत सभालना और सो भी जवान अकेली औरत के लिए। मने भस बेच दी, खेत बँटाई दे दिये और पेट चलाने के लिए परोफेसर के कारिंदा के यहाँ नोकरी कर ली। सुनते हो तिवारी, मेरा मरद तो जेहल काट रहा था और इधर कई बूढ़े, जवान, छोकरे मेरे पीछे पड़े थे, और तो और उस खूँसट कारिंदा की भी नीयत खराब थी, उसने एक दिन मुझे अँधेरे में पकड़ लिया और पता नहीं कैसी-कैसी बात करने लगा। परेम की बात करने लगा। उसके मुँह से परेम की बात वसे ही चू रही थी जैसे किसी दाँत के मरीज के मुँह से लार चूती हो। यह घिनौना रूप देखकर मुझे गुस्सा आ गया, लेकिन मैं रोजी रोटी की खातिर सहती रही। लेकिन जब उस दहिजरे ने बढ़ कर मेरी छाती पकड़ ली तो मैं नहीं सह पायी—पास में बठुली रखी हुई थी, उसी से उसकी पीठ पर ताबड़तोड़ तीन चार जमा दिया और भाग चली। फिर उसने मेरे खेत उखड़वा लिए मेरी मड़ई जलवा दी, और मुझे तरह-तरह से मारने की कोसिस करने लगा। गाँव में उसने मेरी बदनामी फलाई। मने सब कुछ सहा तिवारी, सब कुछ सहा। और जब मरद के छूटने का समय हुआ तो

मैं समयो कि चलो अब गरह कटा। क्या क्या सपने सजा रखे थे मने मन में। वह आयेगा तो यह कहूँगी, वह कहूँगी। वह आया तो जसे वह खो गया हो, अनमन, उदास उदास-सा। मेरी सूनी पर, जसे पाला पड़ गया तिवारी। उस रात के लिए मने अपनी आँखों में जो दिये जलाये थे उन्हें उसने लात मार कर बुझा दिया। म उसे मनाती रही। दो दिन बीते तीन दिन बीते उसने यह भी नहीं पूछा कि अरी बहुरिया तू क्या खाती थी, क्या पीती थी? कसे रही? हाँ इतना जरूर पूछा कि भैंस बेच दी न। और जवाब पाकर और सुलग गया।

*कई दिन बीत गये तिवारी, वह घर से निकलता था, और* घूमघाम कर गुमसुम बहुत देर बाद घर आता था फिर निकल जाता था। फिर मेरा मन विद्रोह कर बैठा। मने उस रात उसे पकड़ लिया और तेज हो के कहा—क्या जी, तुम्हें क्या हो गया है, तुम बोलते क्या नहीं, तुम्हारा किसने क्या लूट लिया है? मन म कितने कितने सपने थे *कि तुम आओगे तो यह पूछोगे*, वह पूछोगे, मेरा दुख सहलाओगे और मैं तुम्हारी गोदी में अपने को डालकर इतने दिनों का सारा दुःख भूल जाऊँगी, मगर तुम तो हो कि पत्थर बन गये हो।'

उसने क्या कहा तिवारी, जानते हो। तुम्हारी जाति के मन में पाप छोड़ कर और भी कुछ है? उसने पूछा—'इस बीच तूने कितने बच्चे गिरवाये।' *हाय मैया तू यह क्या पूछता है? यह पाप यह घिनौनी यह आग तू कहाँ से भर लाया है। हाय धरती मइया तू फट* क्या नहीं जाती? जिसके लिए मन इतना कहट (कष्ट) काट काट कर इतने भेड़ियों के बीच अपना आबरू बचाई वही आज सुख-दुख पूछने के बदले यह पूछता है। म फफक कर रोने लगा।

उसने धीरे से गुर्रा कर कहा—देख बदमी मुझे गुस्सा मत लगा म सब सुन चुका हूँ, जहल में भी सुनता आ रहा हूँ। छिनार तूने क्या

दुख था, दुख तो मने काटे, चक्की पीसी, कोडे खाये, गारी खायी, और क्या क्या नही किया है ? अंगरेज सरकार जो न करे सो थोडा है। और तू यहाँ मजे में गुलछर्रे उडाती रही, हरजाई तूने गाँव में किसी को छोडा भी ह ?'

पहले तो मैं खूब रोई लेकिन बाद में गुस्सा आ गया तिवारी, मने उसे ललकारा—जबान बन्द कर अपनी। तू जैसा खुद है, वसा सबको जानता है, मैं क्या नही जानती कि तू कहाँ-कहाँ आसनाई करता फिरता था, कई बार तो पीटा गया था खुद वैसा है, तभी औरों को वसा समझता है। गाँव के लोगो ने तुममे सब झूठ फुर जोडी ह। किसी दहिजरे की हिम्मत हो तो मेरे सामने आकर कहे। मैं सब मेरे लिए पागल थे लेकिन मैंने सबके मुँह पर लात मारी है इसीलिए बदला ले रहे हैं और तू गवरू ह कि इनकी बात मान बठा है।'

तुम्हारी जाति कहना जानती ह, सुनना नही। उसे अपने बडप्पन का बडा घमड है न। वह पापी मेरी बात सुनकर तडप उठा—'चुप फलान चोन मारी, मै तेरी ऐसी की तसी करके छोड़ूँगा।' वहीं लाठी रखी हुई थी, उसने दे मारी और उसने मुझे कितना पीटा, इसका मुझे कुछ भी पता नही। सबेरे जब होश आया तो मेरे कपड़े खून में डूबे हुए थे अग-अंग दरद से टट रहा था और मुहल्ले के लोग जुटे हुए थे। वे सभी लाग मेरे मरदुआ को गाली बक रहे थे। कुछ औरतें मेरे पास बठी हुई मेरी देह सुहरा (सहला) रही थीं। म बच गयी लेकिन मेरा मन टूट गया। उसका भी मन टट गया। सदेह का भूत बडा जाबिल होता है तिवारी एक बार पकडता है तो नही छोडता ह। इन हिजडे मरदों का वह रूप सामने आ गया जब हम औरतो को पुलिस के सिपाही पकड कर बेइज्जत कर रहे थे और ये सब टुकुर-टुकुर ताक रहे थे। घर में कितने बीर बन जाते है ये।

मने एक दिन सुना कि उसने कहीं और आसनाई कर ली है। वह रोज मुझे मारन पीटने लगा, उसने मेरा खाना-पीना मुहाल कर दिया। म समझ गयी कि अब यह मुझे नही चाहता है। म अपनी माँ के यहाँ भाग आया और सुना कि उसने दूसरी औरत रख ली ह। मुझसे जाति वाला ने कहा कि पचायत कराओ लेकिन मेरा मन उसस टूट गया था, मुझे चन मिला कि चलो इस राच्छस से छुट्टी मिली।

कुजू चुपचाप चल रहा था, मानो वह बदमी के दरद की बूँद-बूँद पी लेना चाहता था। बदमिया कुजू की चुप्पी का अथ समझती थी इसलिए वह रुक रुक कर कुजू के बोले बिना भी अपनी कहानी बढाये जा रही थी।

मेरी माँ को एक लडका हो गया था और मुरतिया मिडिल पास करके क़ाउद खाने का मुशी हो गया था, बडहल गंज में उसकी नौकरी लगी था। बप्पा ने उसका बियाह लगाया तो कहने लगा कि मैं बियाह नही करूँगा मै तो परेम बियाह करूगा। अरे क्या बताऊँ तिवारी वह तो अजब-अजब शहरी बोली बोलता ह। सुत्थन पहनता ह, बडी-बडी जुल्फी रखता ह, साहबों की तरह माँग फारता ह हट लगाता ह और कहता ह कि शहरों में परेम बियाह होता ह, मं भी परेम बियाह करूँगा। बप्पा ने उसे एक दिन कुछ गाली बकी तो लडने को तयार हो गया। कहन लगा मरकीनवता कि तुम गँवार कहार हो, साहब बटे का बराबरी करते हो? गाली-बाली बका तो ठाक नही होगा। मुझे तो काठ मार गया तिवारी—"सा कउवा बिलमता बोलो। बप्पा ने ता इसकूल को नोकरा करके उस पढ़ाया और ई तुरक मिजाज उनसे ही साहब बनने लगा। बप्पा का एक भी पसा नहीं देता था। कमा करके पता नहीं क्या करता और इधर घर के लाग मजूरी करके अपना पेट पालते।

'हाँ साला बदमाश है यह।' बहुत देर बाद कुंजू बोला। बदमी को लगा जैसे कुंजू की आवाज भीग कर भारी हो गयी है। वह चुपचाप कुंजू की आँख की ओर देखने लगी। उसे लगा कि उसकी आँखों में ओस की बूँदों की तरह कुछ झलझलाहट है।

'मैं यहाँ साल भर तक रह गयी। मेरे बप्पा और भाई दोनों को मेरे आ जाने से बहुत सुख मिला। मैंने सारा काम सँभाल लिया। इसलिए उनकी टूटती हुई गँवहन मानो फिर सँभल गयी। लेकिन दोनों को मेरे बारे में सोच-सोच कर कुफुन होती थी। पूरी जिनगी पड़ी हुई है, कैसे बेड़ा पार होगा भगवान। भाई ने कई बार कहा भी कि कोई दूसरा घर कर ले, लेकिन एक बार के वियाह से ही मेरा जी इतना टूट गया था कि दूसरा घर करने के नाम से ही कलेजा काँप उठता था। मैं रो पड़ती थी और भाई चुप हो जाती था। लेकिन यह भी ठीक है तिवारी कि लड़की अपने नइहर कब तक रह सकती है। सोचती थी कि कभी भी इस घर से निकाल दी जा सकती हूँ। मुरविया पता नहीं कब फँटिया जाए और मुझे बेइज्जत होकर भागना पड़े। लेकिन कोई बात और थी तिवारी। जब मेरी शादी हुई थी तो मेरी उमिर कच्ची थी मुझे हर चीज से डर लगता था, जब कुछ उमिर पकी तो वह जेहलखाने से लौटा और मेरी जो साँसत की वह तो कह ही चुकी हूँ। फिर भी देह की भूख तो होती है न। इस एक साल में मैंने बार-बार अनुभव किया कि कोई चीज है जो देह को सालती है और तब टूटा हुआ मन भी कहीं जुड़ जाता है। लगा कि यह भूख नहीं बरदास्त होगी। उन्हीं दिनों किसी के यहाँ बरात आयी थी उसी में एक कहार आया था, खूब गाता था मजाक करता था, बड़ा रसीला जवान था, तिवारी। मैं बरात में काम-धाम सँभाल रही थी, उसी में उससे कई बार मुठभेड़ हो गयी। मुझे लगा कि वह मेरे तन मन में समाता जा रहा है। वह मुझे अक्सर छेड़ बैठता था।

उसने एक दिन कहा—'गोरी जरा अकेले में मिलोगी ?' और मैंने मजूर कर लिया। मरजाद के दिन शाम को हम लोग एक बगीचे में मिले। तो उसने मेरा सारा हाल चाल पूछा, मुझे भी मालूम हुआ कि उसकी जोरू उसे छोड कर चली गयी ह, उसने ऐसे ऐसे कारन दिये अपनी जोरू के भागने के कि मुझे उसका जोरू से घिन और इससे हमदरदी हो गयी। मने उससे कहा कि तू मेरे बप्पा और भाई से बात कर। लेकिन वह डरता था कि कहो मेरे बप्पा न माने तो। मैंने कहा, नही तू बात कर, वे बडे अच्छे हैं मान जायेंगे और नही माने तो तू मुझे भगा ले चलना। मेर बप्पा और भाई राजी हो गये। म कुछ दिन बाद उसके साथ चली गयी। उसका घर मुडेरा बजार में था।

बदमो चुप हो गयी, वह धीरे धीरे सिसकने लगी। लगा कि उसके घाव का स्रोत फूट गया हो और

'हाँ रो ले बदमो, रोने से जो हलका होता ह, म भी जब कभी अकेले में रो लेता हूँ तो लगता ह कि चित्त कुछ ठीक हो गया ह, रो ले, दरद बह जायेगा।' कुजू ने कहा और धीरे धीरे चलता रहा।

चाँद खूब चटक हो गया था, दोना कायाए धीरे धीरे सरक रही थी।

मेरी कहानी अकथ ह निवारो, फिर भी कहे जा रही हूँ ठीक कहते हो, कहने से रोने से जी हलका होता ह, इसीलिए तो कह रही हूँ और सो भी तुमसे केवल तुम्ही को अपनी कहानी सुनने के लायक समझा।

हाँ, तो उसके घर गयी उसकी माँ थी, उसकी बहन थी। घर कस्बे की एक गन्दी गली में था। घर अलग नहीं था। तमाम घर एक कतार में जुडे हुए थे, सामने से एक गन्दा पडोह (नाबदान) बजबजाता हुआ बहता रहता था। हाय, हाय कस्बे की यह जिन्दगी मेरे लिए नया था। मुझे तो हर घडी उबकाई आती थी। और सबरे-सबरे जब

आसपास आमने-सामने मोटी-मोटी पीली देह वाले अनिया-बनिया दतुअन करते बैठते थे तो इतना थूकते खँखारते थे कि मेरी तो आँतें बाहर को निकलने लगती थीं तिसपर भी फूहर औरतें बच्चा को सामने बैठा देती थीं वहीं टट्टी करने के लिए बुरा हाल था मेरा। लेकिन धीरे धीरे सब ठीक हो गया। मेरा यह मरद पहले मरद की तरह हट्टा-कट्टा नहीं था। उससे रंगीला जरूर था, इसकी देह उससे गोरी जरूर थी लेकिन इसमें वह ताकत नहीं थी। सौखीं बहुत था, लड़कियों की तरह फैशन करता था। मन अपना सिर पीट लिया। उसकी आँखों की लाली को तो मैंने परेम की लाली समझा था मगर एक दिन रात को जब वह आया तो मैंने जाना कि वह लाली तो दारू की है। नशे में धुत था और मुझे पकड़ कर मेरा हाड़-हाड़ निचोड़ने लगा। उसके मुँह से बदबू आ रही थी मैंने उसे जोर का धक्का देकर अलग फेंक दिया और सुला दिया लेकिन वह बार-बार मेरे ऊपर टूट पड़ता था। जब मैंने बहुत डाँटना फटकारना और मना करना शुरू किया तो मुझे लात घूसों से मारने लगा। लाख लाख गालियाँ देने लगा मेरा झोंटा पकड़ कर नोचने लगा और कहने लगा कि हरामजादी बस्ती में तुझे उठा कर ले आया तुझे बस्ती से बहू बनाया तो तू मुझी से सान दिखाने लगी। वह लड़खड़ा रहा था और बक रहा था पीट दे रहा था। मैं रो रही थी, फिर मेरा सपना भंग हुआ था। मैं देख रही थी कि घूम फिर कर सभी मरद अपनी जाति पर उतर आते हैं। इसने मुझसे परेम नहीं किया है, सादी नहीं की है, बस्ती का उद्धार किया है। और जब बात खुल गयी तो वह रोज, इसी तरह दारू से धुत होकर आने लगा। मैं सोचती रहती थी कि यह क्या करता है अब धीरे धीरे बात खुलने लगी कि यह दिन भर बैठ कर जुआ खेलता है ताश खेलता है और मरद की एक नौटंकी है [illegible] है। मैं सोचती थी कि इस निकम्मे के घर

था सर्चा कैसे चलता है और मैं समझने-समझते समझ गयी कि जुए और नोटंकी में कुछ पा लेता है, कभी-कभी बाजार में कुछ माल-चाल भी हो लेता है, मेलों हटियों में नाचने जाता है और और क्या बताऊं तिवारी ? कुछ अजीब परिवार था वह, उसकी बहन जवान हो गयी थी, उसकी शादी हो गयी थी, मगर वह यहाँ क्यों पड़ी रहती है, मैं समझ नहीं पाती। उसका मरद कई बार लेने भी आया लेकिन इन सबों ने उसे बार-बार लौटा दिया। मैं कुछ समझ नहीं पाती थी कि आखिर मामला क्या है। नई बहू थी, मैं कुछ दखल भी कैसे देती, लेकिन एक बात मैं देख रहा थी कि बिना कुछ खास काम-काज के भी यह घर बड़े सुख में है, उसकी बहन अच्छे-अच्छे कपड़े पहनती है, चटक मटक से रहती है, सुनती थी कि किसी सेठ के यहाँ काम करती है। कई लौंडे जब घर के पास से गुजरते थे तो सीटी मारते थे और मेरी ननद उठ कर उनकी ओर भागती थी। मुसकराती थी, आँखें मारती थी और जब तक उसकी इच्छा होती गायब रहती। मैं तो अजीब हालत में थी। एकाध बार उसे रोका टोका तो बिगड़ खड़ी हुई। मेरे बाप का नाम ले-लेकर गालियाँ देने लगी। सोचा कि उनसे कहूँ लेकिन कहने में डर लगता था। ननद मेरे दखल देने से मुझसे नाराज होती गयी। एक दिन तो बिगड़ पड़ी और कहने लगी—'अपने को नहीं देखती, वेस्सा कहीं की। जानती नहीं हूँ जतनपुर का कोई आदमी तुझसे छूटा नहीं है। मद ने लात मार कर निकाल दिया तो गली गली की भीख मांगती रही, मेरे भाई ने उद्धार किया तो लगी मुझी को सीख देने।' ननद ने सास से भी पूठ फुर जोड़ दिया, सास भी बिगड़ खड़ी हुई। उसे भी मेरा यह दखल अच्छा नहीं लगा। मैं सोचने लगी कि जरूर कोई भेद है इस घर में, जो खुलता नहीं है। और एक दिन एक ऐसी घटना घटी कि इन सारी बातों का भेद मेरी समझ में आ गया। मेरे मरद ने कहा—देख

सेठ चम्पूलाल को एक नौकरानी चाहिए, तू जा काम कर। मुझे गये छ सात महीने हो गए थे अब निकल कर काम-काज करने मे कोई हर्ज नहीं था, मैं मान गयी। सेठ चंपूलाल के यहाँ अनाज वगैरह साफ करती थी, एक दिन सेठानी वगैरह कहीं गयी थी, घर में सेठ थे और मैं थी। सेठ ने मुझे बुलाया और कहा कि बदमी सिर दुखता है, जरा तेल लगा दे। पहले तो मैं हिचकिचाई लेकिन सेठ का आग्रह देखकर तेल लेकर उनका सिर दबाने लगी। सेठ ने धीरे से मेरी अंगुली छुई— कितनी सुंदर सुंदर पतली पतली अंगुलियां हैं तेरी बन्नी।' मैं सिहर गयी, कुछ बोली नहीं। फिर उसने मेरी कलाई पकड़ ली। मैंने कहा—'तेल लगाने दो सेठ।' सेठ की साँसें तेज तेज चल रही थीं जैसे धौंकनी। मैं अचकचाई। सेठ ने मेरी कलाई पकड़कर अपनी ओर खींचा और टूटती हुई आवाज में कहा— आ मेरी गोद में सो जा, तेरी गदरायी देह से खेलने की इच्छा कब से हो रही थी, आ तुझे मैं दस रुपये दूँगा।' वह मुझे अपनी बगल में खींचने लगा। मैं मारे गुस्से के पागल हो गयी, चीख कर कहा— सेठ ये दस रुपये अपने काम किरिया के लिए रख लेना मलाखोर सेठ। और वहाँ से हाँफती-डाँफती घर भाग आयी। रात को मैंने मरद से कहा। वह उस दिन मुझसे मिला तो बड़े गुस्से में था, जब मैंने अपना किस्सा कहा तो कुछ नहीं बोला और नहीं तो लगा कि मुझको गुस्से में खा जाएगा। थोड़ी देर मेरी ओर ऐसे ही ताकता रहा और एकाएक चार-पाँच लात मारते हुए चीखा हरजाई बड़ी पतिबरता बनी है तो खा अपना पतिवरतापन।' मैं तो सन्न रह गयी उसका व्यवहार देखकर। और धीरे धीरे यह बात मेरी समझ में आयी कि असमत बचकर खाना ही इस घर का पेशा है, ननद सबकी मरजी से यह सब करती है, ससुराल नहीं जाती। बुढ़िया सास बनी-ठनी घूमती है सो इसीलिए। यह निकम्मा मरद सिंगार-पटार करके जुआ खेलता है. शराब पीता

सो इसीलिए। क्या कहूँ तिवारी एक ओर म, दूसरी ओर सारा घर। पति मेरे जेवर छीनने लगा। ऐसे मेरे पास था ही क्या? मगर जो भी दो चार थान चाँदी के गहने थे वह मार-मार कर छीनने लगा। हर रात को वह आता और मुझे तंग करता मारता पीटता। मैं कुछ कहती-सुनती तो ननद और सास भी मेरी खबर लेती। सारा काम मुझे करना पड़ता उस तो कोई परेशानी नहीं थी तिवारी, लेकिन रोज रोज की मार-पीट से म तंग आने लगी और हर कोई जब इस घर पर मुसकाती हुई नजर फेंक कर कुछ न कुछ कह देता तो मैं छनमना उठती। लोग मुझे सरकिया बहू कहते, और सास की तमाम कहानियाँ चलती। म इस मरद के हिजड़ेपन से तंग आ गयी। जिस मरद को अपनी जोरू की इज्जत का ख्याल न हो और जो औरत को पीटे वह हिजड़ा नहीं तो और क्या है?

इस नरक में मने कैसे तीन साल गुजारे तुम सोच सकते हो तिवारी! और एक नयी मुसीबत खड़ी हो गयी थी—सास और ननद मुझे बाँझ कहने लगी थी। तीन साल हो गये, न कोई बाल न बच्चा, बाँझ नहीं तो और क्या कहेंगी? सबेरे-सबेरे कोई मुँह देख लेता तो घिन से मुँह बिचका कर कह उठता—राम राम कैसे दिन बीतेगा आज बाँझ का मुँह देखा है। बाँझ बाँझ बाँझ यही बात दिन रात पूरे घर में घूमती रहती। मैं इस घर से—छूट भागने के लिए बेचैन हो गयी। अब तो खाना पीना भी मुश्किल होने लगा। ननद सारा हिसाब किताब रखने लगी और बार बार ताने मारती कि गाँव वाली हरजाइयों का पेट होता है कि खंदक अन्न की थाह ही नहीं मिलती है। हालाँकि सबके खाने के बाद तीन चार रोटी ही बाकी बचती थी। और जब म बीमार पड़ गयी तो नरक भोगने में कुछ बाकी नहीं रहा। म दिन रात बुखार में बुत्त पड़ी रहती कोई कुछ पूछता ही नहीं, सब मानों यही मना रहे थे कि कब यह मर जाय घर साफ हो।

ननद तो जब आती मुँह बनाकर चार गालियाँ दे जाती और मैंने धीरे-धीरे सुना कि मेरा मरद दूसरी सगाई की बात कर रहा है, खाली मेरे मरने की देर है। मैं भगवान के भरोसे अच्छी हो गयी तिवारी, और एक दिन मैं उस घर से भाग निकली। सोचा कि कहीं डूब मरूँ। लेकिन नहीं मर सकी। मेरा बप्पा मुझसे कई बार मिल चुका था, उससे मैंने अपना दुखड़ा गाया था और कहा था कि इस घर में मैं नहीं जा सकती, और कहीं सादी भी नहीं करूँगी बस डूब मरूँगी तो उसने समझाया था कि नहीं बेटी, देख मैं कितनी मुसीबत में हूँ तेरी माँ मर चुकी है, तेरे छोटे भाई को छोड़कर, मैं इसकूल में नौकरी करता हूँ, गाँव वालों की कहारी नहीं कर पाता, दूसरे गाँव के कहार आकर गाँव थाम रहे हैं, यह हमारे लिए बड़ी मुसीबत है। तेरा भाई मुरतिया सादी करके बड़हलगंज में ही बस गया है, वह सारी तनखाह उड़ा डालता है और साहब बना फिरता है। तेरा छोटा भाई मेरे इसकूल में रहता है, लेकिन मास्टर लोग बुरा मानते हैं वह बरबाद हो जाएगा। और देख, अगर मैं नहीं खाली हूँ तो कम से कम औरत वाला काम तो तू सँभाल सकती है। इस तरह हम गाँव से टूट नहीं जाएँगे। गाँव से सम्बन्ध टूटने पर हम कहीं के न रहेंगे, सो बेटी जब तेरी इच्छा हो तो मेरे यहाँ आ जा, वहीं रह, घर सँभाल। इसीलिए तिवारी जब मैं घर से ऊब कर भागी तो डूब मरने की जगह सीधे तुम्हारे गाँव आ गयी और यहाँ की नयी जिम्मेदारी निभाने में अपने को भुलाने लगी। फिर कई लोग मेरी बाँह थामने आये, मुझे बड़ी बड़ी लालच दिखाई लेकिन मैं अब घर बसाने से इतना डर गयी हूँ कि सबको साफ ना कह दिया और साफ-साफ कह दिया कि तुम लोगों का परेम धोखा है। और मेरे बप्पा की बूढ़ी होती आँखों का पानी और मेरे भाई का असहायपन अब कहीं जाने भी तो नहीं दे सकते। यहीं रम गयी हूँ तिवारी

लेकिन यहाँ भी तो चैन नहीं तिवारी, यहाँ भी वही अशान्ति पीछे-पीछे दौड़ती रहती है। सभी मुझे आँखें मारते हैं, मेरी भरी भरी देह में, आँखें गड़ा देते हैं तो मैं डर कर पीछे भाग खड़ी होती हूँ। काम करने जाती हूँ तो कितनी आँखें मेरे आसपास चक्कर काटती रहती हैं। अकेलापन पाकर छोटी जाति या छोटी जाति तुम्हारी बड़ी जाति वाले भी मेरे शरीर को पकड़कर तोड़ देना चाहते हैं और जब यहाँ कुछ नहीं पाते तो गाली बकने हैं—हट साले कहाइन की जाति तेरी यह हिमाकत। और इसी कहाइन का थूक भी चाटने को तयार रहते हैं मौका पाकर। मैं यही सोचती हूँ कि सचमुच औरत की सुन्दर देह और भरी जवानी पाप है—उसे किसी को दो तो दुख न दो तो दुख, इसे जागयो तो तकलीफ और बाँट दो तो तकलीफ। कोई भीतर का दरद तो देखता नहीं है।

कुजू देख रहा था कि अब गाँव नजदीक आ गया है। उसे लग रहा था कि यह कहानी बदमी की ही नहीं उसकी भी है। वह एक भारी सी साँस लेकर कह उठा—हाँ बदमी, तू ठीक कह रही है। भीतर का दरद कोई नहीं देखता और मुझे तो ऐसा लगता है बदमी कि ये सारे धरम करम पोथी पतरा वेद शास्त्र सब कुछ देखते हैं लेकिन आदमी का दरद नहीं देखते,—ये सब आदमी को आदमी नहीं समझते उसे देवता समझते हैं या राच्छस।

बदमी बोलती गयी—मैं क्या जानूँ वेद सास्तर तिवारी, लेकिन यह जरूर जाना है कि कोई भी हमारे भीतर के दरद को नहीं देखता। मेरी माई और बप्पा के बाद तुम पहले आदमी मिले जिसने मेरे दरद को छुआ। तुमने जब-जब अपने कंठ से पियवा नसइल, बाँझिन बिदेसिया आदि के गीत गाये तब-तब लगा कि तुम मेरा ही दरद गा रहे हो, मेरे ही समान तमाम औरतों का दरद गा रहे हो गाँव के

लोग तुम्हें जाने क्या-क्या कहते हैं लेकिन मुझे तो लगा कि इतने लोगों में तुम्ही एक ऐसे मरद हो जिस पर दिल पतिया सकता है। मैं तुमको सुनती थी, तुमको दूर से देखती थी, मुझे अच्छा लगता था लेकिन तुमने जमकातर में से मेरा उद्धार करके मानो अपना बना लिया और तभी से मैं तुम्हारी हो गयी हूँ। तुमने मेरा मन चाहा है तिवारी, इसलिए तुम मुझे अपना सके। लोग धीरे धीरे ताने मारते हैं, मुझे कभी-कभी लगता है कि मेरे अभाग के कारण तुम कहीं मुसीबत में न पड़ जाओ।' बदमिया सिसकने लगी।

झुजू ने भरे हुए कंठ से कहा—सो तो कोई बात नहीं बदमी, मैं सब कुछ खो-खा चुका हूँ अब बाकी क्या है तू अभागी है इसीलिए तो मिली है मुझे। सुभागी होती तो काहे को मिलती अच्छा अब गाँव आ रहा है। यह रहा जलकुम्हीं से भरा ताल। किसी ताल में कमल खिलते हैं, किसी में जलकुम्ही भर जाती है। बगीचे से हम लोग दो रास्ता से जाएँ। बगीचे के अँधेरे में झुजू ने बदमिया को गोद में भर लिया और एक गहरा चुम्बन उसके जलते ओठों पर अंकित कर दूसरे रास्ते चल दिया। बदमिया अपने घर की ओर चल पड़ी। दूर जाकर सुना झुजू का करुण स्वर चाँदनी में भटक रहा था—

बन पिछवारे जइसे कुहुके कोइलिया
रजऊ वोइसे कूहँके ना
मोरा कोमल करेजवा, रजवा वोइमे
कुहुके ना
माहो विरहिनिया के छोडी के अकेली
पियऊ कहाँ गइल ना

कुंजू घर आया तो लगा कि यह उदास-उदास गिरा गिरा घर उसे निगल लेने का कब से मुह फैलाए इंतजार कर रहा था। जाकर उसने एक खाट बिछा ली और थका हुआ सा उस पर बैठ गया। शरद की ठंडी चाँदनी सामने के केले के चिकने पातों पर थरथरा रही थी। कुंजू के घर के सामने ही उसका बड़ा सा घेरा है जिसमें उसका बैल खाता पीता है और उसी घेरे के एक भाग में भूसे का मंदिल है, गोइठा रखने की जगह है पलानी है और उधर गड़ही की ओर केले लगे हुए हैं दो-एक नीबू के भी पेड़ हैं और हरसिंगार के दो पेड़ हैं गड़ही के पास बरगद का एक बड़ा सा पेड़ है। यह घेरा अब आधा हो गया है। कुंजू के घर के पास दीनदयाल तिवारी का घर है। दीनदयाल जी ने कुंजू के आधे घेरे पर अपना अधिकार जमाकर उसमें अपना बँगला बनवा लिया है। कुंजू खाट पर बैठा-बैठा सामने देख रहा है, उसके लगाये केले के पत्ते पर चाँदनी थरथरा रही है जैसे अभी बिछल कर गिर जाएगी। कुंजू ने एक आह भरी। एक बार अपने मकान की गिरी हुई दीवारों को देखा—फिर उसकी निगाह दीनदयाल के बँगले की ओर चली गयी जिसमें बैठे चार-पाँच आदमी गप्प कर रहे तमाम लोगों के नाम ले लेकर। कुंजू को लगा कि एक नाम उसका भी है। फिर उसकी निगाह नाद पर पड़ अपने बैल पर गयी, वह उठा और नाद के पास मरे मन से खड़े बैल को लाकर पलानी में बाँध दिया, वह और उसका बैल उसे दोनों में अजब साम्य लगा, वह मुसकराया और फिर आकर खाट पर बैठ गया। ओह, उसने खाना अभी नहीं खाया है। उसने अपने घर में एक मात्र बची हुई कोठरी का ताला खोला। उसने दिन का ही रोटियाँ बना कर

शाम के लिए भी रख छोडी थी। नमक लिया और जौ की रोटियो को नमक के साथ चढा कर पानी पिया, फिर कोठरी का ताला बन्द किया, खाट पर लेट गया। यही उसका घर है लेकिन वह तो आज तक बेघर ही रहा, घर मिट्टी लकडी के शरीर से थोडे ही बनता है, उसे तो आतमा चाहिए, वह आतमा कहाँ मिली इस घर का। यह मिट्टी और लकडी का ढेर और इसके बीच मुरदे सा पडा हुआ वह। हाय, वह मुरदा भी तो नहीं है, मुरदा होता तो यह दरद ही क्या होता? वह देख रहा है कि गडही के सोये हुए पानी के ऊपर दो कचकुचिया पक्षी कच कच कुच-कुच करते हुए उडे आ रहे हैं और एक पल के लिए गडही के ऊपर फली हुई चुप्पी कुलमुला उठती है। उसका जीवन भी तो इसी गडही सा चुप्पी साधे पडा है। कोई नही आया इस चुप्पी के अँधेरे में, जो आये वे आने के पहले लौट गये। इतने दिनो बाद अभी हर-सिंगार की एक मुट्ठी सुवास आकर उसकी नाक में भर गयी, भीतर तक महमहा उठा। बेचारा हरसिंगार कैसा फूलता है सफेद मुलायम मुलायम। पोर-पोर बस जाती है डार की, कितना गमगमाता है। रात मात जाती है। लेकिन सबेरे-सबेरे कैसा चूने लगता है बेचारा महुए की तरह टप्प टप्प कितना उदास उदास सा लगता है। कुजु को लगता है कि वह जीवन भर भटकता ही रहा है कहा भी उसे कुछ ऐसा नही मिला जिसे वह अपना कह सके। वह जीवन के भटकाव में बहता-बहता भटकाव और परायेपन को ही जिन्दगी मान बठा था और ऊपर की पत इतनी कडी हो गया था कि भीतर भी कही कुछ है इसका ज्ञान ही भूल गया था। एक तरह वह जीवन के इस परायेपन, भटकाव, शून्यता को ही अपना मान बठा था और जो रहा था। लेकिन जब से बदमी ने ऊपर की सख्त पत को तोड दिया तब से पत के नीचे सोये हुए तमाम दरद जाग पडे हैं दूसरा जीवन जीने की प्यास जाग गयी है, इस परायेपन और भटकाव के बीच कोई सहारा पकडने को मन बचन हो उठा है।

हरसिंगार की सुगंध का फिर एक झोंका कुंजू को चपेड मार गया, कुंजू खाट पर पड़ा-पड़ा पीछे मुड़कर एक लम्बा सन्नाटा देख रहा था—

उसके बाप महाबल जवार भर के मशहूर लठैत थे। उसे लगता है अभी भी उसके सामने एक ठिगनी सी, गठी हुई आकृति खड़ी है धोती काछ मारे हुए, हाथ में लाठी लिए हुए। आँखें छोटी छोटी मगर रोष से लाल। सिर छोटा सा घुटा हुआ। दीनदयाल का हाड़-हाड़ काँपता था उन्हें देखकर। जब तक वे जीते रहे किसी की हिम्मत नहीं हुई कि इस घर की ओर आँखें उठाये और माँ! सोचते-सोचते उसका हृदय भर आया करुणा से, क्रोध से, राग से घृणा से। सुनता हूँ बपई ने उसे गड़ासी से काट दिया था, बारह साल का लड़का कुंजू क्या समझता—क्यों काट दिया? मगर जब वह बड़ा हुआ तो कारण समझने पर उसे बड़ी बेचैनी हुई। माई की कटी हुई लाश सामने पड़ी थी, आँखें खुली की खुली। खून की धारा से धरती फोंकट गयी थी। कुंजू लाश के पास पड़ा-पड़ा चित्कार कर रहा था और छोटा भाई बिरजू चिग्घाड़ रहा था। बपई की खोज हुई तो मालूम हुआ कि वे घर पर नहीं थे, कहीं भाग गये थे। लोग कानाफूसी कर रहे थे कि दीनदयाल की हालत भी बड़ी खराब है बुरी तरह लाठी की चोट से घायल पड़े हैं। उन्हें गोरखपुर अस्पताल ले जाया जा रहा है। माँ की लाश जला दी गयी। घर सूना हो गया न माई न बाप। हम दोनों बेसहारे लड़के घर में तड़पने लगे—रोते रोते गला बैठ गया, सूनी दीवारें, सूना आँगन बपई क्यों भाग गये लोगों को कानाफूसी करते सुना कि महाबल ने ही अपनी औरत का खून किया है लेकिन मैं समझ नहीं सका कि बपई माई का खून क्या करेंगे? लोगों से यह भी सुना कि महाबल ने दीनदयाल को घर में करिया कर खूब मारा है उसे घर में ही पकड़ लिया था लेकिन मुझे सारी बातें रहस्य बन कर उसे उलझा रही थीं

दोनों असहाय बच्चे उस सूने घर में रास्ता खोज रहे थे। पास-पड़ोस के लोगों ने मेहरबानी करके अपने-अपने यहाँ दो-दो तीन-तीन दिन

तक आसरा दिया। सुनते हैं कोई पुलिस बुला लाया। गाँव लाल लाल सिपाहियों से भर गया, भगदड़ मच गयी, बच्चे घरों में समा गए, सयान लोग भी यहाँ-वहाँ निकल गए फिर भी पुलिस ने घेरा डाल कर बहुतों का पकड़ा और पूछा—लाश किसने जलाई ? कौन बोले ? थानेदार गरज रहा था कि बिना पुलिस को इत्तला किये लाश क्यों जलाई गयी ? किसने जलाई सभी चुप थे। थानेदार गालियाँ उगल रहा था। उसकी आँखें आग की तरह धाँय धाँय जल रही थी, मैं तो डर के मारे भीत में चिपक गया था। लेकिन बिरजू तमाशा समझ कर थानेदार और सिपाहियों का घूम घूम कर देख रहा था, बचपन से ही ढीठ है वह।

थानेदार ने गरज कर पूछा था—'दीनदयाल कहाँ है ?

'वे तो गोरखपुर अस्पताल में गये हैं, बड़ा घाव लग गया है उन्हें।'

'कैसे घाव लगा, किसने मारा।' दारोगा तड़प रहा था।

सभी लोग एक-दूसरे का मुँह देख रहे थे। दारोगा ने कइयों को मारा पीटा। मुझसे पूछा, 'बेटे, तेरे बाप कहाँ गए हैं ?' मैं रोने लगा था डर के मारे। थानेदार ने पुचकारा— डर नहीं बेटे, मैं तेरे बाप को पूछ रहा हूँ कहाँ गये हैं ?'

'मुझे नहीं मालूम' और मैं चीखने लगा था। पुलिस को मालूम हो गया कि मेरे बपई ने ही मेरी माई को काटा है और उन्होंने ही दीनदयाल को मारा है उनके पीछे लग गयी। बपई भागते फिरे, हम दोनों भाई अनाथ से हो गये। दोनों भाई सुनसान में एक-दूसरे से लिपट कर रोते थे और रोते रोते सो जाते थे

मेरी बुआ आ गयी थी वे भी बपई के समान ही बड़ी मजबूत काठी की थी। मरद के समान सारा घर सँभाल लिया। बुआ बाद में कहती थी कि उन दिनों बपई रात में आते थे हम लोगों के सो जाने पर कुछ देर हमें निहारते थे, रोते थे, प्यार करते थे फिर रात के अँधेरे में ही गायब हो जाते थे। महीने गुजर गये, बपई पुलिस की पकड़ में न आये।

कहते हैं, बरसात की एक काली रात एक दिन पुलिस की पकड़ में आते-आते दिखे। पुलिस उनके पीछे थी, वे भागे जा रहे थे, पचीसों सिपाही और दारोगा उनका पीछा कर रहे थे। सामने बरसात की हहराती नदी थी उसी में कूद पड़े। दारोगा वगैरह की हिम्मत नहीं हुई कूदने की। वह किनारे खड़ा चिल्ला रहा था, मैं गोली मार दूँगा निकल आओ लेकिन बपई नदी में तरते ही गए। दारोगा ने अन्दाज से निशाना लेकर गोली दाग ही दी ठाँय ठाँय सुनते हैं कि नदी में से एक चीख आयी थी, लोग कहते हैं कि वह बपई की ही चीख थी। लाश तो नहीं मिली लेकिन अन्दाज लगा लिया गया कि वे मर गए।

हाँ, आज माई और बपई दोनों की तसवीरें उभर रही हैं और दीनदयाल की आकृति इन दोनों के बीच आकर खड़ी हो जाती है। दीनदयाल जिनगी भर का कमीना। इसने मेरा घर लूटा है। बपई ने कितनी बार मना किया इसे और माई को। दोनों नहीं माने। एक को गड़ासे से खतम कर दिया, एक का लाठी से सिर फोड़ दिया। कमीना तकदीर का अच्छा था कि बच गया। माई तूने यह क्या किया? माँ के साथ परपुरुष के सम्बन्ध की कल्पना पुत्र के मन को कितनी बेचैन कर सकती है कुंजू खौलने लगा था जब उस पे सारे रहस्य खुले थे।

माई की सूनी सूनी आँखें और कटी हुई गरदन

बूआ दो साल बाद चली गयी। उनका भी घर था बाल बच्चे थे। आखिर कब तक रहतीं यहाँ? कुंजू और बिरजू दोनों बच गए। कुंजू अब कुछ समझने लगा था बचपन से ही वह भावुक था, उसका राग माठा था, नाच गाना देखने का बड़ा शौकीन था जब किसी नाटक में कोई तान गीत सुन लेता तो अलापता फिरता लेकिन घर की जिम्मेदारियों ने उसे खेती बारी सँभालने के लिए भी प्रेरित किया। उसकी थोड़ी सी खेती थी। उससे उसकी बूआ ने उसे परिचित करा दिया था। चौदह साल का कुंजू किसी प्रकार पट्टीदारों की चिरौरी मिनती करके खेत जोता

चोवा लेने लगा। अमरेन्द जी बेचारे कितने सज्जन आदमी हैं, कुजू आज याद कर रहा है। कुजू ने हमेशा अमरेन्द जी की आँखों में अपने प्रति एक व्यथा, एक महानुभूति पायी है। ये भले आदमी शुरू से ही सहायता करते रहे हैं। और भी लोग हैं कुजू तब से ही अपने गीतों में अपने दर्द को डुबाने की कोशिश करता रहा है। अकेला बच्चा खेत खलिहान, घर आँगन सब जगह अपने गीतों को पकड़े हुए अपने सन्नाटे से जूझता रहता। उसके आस-पास घिरे हुए सन्नाटे में उसके गीत और उदासी भर देते जैसे वे गीत अपने को ही सहन नहीं कर पा रहे हैं लोगों ने कहा—यह छोकरा आवारा हो रहा है, बिदेसिया, बटोहिया का गीत गाता घूमता है, काम-काज में इसका मन नहीं लगता। लेकिन कुजू याद करता है कि कितने झूठे ये लोग। वह काम-काज को गीतों से अलग काट कर कोई अलग नाम दे ही नहीं पाता था। हाँ, शायद है वे लोग जो काठ बन कर काम करते हैं और मजूरों से काठ की तरह काम लेते हैं। अनेक चेहरे उभर रहे हैं शायद ही कभी गा सके हों जो शायद ही कभी अपने काम के अलावा और कुछ कर सके हों शायद ही कभी उनकी आँखों में आँसू आये हों, जिन्होंने शायद ही कभी मस्ती से मेलों हटिया की सैर की है, जिन्होंने शायद ही कभी किसी मजूर को समय से पहले छोड़ा हो याद आ रहे हैं ऐसे चेहरे जो लायक हैं और जिन्होंने ढोल पीट पीट कर उसे नालायक सिद्ध कर दिया—कभी तो इन्होंने असहाय बालक के मन में घुमड़ते हुए दरदों को देखा होता। सो कुजू नालायक हो गया।

लेकिन कुजू अपने रास्ते पर था गीले कंठ से फूटते हुए गीतों को साथी बना कर चलता हुआ। कोई कहता तो गा भी देता और गाने के बाद उसकी व्यंग्य भरी मुस्कराहटें भी झेल लेता गालियाँ भी पी लेता बरसायी गयी उपाधियों को ओढ़ लेता और अपने को इन सबके बीच अकेला अनुभव करता गाता हुआ चल पड़ता। उसे शौक था कि

बिरजू पढ़े। बिरजू भाटपार के मदरसे में जाने लगा। दस साल का था मगर चलता तो सीना निकाल कर आँखें तरेरता हुआ और किसी का कोई बात बरदाश्त नहीं करता। छोटी-सी लाठी लेकर पौढ़ता और गाली देकर कहता कि दीनदयाल मौगह साले को लाठी से मार-मार कर एक दिन रास्ते पहुँचा दूंगा। कुंजू उसे मना करता तो डपट पड़ता—अरे भइया तुम क्या बोलते हो बीच में, दुश्मन मेरी माँ को कटवाया है और बबई को दरोगा की गोली से मरवा दिया है (किसान उस गिरा दिया था) इस साले को मैं जिन्दा नहीं छोड़ूँगा। कुंजू परेशान-सा हो जाता यह सोचकर कि दीनदयाल बड़ा महीन हत्यारा है कहीं बिरजू को जल्दी ही मार-मार न लगवा दे। कुंजू ने चाहा कि बिरजू का मन पढ़ने में लगे। बिरजू पढ़ने तो जाता था मगर उसका मन जितना बदमाशियों में लगता उतना पढ़ने में नहीं। लड़कों को लेकर स्कूल जा रहा है तो रास्ते के बगीचे में ही अड्डा जमा दिया और घंटा गुल्ली डंडा का खेल चलता रहा। बहुत देर हो गया तो लड़का के मुंह को लेकर पढ़ने ही नहीं गया और शाम तक भटकता रहा, छुट्टी के समय पर पहुँचा। कभी स्कूल देर से पहुँचा तो पिट गया, कभी किसी विद्यार्थी को क्लास में ही मार बैठा, किसी की कलम छीन ली, किसी की दावात फोड़ दी, किसी की किताब ही गोल कर दी, कभी मानीटर ने मास्टर से उसकी शिकायत की तो मौका निकाल कर उसकी कुटम्मस कर दी। बिरजू को न हिसाब आता, न भाषा आती, रोज रोज पिटता और रास्ते में रोज मास्टर को मन-मन भर गाली देता। एक दिन मास्टर ने उसका अपमान कर दिया। जब बार बार पूछने पर भी बिरजू मानीटर का सही उत्तर नहीं दे सका तो मानीटर ने उसे पुट से ठोक दिया। बिरजू ने न आव देखा न ताव, उठा कर मानीटर को पटक दिया और क्लास में ही उसे रौंदने लगा। मास्टर साहब दूर कुर्सी पर पसरे हुए जाड़े की धूप ले रहे थे। दौड़े हुए आये और बिरजू को उठा कर फिर पटक दिया

और गाली बकने लगे—'साले पढने आये हो। खानदान में किसी ने पढा है? बाप-दादा में से किसी ने स्कूल का मुँह देखा है? महतारी घटियाई में मरी, बाप पुलिस की गोली से मरा, भाई मौगडा की तरह बिदेसिया का गीत गाता फिरता है, और तुम साले पढकर लाट गवर्नर बनने चले हो, जा भाग जा साले कमीने के नाती।' पंडित ने गालियां के साथ उसे छडो से मारा और बिरजू लाल आँखो से मास्टर को घूरता हुआ खडा रहा।

मार खा चुकने के बाद बिरजू ने बस्ता उठाया और एक भयंकर सी गाली मास्टर के मुँह पर थूक कर भाग चला। दूर जाकर चिल्लाया अरे मास्टर साले हरामी, मैंने तुम्हें जूतों से नहीं मारा तो मैं अपने बाप का बेटा नही और फिर भाग चला। और उसी दिन जब मास्टर शाम को घर जा रहे थे तो बिरजू रहर में छँका लगा था एक बडा सा ईंट का टुकडा लेकर। ज्यों ही मास्टर आगे बढे कि तान कर टुकडा दे मारा धम्न लोहू की धार फट चला मास्टर के सिर से। बिरजू भाग चला। मास्टर गाँव में शिकायत लेकर आये किन्तु बिरजू बहुत रात तक घर नही आया। गाँव वाले बिरजू का रंग ढंग देखकर दंग रह गये। इस अनाथ छोकरे की हिमाकत तो देखो, लगता है कि एक दिन यह सारे गाव को परेशान करेगा। कुंजू स्वयं बहुत दुखी था। रात हो गयी बिरजू नही आया तो कुंजू अकेले घर में बैठा रोने लगा। बिरजू के हिस्से की रोटियाँ थाली में पडी-पडी रोती रही। पहले तो वह मास्टर का हाल देख कर बडा गुस्सा हुआ था कि आज बिरजुवा को पीट कर ढेर कर दूंगा, बदमाश के लच्छन नही दीखते मगर जब बिरजू शाम तक घर नहीं आया और धीरे-धीरे अँधेरा गहराने लगा तो कुंजू को चिन्ता हो आयी। क्या करे वह? कहाँ जाय, कहाँ खोजे? उसके दिल से हूल सी उठने लगी। भकक भकक रुलाई आने लगी। क्या मां-बाप के बाद बिरजू भी चला गया। काफी अँधेरा हो गया कुंजू अपने ओसारे में बैठा हुआ अकेला उदास भीगी

आँखो से धीरे धीरे कुहरे से बोझिल हाती गड्ढी को देख रहा था। फिर रोते रोते आँख मूँद कर लेट गया। औंधा लेटा हुआ सिसकियाँ भर रहा था, उसे लगा कोई बुला रहा ह— मइया।' कुजू ने आख उठाई—देखा, बिरजू कुछ ठडक से कुछ भय स सामने खडा काँप रहा ह। बिरजू ने कहा—'मइया, मने कुछ नही किया उस मास्टर साले ने मेरी माई को, बपई को और सात पुस्त को गालियाँ दीं और पीटा, मैंने भी उसे गाली दी और रास्ते म ढले स उसका सिर फोड दिया।'

कुजू झपाटे से उठा तो बिरजू चीख पडा—'मइया मुझे मारो मत, मैंने पहले नहीं मारा, उसने मेरी माई को गाली दी उ उ उसने मेरे कुजू ने उठ कर बिरजू को झपाटे से गोद में कस लिया और रोते हुए स्वर में बोला—'बिरजू, मेरा भाई, तू कहाँ इतनी रात तक भटक रहा था अरे पागल, माई गयी, बपई गये अब तूभी मुझे छोड कर ऐसे भटकेगा तो मेरा कौन होगा? देख चारो ओर अरहर के खेत जगल की तरह झपसे हुए है, जगली जानवर इसमें घूमते ह, तू इतनी रात तक कहाँ रहा रे बावला। कोई जानवर उठा ले जाए रे, और आदमी भी तो जानवर हो गया ह मेरे भाई।' बिरजू बोला 'मैं तो राजा की बारी में बडे ममर के पेड के पीछे छिपा था कि कहीं म घर पहुँचूँ और लोग मारने न लगें और तुम भी न मार बठो' कुज चौंका, उसकी आँखें विस्मय से निकल आयी—राजा की बारी में उस सेमल के पीछे छिपा था। उस पर तो जालिम नट रहता ह, बडा शतान ह साला, एकदम नेटुआ ह। कुजू जसे भय से काँपने लगा।

बिरजू भाई की गोद से अलग हो गया और बाँह पर ताल ठोक कर बोला— मईया उस नट से म बाजूँगा, एक लाठी जमाऊगा तो नट की सारी नटई उसके मुँह में चली जाएगी। कुजू बिरजू के इस साहस का देखकर अवाक् था।

कुजू ने बिरजू का छाती से लगा कर रात भर सुलाया। दोनों एक दूसरे को नयी ममता की गर्मी म गरमाते रहे—सर्दी से लदी

खामोश रात, रात में जसे भटका हुआ एक सूना मकान और उसमें डूबे दो छोटे छोटे बच्चे

कुजू को ऐसी तमाम रातें आज याद आ रही हैं। उन रातो में से कई-कई चेहरे झाँक रहे हैं, उन चेहरा में कहीं दीनदयाल का भी चेहरा और-और कितने चेहरे ह

दोनो भाइ बडे होते गये। चार बीघा खेत उनका आधार था—लेकिन अनुभवहीनता, लोगो की चोरी चमारी, समय से खेत का जुता बुआ न पाना, कितनी बातें ऐसी थी कि ये चार बीघे दो आदमियो को भी नही खिला पाते थे और बाढ तो सबसे ऊपर अच्छी से अच्छी फसल खा जाती थी यह डाइन। दोनो भाई बढते गये कुजू के मन में दिन दिन सूनेपन की वेदना भरती गई और उसका स्वर और दर्दीला होता गया, उसकी आँखा म फसलें एक नयी खूबसूरती से भर जाती मौसम अपना-अपना रंग छोड जाते, मेले हटिए उसके भीतर हहरा कर अंत में एक सूनापन छोड जाते, किसी की व्यथा उसके भीतर तक एक दरार बना जाती और आँखा को तरल। वह अपनी इन कोमलताओ और तरलताओ का लिए दिए चला जा रहा था और लोग उसे मूरख कहते

अड़ुवा कहते, निकम्मा कहते और क्या क्या कहते।

बिरजू पढाई लिखाइ छोड कर अहीरा के साथ अखाडा लडने लगा। गरदन पर धूल लगा कर, मे वाछ मार कर, लाठी लेकर छाती निकाल कर अकडता हुआ चलता, उसकी भूरी भूरी छोटी-छोटी आँखें बरबस पल कर तन जाने की कोशिश करती, वह बडे राव से तडप कर बोलता और बात-बात म झगडा कर लेता और पटक कर मार बठता। कभी कभी फटे गले मे बिरहा अलाप उठता तो कुजू का हँसी आ जाती। किन्तु उसके साथी उसको वाहवाही ठानते।

कुजू उसे बहुत प्यार करता था किन्तु बिरजू का इस तरह इस रास्ते पर जाना उसे अखरने लगा। वह अपने खेता की तो रखवाली

बिरजू का पकड लिया और दीनदयाल न उस मारना चाहा लेकिन खिलाडी बिरज सारे लडको से छूट कर दीनदयाल को हुलिया तग करना चाहता था। काफी लोग जुट आय थे लेकिन बिरजू की गाली के डर से कोई उसे छुडा नही रहा था। कुजू उठा और फिर बिरजू का तीन-चार थप्पड जड दिये। रोष खाया हुआ बिरजू अपने को सँभाल नही सका और अपमान से आहत होकर कुजू को मारने लगा। इस कुकरमी दीनदयाल के आगे मुझे मार कर मेरा अपमान करते हो? देखते नही हो कि इस दोखी साले ने मेरा खानदान नास किया और मेरी सहन की आधी जमीन धोखे से पटवारी से लिखवा कर अपने नाम करा लिया, यह बँगला बनवा लिया कभी फूँक दूगा इस बँगले को। और कर्जे के नाम पर मेरा ताल वाला खेत ले लिया। इसी के सामने मेरा अपमान करते हो? भाई हो नहीं तो हाथ-पाँव तोड देता। अपने तो बस बछिया के ताऊ बने फिरते हो, मुझे भी यही सिखाते हो।

उस दिन कुजू ने समझ लिया कि बिरजू हाथ से गया। इसके दिल में इतनी आग-भरी है कि उसे दबाना किसी के बस की बात नही। अब मेरा भी लाज भय उठ गया उसने मुझे मारा अब रहा ही क्या सील सकोच? अहिरो के साथ—पड कर यह अहिर होता जा रहा है। पता नही क्या होगा हे भगवान! यह जिनगी इसे कहाँ ले जाएगी ?

एक दिन सुबह-सुबह ही हल्ला हुआ कि दीनदयाल के खेत में चोरी हो गयी है—तीन चोर। दो तो भाग गये एक पकडा गया और वह था बिरजू कुजू पहुँचा दीनदयाल के ओसारे में बिरजू के दोनों हाथ पीछे की ओर बँधे हुए थे और वह खँभिया में बाँध दिया गया था। दीनदयाल जसा पानी के स्वभाव वाला आदमी गुस्से में आ-आ कर रह रह कर बिरजू की पीठ पर तीन-तीन लाठी बरसा दिया करता था। दीन दयाल के नपुसक छोकरे भी मौका पा कर उसकी पीठ पर जूते बरसा रहे थे। बिरजू प्रकृतिस्थ भाव से बैठा था। कुजू ने यह दृश्य देखा तो उसकी छाती फट गयी, दहाड उठा—'बिरजू तूने यह क्या किया ?'

बिरजू तडपा—अब राड की तरह रोओ मत, हिम्मत हो तो बदला ले इस पापी से। इसने मुझे झूठमूठ फँसाया है। मैं तो अपने खेत की गश्त लगा रहा था कि इसकी पट्टीदारी के कई लोगों ने मिलकर मुझे पकड लिया और कुछ डाठ उखाड कर बाध लिया और मुझे चोरी लगा दी। छूटने पर बदला लूँगा इन हरामियों का'

कुजू ने प्रश्न भरी मुद्रा में दीनदयाल को देखा—तो दीनदयाल बोले—'वाह रे जवान, चोरी और सोना जोरी। कैसा साफ साफ झूठ बोल कर निकल जा रहा है—पूछिए पट्टीदारी के लोगों से'

पट्टीदारी के लोगों ने बता दिया कि दो और चोरों के साथ यह खेत उखाड रहा था, हम लोग गश्त लगाते आ रहे थे इसे पकड लिया। बसी भी था, इन पकडने वालों में।

'नहीं भइया, यह बसी जो है न, खुद ही नम्बरी चोर है, बडा बजरंगबली बनता है, इसकी गुड्डई निकालूँगा किसी दिन। इसे मैंने एक दिन अमलेन जी का खेत उखाडते पकडा था तो यह मेरे पैरों पडा था—मैंने इसे गाली देकर छोड दिया था। उसी का बदला लिया है इस गुंडे ने। लम्बी टील डौल का बसी जुटी हुई भीड के सामने कहने लगा—'हई देखो हो, झूठी झूठी बात गढने में यह बिरजुआ कितना पेहम (कुशल) निकला है। यह हमें देखेगा साला।' और उसने बढ कर बिरजू की पीठ पर दो लात जमा दी।

कुजू का हृदय फटा जा रहा था क्षोभ से, दुख से और घृणा से। उसकी आँखों के आगे भाई गाव भर की मार खा रहा है और वह कुछ नहीं कर सकता, क्योंकि उसके भाई ने चोरी की है, उसकी इच्छा होती है कि वह मुँह नोच ले दीनदयाल का, बसी का, बिरजू का या अपना, क्या करे वह—वह फटा जा रहा है—बसी के ऊपर गरजता है—रे धनपाल के बेटे, ठीक नहीं होगा। इस तरह घसर घसर मारते जा रहे

हो—' मगर वह किसका किसका हाथ रोके सभी तो एक जस हैं वह फटी हुई आँखों से देखता है। सभी एक अपमान और घृणा से इसकी ओर देखते हैं और कुंजू फटता जा रहा है उसकी आँखों से आँसू बह रहे हैं वह दीनदयाल से चिरौरी करता है—छोड़ दो भइया, ले देकर यही मेरा सहारा है, इसे मत सताओ इसके आगे यहाँ तो मेरे ऊपर दया करो दीनदयाल अपमान से झिड़कते हैं कुंजू रोता है। मगर बिरजू डपटता है 'क्या रोते हो भइया, औरतों की तरह—दम हो तो खोल दो मेरी रस्सी और एक एक साले को समझ लेता हूँ। कभी तो ये हाथ छूटेंगे फिर देखूँगा इस दीनदयाल को, इस धनपाल के साले बसी को और एक एक को ' पुलिस आती है और बिरजू का चालान कर लेती है उसे लात घूसों से मारती है और फिर बाँध कर लेकर चली जाती है। कुंजू को लगता है कि फिर एक बार जीवन की पुरानी घटनाएँ लौट आयी हैं कोई नहीं, कोई नहीं' एक भाई था वह भी गया, माई गयी, बाप गया, एक भाई था वह भी गया, एक-न-एक दिन यों ही चला जाएगा, दूर कहीं बहुत दूर, पुलिस के पंजे में या कहीं और कहीं और फिर एक बार सारा सूना घर कुंजू को निगलने के लिए दहाड़ उठा कौन है इस जिनगी में ? एक भाई था भला या बुरा, वह भी तो नहीं है साथ दर्द और उदासी के एक लम्बे सुनसान में कुंजू भटक गया है। कोई कहीं से नहीं बोलता, आवाजें देता है कोई कहीं से नहीं बोलता, चारों ओर भूतों का भयावनापन है और वह है और अपनी ही पुकारती आवाजें हैं कुंजू रात भर रोता रहा

बिरजू छूट आया, छूटता नहीं तो करता क्या ? पुलिस को रुपये मिलने की कोई उम्मीद तो थी नहीं और मुकदमा चल सके ऐसा कोई मामला भी नहीं था, पुलिस ने उलटे ही दीनदयाल को फाँसा कि क्या तुमने इतनी बेरहमी से बिरजू को मार कर कानून अपने हाथ में लिया

मगर दीनदयाल ने पुलिस का खिला पिला कर अपने को अलग कर लिया ।

कुजू कितना कुछ याद करे यादा के जगल में भटकता हुआ वह केवल दुख, दरद और उदासी ही तो पायेगा फिर

जवानी का कोई साथी न हो तो जवानी पहाड बन जाती है। भाई चोर, वह स्वय निकम्मा, आवारा, गवया ( हा, लोग यही तो कहते हैं उसे ) जगह जमीन कुछ खास नही, और पढ़ाई लिखाई भी नदारद। कोई क्या अपनी बेटी देने लगा ? बरदेखुआ आते है गाँव में, इधर कोई भटक कर भी नही आता इस गाँव में कितने ही तो है जो शादी के लिए मुँह बाये हुए बठे है, कोई शादी आनी है तो खीच तान मच जाती है इधर ता कभी कोई नहीं आया, किसी ने भूले से भी नही पूछा—लोग रास्ते में ही मेरी गरीबी और बडाई की कहानियाँ छट देते होगे और ये कहानियाँ हाडिया के समान उड उड कर बरदेखुआ के अग अग में चिपक जाती होगी और वह उधर स ही चलना बनता होगा। न जाने क्या यह सूनापन उमर बढन के साथ साथ गहरा होता जाता है—पोर-पोर में एक टूटन सी होती है, हवा जसे सूई चुभा जाती है, जब कोई जवान लडकी सामने से गुजरती है तो नाक में तडपती हुई खुशबू कस जाती है और लगता है कि वह खुशबू खून में फल कर पोर-पोर से फूट कर निकलना चाहता है, उसे खुद ही लगता है कि उसका स्वर आजकल और भिठा गया है, उसकी आवाज जैसे बन में तडपती हुई कोयल के गीत का पीछा करती है, बादल देख कर नाचते मोर की आवाज के साथ काँपती है, उसे लगता है कि भिनसार में जो दूर कहीं चतो का गीत उठता है, उसका सारा दद उसकी आवाज म धीरे धीरे रिसता है हाँ, उसकी आवाज में अकेले में पडे हुए बरसात के भरे हुए ताल की हहराहट है जिस पर लोटती हुई हवा दूर दूर तक खो जाती है यह सब क्यो लगता है वह अपनी इन दर्दीली आवाजा

के साथ सूना होता जा रहा है, भीतर से कुछ उठता है, टूटता है, फूटता है और वह थाने को ही घेर लेता है  हे भगवान, कोई तो साथी होता। यह अपना ही गान कितना मारता है मुझे ?

फुलजू पोखर पार बाँसुरी बजाने लगा। उसे लगा कि यह साथ है। खाली बाँसुरी ही उसकी साथिन हो सकती है। यह उसी की तरह रोती है  भी की तरह सोची है, मगर उसी की तरह इस पार से उस पार तक सूना। मगर इसी सूनेपन के भीतर से यह कितना लपकता हुआ स्वर फैलती है  हाँ यही मेरी साथिन है। फुलजू बंसी बजाता और उसे टेरता  लोग कहते—लो अब रही-सही भी हो गयी—साला पूरा गुंडा बन गया है—आगे नाथ न पीछे पगहा—साला और बंसी लेकर घूमता है  साला गा-गा कर लड़कियों को रिझाना चाहता है। उस कमाइन को भगाने के फेर में है  उस गड़रिन के यहाँ बैठता है और उस धोबिन ' उफ, कितना मुश्किल हो गया है जीना इस गाँव में—वह सोचता है।

भरी भरी बरसातें  बहती चौपाई में नंगी देह काँपता हुआ वह मचान पर बैठा बंसी बजा रहा है, भादों की अँधेरी रातों में पानी बरस रहा है, अन्धकार में बंसी की आवाज बिखर रहा  जाड़े से घर घराती पगडंडियों पर, आस से एदा पगला पर बंसी बजा रहा है। फागुन की दूर-दूर तक हहराती, पत्ता को लुटाती, रास्तों को बुहारती, लाल लाल फूलों को दहकाती हवाओं के बीच बंसी बजा रहा है, सारा गाँव आजिज है—साला वक्त बेवक्त बंसी ले लेकर टीं टीं टेरा करता है, लेकिन कमलेश जी अक्सर अपने पास बुला लेते हैं और घंटों उसकी इसी की दरद से भीगी रागिनी पिया करते हैं

मगर करे क्या वह ?

बिरजू भी ऐंठा ऐंठा घूमने लगा। पता नहीं, उसके मन को कौन सी आग दहकाया करती कि उसका चेहरा हमेशा जलता हुआ ही दीखता।

वह कुजू से भी बात करते समय उसी तरह तना रहता लगता, उसके मन में कोई काँटा गड़ गया है जो निकलता नही है उसी में टूट कर कसकता रहता है और आखिर एक दिन वह घाव खुल गयी वह काटा निकल गया तो घाव जोर से फूट चला

एक ताल था जो इन दानो भाइयो के खेत म पड़ता था उसम मछलिया भर जाती थीं बरसात में। जाड़े म खेता के लिए पानी चल चुकने के बाद जब थोड़ा पानी शेष रहता तो लाग एक दिन मछली मारने के लिए टूट पड़ते। और बिरजू लाठी लेकर यहा से वहा तक दौड़ता कि खबरदार फला आदमी का बेटा इसम न घुसने पाए कभी कभी कुजू भी साथ रहता लेकिन कुजू इस व्यवहार स तग आ गया था। मछली है ता खायें सभी लोग। यह लाठी लेकर छटकना और झगड़ा करना यह सब क्या है? मगर बिरजू याद रखता कि किस साले ने आम की फसल में आम उठाते समय उसे टोका था, किसने उसे बल का मॉजा नही दिया था किसने उधार रुपया नही दिया था, किसके घर कौन सी चीज होती है और उसके घर नही भेजी था

ताल म मछला मारी जा रही थी। दीनदयाल का हलवाहा घुस गया तो बिरजू ने लाठी से उसकी कलाई पर इतनी जोर से मारा कि कलाई का हड्डी ही छटक गयी और वह चीखने लगा। बिरजू यहाँ से वहाँ छटक कर गरजने लगा—दीनदयाल के सार आये हैं मछरी खाने, दीनदयलू मछली खायेगा, बटे को नही भेजा हलवाहे को भेजा ' कुजू वहाँ ता कुछ नही बोला लेकिन घर आने पर गुस्सा हो गया और रोष म डाँटने लगा। मगर बिरजू का भयकर रूप दखकर सन्न रह गया। बिरजू चीख कर बोला—चला चला बड आय हो सिखानेवाले हिजड़े कहीं के, खानदान का नाम डुबा दिया। इसी चाल पर तो कोई सादी बियाह नही करता और ऐसे मेरे आगे आकर खड़ हुए हैं कि मेरा भी बियाह नही होता। कुजू डपटा—'अरे बेहया, तुम अपने चोरल्वाई

उसके बाद भी अपनी लड़की देगा, मुझी को अपने रास्ते का रोड़ा समझ रहा है।'

बिरजू बोला—'हाँ हाँ, तुम्हीं रोड़े हो, पूरा जवार जानता है कि तुम निकम्मे और नामरद हो और जब तक बड़े भाई की सादी न हो छोटे भाई की कैसे हो सकती है? न कहो तो दस सादियाँ करके दिखा दूँ।'

बुजू उस दिन और टूट गया। रात भर रोता रहा, उस रात बंसी नहीं बजायी। जिस भाई को छाती से लगा कर बड़ा किया उसके दिल में इतना जहर है उसके लिए, यह आग किसने लगा दी है उसके दिल में

दूसरे दिन बिरजू से बुजू ने कहा—देख भाई मैं तेरे रास्ते में नहीं आऊँगा तू सादी वादी कर ले हाँ मैं तो जनम का अभागा हूँ न खुद सुख पा सका न तुझे दे सका तू सादी कर ले, मैं कुछ बुरा नहीं मानूँगा।'

बिरजू अब कई-कई दिनों तक गायब रहने लगा दूर-दूर तक का चक्कर काटने लगा और एक दिन उसने आकर बताया कि उसकी सादी हो गयी है दूर एक गाँव के पाँड़े की बेटी से। वह सादी करके लौटा है। किसी को पता नहीं चला कि वह पाँड़े कौन हैं, क्या करता है? कहाँ रहता है। मगर सादी हो गयी चुपके-चुपके। लोगों ने हल्ला किया कि वह भी उधर का कोई नामी चोर है और उसकी लड़की को कोई भयानक दोष है, शायद कानी है, शायद लंगड़ी है

मगर सादी हो गयी और एक दिन बिरजू अपनी बीवी को बिदा करके ले आया तो लोगों को मालूम हुआ कि वह एक सुंदर और तन्दुरुस्त लड़की है।

बिरजू जैसे लंका जीत आया हो, दीनदयाल को देखता तो गुर्रा कर देखता मानो कह रहा हो, देख दिनदयाला, तू सारा बियाह

मारता हो रह गया, मैं सादी कर आया। कुजू के खाने की समस्या तो हल हुई लेकिन उसकी आजादी छिन गयी।

कुजू अब अधिक से अधिक बाहर रहने लगा—उस खडहर में कहा वह रहे, कहा भयहु? लोग कहने लगे कि कुजू को अब घर नही सुहाता। बिरजू सादी कर आया ह तो उसकी छाती पर साँप लोटता ह, उसे घर अच्छा नही लगता। इसलिए बाहर-बाहर घूमता है। कोई कहता—नहीं रे, वह किसी भी गन्दी हाडी में मुँह डालने की फिराक में ह, वह घूम घूम कर छोटी जातियो की लडकिया को खोजता है ' कुजू सुनता और घायल होकर रह जाता—उसे लगता कि उसका हृदय म मुच किसी को खाज रहा ह, बडा अकेलापन महसूस करता है लेकिन किसे अपने साथ ले ? कोई भी नहा उसे मिलता और ये गाँव वाले व्यथ मे उसे बदनाम करत ह । खेत काटे जा रहे है, बोझे ढोये जा रहे ह, एक गुनगुनी खुशबू खेतो म फैली हुई ह, शाम गहरा रही है, फागुन की शाम, धीरे धीरे चाद फूट रहा ह और कुछ फूट रहा ह कुजू के हृदय में बाथें अभी बाकी ह, कुजू अपने खेत में खडा मजूरिना के सिर पर बोझें उठा रहा ह खाली होने पर बसी बजाता ह, बसी मानो दूर-दूर तक रोती हुई खो जाती है एक गडेरिन है जिसका भरा भरा मन कुजू में धँस जाना चाहता ह कुंजू उसके सिर पर बोझा उठाता ह तो उस जाने कैसा-कैसा होने लगता ह और वह गडेरिन भी जानबूझ कर बोझा गिराती ह और कुजू को ही डाँटती ह—जसे हो कुजू बाबू अपना हाथ सँभाल नही पाते, और मटकती हुई बोझा लिए चली जाती ह। वह हर बार कुजू की नसो में एक तपती हुई धडकन छोड जाती ह और जब रगें अधिक खौलने लगती ह तो वह जोर-जोर से बसी बजाने लगता ह वह गडरिन जान-बूझ कर और मजूरिना से थोडा आगे-पीछे हो जाती ह और होते होते अत में वह कुछ इस तरह बोझें को

उल्टे पुल्टे भाव से सिर पर लेता है कि बोझा पीछे गिर गया। कुजू बेसंभाल होकर उस गडेरिन के ऊपर। कुजू पहली बार अनुभव करता है कि नारी स्पर्श में कितना नशा है। वह ववस होकर भी धीरे धीरे उठ जाता है और डाँटता है उस गडरिन को कि क्या करती है, ठीक से बोझा लेती ही नहीं। मगर गडेरिन मुस्कराकर उल्टे डाँट बठती है—वाह हमीं को डाँटते हैं। बोझा देने का शहूर खुद को तो है नहीं, हमीं को दोष दे रहे हैं। बोझा उठाने हैं जस हमीं को उठा लेंगे'

कुजू न देखा कि उस गडेरिन की आँखों में कहने को बहुत कुछ है मगर वह अभागा कुजू ही था जो समझ नहीं पा रहा था और जब तक कुछ समझे वह चली गयी है। वह इस गाँव की पहली थी और तब से उसे लगा कि वह सचमुच किसी की खोज में है, मन भटक रहा है गाँव वाले ठीक कह रहे हैं, मुझे अपने भाई की शादी में क्यों दुःख हो, मगर आजादी छिन गयी और

बिरजू कहीं भटक गया था, महीना तक नहीं आया और जब आया तो आगबबूला हो गया। गाँव वालों ने न जाने क्या-क्या कह दिया कि वह भूल बहक गया, एक दिन बात बात में लड़ बठा और उसने जो लाछन लगाया उसमें तो कुजू घायल हो गया।

'नखड़ा करते हो जब मैं घर पर होता हूँ तो बाहर बाहर घूमते हो और जब मैं बाहर होता हूँ तो घर में बठकर बाँसुरी बजाते हो, घर ही में फन्दा फलाते हो'

दरद से कुजू तिलमिला गया, उसकी इच्छा हुई कि इस अभागे मूरख को जिन्दा भून दूँ, इतना बड़ा कलंक लगा रहा है यह कमीना मगर वह जानता था कि बिरजू बेमान हो गया है झगड़ा और मार पीट कर बठेगा। कुजू दरद से रुधे हुए गले से बोला—'बिरजू तू क्या से क्या होता जा रहा है। तेरे दिल में सन्देह का जहर इतना फल गया है कि मुझी पर अविश्वास करने लगा तू नहीं होता है तो क्या उसे

अकेली छोड़ कर म दूर-दूर भटकता फिरूँ ? गाँव का रंग-ढंग देखते हो कुछ हो हवा जाय तो तू ही कहेगा कि साँड के समान भाई घर पर था और घर में भला-बुरा हो गया। तुझे गाँव वालों ने बहका दिया और तू मुझी पर टूट पड़ा। अपनी बहू से भी तो पूछ लिया होता। वमो तो मेरी जिन्दगी हो गयी है वह किसी के फमान के लिए नहीं है पागल, अपने को भुलाने के लिए है। कुजू की आँखें भर आइ लेकिन बिरजू वहाँ से गरजता हुआ चला गया—मैं सब समझता हूँ, सबको समझता हूँ उस छिनार साली से क्या पूछूँ ? उसे भी समझता हूँ।'

कुजू के सामने जिन्दगी कुछ उलझ गयी उसका अकेलापन बाहर और घर दोनों से कट कर किसी का नहीं रहा

और अब बिरजू काले पानी की सजा भोग रहा है। बाहर बस्ती में गया था वहाँ किसी का खून कर दिया पकड़ा गया और सजा हो गयी।

कुजू को लगा जसे बिरजू इसी दिन के लिए पैदा हुआ था मगर वह उसकी बातों का क्या करता ? पाँच साल, ■ साल, आठ साल और न जाने कितने साल लग सकते हैं। क्या करे वह इस औरत का जिसके पीछे उसकी बदनामी हो चुकी है।

दिन बीते, महीने बीते, कुजू को सारा जिन्दगी कटे हुए खेत सी लगती, जिसमें वह घूम भी नहीं सकता क्योंकि एक धरोहर है भाई की और कुजू को लगा कि उसकी भयः उसके प्रति बड़ी सहानुभूतिशील होती जा रही है कुजू जब कभी उदास मन से बिरजू की बात करता तो वह कहती—'आ जाने दीजिए भाई जी, उस मरदुआ ने तो सारे जवार में अपनी नाक कटा रखी है ऐसे चोर चाइ मरद से तो बेमरद की ही भली।'

उलटे पुल्टे भाव से सिर पर स्ता ह कि बोझा पीछे गिर ाता ह कुजू बेसभाल होकर उस गडेरिन के ऊपर। कुंजू पहली बार अनुभव करता ह कि नारी स्पर्श में कितना नशा ह। वह ववस होकर भी धीरे धीरे उठ जाता ह और डाँटता है उस गडरिन को कि क्या करती ह, ठाक स बोझा ल्ेनी ही नही। मगर गडेरिन मुस्कराकर उलटे डाँट बताती ह—वाह हमी को डाँटते हैं। बोझा देने का सहूर खुद को तो ह नही, हमी को दोष दे रहे हैं। बोझा उठाने हं जैसे हमी का उठा लेंग '

कुजू ने देखा कि उस गडेरिन की आँखों म कहने का बहुत कुछ ह मगर यह अभागा कुजू ही था जो समझ नही पा रहा था और जब तक कुछ समने वह चली गयी ह। वह इस गाँव की पहुना थी और तब से उसे लगा कि वह सचमुच किसी की खोज में ह, मन भटक रहा ह गाँव वाले ठीक कह रहे ह, मुझे अपने भाई की शादी में क्या दु ख हो मगर आजादी छिन गयी और

बिरजू कही भटक गया था, महीनो तक नही आया और जब आया तो आगबबूला हो गया। गाँव वालो ने न जाने क्या-क्या कह दिया कि वह मूग बहक गया, एक दिन बात-बात में लड बठा और उसने जो लाछन लगाया उससे तो कुजू घायल हो गया।

'झगडा करते हो जब म घर पर होता हूँ तो बाहर बाहर घूमते हो और जब म बाहर होता हूँ तो घर म बठ कर बाँसुरी बजाते हो, घर ही में फदा फलाते हो '

दरद से कुजू तिलमिला गया, उसकी इच्छा हुई कि इस अभागे मूरख को जिन्दा भून दूँ इतना बडा कलंक लगा रहा ह यह नमोना मगर वह जानता था कि बिरजू बेमान हो गया ह झपटा और मार पीट कर बठेगा। कुजू दरद से रुंधे हुए गले से बोला— बिरजू तू क्या से क्या होता जा रहा ह। तेरे दिल म सन्देह का जहर इतना फल गया ह कि मुझी पर अविश्वास करने लगा तू नही होता ह तो क्या उसे

अकेली छोड़ घर में दूर-दूर भटकता फिरूँ ? गाँव का रंग-ढंग देखते हो, कुछ हो हुआ जाय तो तू ही कहेगा कि साँड के समान भाई घर पर था और घर में भला-बुरा हो गया। तुझे गाँव वालों ने बहका दिया और तू मुझी पर टूट पड़ा। अपनी बहू से भी तो पूछ लिया होता। क्यों तो मेरी जिन्दगी हो गयी है वह किसी को फँसाने के लिए नहीं है पागल, अपने को भुलाने के लिए है।' कुंजू की आँखें भर आई लेकिन बिरजू वहाँ से गरजता हुआ चला गया—मैं सब समझता हूँ, सबको समझता हूँ उस छिनार माली से क्या पूछूँ ? उसे भी समझता हूँ।'

कुंजू के सामने जिन्दगी कुछ उलझ गयी, उसका अकेलापन बाहर और घर दोनों से कट कर किसी का नहीं रहा

और अब बिरजू काले पानी की सजा भोग रहा है। बाहर डकैती में गया था वहाँ किसी का खून कर दिया पकड़ गया और सजा हो गयी।

कुंजू को लगा जैसे बिरजू इसी दिन के लिए पैदा हुआ था मगर वह उसकी बाधी का क्या करता ? पाँच साल, ■ साल, आठ साल और न जाने कितने साल लग सकते हैं। क्या करे वह इस औरत का जिसके पीछे उसकी बदनामी हो चुकी है।

दिन बीते, महीने बीते, कुंजू को सारी जिन्दगी कटे हुए खेत सी लगती, जिसमें वह घूम भी नहीं सकता क्योंकि एक धरोहर है भाई की और कुंजू को लगा कि उसकी भयहु उसके प्रति बड़ी सहानुभूतिशील होती आ रही है कुंजू जब कभी उदास मन से बिरजू की बात करता तो वह कहती—आ जाने दीजिए भाई जी, उस मरदुआ ने तो सारे जवार में-अपनी नाक कटा रखी है ऐसे चोर-चाइ मरद से तो बेमरद की ही भली।

कुजू डांटता—'क्या कहती हो बहू, ऐसा कही कहते हैं अपने मरद को। और—और वह मेरा भाई भी तो है, नालायक है तो क्या ?'

'क्यो न कहूँ,' बहू झिझक कर बोलती—'कौन सा सुख दिया है उसने मुझे, जब से आयी तब से यही तो सुनती हूँ—आज यहाँ चोरी की, कल वहाँ आग लगाई, कभी भी चैन से मैं उसके मारे बठने नहीं पाती। और उसने आप जसे सोने से भाई पर हाथ उठाया और भला बुरा कहा, उसकी जबान कट कर गिर नहीं गयी। 'जसे कन्ता घर रहें वैसे रहें विदेस ' बहू पति के सोच में गलने की जगह दिन दिन सिंगार करने लगी। कुजू ने देखा तो सोचा—कुछ यों ही है। वह कुजू को देखकर मुसकराने भी लगी—सोचा यों ही है। वह कुजू से जान-बूझ कर बातें करने लगी सोचा—यों ही है। आह वसन्त की चाँदनी रात कुजू बठा-बठा चैता की एक तान बाँसुरी से अलाप रहा था, बहू थोडी दूर बठी सुन रही थी। बजा चुका तो बोला—बहू, खाना दो तो खलिहान जाऊँ। बहू ने कहा जल्दी क्या है जरा और बजाइए न, बड़ा अच्छा लग रहा है।' 'नही बहू' कुजू बोला, 'देर हो रही है, खलिहान में जानवर आकर खा जायेंगे।'

बहू ने खाना परस दिया। कुजू खाने लगा तो बोला—आज बिरजू होता तो घर और बाहर की चिन्ता नही न होती।

बहू ने आज बडी-सी चमकदार टिकुली लगायी थी और काफी माथा उघाड लिया था। बोली—फिर आप वही रोना ले बठे।' कुजू ने जो उसकी ओर आँख उठायी तो उसकी टिकुली आँखों में चमक से चमक उठी जैसे साँप की कनपटी पर कौड़ी चिपकी हो और चाँदनी में उसका गोरा-गोरा फूला मुँह बग से बर गया।

कुंजू खा कर जाने को हुआ तो बहू ने कहा—मैं कहती हूँ आज खलिहान न जाते।

'क्यों ?' कुंजू ने कहा

वह थोड़ा मुसकराई और उधर को थोड़ा मुँह फेर कर बोली—'अकेले डर लगता है।'

'हां, डर तो लगता होगा बहू इस खंडहर में, फिर भी क्या किया जाए। खलिहान में लच्छिमी पड़ी हुई है और गाँव का रंग ढंग ऐसा'

'खलिहान की लच्छिमी की फिकर है आपको और घर की लच्छिमी की फिकर नहीं है? वह भी तो अकेले घर में पड़ी हुई है और गाँव का रंग-ढंग ऐसा कि' वह फिर एक अजीब हँसी मुसकराई।

'सो तो ठीक है बहू, लेकिन खलिहान की लच्छिमी नहीं होगी तो घर की लच्छिमी को क्या खिलाऊँगा? इसीलिए कहता हूँ कि आज भाई होता तो यह दुर्दशा तो न होती।'

'क्या भाई भाई किये रहते हैं अब तो आप ही मेरे सब कुछ हैं।

'क्या ?' कुंजू एक बार चौंक कर तड़प सा उठा।

'हाँ आप ही सब कुछ हैं।' वह मन्द मन्द मुसकरा रही थी। कुंजू की नस-नस झनझनाने सी लगी, उसका सिर चकराने लगा—क्या कह रही है यह औरत? क्या मतलब है इसका? मगर कुंजू बाहर से शान्त रहा।

कुंजू चलने को हुआ तो वह सामने आ गयी—मैं कहती हूँ आज नहीं जायेंगे तो क्या हो जाएगा। आखिर कुछ मेरा भी तो ख्याल होना चाहिए मैं भूत सी अकेली रहती हूँ इस खंडहर में न कोई आगे न पीछे, आप आज नहीं जायेंगे तो क्या हो जाएगा?'

कुंजू ने अनुभव किया कि वह जोर-जोर से साँस ले रही है वह इतनी करीब है कि उसकी गरम साँसें मुँह पर जलती रेखाएँ बनाती भीतर तक समा जा रही हैं उसे उस पहली गडेरिन की याद आ गयी, उसकी भी साँसें इसी प्रकार की थीं। इन साँसों की भी भाषा वैसी ही

कुजू ने कहा—'बहू यहाँ अकेले तुम्हारा मन नहीं लगता। चाहता हूँ कि तुम कुछ दिन नइहर हो आओ तब तक बिरजू भी आ जाएगा और तुम्हारा मन भी वहाँ दुकेला हो जाएगा।'

कुजू ने सन्देश भेज दिया और बहू का भाई आकर बहू को ले गया फिर कुजू और उसका अकेलापन गाँव में चर्चा थी कि कुजू ने बहू को घर से खदेड़ दिया

और फिर इतने दिनों बाद उसके अकेलेपन में आग लग गयी। पर साल की दशहरे के मेले की घटना, बदमी का डूबना और उसका बचाना और और सभी उसकी जिन्दगी में आकर फिर एक घाव जगा गए। इस एक साल के जीवन में वह बन्नो से अक्सर मिलता रहा लेकिन आँखों आँखों में ही जैसे सारी बातें समायी हुई थीं, कभी मुसकराहटों में, कभी मजाकों में बदमी उसके दिल के छिपे हुए दरदों को परखती रही, शायद उसके भीतर भी कुछ था जिसे कहने में शायद डरती थी और एक साल इसी प्रकार आँखों आँखों में ही बीत गया। फिर भी गाँव में उनके सम्बन्धों की बात छिपी नहीं रही, लोग तरह तरह की बातें करने लगे। और आज आज जैसे साल भर का रुका हुआ पानी—बाँध तोड़कर बह चला। तो बदमी मुझे प्यार करती है और मैं मुझे भी लगता है कि मेरे भीतर एक सताया हुआ दरद है जो उसके दरद से बहुत करीब है और एक भूख है जो उसकी भूख के बहुत करीब है। मैं उसे प्यार करता हूँ, हाँ एक बामन एक कहाइन को प्यार करता है, दुनिया को अच्छा नहीं लगेगा, मत लगे, दुनिया को मेरी कौन-सी चीज अच्छी लगती है? हाँ, एक बामन एक कहाइन को प्यार करता है। बामन नहीं एक सताया हुआ दिल एक सताए हुए दिल को प्यार करता है, वह करेगा प्यार, उसे प्यार चाहिए और उसके भीतर जो जिन्दगी रुकी पड़ी है उसे किसी को देनी चाहिए वह देगा देगा उसे लगा कि उसके रोयें-रोयें में बदमी की देह की

गंध समा रही है हरसिंगार की महक फिर भक्क से खुली और कुजू के मन पर छा गयी

और जब दानदयाल के हलवाहे ने कुएँ से पानी भरना शुरू किया तो कुजू का होश आया कि रात ढल रही है। हाँ, उसे भी बैल को सानी पानी देना है, सवेरे ही ताल की कड़ी जमीन में गेहूँ बोना है, देर होने से जमीन की तरी सूख जाएगी। वह उठा और बैल का सानी-पानी देने में जुट गया।



## : २२ :

आज भाटपार हाई स्कूल के कार्यकारिणी के सदस्यों की सभा थी। समय था दस बजे, होते-हवाते तीन बजे लोग जुटे। दीनदयाल इसके सभापति थे और भाटपार का लालमणि मन्त्री था। शेष सदस्यों में रामकुमार, बाबू महीपसिंह, जग्गूराम हरिजन, सतीश और आस-पास के गाँवों के कुछ और लोग। बाबू महीपसिंह से निवेदन किया गया था कि वे इसके सभापति बनें लेकिन कुछ कारणों से इनकार कर गये और केवल सदस्य रहना ही मंजूर कर सके।

आज की कार्यकारिणी की बहस का विषय था—स्कूल के लिए पैसा कहाँ से लाया जाए? मास्टरों की तनख्वाह की व्यवस्था कैसे की जाए?

रामकुमार ने बड़े व्यंग्य से अपनी पुरानी बात दुहरा दी—'मैं तो पहले ही कह रहा था कि यह स्कूल नहीं चलेगा और खास करके जब इसके मन्त्री महोदय बड़ी ही आज़ाद तबियत के आदमी हों।'

सतीश बोला—'भाई रामकुमार, कोई नया सुझाव दो, तुम्हारी यह बात सुनते-सुनते तो हम लोग तंग आ गए हैं।'

लालमणि व्यंग्य से मुसकराया—वो उसकी मुसकान रामकुमार को गड़ गयी। वह समझ गया कि लालमणि क्या कहना चाहता है। फिर बोला—'बात पुरानी हो या नयी, है सही—जब तक इस संस्था के मन्त्री महोदय अपनी मनमानी करते रहेंगे तब तक दूसरा रास्ता नहीं निकल सकता है। जिसे चाहते हैं भर लेते हैं, जिसे चाहते हैं निकाल देते हैं या उसे ऐसा तंग करते हैं कि उसे निकल जाना पड़ता है। जो आदमी इनके मन के मुताबिक नहीं काम करता या जिससे ये डरते

ह उसे निकाल फेंकते है और तनखाहें मार लेते है पता नहीं चलता यह सब क्या हो रहा ह और जब तक यह सब है

लालमणि फिर मुसकराया, बोला—'तो रामकुमार भाई आप ही यह पद सँभालिए, मुझे इसका कोई लाभ नहीं ह। यह स्कूल चलना रहे, बस मुझे इतना ही चाहिए आप ही सारी व्यवस्था सँभालिए

हाँ हाँ रामकुमार ही सँभालें

रामकुमार बोला—'लालमणि जी जानते हैं कि मैं कस्बे के स्कूल म नौकरी करता हूँ, यह काम नहीं सँभाल सकता, इसीलिए यह काम ऊपरी मन से मेरे ऊपर थाप रहे हैं। किसी और का यह काम क्यों नहीं देते ?'

'हाँ हाँ कोई भी यह कार्य ले ले मगर सच बात तो यह ह राम-कुमार जी कि आप चाहते ही नहीं कि यह स्कूल चले क्योंकि कापी लडके आप के कस्बे वाले स्कूल मे न जाकर यहाँ खिच आते है। वहा बनियों का स्कूल है और पैसे देनेवाले बनिये ह आपको अच्छी नियमित तनखाह मिलती ह इसलिए आप चाहते ह कि यह स्कूल टूट जाए '

रामकुमार झल्ला गया—'तो आप मुझे बनिया का एजेंट समझते ह ? क्या मुझे अपने जर-जवार के हित से दूसरा का हित प्यारा है ? ऐसा लाछन तो वही लगा सकता ह जो '

बात काट कर लालमणि बोला—'माफ कीजिए रामकुमार जी, यह बात तो आपने ही कई बार कही है। यदि आपको गाँव की मिट्टी स बडा प्रेम है तो आ जाइए इस स्कूल में। हमें हेडमास्टर की बड़ी जरूरत ह और जहा तक मेरा सवाल है मैं हट जाता हूँ किसी और को मन्त्री बना लीजिए।

'हाँ-हाँ,' दानदयाल हँस कर बोले—'आ जाओ भाई, दूसरों को दोष देने से क्या फायदा ? यह स्कूल चलना चाहिए बस और क्या ?'

रामकुमार दीनदयाल की सीधी बात में भी व्यंग्य पा लेता था, उसे दीनदयाल की हंसी कुछ अखरी। बोला—'हां-हां क्या न आ जाऊं जिस संस्था के सभापति आप हो, मंत्री लालमणि जी हो, जिसके मास्टरों की तनखाह तीन-तीन महीने से बाकी हो वहां क्यों न आ जाऊं? मुझे पागल कुत्ते ने काटा है न, कि जमी-जमाई नौकरी छोड़ कर चला आऊं। आप चाहते हैं कि हमारी रोजी रोटी छिन जाए और बस आप ही इस गांव में खुशहाल रहें, औरों पर धाक जमाने के लिए।'

संतोष जरा तेज स्वर में बोला—'रामकुमार, तुम हमेशा किसी चीज को सीधे ढंग से न देख कर टेढ़े ढंग से देखते हो। हम यहां मिले हैं स्कूल के हित के बारे सोचने और उतर आये व्यक्तिगत कहासुनी पर।'

'यह तो इनकी शुरू से ही आदत है न जाने क्यों? हमेशा आग भर कर ही बोलते हैं। न खुद चलते न चलने देंगे।

छोड़िए दीनदयाल जी इन बातों को, बताइए क्या किया जाए स्कूल को शक्तिशाली करने के लिए?

लालमणि बोला—देखिए, यह स्कूल का तीसरा साल है। हर साल दसहरे में हम लोग अनाज वसूलते हैं, उससे कुछ रकम इकट्ठी हो जाती है कुछ फीसफास आ जाती है लेकिन इतना ही धन काफी नहीं है। हम लोग बाहर भी चन्दा मांगने के लिए निकलें। रंगून, कलकत्ता, बम्बई, अहमदाबाद में जो लोग भी इस जवार के उनके पास जाया जाए या कुछ खास खास लोगों के पास रसीदें भेज दी जाएं वे वहां से पैसे इकट्ठा करके भेज दें और जल्दी से जल्दी इसे सरकारी ग्रांड दिलाने की कोशिश होनी चाहिए। भाई रामकुमार तो कब से कह रहे हैं कि लखनऊ के बहुत से मिनिस्टरों से इनकी जान पहचान है, ये करेंगे और वो करेंगे लेकिन अभी तक कुछ किया नहीं, दो साल बीत गये

रामकुमार बोला—हाँ, मैंने कहा तो है लेकिन देख रहा हूँ आपका रंग ढंग कि आप इस संस्था पर अपना एक छत्र शासन समझने लगे हैं, और मैं आपके शासन के लिए सरकारी एड दिलाने की मजना नहीं करूँगा। पहले समझा था कि इसे ठीक ढंग से चलाएँगे आप, लेकिन आप '

'फिर वही बात !' सतीश बोला—ये सारी उल्टी-पुल्टी बातें करने की जगह पर अगर हम कोई ठोस काम कर पाते तो स्कूल का भला होता, मगर बात कहाँ से कहाँ पहुँचा दी जा रही है।'

'यही तो' कहकर दीनदयाल मुस्कराये।

'क्या यही तो', तो आप ही कोई ठोस बात सुझाइए। पचीस रुपये देकर सभापति बन बैठे हैं, समझते हैं कि जागीर कलकत्ते की दुनियाँ हो गयी। आपके घर के लोग वहाँ में हैं। लीजिए पहले आप ही यह काम शुरू कीजिए, रसीद लीजिए और भेज दीजिए अपने भाई को। कहिए पाँच हजार रुपया जमा कर भेजें। वहाँ में तो बहुत से अपने यहाँ के लोग हैं और वहाँ पैसा की क्या कमी ? पैसा कमाने के वहाँ बहुत से तरीके अपना रखे हैं लोगों ने ' इतना कहकर रामकुमार ने सालमनि से कहा—'निकालिए रसीद बहियाँ और दीजिए दीनदयाल चाचा को।

दीनदयाल एक बार आहत हो गए। अपना बगुला-सा सफेद धड़ सा ऊपर उठा कर सिर खुजलाया और फिर बोले—वहाँ में कमाने के तरीके चाहे जितने भी हों लेकिन उतने नहीं जितने सोसलिस्ट बनने वालों के पैंतरे। दूसरे का पैसा दूसरा की आँख में गड़े तो इसके लिए कोई इलाज नहीं है। बात रही रसीद बहियाँ भेजने की सो लाइए भेज देता हूँ, लेकिन कितने पैसे वहाँ इकट्ठे हो सकते हैं इसकी गारंटी कैसे दी जा सकती है? और हाँ एक बात और कि वहाँ ही क्या ? आस पास के जो कस्बे हैं, शहर हैं, वहाँ से भी पैसे इकट्ठे किये जाएँ।

रामकुमार जी का बड़ा जोर है कस्बे में और गोरखपुर में भी। इस पुण्यकाम में रामकुमार भी क्यों पीछे रहें, इन्हें भी ढाई-तीन हजार रुपए का रसीद बहियाँ दीजिये और एक बात और कि रामकुमार चाहें तो कस्बे से यहाँ हेडमास्टर बन कर आ जाएँ, हमें हेडमास्टर की बड़ी आवश्यकता है और कस्बे की अपेक्षा यहाँ बीस तीस कम भी मिले तो क्या हुआ यह तो अपनी जमीन है न, अपनी मातभूमि। अपनी *मातभूमि के लिए तो थोड़ा बलिदान देना ही पड़ता है।'* दीनदयाल चश्मे के भीतर से दहकती आशा से देखने लगे। अब बोलो बड़ा रामकुमार, अब बोलो।

रामकुमार बोला—'हाँ, मैं कस्बे से चला आता हूँ। आप अपने भाइयों को बता दो बुला लीजिए और उनसे कहिए कि इस स्कूल के लिए श्रमदान दें, बुद्धिदान दें, प्रचार करें, आप भूखों मरिए तो मैं भी तैयार हूँ भूखा मरने के लिए—'

सतीश से अब नहीं रहा गया, गुस्से में आ गया—उसकी देह गुस्से में काँपने लगी—'इसीलिए यह मीटिंग बुलाई गया है? आप लोगों के व्यक्तिगत झगड़ों को सुनने के लिए हम लोग समय बरबाद करने आये हैं? तो यह लीजिए मैं चला।' और उसने सामने का कागज पत्र उठा कर फेंक दिया। उठ खड़ा हुआ।

लालमणि ने सतीश की बाँह पकड़ ली, भाई साहब रुकिए—'अरे यह तो सब होता ही है जहाँ चार आदमी बैठते हैं। इसी के बीच से कोई रास्ता निकल आता है, देखिए निकला न। दीनदयाल चाचा कुछ रसीदें बम्बा भेज रहे हैं और कुछ रसीदें रामकुमार भाई कस्बे ले जायेंगे कुछ मैं बम्बई अहमदाबाद भेज रहा हूँ जहाँ कुछ मेरे सहयोगी लोग हैं। मुझे विश्वास है कि कुछ न कुछ जरूर हो जाएगा। दूसरी बात यह कि *अब स्कूल का अपना कोई मकान होना चाहिए, अभी तक तो हम लोग* अस्थायी तौर पर इस झोपड़ी में गुजारा कर रहे हैं अब मकान बन

जाना चाहिए। कुछ कताई-बुनाई के सामान भी लाने हैं, बोलिए इसके सम्बन्ध में क्या सोचते हैं आप लोग ?

जग्गू हरिजन बहुत देर से इस विवाद में चुप थे जैसे कुछ समझ नहीं पा रहे थे बोले—'स्कूल सबका है, हम हरिजन लोग अगर पैसा रुपया नहीं दे सकते हैं तो मिहनत तो दे सकते हैं न। इस जवार में तरह-तरह के हुनर वाले कारीगर हैं, मजूर हैं उन सबका फरज है कि वे लोग स्कूल का मकान बनाने में मदद दें। मैं इस मामले में पिकेटिंग करूँगा। मुझे विश्वास है कि यह काम हो जाएगा एक बार फिर झंडा उठाऊँगा।'

'बहुत ठीक, बहुत ठीक', सब लोग बोल उठे। हां देखो कैसी साफ बात की है जग्गू ने बिना लाग लपेट की। अगर यहां के मजूरों की सहायता मिल जाए तो बहुत काम बन सकता है मगर क्या सब मजूर तैयार हो सकेंगे!

कोशिश करके देखता हूँ यह तो जग्य है, सबको इसमें आहुति डालनी चाहिए। बाबा लोगो, मजूरे किसी से पीछे नहीं रहेंगे, यह विश्वास मानिए।

तो फिर बाँस लकड़ी वगैरह गाँव गाँव से माँगी जाए। ईंट पाथने वाले ईंटा पाथें, खपड़ा पाथने वाले खपड़ा पाथ दें, थपई दीवारें चुन दें और इसी प्रकार सभी लोग अपना अपना काम कर दें तो रोना ही काहे को रहे। सबके लड़के पढ़ेंगे, यह सबकी चीज है कोई किसी से पीछे क्या रहे ?

रामकुमार ने फिर आश्वासन दिया कि वह नेताओं से मिल कर स्कूल को रेकागनाइज्ड करा लेगा। लालमणि मुसकरा कर बोला—'हाँ भाई, इसे करा ही दीजिए आपका तो बहुत भरोसा है। यों यह काम होने से नहीं रहेगा।'

अब दूसरा सवाल था कि अस्थायी हेडमास्टर उमाकान्त पाठक को रखा जाए कि नहीं। लालमणि ने इसके अनेक दोष कार्यकारिणी के सामने रखे—'पहली बात तो यह कि अभी तक यह स्कूल रिकग्नाइज्ड नहीं है तो फिर इतना क्वालिफाइड आदमी को इतनी बड़ी तनख्वाह देकर क्यों रखा जाए ? जब रिकग्नाइज्ड हो जाएगा तो हम फिर कोई बी० ए०, बी० टी० ढूंढ लेंगे। दूसरी बात यह है कि पाठक जी एम० ए० की तैयारी कर रहे हैं, ज्यादा समय अपनी पढ़ाई में खर्च करते हैं और लड़कों की पढ़ाई पर कम ध्यान देते हैं। मैंने कहा कि मैट्रिक के लड़कों को बुलाकर रात को भी पढ़ाया जाए तो वे विरोध करने लगे कि यह कायदे के खिलाफ है। कायदे के खिलाफ तो है इसे कौन नहीं जानता है, लेकिन हमारे इस स्कूल में कौन कायदा-कानून देखने आता है ? सबसे बड़ी चीज है अपने विद्यार्थियों को पास कराना, स्कूल का नाम उजागर करना ताकि दूर दूर के भी लड़के आयें लेकिन ये सुनते ही नहीं। दूसरी बात यह भी है कि ये एम० ए० पास करने के बाद चले जायेंगे। जब हमें इनकी आवश्यकता नहीं है तो हम इन्हें लम्बी तनख्वाह देकर रखे हुए हैं, जब आवश्यकता होगी तो ये निकल जायेंगे। फिर अभी से इन्हें क्यों नहीं हटा दिया जाए ? तीसरी बात यह है कि हमारा स्कूल समृद्ध तो है नहीं कि नियमित रूप से तनख्वाह दे सके और ये हैं जो कायदे के अनुसार हर महीने-महीने तनख्वाह माँगते हैं इसीलिए कचकच मची रहती है'

रामकुमार बोला—'और एक बात और जोड़ दीजिए कि ये आपका आधिपत्य स्वीकार नहीं करते, इसलिए आपके अहं को ठेस लगती है। आप तो कोई कठपुतली चाहते हैं।'

लालमणि थोड़ा उग्र हो गया—आपको सभा में बोलने का शिष्टाचार भी नहीं मालूम है, हमेशा किसी सवाल को व्यक्तिगत रूप दे देते हैं। मैं जो प्रश्न रख रहा हूँ उसके उचित अनुचित रूप पर

आपको विचार करना है तो आप हमारे व्यक्तिगत सम्बन्धों को बीच में ला रहे हैं।'

'मैं नहीं, आप ला रहे हैं इन सम्बन्धों को। शिष्टाचार आपका मालूम है मुझे कि अपने व्यक्तिगत झगड़ों को आप सामान्य प्रश्न बना कर सुन्दरता से पेश करते हैं। आपकी होशियारी की दाद देता हूँ लेकिन विश्वास रखिए कि इस प्रकार की अस्थिरता से स्कूल की प्रतिष्ठा खतरे में पड़ जाएगी, कोई मास्टर यहाँ आयेगा नहीं।'

'मैं समझ नहीं पाता कि आप लोग हर प्रश्न पर लड़ क्या जाते हैं?' सतीश क्रोध से बोला। 'आप दोनों को ही संवाद करना होता है तो मीटिंग क्या बुलाते हैं, आप लोग अकेले में लड़कर अपनी भड़ास निकाल लिया कीजिए। सवाल है यहाँ स्कूल की प्रतिष्ठा का। मेरा ख्याल है कि यदि लड़कों को रात को पढ़ाई के लिए बुलाया जाए तो कोई हर्ज नहीं होगा। शहर के कायदे और हैं गाँव के और। पाठक जी को इस बात पर ध्यान देना चाहिए। एक बात और है कि उन्हें ट्यूशन करने का समय मिलता है तो रात को लड़कों को पढ़ाने में क्या हर्ज है?'

दीनदयाल ने सतीश की मुखमुद्रा को पढ़ना चाहा। देखा—वह गम्भीरता से कह रहा है। उसने जोड़ा कि जो भी हो तनखाह तो नियमित मिलनी ही चाहिए। आदमी परदेस में पड़ा हुआ है तनखाह नहीं मिलेगी तो खायेगा क्या?

'परदेस में कैसे पड़े हुए हैं? आप तो हैं न, वे तो आपके रिश्तेदार हैं यहाँ रहते हैं और इसीलिए आपके यहाँ आना-जाना भी लगा रहता है। ट्यूशन की बात मैं नहीं जानता। हाँ, इतना जानता हूँ कि वे आपके यहाँ पढ़ाते हैं पैसे लेकर या रिश्तेदारी के नाते। खैर, यह तो आप लोगों के आपसी मामले हैं इससे किसी स्कूल टीचर का स्कूल से क्या सम्बन्ध जोड़ा जा सकता है? सवाल इतना ही है कि यदि वे एम० ए० कर रहे हैं और रात को समय नहीं दे पाते और समय से तनखाह माँगते

है तो क्या स्कूल से निकाल दिए जाएँ ? मैं भी स्कूल टीचर हूँ व मैंबर के ढंग को समझता हूँ और कायदा कानून भी जानता हूँ। यह कोई आधार नहीं है।'

दीनदयाल बोले— ठीक कहते हैं रामकुमार, यह कोई आधार नहीं है किसी मास्टर को उसके स्कूल से निकाल दिया जाए।

'आधार क्या नहीं है ? हम कायदे कानून का डिप्लोमा थोड़ी मांगते हैं, हम अपना सुविधा असुविधा देखनी होगी। हम अपना स्कूल शुरू कर रहे हैं, हमें ऐसा आदमी चाहिए जिसमें हमारे साथ मरने खपने का जोश हो, जिसमें सुधारने की लो लगन हो जो देहात की मिट्टी का बना हो, जो इस देहात के गुड-गुरदे को समझ कर हमारी सारी सुविधाओं असुविधाओं में काम करना पसंद करे। हमें शहर के बबुआ नहीं चाहिए, हम विलासी वृत्ति का व्यक्ति नहीं चाहिए हमें कमठ चाहिए, हम मरद चाहिए' इतना कहकर सतीश ने दीनदयाल की ओर देखा। दीनदयाल का लगा जैसे सतीश के अंतिम वाक्यों में उसके लिए कुछ कहा गया है। वह मर्माहत सा हो उठा। लालमणि बोला— ठीक कहते हैं भाई साहब, यही मेरा भी विचार है। इसलिए मैं चाहता हूँ कि आप लोग इस पर विचार करें।'

दीनदयाल धीरे से मुसकराये जैसे वे बड़ी मम की और लाजवाब बात कहने जा रहे हों, बोले—'सतीश, तुम क्या नहीं अपने भाई चन्द्रकांत को बुला लेते हो। वह एम० ए० इस साल कर ही लेगा, इसी मिट्टी की औलाद है, तुम्हारा भाई भी है, उसमें तो इस देहात के प्रति काफी लगन और जोश होगा, घर पर रहने से आर्थिक दिक्कतों का सामना भी नहीं करना पड़ेगा, जब सुविधा हमी तनख्वाह दे दी जाएगी।'

सतीश थोड़ी देर चुप रहा, जैसे सोचता रहा कि इस बेहूदे सवाल का जवाब दिया भी जा सकता है या नहीं। फिर गम्भीर स्वर से बोला— चन्द्रकांत का प्रश्न उठाना कितना निकम्मा है इसे कहने की

जरूरत नही है। कोई आदमी यहाँ काम करने के लिए बाध्य नही है लेकिन जो काम करता है उसे यहाँ के अनुकूल होना चाहिए। चन्द्रकान्त को यहाँ बुलाने का प्रश्न तो ऐसा ही है जैसे मैं कहूँ कि आप अपने दोनों भाइयों को परदेश से बुला कर यहाँ स्कूल का कामधाम कराने का जिम्मा सौंप दीजिए, बोलिए तैयार हैं आप। आप उन्हें बुला लें तो मैं चन्द्रकान्त को सारी प्रतिभा को दाँव पर रख कर भी उसे यहाँ बुला दूँगा।'

दीनदयाल बुझ से गये। बोले—'नहीं मेरा मतलब कुछ और नहीं था मैं तो चाहता था कि अच्छे लोग इस स्कूल को मिलें। फिर आप लोग क्या सोचते हैं पाठक जी के बारे में? मेरा विचार है कि उन्हें रहने दिया जाए। लालमणि जी भी थोड़ा अपने को अध्यापकों से टकराने से बचायें। पाठक जी को जानता हूँ बड़े भले आदमी हैं तेज हैं।'

सतीन्द्र बोला—'मुझे व्यक्तिगत रूप से उस आदमी से कोई विरोध नहीं है बल्कि वे मेरे बहुत निकट है, लेकिन यदि स्कूल के काम में कोई भी व्यक्ति किसी प्रकार से ढीला सिद्ध होगा तो मैं सह नहीं पाऊँगा। लालमणि जी की रिपोर्ट यदि सही है तो निश्चय ही पाठक जी के बारे में सोचना चाहिए। तो भी मेरा ख्याल है कि इस समय उन्हें छेड़ा न जाए, उन्हें समझाया जाये कि वे अपने को इस देहाती स्कूल के योग्य बनायें।'

'हाँ, बिल्कुल ठीक, यही तो मैं भी कहता हूँ'—दीनदयाल जोर देकर बोले। जैसे उनके ऊपर से एक भार टल गया हो, राहत मिली हो।

लालमणि अनिच्छा से बोला—'ठीक है, जैसी सदस्यों की मरजी, लेकिन मेरा अनुभव है कि पाठक जी यहाँ के अनुकूल होने से रहे। वे बड़े उस्ताद आदमी हैं। गाँव को ट्यूशन करने का समय उन्हें मिलता है, लेकिन विद्यार्थियों को रात को बुलाने में उनका समय नष्ट होता है।

जैसी मरजी आप लोगों की।' लालमणि ने टयूशन कहते समय दीनदयाल की ओर देखा। लगा जैसे दीनदयाल तिलमिला गये हों।

रामकुमार हँस पड़ा था, वह हँसी दीनदयाल को और भी चुभ गयी थी।

सतीश ने कहा, छोड़ो भाई टयूशन वूशन की बात, यह तो अपने अपने आनंद की बात है।' दीनदयाल को लगा जैसे चारों ओर से लोग उन्हें सूइयाँ कोंच रहे हों।

मीटिंग बरखास्त हो गयी। सभी लोग उठकर चले गए। मगर दीनदयाल के दिल में रह रह कर एक काँटा खटक रहा था—टयूशन की बात बार बार करके इन लोगों ने उसी पर चोट की है। इन लोगों से किसी का भला देखा नहीं जाता है। नहीं चाहते थे लोग कि किसी की लड़की भी पढ़े लिखे, नहीं चाहते नहीं चाहते दीनदयाल धीरे धीरे अंधेरे में डूबते हुए घर चले जा रहे थे।

दीनदयाल गर्दन नमाए घर चले जा रहे थे। दीनदयाल मझोले कद के गोरे रंग के कुछ भारी डीलडौल वाले पुरुष थे उनके सिर पर बड़ा साफा बँधा रहता था जिससे चलते समय उनकी गति और भी छितराई हुई लगती थी, वैसे वे तौल-तौल कर चलने वाले आदमी थे धीरे धीरे, और उसी अन्दाज से बोलते भी थे और उसी अदा से वे जीते भी थे—तौल-तौल कर मीठे मीठे धीरे धीरे। व्यवहार में प्राय मृदुल। और जानने वाले जानते थे कि दीनदयाल की मृदुता, शान्ति और उद्वेगहीनता अपने भीतर कितना रहस्य छिपाये हुए है। जब कोई आदमी घायल होता था तो वह अन्दाज लगाता था कि वह दीनदयाल की शान्ति के भीतर से कोई विस्फोट हुआ है। घायल तिलमिला रहा है, बकझक रहा है और दीनदयाल मुस्करा रहे हैं और जैसे कहीं कुछ नहीं हुआ। लेकिन जानने वाले जानते थे कि वह मुसकराहट नहीं है, जहर है।

इसीलिए दीनदयाल जवार में बदनाम तो थे किन्तु अपनी चालाकी और मृदु व्यवहार के नाते कभी सीधे किसी के सामने नहीं आते थे। पीछे से घात करते थे यानी अपघात। ऐसा घात जो घात तो हो लेकिन उसका सिद्ध किया जाना उतना स्पष्ट न हो। जो भी हो, दीनदयाल इस जवार के नामी गिरामी लोगों में से थे—और इसका एक खास कारण थी उनकी सम्पत्ति।

दीनदयाल के दो छोटे भाई बकाम नौकरी करते थे। राम जाने वहां क्या करते थे, मगर रुपये खूब भेजते थे। सुनने में आता था कि वे वहां दूध का व्यापार करते हैं, या कि बैंक में दरबानी करते हैं या कि उनका नाव का कारोबार है या कि... जो भी हो इतना तो साफ था कि वे दोनो अपढ़ हैं इसलिए जो कुछ भी करते होंगे कुछ वैसा ही करते होंगे और वहां से पैसे खूब आते थे। दोनों भाई विवाहित थे। और दोनों की मेहरिया यहीं गाँव पर थीं। कुछ दिन पहले बड़े की जोरू तड़प-तड़प कर मर गयी। छोटे भाई की शादी तो अभी दो साल पहले हुई थी और वह शादी करके चला गया न जाने कब तक लौटने के लिए। सो दीनदयाल दोनों हाथों से भाइयों की कमाई बटोर रहे थे। और स्वयं यहीं अपना दाव-पेच सभाले हुए थे जिसे वे किसी भी मौके पर और किसी के भी साथ नहीं चूकते थे

अंग्रेजी राज्य में मे सरकार के पक्के खुशामदियों में से थे—इन्होंने गाँव गिराँव के क्रान्तिकारियों और कांग्रेसियों के नाम सरकार को दिये थे। हर मौके पर दारोगा का जेब इन्होंने गरीब लोगों से भरवाई और कांग्रेसी राज्य में इन्हें कपड़े और राशन का कोटा मिला है अंग्रेजी स्कूल खुला तो पचीस रुपये देकर उसके सभापति बन गए।

दीनदयाल जी धीरे धीरे घर लौट रहे थे। 'पालागी तिवारी जी।' दीनदयाल जी चौंके। 'अहा—पाठक जी! क्या हाल है बिटिया का?'

'ठीक है तिवारी जी, बिटिया बड़ी तेज है, तयारी हो जाएगा दो एक साल में मैट्रिक की।'

'अच्छा अच्छा ।

पाठक जी जैसे कोई नयी बात जानने के लिए रुके हुए थे।

दीनदयाल समझ कर बोले—ठीक है पाठक जी, सब ठीक है मेरे होते आपका कोई कुछ बिगाड़ नहीं सकता है यद्यपि बिगाड़ने की बड़ी कोशिश की गयी जाइए '

पाठक जी चले गये न जाने क्यों उनका जी आज उदास था। लालमणि का व्यवहार, तनखाह की अनियमितता एम० ए० पढ़ाई की चिन्ता और इस कछार की भूमि का सूनापन, कुल मिला कर वे कुछ दिनों से एक विचित्र अकेलेपन का अनुभव कर रहे थे। बार बार जी होता था कि इस स्कूल के फन्दे से छूट जायें वह चाहता तो छूट ही जाता, क्योंकि उसे छूटने के लिए परिस्थितियाँ अनुकूल थीं मगर वह छूटने के लिए मुक्त होकर भी छूट नहीं सकता था—छूट कर जाये कहाँ ? जैसे एक लम्बी बेबसी उसके सामने खिंची हुई दीखती। मगर इस नयी बेबसी का वह क्या करे जो दिन प्रतिदिन उसके भीतर उभरती जा रही थी—शारदा शारदा, सुगन्ध की एक अनुभूति कोमलता का एक स्पर्श स्वच्छता की एक भाषा और आँखों की निर्मल गहराइयों के पार कोई ममतामयी पहाड़ी उसे कई दिनों से ऐसा लगता है कि वह कहीं अनजाने ही सुखकुन्द गुनगुने जल में डूब गया है और आज की अनुभूति जैसे अनुभूति मात्र न रह कर एक विश्वास बन बैठी है इस अकेलेपन की घाटियों में जैसे एक कोमल अपनाव मिला हो—यह अपनाव इस दौरान के पट पर उभर कर चित्त को और उदास कर रहा है। न जाने कैसा-कैसा लग रहा है जैसे सुनसानों के बीच तैरती हुई एक आवाज।

शारदा उसे विश्वास नहा हो पाता कि वह दीनदयाल को बेटी है। इतने दिनो में उसने जो दीनदयाल के बारे में जाना सुना है वह बहुत अच्छा नही ह, अच्छा नही अप्रीतिकर है। उसकी निमल अनुभूति के पट पर दीनदयाल की बडी ही टेढी-मेढी उभरी अनउभरो रेखाएँ खिची है। उसे लगता ह कि वह भीतर-भीतर इस व्यक्ति को चाहता नही है लेकिन शारदा । उसने कीचड से कमल के पैदा होने की बात मुहावरे के रूप में तो बहुत सुनी थी लेकिन मानव जीवन में उसकी सच्चा अनुभूति उसे यही आकर को हो। शारदा

शारदा को वह पढाता है पिछले छ-सात महीना से। लोगो को आश्चय ह कि दीनदयाल जसे दकियानूस आदमी लडकी को क्यों पढाते ह ? और पढाते भी ह तो मिडिल की पढाई समाप्त कर दी, बस हा गया। इतना तो लडकियो के लिए काफी ह। क्या उन्हें कलट्टरी जजी करनी ह। लेकिन नही दीनदयाल तो उसे पढाये जा रहे ह। पता नही क्या करायेंगे इस छोकरी से ? सचमुच यह बात आश्चय की हा ह लेकिन शायद दीनदयाल के भीतर कोई विवशता ह कि वे बेटी को पढा रहे है। वे स्वय इसको ठीक से नही जान पाते लेकिन कुछ ह ऐसा कि पढाये जा रहे है। वह क्या ह ? एक दो हो तो समझा जाए, लगता ह कई विवशताएँ एक में उलझी हुई हैं। दीनदयाल की पत्नी शारदा को गोद में छोडकर मर गयी और रो-गा कर उसे पति को सौंप गयी। शुरू से ही दीनदयाल इस मातहीन लडकी के प्रति अतिरिक्त स्नेहवान रहे। उसकी कोई भी जिद वे टाल नही पाते। इसके अतिरिक्त यह लडकी अपनी प्रतिभा और सुशीलता स बाप का ही नही, सबका मन जीतती गयी। दूसरी बात यह भा थी कि दीनदयाल के दोनों लडके वीर बहादुर और रामबहादुर निकम्मे निकल गये, मिडिल म अडियल टट्टू की तरह अड गये—बहुत धक्का मारने पर भी अपनी जगह से नही हटे और चित्त-होकर लौटने लगे तो दीनदयाल दुखी

होकर इन लड़कों को पढ़ाई भी आधी छोड़ बैठे। गाँव के कुछ गरीब घरों के लड़के एम० ए०, बी० ए० हो गये, मगर गाँव के सबसे धनी आदमी दौलतराम के लड़के निकम्मे निकल आये यह उनके लिए दुख की ही नहीं, शर्म की भी बात था। चार बहादुर, दमादार ठाकुर यहाँ मालिक हो गया है और रामप्रसाद वह बना रहा है। गाँव में हर चीज पर मेल कराता है। कभी-कभी व गाँव वालों का मन ऊपर यह संदेश सुनते कि परदेश में पता नहीं क्या-क्या कुकर्म करके लाग घर पैसे भेजते हैं और घर वाले बड़े आदमी बन रहे हैं। पैसा इकट्ठा करना और रोजगार करना इनका ही काम है। पैसा रुपया तो ठीकरा है। यदि घर में विद्या नहीं आयी तो पैसा किस काम का? ऐसा तो ऐरा-गैरा भी कमा रहा है।'

दौलतराम अब सचमुच अनुभव करते कि उनका पैसा रुपया ठीकरा है। उनके लड़का न होना बड़ा ही दुख है। आजकल तो पढ़े लिखे लोगों का जमाना है। गरीब आदमी भी पढ़ा लिखा हो तो कुर्सी पर बैठता है और धनी वाला हाथ जोड़ कर खड़ा रहता है।

शारदा तेज लड़की है, वह पढ़ना चाहती है दौलतराम न चाहते हुए भी चाहते हैं, भाई यह न कहें कि इनके घर में विद्या धन पती ही नहीं।

दोनों चाचा बना रहते हैं वे स्वयं अनपढ़ हैं लेकिन दुनियाँ देखी है। उन्होंने देखा है कि विलायत की लड़कियाँ पढ़ी लिखी हैं, तेज तर्रार हैं, इतना ही नहीं हिन्दुस्तान के जो गुजराती, मद्रासी, बंगाली, पंजाबी हैं वहाँ हैं, उनकी भी लड़कियाँ पढ़ती लिखती हैं। उनको शारदा पढ़े यह उन्होंने बार बार कहा है।

सो शारदा पढ़ रही है। मिडिल वह फस्ट क्लास पास हुई, हिन्दी और इतिहास में उसे डिसटिंक्शन मिला—मगर उसके बाद क्या करे?

अब सयानी हो गयी है लडकियो का तो क्या, लडका का भी हाई स्कूल नही ह। दो साल पहले किसी तरह हाई स्कूल का एक ठाट ठाटा गया ह चल जाये तब तो। फिर शारदा का पढाई एक समस्या हो गयी ह। शारदा ने कहा भी कि पिताजी मुझे गोरखपुर भेज दीजिए। नहीं, गोरखपुर भेजने की हिम्मत नही ह दीनदयाल म, इतना ही नही कि गोरखपुर जाने पर लडकी के लिए पसा पानी की तरह बहेगा बल्कि यह भी कि अकेली शारदा कसे रहेगी? ना, ना उसे अकेली शहर में नही छोड सकते। शहर म तो बडे बने लोग बसते हैं। हालाकि शारदा बिटिया ह स्वभाव की बडी पक्की ह, मगर जवानी ही ता है, ना-ना शहर नही भेजेंगे उसे।

और जब उमाकान्त पाठक हाई स्कूल के हेडमास्टर होकर आये तो बात बात में मालूम पडा कि पाठक जी दूर के सम्बन्धी होते हैं दीनदयाल के। दीनदयाल ने वसे ही कुछ बातचीत चलायी अपनी बिटिया की पढाई की, तो पाठक जी ने कहा हा हा पढाइए म सहायता कर दूगा। शारदा पढने लगी। पहले तो पाठक जी कभी-कभार आते थे लेकिन कुछ दिना बाद व नित्य शाम को टहलते हुए चले आते। दीनदयाल को खुशी हुई कि चलो बिना पसे रुपये के एक ट्यूटर मिल गया। यह नही कि दीनदयाल ने पसा देने की बात नही चलायी लेकिन पाठकजी ने ही लेने से इनकार कर दिया। यह तो घर का ही लडका ह, पसा ही तो सब कुछ नही है

पाठक जी पढाने लगे और शारदा पढने लगी। शारदा की तेज बुद्धि पाठक जी की सारी प्रतिभा को धीरे धीरे पीने लगी।

'ए मास्टर जी, म यह तो नही समझी, फिर से समझाइए न, तक-लीफ न हो तो।' और वह हंस देती।

'हाँ, हाँ फिर समझो, तकलीफ काहे की समझाने में? हाँ, फिर समझो।' और पाठक जी थूक निगल कर समझाते—देखो शारदा जी,

'पोथी पढ़ पढ़ कर जग मर गया, पंडित नहीं बन सका, प्रेम का ढाई अक्षर जो पढ लेता है वह पंडित बन जाता है।'

'सो तो समझी मास्टर जी! और ए मास्टर जी, आप मुझे शारदा जी मत बोला कीजिए—मुझे शारदा कहा कीजिए। हाँ मास्टर जी, सो तो समझी, मगर यह नहीं समझी कि कैसे पोथी पढने से जग पण्डित नहीं हुआ और प्रेम का ढाई अक्षर पढने से पंडित हो गया। मगर कबीरदास जैसे ज्ञानी पुरुष ने कहा है तो ठीक ही कहा होगा, महात्मा होकर झूठ थोड़े लिखेंगे।'

मास्टर जी चुपचाप बैठे हैं, क्या बताएँ क्या न बताएँ?

'बोलिए न मास्टर जी, चुप क्यों बैठे हैं?' शारदा हँसती है तो उसके जूही के फूल की तरह सफेद सफेद छोटे छोटे दाँत पूरे कमरे में भर जाते हैं।

मास्टर जी बोलते हैं कि 'बात यह है शारदा जी!'

'फिर शारदा जी! मास्टर जी आपको क्या हो गया है जो जी-जी लगाये हुए हैं?' शारदा बन्द ओठों से मुस्कराती है तो सारी हँसी उसकी बड़ी बड़ी तरल आंखों में तर जाती है।

देखो शारदा'

'हाँ अब आये रास्ते पर मास्टर जी, अब कहिए

कहने भी तो दो, बात यह है शारदा कि—मास्टर जी थोड़ा रुकते हैं और शारदा फिर मुस्कराती है 'बात यह है शारदा कि कबीरदास जी भक्त थे, वे कहते हैं कि जो लोग बड़ी बड़ी पुस्तकें पढ़ते हैं और पुस्तकें पढकर भी सत्य को नहीं पा पाते हैं उनका पोथी पढना बेकार है। वे मूर्ख हैं पोथी पढकर भी, लेकिन बिना पोथी पढे हुए भी जो कोई ढाई अक्षर वाले प्रेम को जान लेता है वह मानो सत्य को जान लेता है।

'यानी ए मास्टर जी, दुनियाँ का सत्य प्रेम ही ह ऐसा ही ह न मास्टर जी '

'व ब बात यह ह शारदा जी यानी शारदा कि कबीरदास भक्त थे इसलिए उनका प्रेम भगवान का प्रेम ह, संसार का प्रेम नहीं, समझी न।'

'मैं कहा कहती हू मास्टर जी कि वह प्रेम भगवान के प्रति नही है ससार के प्रति ह। मै तो केवल प्रेम की बात कहती हूँ वह प्रेम काई भी हो सत्य वही है न।'

'कबीरदास तो ऐसा ही कहते हैं शारदा।'

'मगर आप क्या कहते ह मास्टर जी, आप भी क्या कबीरदास के पोथी पढने वालो में है जो कहते कुछ ह समझते कुछ हैं '

'शारदा।' पाठक जी जोर स डपटे, 'तुम यहाँ पढने बठी हो ऊल जलूल बकने के लिए नही।'

'मास्टर जी, मगर म तो पढाई की ही बात पूछ रही हूँ। म नही समझ पाती इसलिए पूछती हूँ। कबीरदास के अनुसार तो सबकुछ पढना बकार ह केवल प्रेम का अनुभव करना ही सत्य को पाना है। जहाँ तक म समझ सकी हूँ आप यही तो कह रहे ह फिर यह पढाई लिखाई किस काम की मास्टर जी ?'

और पाठक जी चुप हैं जसे अपने ही बनाये हुए जाले में मकडी उलझी हो।

शारदा मद मद मुसकराती ह, उसकी कुछ लटें उड उड कर उसके सूयमुखी के समान मुखमडल पर बिखर आयी हैं। वह उन्हें हटाती नही। मास्टर जी चुप ह, शारदा चुप ह। दोना के बीच एक रहस्यमय मौन लटा हुआ ह। शारदा उसे अपनी हँसी से भेदना चाहती ह और मास्टर भयभीत हो कर उससे भाग जाना चाहते ह।

'बस आज इतना ही कहते हुए मास्टर उठ जाते हैं।

'अरे-अरे मास्टर जी, आप तो नाराज हो गए। पानी तो पीते जाइए'

'नहीं-नहीं प्यास नहीं है।' कह कर मास्टर बरामदे से नीचे उतर जाते हैं और शारदा स्तब्ध हो कर देखती रह जाती है

पाठक जी कहीं अपने से डर जाते हैं, शारदा शारदा जैसे उनके भीतर कोई भारी चीज पैठती चली जाती है जिसे वे सँभाल नहीं पायेंगे।

शारदा रात को छिप कर रोती है, उसने मास्टर जी को क्या नाराज कर दिया? मगर उसने नाराज कहाँ किया उसने तो सवाल पूछा था। उसे नहीं समझ में आता तो क्या करे? नहीं पूछे? अच्छा नहीं पूछेगी अब, वह नहीं पूछेगी, मगर इस सवाल में ऐसा क्या था जो मास्टर जी नाराज हो गए। प्रेम की बात आयी थी शायद इसलिए। मगर प्रेम की बात तो कबीरदास ने लिखी है कहीं मैंने अपनी ओर से तो लिखी नहीं। और फिर प्रेम की बात किसी ने भी लिखी तो इसमें नाराज होने की कौन सी बात है और यह प्रेम क्या चीज है? वह अक्सर सुनती है अपनी चाची से उसके गाँव की कहानियाँ, कुछ बड़ी लड़कियों से कहानियाँ कि इस लड़की को इस लड़के से प्रेम हो गया है, उसे उससे इश्क हो गया है, उस उससे आशनाई है। क्या है यह सब बला? वह कुछ कहानियाँ पढ़ती है वहाँ भी यही प्रेम और इश्क। क्या है यह सब? कोई उस दिन कहती रही कि बुजू बदमी को प्रेम करता है तो वह भासमझी से मुँह ताकती रही और जब उस लड़की से पूछा, यह क्या चीज है तो वह बड़ी हो गयी हँसी हँस कर बोली थी कि जब करेगी तब जानेगी। वह प्रेम की कहानियाँ पढ़ती है जिनमें प्रेम शब्द आता है—एक लड़का और एक लड़की दोनों एक दूसरे को चाहते हैं, छिप छिप कर मिलते हैं, एक दूसरे को भेंटते हैं, एक दूसरे

को देखे बिना रह नही सकते और और वह अनुभव करती ह कि उसे ये कहानियाँ अच्छी लगती ह। उसे कहानियाँ पढ़ने ममय लगता ह कि कहानी की लडकी वही है, उसे किसी से मिलने में एक रहस्यमय आनन्द मिलता ह, उससे न मिलने पर उसे एक तडप होती ह और भेंटने पर जैसे उसी के अग अग के बन्धन चटक जाते ह

उसे क्या हो गया ह ? इन दिनो कहा कुछ अच्छा नही लगता, उसे लगता ह कि गाँव की सीमा छोटा पडतो ह जो उसे कसे हुए ह। इच्छा होती ह, वह उड जाय दूर दूर तक एक चिडिया की तरह और दूर दिगाओ के भीतर जो अनजाने सुन्दर देश ह उन्हें घूम आये। कोई राजकुमार उस भी किसी जगह म मिल और वह परियो क देश की ओर ले जाय या अपने जादू के समान सुन्दर महल म ले जाय और वह सब घूमधाम कर फिर लौट आये वह क्या यह अनुभव करती है कि बरसात के सारे बादल उसके भीतर ही गरज रहे ह, शरद के सारे फूल उसी क भीतर महक रहे ह और अगहन पूस म यहाँ से वहा तक फैली हुई यह पाली पीली सरसो उसी के भीतर भूम रहा ह, फगनहट की सूनी सूनी हवाएँ उसके भीतर बह रहा ह और धूल से भरी दिगाओ के पार कोई धुँधला धुंधला सा जो देश दिखाई दे रहा ह वह उसके भोतर ही ह। फागुन पहले तो ऐसा नही दीखता था अब तो लगता ह कि वह उसकी हड्डी-हड्डी को तोड-तोड कर एक एक फागुन फूट रहा ह और यह वसत जसे उसके अग अग से कल्ले फोड कर निकल रहा हो कोयल का गीत सचमुच मीठा होता ह, अब लगने लगा ह। पहले तो वह कोयल के गीत से तग आ जाती थी उसे चिढाया करती थी और तग आ जाने पर उसे ढेले मार कर भगा दिया करती थी। अब लगता ह कि वह अगवारे, पिछवारे, रात बिरात बोलती ही रहे पगली बोलती ही रहे। महुए के फूल झरते ह। लगता ह, उसके मन क आँगन में किसी ने खुशबू का सुखवन पसार दिया हो और पहले जब कुजू गाता

था तो वह उसे चिढ़ाया करती थी—मरखौनवना दिनरात निनियाया करता ह और घर के पास पीं पी वंशी बजाया करता ह अभागा, लेकिन अब वह चाहती है कि वह गाये और गाये, वह अपने जँगले पे पास वहाँ से घट बठ कर उसका राग सुनती ह और लगता ■ कि उसके गीतो में कोई गीली चीज ह जो उसके दिल को छूकर गीला कर दे रही हैं। बाँसुरी की रागिनी उसे भटकाती है। लगता ह, रागिनी किसी को खोज-सी रही ह और वह भी किसी को खोज रही ह।

किसी को खोज रही ह। प्रेम ? क्या चीज ह प्रेम ? एक लडकी एक लडके से मिलती ह। उससे मिलना अच्छा लगता है उसस न मिलने पर जाने कैसा-कैसा लगता ह कुछ खोया-खोया-सा महसूस होता ह। उसे इधर मास्टर जी अच्छे लगने लगे हैं। वह चाहती ह मास्टर जी हमेशा उसके पास बैठे पढाते रहें। उसे अच्छा लगता है मास्टर जी का बोलना-बतियाना, उनका चलना हँसना और कभी-कभी गुमसुम होकर बैठ जाना। कभी-कभी उसे क्या लगता ह कि मास्टर जी पढ़ायें न, केवल बातें करें। क्या लगता ह कि कभी-कभी वह घण्टों या ही मास्टर जी को निहारा करे। मास्टर जी एक सांवली सलोनी आकृति, मुह पर तेज, आँखो में भोलापन बोलते है तो जसे पानी झरता ह, ताकते हैं जसे आँखें पिघल कर बरस रही है। जब नाराज होते ह तो लडकी से लगने लगते ह खुश होते ह तो जसे उनकी पूरी देह महमहा उठती है। शारदा सोचती ह उसे इन दिनों क्या हो गया ह ? बहुत से लडके तो हैं इस गाँव में, किसी को देखकर कुछ नही होता, किसी से वह डरती भी नहीं। अपने भाई से तो हाथापाई भी कर लेती ह, मगर मास्टर जी के पास आते ही रोवाँ रोवाँ क्यों एक डर से सिहर उठता है ? जस कही मेरा अग मास्टर से छ न जायँ। वे पास बठे हाते ह तो उनके और मेरे बीच काई काँपती हुई हवा बहती रहती है जो कभा कभी म्ये छू कर परी देह को धडकन सन से खीच लेती ह। कभी-

कभी ऐसा आता है मन में, शारदा! कभी तू मास्टर जी की छाती पर सिर रख कर रो तो ले। दुत पगली शारदा, सिरफिरी कहीं की, ऐसा भी कोई सोचता है, यह भी कोई सोचना हुआ? और शारदा अपने मन को जोर से ऐंठ देती है लेकिन मन घूम फिर कर उन्हीं कल्पनाओं पर आ जाता है।

मास्टर जी शुरू शुरू में आये तो वह उनसे बाहर से तो शरमाई, एक अजनबी थे न मगर भीतर से वह बेधड़क थी। लेकिन इन दिनों क्या हो गया है कि वह बाहर से उनसे खुली हुई है किन्तु भीतर भीतर एक डर तरता रहता है, तब तो वे जो कुछ पढ़ाते थे वह याद कर लेती थी। उनके उठ कर जाने न जाने के बारे में कुछ सोचती ही नहीं थी—अब मास्टर जी की पढ़ाई में से एक सवाल पैदा होता है उसके मन में जिसे वह कुछ नहीं समझती है परन्तु बहुत कुछ समझ लेने के लिए उसके भीतर एक हाहाकार मचा करता है और जब मास्टर जी जाने लगते हैं तो उसे लगता है कि वे तमाम सवालों का बिना उत्तर दिये ही चले गये हैं। उसने आज भी तो सवाल ही पूछा था। वह नहीं समझ सकी इसलिए पूछा था। वह निगोड़ी अब किसी भी चीज को एक अबोध लड़की की तरह ज्यों का त्यों क्यों नहीं स्वीकार कर लेती? क्या उसकी तह में पैठ जाना चाहती है? मास्टर जी नाराज हो गये आज लगता है उन्हें उत्तर मालूम है, लेकिन वे उत्तर देने से कतराते हैं। क्या यह उत्तर कोई बुरी चीज है कि मास्टर जी उसे कहने में घबराते हैं या उन्हें उत्तर मालूम ही नहीं। ना-ना, शारदा का मन यह कभी नहीं मानेगा कि उसके मास्टर जी जानते नहीं हैं। उसके मास्टर जी बड़े संकोची हैं कभी कभी लड़कियों की तरह शरमाते हैं। उनकी पनीली बड़ी तरल आँखें कितनी अच्छी लगने लगती हैं? लजाने हैं लेकिन बहुत जानते हैं, कितना अच्छा पढ़ाते हैं? ऐसा पढ़ाते हैं कि हर चीज दिल में धँस जाती है। और जब मैं उनके नहीं रहने पर पाठ दुहराती हूँ

मेंद निस्पृह। इक्के दुक्के लोग सिरा पर घास का बोझा लादे घरो लौट रहे थे। धीरे धीरे नमी से भीग कर खेत भारी होते जा रहे। लोगो के चेहरों पर शाम की आखिरी धूप डूब रही थी और उनमे भर रहा था एक सूना अधकार, घर सन्नाटा, एक सुस्ती और नावों की ओर से घायल परिवार की बेबसी, कोलाहल शाम की आखिरी धूप और ये घर लौटते हुए लोग, ये कितने अकेले लगते हैं, अलग अलग रास्तों पर अलग ढग से चलते हुए। लगता है, शाम की उदासी ने समूची धरती को निगल लिया है। अभी सारे फूल अधकार मे पत्त में छिप जायेंगे और पत्त रात भर भीग कर भारी बनेंगी—थपथप

पाठक जी देख रहे हैं घर लौटते हुए चेहरो को। उन्हें लगता है, एक चेहरा उनका भी है जो ऐसी ही कितनी शामो की उदासी में घर लौटा है और घर लौट कर कितने ही उदास चेहरा के बीच अपने को खो दिया है। परिवार के, आसपास के घरो के अधकार से घुने हुए चेहरे, छाप पड़े हुए चेहरे जिन पर अलाव की हल्की-हल्की लपट कितनी ही रेखाएं खीचती हुई बुझ बुझ जाती है सारे चेहरो पर लिखा हुआ है भूख, दिन भर की थकान, लम्बी रात की बोझिल छाया ।

इन्ही घड़ियो से पाठक फूटा है, फूट कर शहर में से गुजरा है। शहर के शोरगुल, रगबिरगी आकृतियो के बीच भी उसने अपने को अकेला ही पाया—लड़ता हुआ अपने से, परिस्थितियो से। क्या-क्या नही किये उसने पढाई के लिए? और बी० ए० पास कर फिर उन्हीं घड़ियो की ओर लौट आया जिनसे वह फूटा था-वही कछार की धरती, वही शाम, वेही चेहरे और वे ही लिपियाँ, वह पढ रहा है फिर उन्हें डेढ वर्षो से पढ रहा है और उसे लगता है कि कछार की भाषा यही है—कछार इसी स्वर मे बोलता है। इन्ही खेतो में बाढ़ का हाहाकार उठता था, इन्हीं खेतों से होकर कितनी लाशें बही थी। बाढ इन खेतो की

फसलें छीन कर इनमें बालू झोंक गयी थी, इनके ऊपर तान गयी था रिक्तता का काला आकाश। हाँ, यह वही धरती है जो आज रंगबिरंगी फूलों वाली फसल उगल रही है जैसे ये फसलें धरती के भीतर का हैं जिनका अंत नहीं। और रात की काली गहराइयों में डूबती जाती ये फसलें डूबती कहां हैं, उनमें भी तो ये झांती ही हैं, केवल दीखती नहीं और सुबह में फिर धूप के पंख झाड़ कर पंछी की तरह चहकने लगती हैं। क्या यह कछार की भाषा नहीं है? शायद यह भी है। यह नहीं होती तो इतने दिनों से बाढ़ का गरल पीता कछार जिन्दा कैसे रहता? और ये भूख, उदासी और से थकावट पुते हुए चेहरे भी अपनी रातों के भीतर कुछ छिपाये हुए हैं—शायद कोई फागुन है, कोई चैत है जिसकी रेखाएं अभी उभरी नहीं हैं, उभरेंगी। लगता है, कछार की भाषा एक नहीं, कई है, उसके विविध स्वर हैं, उन्हें पहचानना है, हां उन्हें पहचानना है, मिट्टी के भीतर छिपे हुए सत्य को पहचानना है

शाम खूब गहरा गयी और लगा जैसे आधी रात हो गयी। दूर दूर के गाँवों से फूटता हुआ दीयों का प्रकाश शीत में लथपथ होकर पर म छितरा जाने लगा। सारे स्वर कहीं दुबक कर सो गये। उधर के बगीचे से कोई गीत उठ रहा है बुजू है शायद।

पाठक जी धीरे धीरे स्कूल पर लौट आये। देखा बदमी ओसारे में चुक्की मुक्की मारे बैठी हुई थी।

'अरे तू बदमी! कब से आयी है?'

'मास्टर साब। आज मेरे बपई का जी अच्छा नहीं है सो मैं ही चौका बरतन करने आ गयी। बपई ने कहा कि रात हो जायगी तेरे आते-आते, मगर यह भी कहा कि मास्टर जी भूखे सो जायेंगे। बपई को समझाया कि कोई बात नहीं मैं जल्दी चली आऊँगी मगर मास्टर साब परदेस में हैं उनकी खोज खबर लेने वाला कौन है यहाँ? भूखे सो जाएंगे। सो मास्टर साब मैं तो कब से आकर यहाँ बैठी हुई हूँ—

मरजीनवना कई मुसडे अहिर इधर से सान मटक्की मारते हुए चले गये। और आप '

वह थाडा-सा मुसकरायी—'क्या मास्टर साव, आज जियान्त पढ़ाने लगे क्या सरधा बहिनी को।' वह मुसकराती हुइ मास्टर की आर देखती रही।

मास्टर सिहर गये, फिर थोडा सा मुसकराये, बाले, 'नहीं बदमा, म आज तो उधर गया ही नहो। मैं खेता की आर निकल गया और घूमते घूमते देर हो गयो मुझे बडा अफसास ह बदमी कि—म इतनी देर से आया। मुझे चौका बरतन की याद ही नही रही और मुने क्या मालूम था—आज तू आयेगी और तू आयी तो फिर चली क्या नही गयी ?'

'यह क्या कहते है मास्टर साव, म चली कसे जाती ? आप बिना खाये सो जाते यह कसे हा सकता ह। कोई रात नही हुई ह, म चली जाऊँगी। और ए मास्टर साव आप आज सरधा बहिना को पढाने क्या नहो गये ? क्या कुछ कहा सुनी हो गयी ह ?

'छि छि बदमी कसी बात करती है, कहा सुनी का क्या तुक ह ? वह मेरा विद्यार्थिनी ह म उसका गुरु हूँ। कहा सुनी क्या हागी ? या ही घमने चला गया ता उधर नही जा सका।'

मास्टर साव, आप गुरु ह सो तो ठाक ह लेकिन ' वह मुसकराने लगा।

'लेकिन क्या बदमो, तू इस तरह उल्टा सीधा क्या बाल रही ह ?'

नहा नही मेरा मतलब कुछ नहीं, मं तो यह कह रहा हूँ कि सरधा बहिनी कितनी अच्छा ह, उनका सुभाव कितना माठा और मुलायम ह, थाडी सी बात पर रो दें, पोर से पोर-पार झनझना उठे आप आज नही गये हागे तो उन्हें कितना बुरा लगा होगा।

बुरा क्यों लगा हागा एक दिन नहीं गया सा नहा गया, आज अपने मन स पढ़ाई कर लेगी और तुम्हें कैसे मालूम कि बुरा लगा हागा।'

'म सरधा बहिनी का सुभाव जानती हूँ मास्टर साब ! एक दिन मेरे गुडसाल बैठी थी कुछ भुजाने के लिए। शाम हो र ही थी और काफी सामान भूजने को पडा था। सरधा बहिनी घबराई हुई कह रही थी कि 'बदमी जल्दी भूज दे मेरा।'

मैंने कहा 'कौन-सी परलय आ रही सरधा बहिनी, बठिए न अभी तो इतने लोग बठे हैं भुजाने के लिए।' लेकिन, वे अपनी जिद पकडे हुए जल्दी जल्दी कह रही थी।

मने कहा—'थोडा और बठिए सरधा बहिनी, अभी काम निबट जाता ह। वे थोडी देर बठी रही हडबडा कर कह उठी कि बदमी देख मेरी पढाई का समय हो गया ह और तू कजाकी करता है।'

मने कहा- अच्छा पढाई की बात पहले क्यों न‌ही कही ? पहले ही भूज दिया होता और एक दिन नही पढाई करोगी तो क्या हो जायगा ?'

व रुवाँसा-सा उठ खडा हुई और यह कहती हुई भाग चली कि तू पहुँचा जाना।

जब वे चली गयी तो कुछ लडकियाँ और औरतो ने ताना मारा कि हाँ-हाँ इसका तो मास्टर आया होगा न, इसलिए इसे चन नही पडता। सो मास्टर साब मने उन लडकियो और औरता को वो सुनाया वा सुनाया कि उनका मुँह सीता हो गया। बदमी अन्याव की बात नही सह सकता ह

पाठक जी कही भीतर सिहर गये-जसे कुछ ही पहले छूटा हुआ सूत फिर जुडने को व्याकुल होने लगा।

जाने द बदमी, ये बरतन सरतन छोड, आज म खाना नहीं खाऊँगा। मुझे कितनी दर हो गयी ह ।

'ऐसा भी कही हो सकता ह मास्टर साब, आप भूखे सो जायँ, कसा लगेगा ?'

'वैसा लगेगा बदमी ? कुछ भी नहीं लगेगा। मैं तो बहुत रात भूखा सोया हूँ और आज कल इन गाँवों के कितने लोग भूखे सो जाते हैं, दो दो तीन तीन दिन तक खाने को नहीं मिलता तो क्या हो जाता है ? इस गरीब इलाके में क्या मुझे एक वक्त भी भूखा नहीं रहना चाहिए ?'

मास्टर ने देखा लालटेन के प्रकाश की छाँह में बदमी की आँखें गीली हो आयी हैं, मुँह उदास हो गया है उदास मुँह पर अनेक रेखाएँ बन बन कर मिट जा रही हैं। शायद बन बनती हुई रेखाओं को बदमी भीतर ही भीतर खींच कर पी जाना चाहती है। उसके हाथ रुक-से गये हैं।

'क्या सोचने लगी बदमी ?'

'कुछ नहीं,' और वह झटका सा खाकर जल्दी जल्दी बरतन माँजने लगी। उसे लगने लगा कि उसके भीतर की दबी हुई भूख एकाएक उभर आयी है। हाँ, उसे मास्टर का एक वक्त भी न खाना अजीब लग रहा है किन्तु उसने भी तो सुबह से कुछ नहीं खाया है और इस वक्त भी खाने की कोई उम्मीद नहीं।

'बदमी काम छोड़ दे, चल तुझे पहुँचा आऊँ

'नहीं-नहीं मास्टर साब, मैं आपका रसोई बनवा कर ही जाऊँगी और मैं चली जाऊँगी।'

'नहीं-नहीं मुझे नहीं खाना है देख यह भुजा रखा हुआ है ऐसे मौकों पर मैं भुजा खाकर ही काम चला लेता हूँ और हाँ, थोड़ा तू भी लेती जा '

'अरे नहीं ए मास्टर साब, मैं क्यों ले जाऊँगी, कैसा लगेगा ?

'कैसा लगेगा ? ले अपने भाई के लिए लेती जा।' और बदमी के नहीं-नहीं करने पर भी मास्टर ने आधा सेर भुजा बदमी के खोंइछा में डाल दिया और कहा-चल पहुँचा आऊँ

बदमी खोंइछा में मूजा लिए जहाँ की तहाँ खडी थी। कुछ देर बाद बोली—'ए मास्टर साब, आप तो बडा अजब-अजब करते हैं आप मुझे पढ़ुवाने चलेंगे, कसा लगेगा ?'

कसा लगेगा ? इतनी देर हो गयी है, गावों के बीच स नाटा छाया हुआ ह। चोर चाइ गुडे सभी तरह के लोग होते हैं और औरत की दह तो सब तरह से खतरे में होती है काई कुछ हा-हाँ चल।'

'हाय ए मास्टर साब, आप तो मुझे कीचड में ढकेलते ह,' कहती हुई बदमी धीरे धीरे गाव जाने के लिए सरक पडी।

'ए मस्टर जी, सरधा वहिनी ठीक कहती हैं कि आप बहुत अच्छे ह।'

'क्या ? सरधा बहिनी कहती ह कि मैं बहुत अच्छा हूँ ? अरे म तो उस बेचारी को पढा-पढा कर इतना तग कर रहा हूँ कि सोचती होगी कब यह बला टलेगी कि जान बचेगी।'

'छि छि ए मस्टर साव आप हमारी सरधा बहिनी के साथ अनियाव ( अयाय ) कर रहे हैं। सरधा बहिनी तो पढने लिखने म बहुत तेज ह, पढ़ाई में उनका बडा मन लगता ह और मिडिल इसकूल के इतहान ( इम्तहान ) में तो सबसे फटट ( फस्ट ) नम्बर आयी थीं। हाँ वे पढ़ाई से भागती नहीं। जब आप के आने का वखत होता है तो खडी होती ह भाग चलती हैं घर को। और म तो छोटी जाति की हूँ। मास्टर साव, जनम की अभागी, करमजली लेकिन सरधा बहिनी तो मुझे अपनी सखी की तरह मानती हैं और कभी कभी अपना सुख-दुख कहती हैं और आपकी बडी बडाई बतियाती हैं सच मास्टर साव। और कहती ह कि इच्छा होती है कि सारी बिदया पढ जाऊँ ए बदमी, लेकिन पिता जी शहर भेजते ही नही। ई तो सजोग कहो कि हमारे मास्टर जी आ गये ह तो कुछ और पढ लूँगी। सरधा बहिनी कहती हैं मास्टर साव, कि हमारे मास्टर जी बहुत अच्छा पढाते हैं, और बहुत अच्छे लगते ह। सरधा बहिनी ठीक कहती मस्टर साव।'

मास्टर मर्माहत रह गये—मास्टर जी बहुत अच्छे लगते हैं, हाँ बहुत अच्छे लगते हैं और शारदा मास्टर फिर आगे नहीं सोच सके, बोले—'हाँ-हाँ बदमी, एक तू और तेरी सरधा बहिनी दोनों मिलकर मास्टर जी की इतनी तारीफ कर दो वह खुशी से फट जाय'

'राम राम मास्टर साब, आप लोग पढ़े लिखे होकर भी ऐसी बुरी बुरी बात निकालते हैं? फटें आपके दुसमन हाँ।'

मास्टर मन ही मन मुसकरा रहे थे और इस ठंडक में भी एक गरम स्पर्श उनकी रगों में बहता हुआ लग रहा था। मालूम हो रहा था कि यह भीगा हुआ अंधकार जगह जगह से फट गया है और नीले आकाश का टुकड़ा स्वच्छ तलैया की तरह चमक रहा है।

बदमी खामोश हो गयी थी मास्टर भी खामोश थे उधर बाग से कुजू का गीत उठ रहा था और कुहरे के रेशे रेशे में भीगकर फैल रहा था—

कि—अहहा रामा

टहकि टहकि के हिरनिया बन बन रोवे ले हो रामा

मास्टर और बदमी दोनों चुपचाप दूर से भीगते हुए आते इस गीत को पी रहे थे—हिरनिया बन-बन रोवे ले हो राम बदमी को लगा कि कुजू के गीत की हिरनिया वही है जो कब से बन बन रो रही है अकेली और मास्टर को लग रहा है कि हर आदमी की जिन्दगी अकेली हिरनी है जो बन-बन भटक कर रो रही है कब से।

बड़ा दर्द है कुजू के गले में, लेकिन कितना अभागा है बेचारा कोई आगे न पीछे। मास्टर बुदबुदाये। क्या बदमी?'

बदमी सिहर गयी, हाँ मास्टर साब अभागा है तभी न दरद है गीत में।

मास्टर को लगा कि बदमी का स्वर थोड़ा भींगा हुआ है।

'अच्छा बदमी, अब तू जा गाँव पास आ गया ह अब कोई डर नहीं ह।'

मास्टर लौट प॰े।

बदमी घर आयी तो कुजू का स्वर उसकी रग रग में थरथरा रहा था। उसे लग रहा था कि कुजू का स्वर उसका हाड-हाड चिटका देगा, जीवन का सारा बीता हुआ दरद बारी-बारी से उसको छाती में साँप की तरह रेंग गया। उसे इच्छा हुई कि वह उठ जाय और अधेरे में खेता का रौंदती हुई वहाँ पहुँच जाए जहा से तिवारी की आवाज आ रही ह। मापनी के याहर खडी होकर सुनती रहे उनकी पुकार को सुनती रहे। भीगती रहे भीगती रहे जब तक कि जम कर ठटी न हो जाय उसे लग रहा ह कि उसके भीतर कोई एक इच्छा बुलबुला रही ह एक भयकर प्यास उभर आया ह, एक सोई हुई भूख हहरा उठी ह। वह अपने बिस्तर पर सोई सोई हाँफने लगी। उसे लगा कि वह झापनी में पहुँच गयी ह। तिवारी की गाता हुई आवाज रुक गयी ह और उन्होंने उसे देखने ही दौ॰ कर बाहा म कस कर दबा लिया ह, दबाते ही जा रहे ह उसको भरी भरी देह का उभार तिवारी की छाती में कही खो गया ह, उसका पियासा अग-अग जसे तिवारी के अग-अग क ताल में डूब गया ह। लगा, तिवारी का बाहा के दबाव म उसका बहुत दिना स तना हुआ अग-अग चिटक गया ह। तिवारी एक पहाड ह जिसकी गोदी में वह झरने के समान लिपटा छटपटा रही ह। उसे लगा तिवारी उसे चूम रहे ह वह गुधते हुए पिसान की तरह नरम होती जा रही ह नरम और नरम जिसे तिवारी जिस रूप मे चाहे अपने हाथ से बना लें—वह अपने को भूलती जा रही ह और उसे ऐसा लग रहा है कि

बदमी इस कल्पना तक आते-आते पागल हो गयी। उसने झटके स उठ कर जोर से खेत की ओर भागना चाहा जहा से तिवारी का गीत

उसे बुला रहा है। गुदड़ा उठा कर फेंक दी तो उसकी बगल में सोया हुआ नन्हा सा भाई ठंडक से सिहर कर उससे और जोर से लिपट गया, बदमी उठते उठते भी नहीं उठ सकी और एकाएक उसे लगा कि उसे पकड़ने वाले हाथ सिवानी के नहीं उसके छोटे भाई के हैं बिना माँ के छोटे भाई के असहाय हाथ

बदमी ने जोर से भाई को खींचकर छाती में समा लिया। कौन कहता है वह बोझ है वह माँ है, माँ है ये छोटे-छोटे हाथ जैसे माँ की छाती पर रेंग रहे हों और छाती से रस चू रहा हो। बदमी को लगा जैसे सिवानी का गीत बन्द हो गया है बस रात और रात की चुप्पी

जागते रहो ओ ओ

पहरेदार ने शुरू कर दिया है। बदमी सोच रही है कि यह पहरा किसे जगा रहा है। सभी घरों में भूख लोट रही है भूख की चोरी करने कौन चोर आयेगा। भूख भूख भूख उसे लगा कि उसके पेट में कोई चीज खौल रही है। गुरसार (भाड़) जलती थी नहां, तो मिल क्या? कोई भुजाए भी तो क्या? सारे गाँव में कोई चीज है भी भुजाने लायक? घर घर उपास (उपवास) होता है। बाढ़ आयी, अभागी सब लूट ले गयी। जोहार बजरा यही सब तो भुजाने की चीजें होती हैं सो कई साल से इनका मुँह नहीं देखा गया। जौ, केराव (मटर), रहर (अरहर) ये सब तो सावन भादों तक ही नहीं चलते, फिर जाड़े की बात कौन चलावे। हाँ आजकल भी कभी कभी बाजार से लोग जौ केराव खरीद कर ले आते हैं तो सतुआ (सत्तू) की खातिर भुजाने आते हैं। बस यही सहारा रहता है लेकिन एक्का दुक्का आने वाले लोगों के लिए रोज गुरसार जला कर सुबह से शाम तक निठल्ला कैसे बैठा जा सकता है? इसलिए हफ्ता में खाली तीन दिन गुरसार जलती है और जो कुछ मिल जाता है उसी से पेट चलता है। कपड़े मिट्टि

इसकूल म काम करते हैं, बूढ़े हो गये, लेकिन काम करते ह। वहाँ से कुछ पा जाते हैं कुछ मास्टर साग दे देते ह अपना चौका बरतन कराई। ले देकर काम चलता रहता ह, लेकिन बपई का भी पैसा टइम ( टाइम ) से नहीं मिलता और चीज वस्त्र इतने महँगे हो गये हैं कि रुपया पैसा तो आँख लगता हो नहो। सरकार बपई के पस टाइम से क्या नही देती। सरकार तो बडी धनी ह वह क्यों नही दे पाती ? बपई कहते ह कि मास्टरा को भी टइम स तनखाह नहो मिलती। हाँ, देखा नही बेचारे मास्टर सुगन के घर की हालत। बेचारी पडिताइन जा लुगगा पहने था, तार तार हा गया था और वे मुझसे रो रही थी। कहती थी— बदमी, कहीं से उधार माँग ला मेरे लिए।' हाय मइया, मैं कहा से उधार मागती। लेकिन वे रो रही थीं— देख बदमी, कई टइम हो गया चूल्हा जले। पास पडोस ता मेरी गीता हो आई सबके यहा, बडी महमारी फली हुई ह। उधार जाबी दे कौन ? बदमी तू कुछ कर सकती ह, तुझसे पटती है दीनदयाल बाबू के यहा से। तू अपने नाम पर कुछ अनाज माँग ले आ। पडित जी गोरखपुर गये हं तनखाह लेने, देख मिल जाए तो ठीक, मिलते ही म तुझे बुला कर दे दूँगी।'

बदमी खुद हा पडिताइन के इहाँ कुछ उधार पताई का जोगाड करने गयी थी और उनकी हालत देखकर वह अपना रोना भूल गयी। बोली— जमुना भउजी, मुझस दीनदयाल बाबू के इहाँ से कोई बेवहार नग ह म ता खाली सरधा बहिनी के नाते कभी कभी उनके इहा जाता हूँ, सरधा बहिनी मुझे बडी अच्छी लगती हे लेकिन उनसे उधार पताई की बात म नही कह सकती। कई-कई दिनों तक तो मेरे ही यहाँ चूल्हा नहीं जलता लेकिन सरधा बहिनी से कुछ माँगने कहने का हियाव नही हाता।

'क्यों रे बदमी, कुजू तेरे लिए कुछ नहीं करता ?' जमुना भउजी इस दुरदसा में भी पूछने से न रह सकीं।

'धत्त, वो मेरे खातिर क्यों करेगा ?'

'अरे बदमी, तेरे खातिर नहीं करेगा तो क्या मेरे खातिर करेगा ? सुनती हूँ तेरा बड़ा खियाल करता है।'

अरे छोड़ो भउजी, इस गाँव में कौन किसका खियाल करता है यह सब जानती हूँ। घर घर का हाल जानती हूँ तुम्हारे भी बहुत से खयाल करने वाले हैं भउजी, वे सब कहाँ हैं ? अरे अपनी गरज पर सब सबका खयाल करते हैं, मौका पड़ने पर सब छू मन्तर हो जाते हैं।'

'अरे भाग हरजाई, अब मुझसे भी मजाक करने लगी, मैं अब बूढ़ी हुई, अभी खयाल करने वाले लगे ही हुए हैं ?'

'अरे भउजी, तुम जितनी बूढ़ी हो रही हो, उतने ही तुम्हारे खयाल करने वाले बढ़ते जाते हैं। तुम तो इतनी छबीली हो कि बूढ़े, जवान, लड़के-बाले सभी तुमसे छूट करते हैं सभी तुम्हारे ऊपर निछावर हैं। सच भउजी जब तुम लड़की रही होगी तो कितने लोग जेहलखान गये होंगे। कितने गये थे भउजी बोलो न ?

'अरे बदमी, तू भी एक ही पतुरिया है—जहमी तू है न बसी सबको समझती है, सुना है कुंजू तेरे पीछे दीवाना हो गया है बंसुरी बजा-बजा कर तुझे बुलाता है, मरकीनबना। बड़ा रसिया है।'
जमुना भउजी इस भुखमरी में भी हँसने लगी थी और बदमी कुंजू के नाम से भीतर ही भीतर महँमहाती मुसकराती खड़ी थी।

'धप्प स्कूल से लौटा हुआ जिता अपना बस्ता फेंक कर चारपाई पर बैठ गया था। जमुना भउजी का हँसता हुआ चेहरा एकाएक मुरझा गया और उनकी उदास आँखें चिन्ता रही थी—बम्मो, बम्मो कहीं से उधार माँग [illegible] था। बदमी खड़ी थी। जमुना भउजी ने कहा—बम्मा।

'कोसिस करती हूँ भउजी।' कह कर बदमी चली आई थी।

बदमी ने गरखा बहिनी में पहली बार उधार माँगा और सो भी अपने नाम पर। बदमी अनाज लेकर जमुना भउजी को दे आई। भउजी

ने बदमी को बहुत बहुत असीस दिया। तू जुग-जुग जी बदमी, तू जुग-जुग जी

भउजी यह असीस तो सरधा बहिनी को दो जिन्होंने दिया है '

भउजी कुछ देर चुप रही। गीता साग खोंट कर आ गयी था। भउजी ने उसे अनाज पीसने को दे दिया और खुद बदमी के कुछ और पास आकर कुछ मरम भरे ढंग से बोली—'बदमी ई गाँव वाले किसी का भला नहीं देख पाते, अब देखो न, बेचारी पढती है तो लोग अंड-बंड बकने लगे हैं। लेकिन म तो इस लड़की को बड़ी सुलच्छनी मानती हूँ कि कभी औरता के आगे आँख नहीं उठाती, मगर देख न बदमी। ई गाव वाले कहने लगे हैं कि मास्टर के साथ उसकी राम राम ! इ गाँव वाले जो न कहें मगर म तो बदमी, झूठ बोलने वाला का मुँह नोच लूँ। अब कोई लड़की किसी मास्टर से पढने लगे तो लाग कहें कि लड़की ऐसा करती है, वसा करती है मगर म तो कहती हूँ, बदमा ऐसी सुलच्छनी लड़की सारे गाँव म नहा है। अब मेरी पितवा की बात छोड दे, उसका तो काइ क्या जाड देगा ? अब लड़का तेज है, पढने लिखने का मन होता है तो क्यो नहीं पढे ? हमारे पण्डित जी तो कहते हैं कि आज कल लड़को-लड़का समान है, दानो को पढाना चाहिए मगर लड़कियो का कोई इसकूल हा नहीं है, काई करे क्या ?—मगर म कहती हूँ बदमा कि अगर किसी को मास्टर पढाने का मिल जाए तो क्या क्या नहीं पढे ? मगर दर्लसिंगार मरकीनवना यहाँ की बात वहाँ लगाया करता है।'

बदमी चुपचाप सुनती रही। वह समझ रहा थी कि ऐसी जितनी बातें गाँव में फलती हैं उन सबको ईजाद करने वाला म जमुना भउजी का और भउगा दर्लसिंगार का नाम पहले आता है, मगर जमुना भौजी का स्वर इस अनाज ने माड दिया है। वह यो ही खड़ी-खड़ी मुसकराती रही, फिर बोली—अरे भउजी अभी इस गाँव में कोई लड़की सरधा बहिनी के गोड का धोवन तो होगी ही नहीं कोई बना करे हाँ सिकायत

करने के लिए कोई भी कर ले। ई तो गाँव की आदत है कि जब किसी का भला होता है तो छाती जलती है औरों की। लोग अपनी-अपनी बहू-बेटिया को सँभालें भउजी, यही बहुत है।'

उसने मुसकरा कर जमुना भउजी की ओर देखा और पता नहीं क्यों जमुना भउजी जल गयी। देर तक चुप रही।

बदमी बोली—'अच्छा भउजी अब चल रही हूँ।'

अच्छा अच्छा जा फिर पास आकर धीरे से फुसफुसाई—अरे बदमी सुन, तू तो जानती है सच-सच यह क्या सचमुच मास्टर से और सरधा से मेरा मतलब है कि कुछ ऐसा-वैसा है, मैं तो नहीं मानती मगर ई भउगा दरोगिनवा बाटता फिरता है।'

'भउजी! आप अपनी बात कहिए न दुनिया भर की आड काहे को लेती हैं।' बदमी चीखी और बुदबुदाती हुई चली आयी कि ई गाँव है कि भूतखाना। लोग अपनी कानी आँख नहीं देखते दूसरों की फुल्ला जरूर देखत हैं

जमुना भाभी सुनती रहीं जलती रही और बदमी चली आई।

बदमी की भूख उभर आई है। मास्टर ने थोडा भूजा दिया है लेकिन उसने खाया नहीं, कल के लिए रख दिया है। बीच बीच में उसका वपई खाँस उठता है, छोटा भाई रह रह कर बदमी के पेट में धँस जाता है।

कैसा सन्नाटा है गाँव में? कितने लोग उसी के समान भूखे सोये होंगे। वह तो घर घर जाती है, घर घर का हाल जानती है, तर-त्योहार पर भी कितने घरों में उदासी छायी रहती है। वह जानती है। सबके यहाँ खाना बसूलने जाती है, किसके खाना में क्या है? वह जानती है।

'जागते रहो' चौकीदार की आवाज उस गली में ठनक रही है और बदमी जाग रही है

# : १२ :

गाव में चर्चा थी कि पचायत राज्य आ रहा है, पचायत तो कई बार कायम की गयी इन गाँवा म लेकिन टाँय-टाय फिस हो गयी और सरपच कोई भी हुआ लाछन लेकर विदा हो गया और फिर वही ढाक के तीन पात। नये पचायत राज्य की कल्पना से लोग खुश थे। कुछ नासमझ या बात के लिए बात करने वाले यह जरूर कहते थे कि अरे चल गयी पचायत-वोंचायत, यहाँ तो पच-सरपच सभी खाने कमाने में लग जाते हैं और लगते ह भाई भतीजा देखने और पंचायत-सचायत मानता कौन ह ? पच बदे जाते ह तीन चार घटे बहा मुनी होती है, पच महादय सुनते रहते है, उनकी इतनी हिम्मत नही होती कि बकवास करने बाला को डाट कर दबा दें और चार पाँच घटे की बहस के बाद आपस में गाली गलौज करते हुए मुद्दई मुद्दालय घर चले जाते हैं और फिर वही चोरी चिकारी, मार झगडा कर कचहरी । सो यह पचायत वोंचायत नही चलने की। देखा नही अभी दो साल पहले ही इस गाँव के और उस गाव के कुछ एम० ए०, बी० ए० लोगो ने, कुछ मास्टरो ने पचायत कायम की और राशन तथा कपडे का कोटा लिया और दो एक लोगो ने सारा माल हडप लिया। बडे बडे भाषण करते ह ये लोग बडी ऊँची ऊँची बातें बघारते हैं मगर नीयत इतनी खोटी कि मौका पडने पर मक्खी निगल जाएँ। सो भाई पचायत याचायत नही चलने की

मगर नहा समझदार लोग समझते हैं कि इस बार इस तरह की पचायत नही कायम हो रही है इस बार सरकार कायम कर रही है और पचों के हाथ में अधिकार देने जा रही ह जज मजिस्ट्रेट की तरह इन पचों-सरपचो का फसला सरकार द्वारा माना जाएगा। इनको

ट्रेनिंग होगी। बाकायदे कानून बन रहा है, पंचों-सरपंचों के क्या-क्या अधिकार हैं? वे क्या क्या कर सकते हैं? यह सब सरकार तय करके कानून भी पास करती जा रही है। और इनके निर्णय का मानना-न मानना भी छूट मुद्दई मुद्दालय को नहीं रहेगी उन्हें मानना ही पड़ेगा और न मानने के लिए उन्हें ऊंची कचहरी में अपील करनी होगी। पंचायत वारंट निकाल सकती है, अदालत में जबरदस्ती हाजिर कर सकती है। ये सारी बातें सुनने में आ रही हैं।

उस दिन एक नेता जी आये थे प्रचार करने के लिए। कह रहे थे— भारत की सच्ची आत्मा पंचायत में ही है। पंचायत की व्यवस्था भारत की सबसे पुरानी व्यवस्था रही है। पंचायत सचमुच सत्य और असत्य, पाप और पुण्य का फैसला कर सकती है। गाँव के ही पंच होते हैं, वे गाँव के सारे लोगों और परिस्थितियों से परिचित होते हैं, व वकीलों की बहस से नहीं प्रत्यक्ष अनुभव और जाँच से फैसला करते हैं। इसलिए वे असलियत को जानते हैं उनका फैसला असलियत के पक्ष में होता है। शहरी अदालत का फैसला वकीलों की बहस पर होता है जो जितना ही बड़ा वकील रख सकता है वह जीत के प्रति उतना ही अधिक आशान्वित रहता है। और बड़े वकील मिलते हैं पैसे वाला को। यानी शहरी अदालत का न्याय पैसे के पक्ष में होता है पैसे ने चाहे कितना बड़ा कुकर्म किया हो, चाहे वह कितना बड़ा असत्य और पाप छिपाये हुए हो लेकिन वही सत्य मान लिया जाता है, वही पुण्य समझ लिया जाता है। बिना पैसे वाले लोग यदि सचमुच न्याय पाना चाहते हैं तो उन्हें खेत बारी बेचनी होती है, फिर भी वे धनिकों को पछाड़ नहीं सकते हैं। धनिकों के और अनेक हथकंडे हैं, वे मजिस्ट्रेट के पास भी पहुंच जाते हैं और रुपयों की थैली उनके मुँह पर दे मारते हैं।

तो भाइयो, वर्तमान न्याय-व्यवस्था केवल धनिकों के लिए है और दुर्भाग्य से हमारे विशाल देश में कोटि कोटि गरीब जनता निवास करती

ह जिन्हें भरपट खाना नहीं मिलता, कपडा नही मिलता, जो बीसों मील पैदल चलकर कचहरी पहुँचते ह तो भूखे पेट सो रहते हैं, मगर वकील का पूजा में नही चूकते। दस कदम की दूरी उन्हें रिक्शे या टाँगे से पार कराते ह और खुद पीछे पीछे दौडते हैं। यह न्याय प्रथा देश के सिर पर कलंक ह। सत्यदर्शी गाधीजी ने देश की आत्मा को पहचाना था और उन्होंने अनुभव किया था कि इस देश म सच्ची न्याय व्यवस्था पचायत द्वारा ही हो सकती ह। प्रत्यक्ष अनुभव और जाच के आधार पर न्याय होता ह, बीच में दलालो की जरूरत नही रहती और इस तरह यह न्याय कितना सस्ता ह। पैसे रुपये की बिलकुल जरूरत नहीं। अब हमारी अपनी सरकार है। गाधीजी के आदर्शों पर चलनेवाले पडित नेहरू की सरकार। इसलिए सरकार पचायत राज्य कायम करने जा रही ह, सभी लोगो को पचायत राज्य की सफलता के लिए जी-जान से कोशिश करनी चाहिए '

पास की निस्तब्धता में डूबा हुआ गाव पचायत राज्य की स्थापना की सरगर्मी से एक बार कसमसा गया। फिर एक सुनहला सपना तैरने लगा। पहले गाँव के पचो और सभापति का चुनाव होगा फिर उन्ही में से अदालत पचायत के पचो और सरपच का चुनाव होगा पहले खुसफुस-खुसफुस चर्चाएँ थीं अब जोर शोर से बातें होने लगीं—किसे चुना जाए पच और सभापति ?

दीनदयाल सतीश रामकुमार अमलन जी, जग्गू हरिजन, और और बहुत से नाम । गाँव वालो को आजादी के बाद फिर ऐसा लग रहा था कि वे बहुत बडा निर्णय लेने जा रहे हैं। इसलिए सोच-समझ कर कदम उठाने की आवश्यकता व महसूस कर रहे थे सरगर्मी थी। हिंसा की भावना आदमी सम्बन्धो स कर लेता ह इसलिए हर आदमी का निर्णय एक बिन्दु पर नहा मिल पाता था। दीनदयाल बेईमान ता है लेकिन ह अपना पटोदारी में ... [illegible]

हो बेचारे मुलायम आदमी हैं और पट्टी का ख्याल करने वाले।
मगर नहीं, सतीश ठीक रहेगा बाबू महीप सिंह की नौकरी करते हुए भी उनका ताव नहीं सह सका, वह सच का हिमायती है, जरा कड़े मिजाज का तो है लेकिन कड़ा मिजाज सत्य के निवाह के लिए होना ही चाहिए मगर वह अपना पर पट्टीदारों का ख्याल नहीं करेगा कभी नहीं करेगा? बाबू महीपसिंह की नौकरी करते समय गाँव के किस आदमी का नहीं उपकार किया है? सारी विधाएँ मगन जीवन पर किसे इमदाद नहीं दी है? किसकी लगान में छूट नहीं दी है? मगर वह तो और बात है, यह और बात यह तो होना ही चाहिए जो आदमी पंच बनकर भी भाई भतीजा पर पट्टीदारी देखने लगा, वह हो चुका पंच और पर चुका पंचायत

और अमलेश जी भी तो हैं पुराने रईस पंडित और कवि, स्वभाव के बड़े मीठे, परन्तु भीतर से बड़े मजबूत। रईस इतने बड़े कि सब कुछ बिक गया मगर हाथ से कभी तिनका नहीं उठाया। हाँ, यह तो ठीक है मगर यह तो निकम्मापन है ऐसा निकम्मा आदमी क्या करेगा पंचायत में जा कर?—कई बार देखा है उन्हें। पंच बनाये गये हैं और गटो 'हूँ हाँ' करते रहे हैं किसी फैसले पर तो वे आ ही नहीं पाते। भाई वे विचार करते हैं, जो विचार करता है वह जल्दी किसी फैसले पर नहीं आ सकता विचार उचार कुछ नहीं वे किसी को नाराज करना नहीं चाहते

और रामकुमार वह तो बेधरमी है छोटे बड़े का कुछ हिसाब ही नहीं रखता, न जनेऊ पहनता है, न चुरकी रखता है अमट्ट खाता है और अमट्ट लोगों के साथ रहता है मगर तो भी होशियार आदमी है, मास्टर है, कानून जानता है, उसे वोट मिलना ही चाहिए।

और मंगा दर्लासिंगरा ताली पीट पीट कर कहता फिरता है कि अरे ए भउजी, जग्गू नेता को वोट नहीं दोगी? जग्गू तो असली

कांगरेसी रहे हैं। हाय मइया, बेचारे कहते थे कि कांगरेसी राज में गांधी जी हमें राजा बना देंगे बेचारे गांधी जी तो मर गए उसे राजा कौन बनाये ? मगर अब पंच बनने से भी गए ?

और भउजी आजिज आकर कहती—'अरे ए मउगा तू मेहरारुन के बीच आकर काहे को वोट मांगत फिरता ह, मरदवा से काहे नाही कहता। का मरदवन से डर लागत ह कि तू हे कोई राखि लेई—? मउग कही का, फिरका खानि करिहयायें हिलावत घूमत है—'

मउगा दर्लसिंगार फिर ताली बजाकर कहता—हाय भउजी, अरे भउजी, मुझे तो तुम्हीं लोगों के बीच बैठना अच्छा लगता है। तुम काहे डरती हो मुझसे ?'

'अरे तुमसे कौन डरे ए दर्लसिंगार। तुम्हरे पास कुछ हो भी कि कोई डर, मगर तुम्हारा चाल लोक नाही लागत कि मरद होकर मरदन से भागत फिरत हो जा भाग यहाँ से '

और मउगा दर्लसिंगार ताली पीटता हुआ महावीर के पास पहुँच जाता वोट चाहो वोट जगू हरिजन के ए महवीर दूबे

'अरे भाग ससुर मउग।' महावीर चिड़चिड़ा कर बोलते

'काहे ए दुबे जा, जगू को देते हुए फटती है हाय मइया।

महावीर दुबे भी एक ही थेथर थे। उन पर यदि दस ओर से एक ही साथ बौछार पड़ती थी तो भी नहीं घबराते थे और सबका वार झेलते हुए ऊँचे स्वर में जवाबी वार करते थे। वे इस गांव के गाली के पद में आते थे, इसलिए लोग उन्हें बनाते थे और उनका स्वभाव ही कुछ इस तरह का सलोनो था कि उन्हें छेड़ने में लोगों को मजा आता था

'तनि हेहर देख —दर्लसिंगार मउग, तुम चाहे जगू को दो चाहे अमलेश जी को, तुम मउग हो, तुम्हारा फटेगा, हाँ तनि हहर देख।।

और मउगा दर्लसिंगार ताली बजाता हुआ चिकिर चिकिर चाल से चलता हुआ दीनदयाल के यहाँ पहुँच जाता— हाय मय्या, सुना है दीनदयाल भाई आपने ? पचायत में कई चमार कई तेली और कई अहिर सच हो रहे है। सतीश और कुमार दानो छोटी जातियो को उकसा रहे है। कह रहे है, छोटी जातियो को पचायत राज में समान अधिकार मिलना चाहिए। हाय मइया लोप हो गया, जो चमार सियार हमारा आपका हल जोतते है वे पच बन कर हमारा फैसला करेंगे हाय मइया, जो जो न करें आज कल के लौंडे

दीनदयाल धारे धारे मउगा दर्लसिंगार से सारा हाल पूछते और त्यारियो पर हलका-हलका बल देकर सारो चाज समझने की कोशिश करते— तो सतीश और कुमार छोटी जातियो को उकसा रहे है ? फिर वे मउगा से कहते— तो क्या बुरा कर रहे है ये लोग ? छोटी जातियो को भी तो वोट देने का अधिकार है। उन्हें भी तो काग्रेसी राज में बराबर का हक दिया गया है। ठीक है, उन्हें भी होना ही चाहिए।' इतना कहते-कहते दीनदयाल एक तीखी घूँट पी लेते।

'होना चाहिए नही ठेंगा, हाय मइया आप भी उसी गिरोह म शामिल हो गये ? । अब तो गया धरम करम। आपही पर भरोसा था। आप ही हम लोगो का खियाल करते है और आप भी उन्हीं सिरफिरो की तरह बतियाने लगे।

दीनदयाल हँस पडते और फिर मउगा को एक कमरे में ले जा कर आगे का सारा प्लान बनाते।

मउगा दर्लसिंगार वैसे तो दीनदयाल का समर्थक था लेकिन सच्चे अर्थों में वह किसी का समर्थक नही था, उसे रस था इधर की बात उधर करने में। उसका सम्बन्ध औरतो के समुदाय से था इसलिए वह छोटी-छोटी बातो को भी भीतर से खोज लाता था और आस पास

की तरह पल भर में गाँव में फैला देता था। मगर तो भी यह दीन-दयाल के प्रति विशेष कृपालु था, उनके यहाँ उठता बठता था, घर के काम से फुरसत पाकर भस की तरह दीनदयाल के यहाँ ही पट्टीदारी के अन्य अधिका के माथ हिरा रहता और समय-समय पर दीनदयाल स पेट-पाल्न के लिए रसद वगरह भी पाता रहता था।

मउगा दर्लसिंगार दीनदयाल का प्रचार करने लगा—खास कर औरतों के बीच। उसे बताया गया था कि रामकुमार और सतीश एक दल के हो गए हैं और यदि दोनों आ गये तो उनम से ही कोई सभापति हो जाएगा। और सरपच भी हो सकता है। इसलिए दर्लसिंगार ने दीनदयाल का मत्र लेकर प्रचार शुरू किया—'अरे रे ए काकी, जानती हो न, कुमार तो ईसाई ह। जब यह पढ़ता था गोरखपुर तो ईसाई और मुसल्मान के घर खाना खाता था, मुर्गी खाता है, सराब पीता ह और जनेऊ तोड डाला ह, चुरकी कटवा दी है, सोसलिस्ट ह। सोसालिस्ट धरम-करम नही मानते। बामन चमार सभी का एक साथ जिलायेंगे। और इनका कहना है कि सादी बियाह भी बामन चमारों के बीच हुआ करे। हाय मया, ऐसा कही हो सकता है काकी ?

'अर मार मरकीनवना के रे बडा बेधरम हो गया ह, ओइस लडिका तो बड़ा अच्छा ह।'

'अच्छा नाहीं ठेंगा काकी, बड बूढन को तो सतियाता ही नही है। जानती हो—कहता है कि माँ-बाप का आदर क्या करें ? उन्हाने क्या एहसान किया ह। उन्हाने तो मजा किया और हम पैदा हो गये। सुनती हो काकी, सुनतो हो ईया, अरे सुनती हो भउजी, ए फआ सुनती हो न।'

ईया अपने पोपले मुँह से पगुराती हुई कहती, 'अरे दहिजरा-क-नाती बडा अपेल करत बा।'

काकी बोलती 'अरे कलिजुग है ईया, कलिजुग, जवन न हो जाय।'

मउगी बोल्ती—कलजुग नाही ठेगा है हाय मइया, इसी कलिजुग में तो दीनदयाल भाई है जिनने धरमी, इसकूल को दान दिया है, काई भी काम-काज पड़ता है मदद देने को तयार। इतने बड़े हो गये और इतने पैसे वाले है लेकिन बड़े-बूढ़ा के सामने आँख उठा कर नही देखते। नवरात्रि में दुर्गापाठ कराते है, रामलीला करवाते है, पूरनमासी को कथा-वार्ता सुनते है। अभी भी किसी का छुआ नहीं खाते, शहर में काम लगा ही रहता है लेकिन आज तक होटल में खाना नही खाया, धरम करम को इतना मानते है कि '

'चमड़ों के घर में घुस जाते है, भउजी ने हँसते हुए वाक्य पूरा किया। औरतें भभा कर हँस पड़ी। मउगा थोड़ा-सा हतप्रभ हो गया। फिर सभाल कर बोला—ई सब झूठा प्रचार किया है लोगो ने '

'लेकिन ई परचार भी तो तुम्हा ने किया है मउगराम।' भउजी जोर पर थी।

'मने नहीं किया, मुमसे तो रामकुमार की पार्टी ने कहा था बाद मे मालूम हुआ कि प्रचार झूठा है। जगू हरिजन का भी हाथ था इसमें। वे सब मिलजुल कर दीनदयाल भाई को बदनाम करते हैं, हाय मइया।

'और वो क्या है दल्लू जो तुम मरया बहिनी और मास्टर की चोरा-चारी की बात कर रहे थे वो भी कुमार और जगू ने ही तुमसे कही होगी।' भउजी ने चिकोटी ली।

'अरे तुम भी कहाँ से कहाँ चली आती हो भउजी। बात हो रही थी घाट की और तुम चली गयी चोरा चोरी पर। मत कहता हूँ भउजी, तुम बचपन में बड़ी खेलाड़ी रही होगी।'

'हाय मइया। भउजी दर्लासगार की नकल करती हुई बोली— अब भी खेलाड़ी हूँ। है ताव खेलने का ? मगर तुमको तो खेलने के लिए मरद चाहिए, हाय मइया।

औरतें इसने लगीं और दर्लसिगार चिकनिव चिकनिव कमर हिलाता हुआ वहाँ से भाग खड़ा हुआ।

पचायत के चुनाव की सरगर्मी बड़े जोर शोर से चलने लगी। हर घर यही चर्चा, हर आदमी दाँव पेंच मे उलझा हुआ स्पष्ट रूप से दल-बन्दियाँ होने लगीं।

दीनदयाल ने दर्लसिगार के द्वारा चमरौटी के हरिजनों को फोड़ना-फाँसना शुरू किया, गाँव के कुछ तटस्थ लोगों को अपनी ओर लेना आरम्भ किया। मास्टर सुगन, महावीर वगैरह जो तटस्थ थे उन्हें भी चुनाव में खड़ होने के लिए उत्साहित किया। कुजू को भी लपेटना चाहा। और एक थे फेंकू बाबा जो थे तो सतीश के खानदान के तथा सतीश के समर्थक, लेकिन बड़े महत्वाकांक्षी और फक्कड़ किस्म के। दीनदयाल के वे जानी दुश्मन थे, रहते भी थे उन्हीं के पड़ोस म। मगर दीनदयाल बड़े ही उस्ताद थे। मौका पड़ने पर उन्हें मक्खी निगलने म सकोच और घृणा नहीं होती थी। उन्होंने एक दिन मौका पाकर फेंकू बाबा को उकसा दिया—'क्यों फेंकू काका! आप पचायत के चुनाव में नहीं खड़े हो रहे ह?

'मैं खड़ा होऊँ या न खड़ा होऊँ तुमसे मतलब? हूँह!' फेंकू काका पल्ला झाड़कर चलने को हुए कि दीनदयाल ने मीठे उपालम्भ के स्वर में डाँटा—'इसीलिए तो आप पर गुस्सा आता ह। आप अपनी मस्ती और त्याग में अपने हित-अहित को भी नहीं देखते। आप इस गाँव के बड़ आदमी हैं। यह पचायत पुरानी पचायत नहीं ह कि बनी और टूट गयी। सरकार बना रही है इसे, इसमें पचों को मजिस्ट्रेट का 'पावर' होगा। आप इस गाँव के ही नहीं, इस जवार के नामी और इन्साफ-पसद लोगों में से हैं इसलिए आपको तो उठना ही चाहिए।'

'अरे जा जा, मुझे सिखाने आया ह, आज तक मुझे बेइमान कहता फिरा ह, आज इन्साफ पसद कहता फिर रहा है। हूँह, क्या हम नहीं

मउगा बोल्ता—"कलजुग नाहीं ठॅगा है हाय मइया, इसी कलिजुग में तो दीनदयालो भाई हैं जिनने धरमों, इसकूल को दान दिया है काई भी काम काज पडता है मदद देने को तयार। इतने बड़े हो गये और इतने पैसे वाले हैं लेकिन बड़े-बूढों के सामने आँख उठा कर नहीं देखते। नवरात्रि में दुर्गापाठ कराते हैं रामलीला करवाने है, पूरनमासी को कथा-वार्ता सुनते हैं। अभी भी किसी का छुआ नहीं खाते शहर में काम लगा ही रहता है लेकिन आज तक होटल में खाना नहीं खाया, धरम करम तो इतना मानते हैं कि '

'चमइनी के घर में घुस जाते हैं', भउजी ने हँसते हुए वाक्य पूरा किया। औरतें भभा कर हस पड़ीं। मउगा थोड़ा-सा हतप्रभ हो गया। फिर सँभाल कर बोला—"ई सब झूठा प्रचार किया है लोगों ने '

लेकिन ई परचार भी तो तुम्हीं ने किया है मउगराम।' भउजी जोर पर थी।

'मने नही किया, मुझसे तो रामकुमार का पार्टी ने कहा था बाद में मालूम हुआ कि प्रचार झूठा है। जग्गू हरिजन का भी हाथ था इसमें। वे सब मिलजुल कर दीनदयाल भाई को बदनाम करते हैं हाय मइया।'

'और वो क्या है दल्लू जो तुम सरया वहिनी और मास्टर की चोरा-चारी की बात कर रहे थे वो भी कुमार और जग्गू ने ही तुमसे कही होगी।' भउजी ने चिकोटी ली।

अरे तुम भी कहाँ से यहाँ चली आती हो भउजी। बात हो रही थी वाट की और तुम चली गयी चोरा चोरी पर। सच कहता हूँ भउजी, तुम बचपन में बड़ी खेलाड़ी रही होगी।

हाय मइया। भउजी दर्लासंगार को नकल करती हुई बोली—'अब भी खेलाड़ी हूँ। है ताव खेलने का ? मगर तुमका तो खेलने के लिए मरद चाहिए, हाय मइया।

औरतें हसने लगीं और दलसिंगार खिलखिल खिलखिल कमर हिलाता हुआ वहाँ से भाग खड़ा हुआ।

पंचायत के चुनाव की गरमर्मी बड़े जोर शोर से चलने लगी। हर घर यही चर्चा हर आदमी दाँव पेंच से उलझा हुआ स्पष्ट रूप से दल बन्दियाँ होने लगा।

दीनदयाल ने दलसिंगार के द्वारा चमरौटी व हरिजनों को फोड़ना फाँसना शुरू किया, गाँव के कुछ सदस्य लोगों को अपनी ओर ऐंचना आरम्भ किया। मास्टर सुगन, महावीर वगैरह जो सदस्य थे उन्हें भी चुनाव में खड़ होने के लिए उत्साहित किया। वृजू को भी लपेटना चाहा। और एक थे फेंकू बाबा जो थे तो सतीश के खानदान के तथा सतीश के समर्थक, लेकिन बड़े महत्वाकांक्षी और फक्कड़ किस्म के। दीनदयाल के व जानी दुश्मन थे, रहते भी थे उन्हीं के पड़ोस में। मगर दीनदयाल बड़े ही उस्ताद थे। मौका पड़ने पर उन्हें सबको निगलने में सकोच और घृणा नहीं होती थी। उन्होंने एक दिन मौका पाकर फेंकू बाबा को उकसा दिया—'क्यों फेंकू बाबा! आप पंचायत के चुनाव में नहीं खड़ हो रहे ह?'

'मैं खड़ा होऊँ या न खड़ा होऊँ तुमसे मतलब? हूँह!' फेंकू बाबा पल्ला झाड़कर चलने को हुए कि दीनदयाल ने मीठे उपालम्भ के स्वर में डाँटा—'इसीलिए तो आप पर गुस्सा आता ह। आप अपनी मस्ती और त्याग में अपने हित-अहित को भी नहीं देखते। आप इस गाँव के बड़ आदमी हैं। यह पचायत पुरानी पचायत नहीं ह कि बनी और टूट गयी। सरकार बना रही ह इसे, इसमें पचों को मजिस्ट्रेट का 'पावर' होगा। आप इस गाँव के ही नहीं, इस जवार के नामी और इन्साफ-पसंद लोगों में से हैं इसलिए आपको तो उठना ही चाहिए।'

अरे जा जा, मुझे सिखाने आया है, आज तक मुझे बेइमान कहता फिरा है आज इन्साफ पसंद कहता फिर रहा ह। हूँह, क्या हम नहीं

जानते कि यह पंचायत सरकारी है। क्या तू हमसे अधिक जानता है? देश-दुनिया का हाल, सिखाने आया है मुझे हैंह। जब अपने घर के ही लोग उठ रहे हैं तो मैं क्यों उठूँ?

'फेंकू काका' दीनदयाल के स्वर का मिठास और गहरा हो गया। आप मुझसे क्या सबसे अधिक राजनीति जानते हैं आप तो देश-दुनियाँ घूमे भी हैं इसीलिए मैं कह रहा हूँ कि आप पंचायत में उठिए और न्याय होने दीजिए।'

'अरे जब तक तू जिन्दा है तब तक इस गाँव में नियाव कहाँ? तू जहर की छुरी है छुरी।' कह कर फेंकू बाबा झटके से चले गये।

दीनदयाल अपनी घुमती भरी मुस्कान फेंकू बाबा की भागती हुई गति की ओर फेंक कर घर की ओर चल पड़े। उनकी मुसकान कह रही थी, 'आओ अब तुम्हारे दिल में उद्वेग लगा दिया है, अब तुम जानो, तुम्हारा काम जाने।'

फेंकू बाबा घर आये खा पीकर पड़े तो उन्हें नया भूत सवार हुआ कि वे चुनाव लड़ेंगे और सभापति पद के लिए लड़ेंगे। वे ठीक दोपहरी में हलचल मचाते हुए सतीश के यहाँ आए। सतीश घर पर ही था। फेंकू बाबा ने आते ही शोर छोड़ा—हूँ, लोग समझते हैं कि सतीश ने ही मुझे चुनाव लड़ने से मना कर दिया है। हूह सतीश बाबू मुझे क्यों मना करेंगे? अरेऊ लोगों को खबर नहीं कि सतीश बाबू कितने बड़े आदमी हैं, मुझे कितना चाहते हैं। अब देखें लोग कि मैं चुनाव लड़ूँगा और वो भी अब सभापति पद के लिए लड़ूँगा।

सतीश फेंकू बाबा का यह रूप देखकर थोड़ा-सा विस्मित रह गया। फेंकू बाबा को जब कुछ करना होता है तो दूसरों के नाम पर अगाही फेंकते हैं। वह समझ गया कि फेंकू बाबा का चुनाव का भूत सवार हो गया है। उसने समझाया कि फेंकू बाबा आप को यह क्या भूत सवार हो गया? आप आराम से खाइए, पीजिए, राम का नाम जपिए, यह

सब बखेड़ा छोड़ दीजिए जवानों पर। हम लोगों ने पंच और सभापति का सारा नक्शा बना लिया है, अब आप बीच में कूदेंगे तो नक्शा बिगड़ जायगा।'

'सतीश बाबू, आराम कहाँ और नाम कहाँ, जब तक यह दिनदयला इस गाँव में है। वह सभापति होगा और मैं ताकता रहूँ—हूँह, यह नहीं होगा सतीश बाबू, मैं तो चुनाव लड़ूँगा।' सतीश जानता था कि फेंकू से कोई योजना बताना ठीक नहीं है। वह कभी भी सारी योजना उठा कर गाँव भर में छींट सकता है। मगर तो भी कुछ काम की बात तो उन्हें समझानी ही थी। बोला—'देखिए फेंकू काका, सभापति के पद के लिए दो आदमी खड़े हो रहे हैं एक दीनदयाल भाई, दूसरे रघुनाथ भाई। हम लोग रघुनाथ भाई का समर्थन करेंगे।

फेंकू बाबा झल्ला उठे—'तो क्या मैं बुरा हूँ सतीश बाबू! रघुनाथ दूसरी पट्टी का आदमी, कुकरमी साला, उसका पच्छ ले रहे हैं आप लोग और मैं घर का आदमी मुझे कोई पूछता ही नहीं।'

'आप बात नहीं समझते हैं फेंकू काका, राजनीति अभी से शुरू हो गयी है। लोगों ने आपको बहका दिया है, लगता है। बात समझिए—देखिए दीनदयाल भाई का तो दुनियाँ जानती है कि वे क्या हैं, उनका सबसे बड़ा सिपाही है मंगरा दलसिंगार, जो औरतों के बीच नाचता भरी बातें फैलाता घूम रहा है। वे खुद भी क्या हैं जग-जाहिर है लेकिन हरिजन टोली पर उनका काफी अधिकार है, इसलिए नहीं कि हरिजन बस्ती उन्हें बड़ा प्यार करती है, बल्कि इसलिए कि काफी हरिजन उन्हीं की जमीन में बसे हुए हैं, स्वराज्य मिलने के बाद भी यह आतंक कभी गया नहीं। अगर दीनदयाल सभापति हो गए तो क्या होगा आप खुद ही सोचिए। पहले की पचायतों में उन्होंने क्या-क्या किया है यह सभी लोग जानते हैं। रघुनाथ भाई दूसरी पट्टी के तो हैं मगर हरिजन बस्ती पर उनका भी समान अधिकार है उनकी भी जमीन में काफी हरिजन

बने हुए हैं। दूसरे, उनकी पार्टी के लोगों के बीच उनका बड़ा मान है। और बने भी वे इलाके पसंद आदमी हैं। अगर उनका समर्थन नहीं लिया गया तो दीनदयाल सभापति हो जाएंगे।'

'तो आप खुद ही क्या रहा खड़े हो जाते मनोहर बाबू ! हुँह, आप किसके किस बात में कम हैं?'

'मैं, मैं नहीं खड़ा होता चाहता सभापति पद के लिए। आप जानते हैं, मैं महीप बाबू का नौकर हूँ यहाँ रहने की ड्यूटी दें या न दें सभापति को तो हमेशा गाँव में ही होना चाहिए। फिर गाँव वाला को सुख-दुख पड़े।'

'अरे तो अमलेश भाई को क्यों नहीं खड़ा करते? इतने विद्वान आदमी। जिस सभा में बैठेंगे वह सभा कम से उजागर हो जाएगी।

सतीश हँस पड़ा। बोला— नहीं, पिता जी बुढ़ौती में इस झमेले में नहीं पड़ना चाहते। वे साहित्यिक व्यक्ति हैं राजनीति में उनकी पवित्रता का चोट पहुँचेगी। दूसरे मैं तो पंच पद के लिए उठ ही रहा हूँ, एक घर से दो व्यक्तियों का उठना ठीक नहीं है।

'हाँ हाँ, समझा सतीश बाबू, आप बड़े गियानी पुरुष हैं जो कहेंगे वही होगा। मउगा दिनदयला हमसे खेलवाड़ कर रहा था।

सतीश समझ गया कि दीनदयाल की यह चाल है। उसी ने फेंकू काका को उकसाया है ताकि रघुनाथ और फेंकू की नातियाँ लड़ जायँ और दीनदयाल साफ-साफ सुरक्षित बच जाएँ।

सतीश सभापति पद के लिए नहीं खड़ा हो रहा था—उसका कारण कुछ दूसरा था, वह सरपंच बनना चाहता था। महीपसिंह इस खतरे से अवगत थे। अदालत पंचायत के क्षेत्र में जितने गाँव आते थे उनमें महीपसिंह का गाँव सिंहपुर तथा उनकी छावनी भाटपर भी थी। महीपसिंह स्वयं सरपंच बनना चाहते थे लेकिन उन्हें सतीश का भय था। सतीश की लोकप्रियता वे जानते थे। वे नहीं चाहते थे कि सतीश

पंचायत के चुनाव में कूद। इसलिए इन दिनों वे उसे उलझाये रखना चाहते थे।

सतीश ने बार-बार महीप सिंह से छुट्टी चाही कहा—'यहाँ कुछ काम तो है नहीं, आप मुझे छुट्टी दीजिए ताकि घर कुछ काम कर सकूँ, बड़ा पिछड़ रहा है काम मेरा।'

महीप सिंह ने हमेशा हीले हवाले किये। कहा—काम बिगड़ता हो तो हमारी छावनी पर से हल बैल और आदमी भेज दिया करो, मगर तुम्हें तो हमारा काम सँभालना ही होगा। आज यह काम है, कल वह काम है मगर सतीश जानता था कि कोई काम नहीं है, उसकी शक्ति और समय का दुरुपयोग है। कुछ दिन सभालता रहा अपने को, भीतर ही भीतर द्वन्द को पीता रहा लेकिन जब चुनाव बहुत नजदीक आ गया तो उसने हिम्मत करके साफ-साफ कह दिया कि मुझे छुट्टी चाहिए जनता की सेवा करने के लिए, मैं पंचायत का चुनाव लड़ने वाला हूँ।

महीप सिंह इसी बात से डर रहे थे। पहले तो लल्लोचप्पो किया कि चुनाव तो मैं भी लड़ने वाला हूँ और मेरा—और तुम्हारा गाँव एक ही अदालत के क्षेत्र में आता है। हम दोनों एक साथ कैसे रह सकते हैं पंचायत में।

सतीश ने अनुभव किया कि अभी भी इस बठमुल्ले के भीतर अहंकार का अंगारा धधक रहा है, मालिक और नौकर की गाँठ अभी भी उसके मन में है। बोला—क्यों रहने से क्या हर्ज है?'

'है न, बहुत हैं, नौकरी और जनसेवा दोनों साथ नहीं चल सकते।' महीप सिंह विवाद बढ़ाने के चक्कर में नहीं थे। उठकर चले गये।

सतीश के मन में संघर्ष तो पहले ही से चल रहा था। इस बैठी-बैठाई नौकरी से उसका जी ऊब गया था। जमींदारी खत्म हो गयी, वसूली का काम समाप्त हो गया, आमदनी भी जाती रही, अब सड़ने

पर बैठ कर मक्खी मारते से तो जीवन नहीं चलेगा ? हालत या बिगड़ गयी है कि बाबू साहब ने घर में गाये में लाले पड़े हैं, रोत बारी बेंच बेंच कर खर्चा चला रहे हैं और शौक पूरा कर रहे हैं। चलते फिरते मेहमान आ जाते हैं तो अब उन्हें कोई पूछता नहीं खाने पीने को। खाग-सत्तू भी नहीं आ पाता, तिस पर तुर्रा यह कि नौकर रखेंगे, अहंकार की तुष्टि तो होगी। देना लेना कुछ नहीं किन्तु नौकर रखेंगे। नये-नये नौकर रखते जा रहे हैं, कोआपरेटिव कायम कर रहे हैं, बड़ी-बड़ी योजनाएँ छान कर महल की तरह बनाते हैं। अभी अभी कोआपरेटिव का मनेजर नियुक्त किया है। उस कमबख्त मनजर का दुनिया में कहीं जगह ही नहीं मिली है, यहाँ लात घूसा खाने आया है, हाथी पर चढ़कर घूमता है, समझता है इन्द्रासन पा गया है, अरे ये बाबू महीप सिंह हैं और इनकी कोआपरेटिव योजना है।

कहते हैं नौकरी और जनसेवा साथ नहीं चलेगी। नहीं चलेगी तो नहीं चलेगी। हूँह। सतीश शाम को वहाँ से उठा और घर चला आया।

दूसरे दिन सबेरे-सबेरे मनरजवा सिपाही आ धमका— बाबा बबुअन बुलाते हैं।'

'मनराज जाकर कह देना बबुअन से कि मैंने नौकरी और जनसेवा में से जनसेवा को चुन लिया है।'

'अच्छा तो ऐसा कह दूंगा बाबा।' मनराज चलने को हुआ मन में घोखता हुआ कि नौकरी और और और अरे ई तो साला भूली गया। वह लौट पड़ा—'बाबा क्या कह दूंगा ? ई ससुरा बाद वाला तो अबते नहीं है का कहा आपने बाबा ?

सतीश हँस पड़ा— जनसेवा, जनसेवा, समझे मनराज !'

अब है बाबा अब समुझि म आया है, ई जनसेवुआ ससुरा भूली जात रहा। जनसेवुआ जनसेवुआ घोखता हुआ आगे बढ़ा।

सतीश अब निश्चिन्त होकर पंचायत के क्षेत्र में कूद पड़ा।

बापू महीप सिंह के आदमी पर आदमी आये लेकिन सतीश नही गया। महीप सिंह ने यह भी कहलाया कि एक बार आकर हिसाब किताब तो साफ कर जाओ तो सतीश ने कहला दिया कि हिसाब किताब तो दो बरस पहले ही साफ हो चुका था। तख्ता पर बैठने का क्या हिसाब किताब होता है? महीप सिंह सतीश से नाराज हो गये।

दीनदयाल ने मास्टर सुगन को उकसाया कि तुम भी खडे हो जाओ। मास्टर सुगन ने कहा—'नही भाई, मुझे इस बवाल म मत खींचो। मैं सतीश भाई से वादा कर चुका हूँ कि नही उठूँगा।'

'अरे, लेकिन सतीश भाई ह किस खेत की मूली? आप उनके इशारे पर काम करेंगे? आप मास्टर आदमी ह, समझदार। आप लोग पंचायत में नहा रहेंगे तो क्या चमार अहिर रहेंगे?

'ना भाई, मैं इस झझट में नहीं पडूँगा और सतीश भाई से कह दिया ह, फिर ठीक नही ह उठना।

'लेकिन सतीश भाई ने तो अपनी गोटी बठाने के लिए अच्छे अच्छे लोगों को मना कर दिया ह। आपको उठाने क्यो नही खडा किया। उलटे मना क्यों कर दिया इसलिए न कि वे जीतें, रामकुमार जीतें, जग्गू हरिजन जीतें, रघुनाथ जीतें, झिल्लमिट तेली जीतें और मनमाना राज करें गाँव पर। लेकिन यह नहीं होने का। ये सबके सब चालबाज हैं।'

नहीं दीनदयाल भाई, ऐसा मत कहिए ये सभी लोग अच्छे हं और खासकर सतीश भाई तो बहुत ही खरे और ईमानदार आदमी हैं।'

'बहुत खरे।' दीनदयाल मुसकराये। 'अरे ऐसे ही लोग रँगे सियार होते हैं। आपको मालूम है पडित जी, बाबू महीपसिंह ने उन्हें निकाल दिया ह अपने यहाँ से, कुछ गोल माल किया हैं हजरत ने।

'मगर मैं तो देखता हूँ, रोज बाबू साहब का सिपाही उन्हें बुलाने आता ह और वे डाँट कर नाहीं कर देते ह, नहीं जायेंगे।'

'यही तो बात है मास्टर साहब, जो आप लोगों के मास्टराना दिमाग में नहीं आती। सतीश को बाबू साहब बुला रहे हैं हिसाब किताब साफ करने के लिए और सत्यवादी जी उनके मारे नहीं जा रहे हैं कि पिट जाएंगे।'

मास्टर सुग्गन ने सिपाही को हिसाब किताब की बात करते सुनी थी। उसे कुछ संशय हुआ जब कि हो न हो ऐसी ही बात हो। लेकिन वह सतीश का जानता है। वह एसा नहीं करेगा और वह बाबू महीपसिंह का ताव भी बर्दाश्त नहीं कर सकता। 'होगा भाई अपन को क्या' कह कर उसने दीनदयाल से छुट्टी पा लेनी चाही।

'होगा नहीं, ह। और एसा कहने से काम नहीं चलता, आपको उठना पड़ेगा बाबू महीपसिंह की भी यही इच्छा है। कल ही उन्होंने मुझे कहलाया ह।' कह कर दीनदयाल अपनी छोटी छोटी आंखों के भीतर हंसने लगे।

'महीपसिंह ने कहलाया ह ? उन्हें क्या रस ह मेरे खड़े होन, न होने में ? मुझे तो नहीं लगता कि वे इतनी छोटी सी बात के लिए मुझे याद करेंगे।'

'उन्हें रस है, आपको उठना ह और जम कर सतीश का मुकाबला करना ह।'

'नहीं भाई, मुझे तो अपने घर की ही समस्याओं से छुट्टी नहीं मिलती, म चुनाव नहीं लड़ूंगा।'

'नहीं लड़िएगा तो मत लड़िएगा, बाबू महीपसिंह ने कहलाया था कह दिया, मुझे क्या ?' दीनदयाल बात को यहीं अटका कर चलता बना, वह जानता था कि यह अटकी हुई बात मास्टर सुग्गन के दिल में कंटिया की तरह अटक जायेगी जो न बाहर होगी न भीतर, वह इसी में तड़पेगा।

महीपसिंह ने क्यों कहलाया ? मास्टर सुग्गन सोच सोच कर तड़पने लगा। उसका मुंह थोड़ा खुल सा आया और उसके निकले हुए आगे

के दो दांत कुछ और उभर आये। उसके चौड़े ललाट की रेखाएँ ऊपर नीचे होने लगीं और बल की सी बडी बडी आँखें डब्ब डब्ब डबकने लगी।

बाबू साहब भी अजीब आदमी हैं, मुझे क्या घसीट लिया! सतीश को मने वचन दिया था कि उसको सहायता करूँगा। सतीश पट्टीदारी के आदमी हैं उनका विरोध करना तो गद्दारी है मगर यह काला भैंसा जो बीच में कूद रहा है। मुझे क्यों यह भाड़ में झोंक रहा है या दिनदयाल की चाल है, हे भगवान, क्या दुनियाँ बनाई है। हाँ सुना है महीपसिंह भी पंचायत का चुनाव लड़ रहे हैं शायद उन्हें डर हो सतीश का। जो भी हो चुनाव नहीं लड़ूँगा।

नहीं लड़ोगे मास्टर। महीपसिंह ने कहा है, जानते हो इसका क्या फल होगा? तराई में तुम्हारा तबादला, फिर सालों रौंठोगे म[illegible] वहीं और घर बरबाद हो जायगा। पहले अपने को देखो तब देखो दीन धरम। कौन होता है सतीश? तुम्हारे तबादले को रोकने आयेगा। तुम तबाह हो जाओगे तो कोई नहीं तुम्हें बचाने आयेगा। मास्टर सुग्गन की आँखों पर महीपसिंह का पूरा व्यक्तित्व अपने पूरे अतीत के साथ छा गया। वे सिहर गये। मास्टर सुग्गन से दूसरे दिन दीनदयाल मिले तो मास्टर का मुह उतरा हुआ था। दीनदयाल समझ गया कि कुछ उथल पुथल हुई है।

'क्या मास्टर क्या फैसला किया?' दीनदयाल ने हँस कर पूछा।

'फैसला क्या? आप लोग कहते हैं तो लड़ूँगा ही।'

'हाँ अब ठीक है मास्टर लोगों को जरा देर से अकल आती है।'

हाँ सारी अकल पैसे वालों की गाँठ में जो पड़ी है।' मास्टर सुग्गन भी व्यंग्य करने से नहीं चूका।

सतीश मिला तो मास्टर सुग्गन खिठिया गये। सतीश ने थोड़े तैश में पूछा—'सुना है मास्टर साहब आप चुनाव लड़ रहे हैं। सच है?'

'हाँ भाई सच [illegible]।' मुरझाये मन से सुग्गन ने कहा।

'ठीक है, तो आपने 'नहीं' क्यों कहा था ? यदि पहले से 'हाँ' कहा होता तो उसी हिसाब से हम लोगों ने योजना बनाई होती।'

'अरे भाई सतीश,' लजियाये स्वर में सुग्गन बोले, 'क्या बताऊँ उठने का मन तो नहीं था लेकिन मेरे सामने संकट खड़ा कर दिया गया है। मुझे तो यह झंझट बोझट पसंद नहीं है।'

यानी आप चुनाव में उठ नहीं रहे हैं, उठाये जा रहे हैं, क्या ?' सतीश ने तीखी निगाहों से मास्टर की ओर देखा।

'अब ऐसा ही समझो भाई!' मास्टर का उतरा हुआ स्वर था।

'इसीलिए तो और भी बुरा है। तरस आती है आप लोगों पर। शिक्षक हैं, नई पीढ़ी को बनाने का दायित्व है आप लोगों पर, पर आप लोगों का स्वयं का कोई व्यक्तित्व नहीं है। किसी ने चढ़ा दिया तो चढ़ गये उतार दिया तो उतर गये। कोई मूल्य है आप लोगों के जीवन का ?' सतीश की वाणी उग्र से उग्रतर होती जा रही थी। उसे यह भी सयम नहीं रहा कि आखिर वह किस अधिकार से मास्टर सुग्गन जैसे प्रौढ़ आदमी को डाँट रहा है।

मास्टर सुग्गन वैसे ही सिर झुकाये खड़े रहे और नम्र स्वर में बोले—'अरे भाई व्यक्तित्व की बात नहीं है बहुत बार ऐसा होता है कि आदमी सोचता है कुछ और करना होता है कुछ। कुछ ऐसी बातें आ पड़ीं कि मुझे मजबूरन चुनाव लड़ने का फैसला करना पड़ा।'

'आदमी अपनी मजबूरी खुद बुलाता है। कमजोर आदमी के लिए चारों ओर मजबूरी ही नजर आती है। आखिर आप लोग ठहरे प्राइमरी के टीचर ही न, स्कूल पहुँचेंगे दोपहर को, लड़कों से सीधा-पिसान वसूल करेंगे, पमकराई लेंगे, स्कूल में टाँग पसार कर बैठ रहेंगे। मानीटर से वह देंगे काम धाम कराने के लिए। ताव में आयेंगे तो अकारण लड़कों को गालियाँ दे देकर मारना शुरू कर देंगे। वही मास्टर आप भी हैं न।' सतीश आपे से बाहर होता जा रहा था।

मास्टर सुग्गन सतीश के पास आया तो सकोच से गडा हुआ था मगर अब सतीश की उग्रता ने उसको अपने गलत काम का समर्थन करने के लिए साहस दे दिया। वह बोला— हाँ हाँ दुनिया में मास्टर लोग ही तो सबसे अधिक गिरे हुए ह और लोग तो दूध के धोये है। मास्टर बेचारों का सोधा पिसान और पसकराई सबकी आँखो म गडता ह मगर और पेशा म जो लोग सफेद को स्याह और स्याह को सफद करते घूमते हे उसका कुछ नहो। हम लोग तो साल के अंत म खुशो से पास होने वाला से चार पसा वसूल करते ह मगर जिनके हाथ में हजारो रुपयो का हिसाब किताब ह वे कितना गोलमाल करते है इसका क्या पता ? अपने अपने स्वार्थ की बातें सभी सोचते ह मैं भी सोचता हूँ। इसमें बुराई क्या ह पाप क्या ह ?

सतीश ने चोखते हुए से कहा— होंगे गोलमाल करने वाले, होंगे स्याह को सफेद करने वाले लेकिन ये हमारे आदर्श तो नहीं हो सकते। उनकी दुहाई देकर हम अपने पाप कर्मों को पुण्य तो नहीं कह सकते। होंगे ऐसे लोग।'

'होंगे क्या ह ही, सब जगह ह।' मास्टर ने कहा और चुप हो गया।

सतीश ने एकाएक मास्टर की ओर एक ऐसी निगाह से देखा कि कुछ जानना चाहता हो। मास्टर ने दूसरी ओर मुँह फेर लिया था कि निगाह न मिले। सतीश को कुछ भासा। तो मउगा दलसिंगार और दीनदयाल का जादू आप पर भी चल गया ह और जो प्रचार उन्होंने हमारे खिलाफ किया ह उसे आपने भी मान लिया ह। यदि म गलती नहीं करता तो आपका स्याह सफेद वाला इशारा मेरी ही ओर था। लेकिन मास्टर साहब आप जानते हैं इस बात को कि महीपसिंह जसे जालिम जमीदार के यहाँ काम करते हुए भी मैंने स्याह सफेद कभी नहा किया। कोई आदमी इस बात को कभी प्रमाणित नहीं कर सका। म नहीं कहता कि म दूध का धोया हूँ और मैं स्वार्थी नहीं हूँ लेकिन अधकार

में प्रकाश की खोज मेरा उद्देश्य रहा है, कई बार गिरा हूँ, अंधकार में सना हूँ लेकिन, लेकिन उसमें से निकला हूँ प्रकाश पाने की तड़प लेकर। मैंने पतन और बेबसी को अपना स्वभाव नहीं बनने दिया, और एक बात मास्टर, मैं अपने दोस्तों और दुश्मनों के प्रति साफ रहा हूँ हालाँकि यह आज की दुनियादारी की दृष्टि से आदमी की सबसे बड़ी कमजोरी है मगर वह मुझमें है और इसे प्यार करता हूँ। मुझे बरदाश्त नहीं होता कि कोई अभी 'हाँ' कह दे और एक दिन बाद 'ना' कह दे।' कहते-कहते सतीश एकाएक उग्र हो गया और चीख कर बोला—'मगर आप नहीं समझेंगे मास्टर साहब! ये सब बातें नहीं समझेंगे आप मुझे भी बेईमान और दगाबाज समझते हैं क्योंकि मउगा दर्शसिंगार और दानदयाल आपके गुरु मिल हैं जाइए लड़िए पंचायत और बनिए सरपंच जाइए-जाइए। देखूँगा मैं।

उस बागीचे के एकांत सन्नाटे में सतीश की आवाज मास्टर सुमन को जैसे उठा कर पटकने लगी। मास्टर सुमन बड़बड़ाते हुए उठे— कोई किसी का बड़ा नहीं होता, बेकार के गर्जन-तर्जन से क्या फायदा ?' वे धीरे धीरे वहाँ से निकल गये और सतीश अपने आप ही बड़बड़ाता रहा— हाँ गर्जन तर्जन से कोई फायदा नहीं जिसे किसी का कुछ काटना होता है वह तो चेहरे पर मुस्कान ही घोल रहता है, उसकी आवाज में वह आग कहाँ से आ सकती है ? मास्टर जीवन भर का नपुंसक औरत का दब्बू और और ढोंगी इस मरतबे को सरपंच बनेगा ? '

रामकुमार स्कूल से अक्सर शाम को घर आता था। सतीश के साथ बातें करता सारी योजना बनाता। सतीश कांग्रेसी था और रामकुमार सोशलिस्ट, मगर गाँव में इन पार्टियों का क्या महत्व ? दोनों एक साथ थे। इनकी योजना बड़ी साफ थी, दीनदयाल के पक्ष को हराना रघुनाथ को सभापति बनाना और सतीश, रामकुमार, बमू हरिजन,

मिलमिट तेली को पंच। फिर इसमें अदालत पंचायत के लिए पंचों को भेजने में सुविधा होगी और सरपंच ? अभी इस बात को कोई नहीं छेड़ता था क्योंकि अभी तो और भी गाँवों से लोग चुने जायेंगे। कौन-कौन लोग चुने जाते हैं और क्या स्थिति होती है, सरपंच का चुनाव इस पर मुनहसर करता है। यह सत्य था कि यदि दीनदयाल का पक्ष मजबूत हुआ तो गाँव के लिए अच्छा नहीं होगा और इसका असर अदालत पंचायत पर भी पड़ेगा। इसलिए रामकुमार और सतीश अपने राजनीतिक विश्वासों और चरित्रगत विभिन्नताओं को भुलाकर इस क्षेत्र में एक हो गये थे।

उधर दीनदयाल ने अपने लोगों को तो खड़ा किया ही था खोज खोज कर सतीश के पक्ष के लोगों को उकसा उकसा कर खड़ा कर रहे थे ताकि इनकी शक्तियाँ बटें।

पूस की घाम गाटी हो गयी थी रह रह कर तेज पछुवा हवा सर्रा उठती थी, गाँव और खेतों के ऊपर भूख की उदासी से बोझिल कुहरा झुका हुआ था। महावीर दूबे दरवाजे पर खरहरे पर गुमसुम बैठे हुए थे, भीतर बसी बहू सलोना परपरा रही थी, उसकी बगल में उसकी छोटी लड़की भूख से कराह रही थी। वह परपरा रही थी कि कब तक चलेगा इस तरह ? लड़की सागपात खोंट लाती है खेत से। हम लोग तो घास से पेट भर लेते हैं मगर बच्चों का कैसे चलेगा ? कितने वक्त हो गये पेट में दाना गये हुए। पारवती भी माँ की बगल में उदास बैठी थी।

महावीर दूबे एक सूती दोहर ओढ़े हुए गुमसुम सुन रहे थे, उनकी आँखों में जड़ता जम गयी थी। सलोना कोसों जगह फटी हुई गद्दो-सी साड़ी के ऊपर सूती गुदड़ी लपेटे हुए थी और बच्ची को कसती जा रही थी— माँ का बच्चों को और बच्चों को माँ की गर्मी इस थरथराती ठंढक के बीच जोड़ती जा रही थी।

महावीर क्या बोले ? वैसे वे बहुत बोलते ह जब बोलते हैं तो एक साथ दस आदमी पेन नहीं पाते ह और मजाक में तो कभी थकते नहीं। व‍े महावीर गुमसुम टूटे हुए-से पथराये हुए-से, इस एकात अँधेरे म बठ हुए है और सलोना बरबरा रही हैं कि 'मरद लोग काई इंतजाम नहीं करेंगे तो कौन करेगा ? कलकत्ता से कमाई आती है वह कितने दिन चलनी ह। देवर ह सा उसका फाइनल ह, फीस चाहिए, फास चाहिए। बेचारा बिना खाये पिये इसकूल चला जाता ह रात को पढने के लिए, आदन का एक मुवहित कमरा भा तो नही ह। हाय भगवान ये कौन स दिन देखने को आये हैं। कसे बेडा पार होगा ? कहती हूँ कहीं स कुछ इतजाम करो तो मरद लोग सुनते ही नहीं ह।'

और महावीर दूबे सुनकर भी चुप थे पत्थर की प्रतिमा से।

द नदयाल इस घने अधकार में सरकते हुए महावीर के घर आ रहे थे पर लडहर था हा पिछवाडे से सलोना का भूलमारा स्वर उन्हाने सुन लिया था।

'महावार भाई बाट हा।' दानदयाल ने अँधेरे में आवाज फेंकी।

हाँ, हाँ क ही ? यहाँ बठा हूँ।'

अरे ई त हम हई दानदयाल।' कहते हुए दीनदयाल महावीर के पास जाकर तख्ते पर बठ गये।

'का है मरदवा ऐसे गुमसुम काहे को बठे हो ? लगता है कि गाँव में कहीं आदमा हो नहीं रहते ह, साँझ से ही सूता पड गया है।

'हाँ, जमाना इतना खराब आया है कि सोना जागना सब बराबर हा गया ह तनि हेहर देखा।'

हाँ, हाँ ई तो है गरीबी तो गाँव को छोडती ही नहीं और इसीलिए लोगों का ईमान भी बिगडता जा रहा ह। खेतों म कोई कहीं-कहीं घूमे ? सबेरे देखा तो कई न कोइ खेत साफ हो जाता है। ई गाँव सुधरने को है ?'

एक भारी सी 'हूँ' कह कर महावीर रह गये।

'लेकिन बात क्या ह दूबे जी, आज बहुत बुभे हुए-से लगते ह आप। खाना-पीना खा चुक ह न।'

महावीर चुप रहे, मगर भीतर से लडकी के भहकने की आवाज रह रह कर आ रही थी।

'क्या रो रही ह यह लडकी, किसी ने मारा ह इसे?' दीनदयाल ने आत्मीयता बरसाते हुए कहा।

'नही किसी ने नही मारा ह इसे।' महावीर फिर चुप हो गए।

'अरे बसी का रुपया उपया आया था इधर?'

'नही, इधर तो नही आया था, दो महीने पहले तीस रुपये आये थे और वे 'कहते-कहते दूबे रुक गये।

'अरे हाँ ३० रुपये की बिसात ही क्या, आये और गये। तब तो बडी तकलीफ होती होगी। खाना-पीना हुआ कि नही।'

महावीर फिर चुप रहे।

दीनदयाल डाँटते हुए से बोले—'अरे मरदवा—बडे गबरू हो आप—मुझसे कहा क्यों नहीं मैं क्या कोई बेगाना हूँ?'

दीनदयाल ने दस रुपये का एक नोट निकाल कर महावीर की मुट्ठी में कस दिया लीजिए तब तक काम चलाइए जब तक बसी के रुपये नही आते हैं। और लगता है इस वक्त चूल्हा नही जला है। बिटिया को भेजिए मेरे साथ मैं इस वक्त के लिए आटा दाल भेजता हूँ।

दीनदयाल उठ खडे हुए तो महावीर ने कहा—'अरे बैठिए दीनदयाल भाई अभी तो आये हैं आप।

'देखो, इसी पर मुझे गुस्सा लगता है, पहले काम तब बैठका। पहले सीधा भेज दूँ तब कुछ और। बातें कल होंगी, फुरसत मिले तो मेरी ओर आ जाइएगा। या म ही आ जाऊँगा।'

'नहीं नहीं जब कहिए, आ जाऊँगा मैं खुद ही।' महावीर कृतज्ञता से भीगे स्वर में बोले।

सलोना ने चूल्हा जलाया। मौत की तरह सोया हुआ अंधकार एक जगह से फट गया। सलोना के उदास चेहरे पर आँच दमकी—लड़की चुक्की मुक्की मारे चूल्हे के पास गुँथते हुए पिसान का देख रही थी। सलोना के जीवन में इस प्रकार की रातों की पर्तें अनगिनत बार घिरी और फटी हैं। अनजाने ही उसकी आँखों में तमाम दिन तर गए। उसे बंसी की भी याद हो आई। न जाने कब आयेंगे? कहाँ होंगे? बहुत दिन हो गये देखे। देह जला-जला कर पैसे कमाते हैं तो भी इस घर का दलिद्दर नहीं जाता।' रोटी पकाते पकाते उसकी आँखें भर आयीं।

महावीर ज्यों के त्यों तख्ते पर पड़े रहे।

खा पीकर लोग सोये। पछुआ हवा रह रह कर चिल्ला रही थी और टटिहर भीत को धकियाती हुई आँगन में पैठ जाती थी। सलोना को लग रहा था कि यह रांड पछुआ उसी को खोज रही है। बाहर कभी-कभी कुत्ते भूँक उठते थे जैसे हवा की ठोकर खाकर रो रहे हैं। लगता था सारा गाँव गिरीब मोटा हुआ मोटा काला कम्बल ओढ़े गुमसुम सो रहा है।

महावीर और सलोना दोनों का अलग-अलग दरद आज जोर से रिस उठा था लगता था दोनों के बीते हुए दिन उन्हें रुला-हँसा रहे हैं—

बंसी धनपाल और अपनी माँ की दाह पाकर बचपन में ही आवारा हो गया था। पहला बेटा, इधर उधर की कमाई का धन, बनवारी की पट्टीदारी, सबने मिल कर बंसी को उद्धत बना दिया था। बंसी शरीर से हृष्ट-पुष्ट बचपन से ही था, लम्बा चौड़ा शरीर, गोराई अंग-अंग से दमकती थी, गले में सोने का तावीज, बाँह में रेशमी बाँधे, यहाँ-वहाँ चौकड़ी मारता फिरता।

बसी का मन पढने में नहीं लगता था, दिमाग सो कमजोर था ही। अक्सर दो एक लडको को लेकर स्कूल से भाग खडा होता।

चमकोले रगीन कपडे पहनता और गाँव के गरीब लडको को गाली देता—दलिद्दर है साला दलिद्दर। बातचीत बढ जाती तो डाँट कर बोलता—दे साला कर्जा हमारा, कजखौका है कजखौका। साले के यहाँ खाने को नही जुटता है, भीख माँगता फिरता है, साला और गाली-गलौज में सिर पर मार कर घडरोज की तरह चौकडी भरता हुआ चम्पत हो जाता।

बसी किसी कदर सात तक पहुँचा। सात की परीक्षा बोर्ड की थी। उसमें जो लटका तो लटकता ही रहा—दो साल तीन साल, चार साल फिर कभी नही

वह चार में था तभी उसकी शादी हो गयी। धनपाल का शौक ठहरा पसे वाले आदमी तो थे ही। शादी होने में क्या दिक्कत थी? बसी की बरात में धनपाल ने खूब खच किया।

पाँच साल बाद गौना हुआ। बहू आयी तो अपने धनवान बाप की श्री लेकर। बहू के घर के कुछ लोग परदेस में थे, परदेसी हवा जो ठहरी, सो जूता मोजा पहन कर उतरी। साबुन और रग बिरगी तेल की शीशियाँ साथ लायी थी। गाँव की औरतो के बीच चर्चा का विषय बन गयी थी—बडी सुकुमार ह, रईस की बेटी ह न। कुछ ने ईर्ष्या बस यह भी कहा—वेसवा ह, इतना सिगार पटार तो वे बेसवा (वेश्या) ही करती हैं

बसी गाँव की लडकियो से छेडखानी करता। बाग-बगीचे में जहाँ किसी लडकी को अकेले देखता जाकर हाथ पकड लेता। लडकी रोती हुई गालियाँ देती, घर आकर बिसूरती, घर वाले आकर धनपाल से कहा सुनी करते तो धनपाल और अतरबासी अपने लडके का कसूर मानने

से साफ मुकर जाते, फिर गाली-गलौज और धमकियों के भरम वातन से काट समाप्त होता। पन्द्रह-सोलह बरस का होते-होते बंसी पूरा विरवंतड बन गया था। घर में परी भुड़ती लेकिन कुछ बोल नहीं पाती क्योंकि बंसी के माँ बाप बंसी के बारे में कुछ सुनना नहीं चाहते थे और कुछ कहने पर बंसी अपना गम्ना से भी ज्यादा से बात करता। देहात में पुरुषार्थ पत्नी को पीटे बिना अधूरा रहता है। खल नायक की परम्परा से यह धरोहर प्राप्त होती चली है। इस पुरुषार्थ के बिना पति 'मेहर मउगा' माना जाता है, सलोना धीरे धीरे भीतर ही भीतर बिसूरने लगी।

एक बार बंसी ने भाटपार की एक अहिरिन को छेड़ दिया। अरहर के सघन खेत थे। अहिरिन तिवारीपुर से दही बेच कर आ रही थी। बंसी आते-जाते उस पर नजर लगाये था। एक दिन मौका पाकर उसे अरहर में खींच ले गया। अहिरिन को पैसे दिखाये और उसकी देह मसलने लगा, अहिरिन ने दही का खाली मटका बंसी के सिर पर दे मारा। मटका उसके ऊपर गिरा, बीच से टूट कर बंसी की गरदन में अटक गया। अहिरिन जोर जोर से चीखने लगी। बंसी अपनी गरदन में अटका हुआ मटका लिए भागा और इस खेत उस खेत मुड़की कटाता हुआ भागता फिरा। कुछ लोगों ने देखा तो वह छिप कर फिर सरपट भाग निकला। एकांत पाकर मटका फोड़-फाड़ कर अपने को मुक्त किया। भाटपार के अहिर ताव में आ गये और तिवारीपुर गाँव को भला-बुरा कहने लगे और लाठी लेकर निकल आये। दोनों गाँवों में बजड़ गयी। लाठियाँ चलने लगीं, सिर फटने लगे। अमलेश जी आये और दोनों हाथ उठाकर दोनों दलों के बीच में कूद पड़े। दोनों दल तब में थे। अमलेश जी पर लाठी लगी और वे गिर पड़े, खून बह चला, तब कहीं लोगों को होश आया। सारे गाँव ने धनपाल को ललकारा—'तुम नीच और तुम्हारा लड़का नीच। साले तुम्हारे मारे सारे गाँव का विनाश हो जाएगा।'

धनपाल को गुस्सा आ गया। उस दिन बंसी को बहुत पीट दिया। बंसी के लिए यह एक नयी चीज थी। वह खूब रोया और एक दिन घर का बहुत-सा रुपया चुरा कर कलकत्ता भाग गया। अतरवासी धनपाल को गालियाँ देने लगी। धनपाल खुद भी बहुत पछताया।

बनवारी धनपाल से कब से अलग हो गये थे—और अब वे धनपाल के दबायल नहीं रह गये थे। आदत के अनुसार सारे गाँव में बरबराते फिरे—'बेटे को सिर पर चढ़ा रखा है, ऐसी अनैनि नहीं देखी। सारा गाँव उस अभागे बंसिया के मारे मार खाये और बेइज्जती सहे सहका रखा है बेटे को। थोड़ा-सा डाँटा तो भाग गये बबुआ साहब कलकत्ता, रंगून या जाने कहाँ।'

बंसी का पता नहीं चला। धनपाल और अतरवासी रो रोकर मरे जा रहे थे। एक दिन बंसी के दूर के फुफुवाउत भाई का पत्र मिला धनपाल को कि बंसी यहाँ की एक मोटरों में जाकर ई करता है। मैंने उसे देखा—एक दिन तो अपने यहाँ पकड़ लाया किन्तु दो दिन बाद फिर गायब हो गया। मैंने नौकरी में पता लगाया तो मालूम हुआ कि वह फिर वहाँ नहीं गया। पता नहीं कहाँ है? अबकी मिलेगा तो बाँध कर भेजूँगा घर।'

चिट्ठी ने घर वालों को और चिंतित कर दिया। सलोना अपने भाग को कोसना छोड़ कर पति की मंगल कामना में आठ आठ आँसू रोने लगी।

'जाओ न कलकत्ते, खोज लाओ लाल को।' अतरवासी धनपाल को कोसती।

'अरे कोई पता हो तब जाऊँ कि ऐसे ही। इतना बड़ा शहर है कलकत्ता, कहाँ कहाँ खोजता फिरूँगा?' धनपाल अपनी बेबसी जाहिर करते। अतरवासी सोचती कि बहाने बना रहे हैं। उन्हें भी चार बात सुनाती और फिर जब पेट नहीं भरता तो बहू पर बिगड़ती—यही अभागिन है, इसी के कारण मेरा लाल भागा है।'

बंशो की एक लड़की थी पारवती। वह घर वालों के व्यवहार की उपेक्षा में लापरवाह होती जा रही थी, अपनी दोस्तों से मारपीट करती, झगड़ा करती और चुनी चुनी गालियाँ उगलती। बड़ा-बड़ों को भी चुनी-चुनी सुना देती। कोई ख्याल नहीं करता। पारवती सरकश होती जा रही थी। वह अपने में मस्त थी। भरी भरी देह चंचल आँखें और फड़कते हुए अंग-अंग।

अर्जुन के लक्षण पूरे परिवार से अलग थे। या तो वह भी अपने परिवार की तरह स्वस्थ, सुन्दर, लेकिन माँ बाप की उपेक्षा ने उसे शुरू से ही अन्तर्मुखी बनाना शुरू कर दिया था, वह कोई चीज देखता तो देखता रह जाता, लोगों से दूर हट कर बैठता और लोगों का निहारा करता। अपने दोस्तों के घर जा कर पढ़ने वालों के पास बैठ जाता और बड़े गौर से देखता कि लोग बस इन काले-काले धब्बों का पढ़ लेते हैं धीरे-धीरे अक्षर सीखने लगा वह और उसे लगा कि ये काले काले धब्बे उसे अपनी ओर खूब खींच रहे हैं। वह साथियों के साथ स्कूल जाकर बैठने लगा और मास्टरों को लगा कि यह धनपाल परिवार से अलग कोई चीज है, उसमें रस लेने लगे लोग।

उस साल भयंकर प्लेग आया। बहुत से लोग मरे अतरवासी को प्लेग ने पकड़ लिया, सबकी दवा करने वाले धनपाल का अपने ही घर के रोग पर कोई वश नहीं चला, अतरवासी चली गयी और एक दिन स्वयं अपने ऊपर भी उनका वश समाप्त हो गया और अपने से हाथ छुड़ा कर सिधार गये। घर सूना हो गया।

सूना घर क्या पता था कि इतना भरा हुआ घर दो दिनों में सुनसान हो जाएगा। इस सुनसान में तड़पते दो निरीह बालक और चारों ओर आह-कराह, हवा की सनसनाहट, वर्षा की सीलन, मौत की चीत्कारों से भरा गरजता हुआ प्लेग।

बनवारी बाबा ने बच्चों को सँभाला। सलोना ऐसे गाढ़े समय पर सियारिन की तरह फेंकर रही थी। पति के अभाव में मरण का यह सन्नाटा उसे निगले जा रहा था। बनवारी बाबा तोल दे रहे थे।

महावीर दूबे आकर, हाजिर हो गये—मैं इन बच्चों को सँभालूँगा अकेला आदमी हूँ मेरा भी गुजर बसर हो जाएगा इन बच्चों के साथ। सभी लोगों ने महावीर की इस उदारता और समय की सहायता की तारीफ की।

महावीर दूबे की ससुराल था तिवारीपुर में। धनपाल के चाचा की लड़की व्याही गयी था। धनपाल के चाचा को कोई लड़का नहीं था। धनपाल के पिता से उनकी नहीं पटी इसलिए अपनी सारी जायदाद महावीर दूबे के नाम लिख दी। महावीर दूबे के घर पर कुछ खास सम्पत्ति पताई नहीं थी और वहाँ भी निपट बाँडे थे अत ससुराल में ही आकर रहने लगे। बेचारे जनम के अभागे, बचपन में ही माँ-बाप की छाया से वंचित हो गए। भाई लोगों ने अलगा दिया। यहाँ भी आय तो सुखी नहीं रह सके। बाल बच्चे नहीं हुए और कुछ दिन बाद पत्नी भी साथ छोड़ कर चल बसी। फिर वही अकेलापन। लेकिन दिल से मस्त और फक्कड़ दूबे ने इस सारे अकेलेपन को हँसते हँसते ओढ़ लिया। ऊपर हँसी खुशी का कहकहा, भीतर तड़पता हुआ सुनसान—यह दुहरी जिन्दगी दूबे जी बड़ी हिम्मत से जी रहे थे। धनपाल से उनकी नहीं पटी। उनके सीधे हृदय में धनपाल की वक्रमूर्ति कभी अँट नहीं पायी। लेकिन जब धनपाल और अतरवासी का एकाएक देहांत हो गया तो महावीर दूबे को लगा कि इस परिवार के साथ उनका कुछ लगाव है, कुछ फर्ज है समय बुला रहा है उन्हें। सो आकर उन्होंने पूरे परिवार को उसके सारे अभाव और पीड़ा के साथ ओढ़ लिया। बसी का कहीं पता नहीं था। कभी आयेगा तो उसे यह जिम्मेदारी सौंप कर अलग हो जाएंगे। बनवारी परिवार का महावीर दूबे के साथ

पहले ही से स्नेह था। इस परिवार ने महावीर को कई बार अपने यहाँ बुलाया, प्रस्ताव भी रखा कि अकेले आदमी हो क्यों रोटियाँ सेंकते मरते हो ? यहीं रहो। मगर महावीर के स्वाभिमानी और स्वच्छन्द हृदय को यह मंजूर नहीं हो सका। विनय और स्नेह के साथ हमेशा इस प्रस्ताव को नामंजूर कर दिया। इस परिवार ने धनपाल परिवार में महावीर के शामिल हो जाने के भाग्य को बड़ा सराहा और सारे गाँव ने सराहा। बंसी का पता नहीं चला। महावीर दूबे ने अपने खेत धनपाल परिवार के खेतों में मिला लिए, खेती-बारी कराने लगे और परिवार की गाड़ी आगे बढ़ने लगी।

महीनों गुजर चुके थे। सलोना बंसी के लिए रो रो कर थक गयी थी। एक दिन चैत की शाम के झुटपुटे में गाँव वालों ने देखा कि एक बटोही रंगीन साफा बाँधे, गटापारचे का काला चश्मा लगाये मैले के रंगीन सिल्क का झोलदार कुरता पहने, काँख में नया छाता दबाए और एक हाथ में एक रंगीन छोटा बक्स लिए गाँव की ओर चला आ रहा है। अरे यह तो बंसी है, बंसी है। बंसी हुलसता हुआ आ रहा था कि अपने रोबदाब से सारे गाँव को हिला दूँगा और माता पिता को चौंका दूँगा। और वह—वह तो मेरे शौक सिंगार से विह्वल हो जायगी। वह घर आया तो देखा महावीर दूबे चुपचाप तख्ते पर बैठे हैं। वे इसे देख कर न हिले न डुले, उदासीन आँखों से ताकते रहे। बंसी उनकी उपेक्षा की दृष्टि से देखता हुलसता अन्दर पहुँचा और चिल्लाया—माई माई माई कोई नहीं बोला। सलोना आँगन के कोने में बैठी सिसकती रही। बंसी गुस्सा हो गया, छाता बक्सा हाथ में लिए चिल्लाया—'अरे हरामजादी बोलती क्या नहीं—माई कहाँ है ?'

सलोना तड़प कर बोली—अब आये हैं माई-बाबू को खोजने। वे दोनों चले गये रो-धोकर।

'कहाँ ?' बंसी फिर तड़पा।

'भगवान के यहाँ और वहाँ ?'

बसी छाता बगमा लिए कटे रूख की तरह गिर पड़ा। बच्चे भी आ गये। सबने एक साथ रोना शुरू किया, फिर पास-पड़ोस के लोग घेर आए और औरतें रोने लगी, एक क्षण के लिए कुहराम-सा मच गया। दो चार दिन के बाद बसी रो धो कर जब शांत हुआ तो गाँव में अपनी कहानी खूब बढ़ा चढ़ा कर सुनाने लगा कि वह कलकत्ते में खूब मजा करता था, वह एक बंगाली साहब का मैनेजर हो गया था। साहब की बीवी उसे बहुत मानती थी, वह उनकी लड़कियों को घुमाने ले जाया करता था। लड़कियाँ क्या थी नागिन थी, डँस लें तो जहर न उतरे। एक बार घुमाने ले जा रहा था तो एक आवारा टाइप के छोकरे ने पीछा किया और बोली कसी। मैंने उस आवारे को खूब मरम्मत की तो साहब खूब खुश हुए और मुझे इनाम दिया। अरे क्या बताऊं प्यारे, कलकत्ता तो स्वर्ग है, बढ़िया-बढ़िया सड़कें हैं, बाजार हैं, मकान हैं और बंगालिनों का तो मत पूछो भइया, बड़ी आजाद होती हैं उन्हें देखते हो रह जाओ। हँस-हँस कर बातें करती है तो जान ही ले लेती है। लम्बे काले काले बाल बिखरा कर चलती हैं तो सड़क पर घटा छा जाती है। एक अपने यहाँ की औरतें हैं घूँ घूँ साली घर में फूहड़ सी पड़ी रहती हैं, कोई उनसे बात कर दे तो जान का आफत

इसी तरह बसी गाँव में अपनी धाक जमाने लगा। गाँव के छोकरे बकर-बकर मुँह ताकते थे। वास्तव में नौकरी में जोकर बनने और बंगाली साहब के यहाँ चपरासी बनने की बात उसने छिपा रखी। यह भी किसी को नहीं मालूम हुआ कि साहब ने इसे गाली देकर निकाल दिया क्योंकि साहब की लड़की से यह इश्क फरमाने लगा था।

सलोना बसी की बातें सुन-सुन कर कुढ़ने लगी। एक दिन रोते हुए कुछ गुस्से में कहा—'अरे जिनगी भर नाबालिग ही रहेंगे या चेतेंगे भी। बाबू और भाई मर गए अब इस घर की नइया के खेने-

याते आप ही हैं और आप हैं कि घूम घूम कर बंगालिना की गाथा गाते रहते हैं।'

'क्या खाक होता है' ठीक ही तो कहता हूँ। तुम लोग तो उनके पर की धोवन भी नहीं हो।' बंसी बोला।

'मैं नहीं उनके पर की धोवन बननी हूँ? मैं तो अपना घर सँभालने की कहती हूँ देवरजी! आखिर अपना घर ही काम आएगा देवालय कितना भी अच्छा हो वेस्यालय ही है।'

बंसी चिढ़ गया। उसके सिर पर बंगालिना का जादू सवार था। घर उसे बड़ा ही फूहड़ और उदास लगता था। डपट कर बोला—'चुप कमीनी, दुनिया नहीं देखी है तो ऐसा ही कहेगी। आह! कलकत्ता स्वर्ग है स्वर्ग।'

'चूल्हे भाड़ में जाए आपका स्वर्ग, बेटी जवान हो रही है भाई पढ़ने लायक हो गया है, दूर के एक आदमी आकर घर सँभाले हुए हैं और आप हैं कि अभी दस साल के बछेड़ा बने हुए हैं। शरम नहीं आती कि पढ़ाई लिखाई छोड़ कर भाग गए। जिस माँ-बाप ने इतने दुलार से पाला वे तड़प-तड़प कर मर गये और उनके मरने के बाद भी कोई परवाह नहीं। बेच दीजिए मुझे बेच दीजिए जवान बेटी को, मार डालिए भाई को, फिर कलकत्ते जाकर छिनालों के अचरे में छिप जाइए।'

बंसी गुस्सा हो गया—'हुई देखो रे इस फुहरिया का चटर-चटर जबान चलाती है मेरे साथ।' गुस्से में बंसी ने हुमच कर सलोना की पीठ पर दो लात मारा। सलोना ढह गई लेकिन बोलती गई—'मार डालिए, मार डालिए मुझे, अच्छा है मार डालिए, लेकिन मैं आपका यह बहेतूपन नहीं देख सकती, पूरे खानदान को भाड़ में झोंक दीजिए और घूमिए सोहदा बनकर। मारिए और मारिए।'

बंसी को आज तक अपने खेत बारी का ज्ञान नहीं था, कितने खेत हैं कौन कहाँ है? महावीर दूबे धीरे धीरे उसे अपने साथ ले जाने

लगे। धीरे धीरे खेतों से परिचित होने लगा। लेकिन उसे घर की कोई खास परवाह नहीं थी। वह जानता था कि वह तो आखिर है पैसे वाले बाप का बेटा, उसे क्या चिन्ता ? एक दिन किसी ने चढ़ा दिया कि अरे तुम्हारे बाबू बहुत-सा रुपया छोड़ कर मरे थे, वे रुपये तुम्हें मिले कि नहीं। ऐसा न हो कि महावीर दूबे सब हड़प जाएँ।'

बसी को तो रुपये की याद ही नहीं रही थी। उसे बड़ा क्रोध आया कि महावीर दूबे ने अब तक रुपयों की चर्चा क्यों नहीं की ? क्या उसके बाप का रुपया है कि हड़पना चाहता है ? उसकी छाती फाड़ कर रुपया निकाल लूँगा।

उस दिन घर आते ही महावीर से उसकी बजड़ गया। उसने पूछा—दूबे जी बाबू जो रुपये छोड़ कर मरे थे उन्हें आपने अब तक मुझे क्यों नहीं सौंपा ?'

'कौन से रुपये ?' दूबे जीने घूर कर पूछा।

यह देखो, पूछते हैं कौन से रुपये ? अरे बाबू के पास इतने रुपये थे वे क्या हो गए ? उनके मरने के बाद आप ही तो घर पर हैं। क्या बेईमानी करने की इच्छा है ?'

'बसी जवान सभाल कर बोलो, तुम अब भी नहीं समझे। जो मैं जो आता है बक जाते हो। मेरे पास रुपये सुपय नहीं है।'

कैसे नहीं है आप सब हड़पना चाहते हैं। मुझे मालूम है कि हजारों रुपये बाबू के पास थे और आपने उन्हें दबा लिया है, मुझसे चर्चा तक नहीं की। यह बेईमानी नहीं तो और क्या है ?

बसी ! चीख कर महावीर बोले। 'मैं इस घर में बेइज्जती सहने के लिए शामिल नहीं हुआ हूँ। अगर तुम्हें मेरा रहना मंजूर नहीं है तो लो आज ही चला जाता हूँ लेकिन मेरे पास रुपये बिल्कुल नहीं है तनि हेहर देखऽ।

गाँव के लोग भी जमा हो गए थे। लोग महावीर के इस व्यवहार

को आश्चर्य चकित थे क्योंकि लोग जानते थे कि धनपाल [illegible] रुपये छोड़ कर गये थे और वे रुपये महावीर के हाथ पड़े ही होंगे। लोग कह रहे थे कि सचमुच महावीर की नीयत बिगड़ गयी मालूम होती है।

दंगा ने जब और कई बार [illegible] इन्तजार किया तो महावीर [illegible] और [illegible] कर कहा—तुम जाओ रुपये और [illegible] [illegible] की तरह [illegible] महात्मा आ गये और पुचकार कर बोला—[illegible] [illegible] [illegible] [illegible] बताया है। [illegible]

लोग तमाशे में आ गए। [illegible] कि [illegible] हां महावीर से न रुपये [illegible]।

दंगा उस समय [illegible] से पकड़ लिया और [illegible] महावीर [illegible] कि 'शरम नहीं आती।'

धनपाल के पास सात आठ हल बैल थे। उसकी खेती का [illegible] उसके खेत नहीं थे। [illegible] लोगों का कर्ज देते थे और [illegible] वसूलते ही थे मूलधन में खेत आ जाता थे। [illegible] भी करता था। कोड़ी कोड़ी माया बटोर कर व पैसे वाले बन गए थे। कुछ कानून ऐसे बन गए जो कर्जदारों को रियायत देने के हिमायती थे कुछ लोगों ने कर्ज जमा कर दिये इकन्नी कर लिए और धीरे धीरे कर्ज [illegible] आज सात छोड़ लिए। [illegible] स्वयं में [illegible] थे। महावीर या दंगी धनपाल की तरह लोगों को कर्ज देने और वसूलने का धंधा न कर सके। एक तो यह काम अब खतरे का हो गया, दूसरे इनकी इसमें रुचि भी नहीं थी। अब लोग खेत रेहन रखने की अपेक्षा बेचना पसंद करने लगे क्योंकि नये कानून में खेत जोतने-वाले मालिक हो जाते थे

डर था। अत कर्जा देने में कोई लाभ नहीं था। धनपाल के बहुत से पैसे डूब गए, ये लोग वसूल नहीं कर सके। छोटे छोटे कर्जे जो बिना लिखा पढ़ी के विश्वास पर दिये गये थे उसे देने से लोग मुकर गए। अब सारी शक्ति खेती में आकर सिमट गयी, महावीर और सलोना नहीं चाहते थे कि धनपाल के छोड़ हुए कुछ रुपये बसी के हाथों देकर बरबाद कर दिया जाए।

लेकिन महावीर थोड़ बहुत पैसे बचा कर बच्चे के लिए देते ही रहे जिससे उसको प्यास शांत रहे। बसी आज भी ठाट से खाता और इधर उधर घूमता, थोड़ा बहुत खेल-खोल घूम आता। गाँव के लोग समझाते, अरे जरा काम धाम किया करो। लेकिन वह हँस कर टाल देता। महावीर दूबे बसी के इस व्यवहार से तंग आ गए थे, वे चाहते थे फिर अपना डेरा-डंडा अलग कर लें, मगर सलोना और दोनों बच्चे उनकी ममता के केन्द्र थे। परिवार का सुख उन्हें कभी नहीं मिला था। इस घर में आकर उन्हें ऐसा लगा कि तपते हुए रेगिस्तान में एक छोटा सा नखलिस्तान मिल गया है। मगर जब कभी वे बसी के मारे यह घर छोड़ने की बात सोचते तो सलोना का सरल दुखी व्यक्तित्व और दोनों बच्चों का प्यार और भविष्य सामने खड़ा हो जाता। वे सोचते, चलो जब परिवार की बाँह पकड़ी है तो छोड़ना नामदगी होगी—अकेले भी कौन बड़ा सुख है। सो दूबे इस परिवार के साथ अपने डेढ़ बीघे खेत के सहित चिपके रहे और बसी उछल-कूद मचाता रहा।

दूबे गृहस्थी का सारा भार सँभालते, खेतों में कुदाली लेकर जूझते, हर हरवाहा, मजूरे का इन्तजाम करते और बसी यहाँ वहाँ घूम घूम कर कलकत्ते का स्मरण सुनाता और वहाँ से सीखे हुए कुछ सिनेमा के गीत गाता।

बसी को एक लड़का पैदा हुआ। बसी का भटकता हुआ हृदय मानो ठहरने के लिए एक केन्द्र पा गया हो। वह बच्चे को गोदी में

लिए घूमता, उसे प्यारता, चुमकारता। उसे लगता कि जसे वह अपने भीतर से एक नये रूप में फूटा ह। वह घटा खेलता बच्चे स। उसके मन का सारा विषाद और भटकाव बच्चे की एक किल्कारी में घुल जाता

बच्चे को निमोनिया हो गया। आस-पास के गाँवों के देहाती बदा की दवाओं से कोई फायदा नहीं हुआ। बसी तडपने लगा।

किसी ने सलाह दी या तो इसे गोरखपुर ले जाओ या वहाँ से डाक्टर को ले आओ। बच्चे को वहा ले जाने में खतरा ह, हवा-बतास लगे तो बुरा होगा, मगर डाक्टर का आना भी मुश्किल ह। कोई डाक्टर इस कछार में आता ही नहीं ह। पाँच-छ मील तो सवारी का कोई रास्ता ही नहीं ह। फिर भी अधिक खच करने पर कोई न कोई डाक्टर आ ही जाएगा।

बसी ने निश्चय किया कि डाक्टर आयेगा गोरखपुर से। वह ले आयेगा। वह महावीर दूबे के पास गया, बोला, दो-तीन सौ रुपये दीजिए।

'रुपये कहा है ?'

क्यो सारे रुपये खा गए ? आज मेरा बेटा बीमार है तो भी रुपये देने में आनाकानी कर रहे ह जसे वे आप ही के रुपयें हा।

महावीर दूबे उदास मुख लिए छटपटाते बच्चे के पास खडे रहे।

बसी गुस्से स पागल हो रहा था—'क्या सुनते नहा ह—मुझे अभी गोरखपुर जाना ह डाक्टर को लेने के लिए।

दूबे चुप रहे मगर सलोना गीले स्वर म गुस्से की आग भर कर बोली—'काहे को बार-बार दूबे जी की बेइज्जती करते ह, कहाँ हैं रुपये ? कितने थे रुपये ? दो साल से खर्चा कहाँ से चल रहा है ? कितने खेत हैं आपके ? कितना होता ह उनमें ? बरसात को फसल कितनी बार हुई ह ? एक बीघा खेत खरीदा गया ह उसके रुपये कहाँ से आये हैं ? ये चावल जो आप खाते ह किस खेत म पदा हुए ह ? बाजार म आते हैं न। आपको घर से कोई वास्ता ह भी। बल भर गए थे, खरीदे गए

कहाँ से ? बरखा से दीवार गिर गयी थी बनवाई गई कहा से ? क्या बाहर से कोई कमाई आई है कि खेत में से पैदा हुआ है। नहीं है रुपया। अब सारे परिवार के भूखा मरने की बारी है। अब लड़का बीमार पड़ा है तो रुपया की सूझी है। ले जाइए यह मेरी साने की हँसुली है ले जाइए बेच कर डाक्टर को लाइए।'

बसी मर्माहत सा खड़ा रहा। उसके सामने बीवी की हँसुली— चमकती हुई कटार की तरह छटपटा रही थी उसे छुवे कि नहीं।

महावीर रोते हुए बोले— बसी तुम्हें क्या पता कि यह देवी कई दिनों से एक वक्त खा रही है। और ले जाओ बसी यह हँसुली, बेटे से बढ़कर दूसरा कोइ गहना नहीं होता।

बसी का सारे अच्छे डाक्टरों ने नाही बोल दिया। कौन जाए नदी नाले में, धूल धक्कड़ म। छः मील कार कैसे जाएगी। दस ह जार की मोटर खराब हो जाएगी और समय लगेगा दिन भर का तीन सौ की रोज आमदनी ह मेरी। बसी घिघियाता रहा, कोई डाक्टर तैयार नहीं हुआ। वह दो तीन सौ रुपये देने को भी तैयार हुआ लेकिन यात्रा की सवारी की क्या व्यवस्था करता? डाक्टर साइकिल से या बैलगाडी से या पैदल तो आते नहीं और उनकी चमचमाती कार इस खाई खंदक म टूट ही जाती। इसी मान मनुहार में कई दिन बीत गए। आखिर वह केवल दवा लेकर वहाँ से लौटा तो सारा खेल खत्म हो गया था। बच्चे की लाश नदी म फेंक दी गई थी। बसी चिग्घाड मार कर गिर पड़ा। कहाँ ह मेरा बेटा, कहा है उसकी सूरत तो दिखाओ, हाय रे उसकी भोली भाली सूरत! कहाँ ह वह?'

सलोना भी चिग्घाड मार उठी, दोना बच्चे भी चिल्लाने लगे। महावीर तूने ताँबे की तरह लाल सख्त चेहरा किए आसू रोके खड़े थे।

तीसरे दिन अर्जुन रो रहा था। बंसी ने धीरे से सलोना से पूछा— क्यो रो रहा ह

'भूख लगी है इसे।'

'तो दे दो खाना, रुलाती क्यों हो ?'

'कहाँ से दे दूँ, न अन्न ह न रुपया।'

'सब कुछ खतम हो गया ह'

'हाँ अब कुछ भी नही बचा ह।'

यमी माथे पर हाथ रखे बैठा रहा, धीरे धीरे उठा। अजुन के पास गया। उसे लगा कि अजुन नहा ह उसका बेटा ह। बिलख रहा ह। अजुन को जोर से छाती में भीच कर तडपा— भइया रो मत भइया मेरी छाती फटती जा रही ह। फिर वह स्वय बिलखन लगा और अपने ही सिर पर तडतड तमाचे मारने लगा—म ही अभागा जड हूँ इस सारी विपत्ति का—नालायक, कपूत आवारा

'रो मत भइया मै तुम्हें भूखा नही मरने दूँगा '

हँसुली के रुपये अभी उसके पास ही पडे थे तीन सौ। वह भाटपार बनिया के यहाँ गया चावल ले आया। सलोना म बोला— ले जल्दी पका कर खिला।'

रात भर वह सलोना के पास पडा रोता रहा जसे बहुत दिन बाद घर लौटा हो। सलोना उसे आज अतर में बासा लग रहा थी। उसके अग-अग से उसे उष्मा मिल रही थी और वह बच्चे की तरह उस उष्मा से घिर रहा था।

सलोना रात भर रोती रही। उसका चित्त आज गल गल कर बह रहा था। पुत्र के मर जाने से उसका उपनिज हृदय और भी जम गया था किन्तु आज यमी घर लौटा था। एक विचित्र अमय, प्यार और करुणा से वह अपने को द्रवित होता पा रही थी। जस धारा द्वीप को चारा ओर से लपेट कर इर्द गिर्द बहती ह उसी प्रकार सलोना का द्रवित व्यक्तित्व यमी को अपने में लपेट कर आज बहना चाहता था। रोती हुई बोली— स्वामी, मेरे मालिक।'

बंसी के लिए यह नया शब्द था, इन शब्दों ने बंसी की रग रग को दुह लिया। वह समस्त भाव से निचुड कर पत्नी के ऊपर बरस पड़ना चाहता था। अटकते हुए बोला—'मैं स्वामी नहीं मैं मालिक नहीं, मैं तो घर नाशक हूँ, अभागा हूँ, आवारा हूँ मुझे स्वामी मत कहो, क्या किया मैंने इस घर के लिए? सलोना भी रोती हुई बोली—'अभी तो बहुत कुछ करने को शेष है स्वामी। अपने को कोसिए मत। घर सँभाल लीजिए। बेटी है, भाई है लीना के प्रति आपकी कितनी बड़ी जिम्मेदारी है।'

दूसरे दिन लोगों ने आश्चर्य के साथ देखा कि बंसी दत्तचित्त होकर अपने खेत से घास निकाल रहा है और दोपहर होते होते घास का एक बड़ा सा गट्ठर घर ला कर पटक दिया और गंडासा लेकर उसे काटने बैठ गया। पुत्र मृत्यु से जमी हुई उदासी के वातावरण में गंडासे का स्वर बजने लगा छट्ट छट्ट और मानो उदासी कट-कट कर बिखरने लगी। बंसी ने नाद भरा, बैलों को खिलाया पिलाया, उस दिन भादरा का बाजार था खुद नहीं गया दूध को भेज दिया और स्वयं लाठी लेकर खेतों की ओर निकल गया। शाम को अर्जुन को बुलाया, 'क्या अर्जुन तुझे पढ़ने की इच्छा होती है?'

'बहुत बहुत भइया।

अच्छा तो कल तुझे अभी से पढ़ाना शुरू करता हूँ। मगर पटरी और कलम तो अभी नहीं है, कल शुरू करूँगा।'

'मेरे पास है भइया।'

'तेरे पास? तेरे पास कहाँ से आया?'

मैं अपने दोस्त से माँग लाया हूँ।'

'अच्छा लिखो क। क ऐसे लिखते हैं अपना हाथ पकड़ाओ मुझे।'

'यह तो सब आता है मुझे, आगे बताइए।'

'तुझे आता है? कब आया।'

'भूख लगी है इसे।'

'तो दे दो खाना, रुलाती क्यों हो ?

'कहाँ से दे दूँ, न अन्न है न रुपया।'

सब कुछ खतम हो गया है ?'

'हाँ अब कुछ भी नहीं बचा है।'

बगी माथे पर हाथ रखे बैठा रहा घोर घोर उठा। अजुन के पास गया। उसे लगा कि अजुन नहीं है उसका बेटा है। बिलख रहा है। अजुन को जोर से छाती में भींच कर तड़पा— भइया रो मत भइया मेरी छाती फटती जा रही है। फिर वह स्वयं बिलखने लगा और अपने ही सिर पर तड़तड़ तमाचे मारने लगा—मैं ही अभागा जड़ हूँ इस सारी विपत्ति का—नालायक, कपूत, आवारा

'रो मत भइया मैं तुम्हें भूखा नहीं मरने दूँगा

हँसुली के रुपये अभी उसके पास ही पड़े थे तीन सौ। वह भटियार बनिया के यहाँ गया चावल ले आया। सलोना से बोला—'ले जल्दी पका कर खिला।'

रात भर वह सलोना के पास पड़ा रोता रहा जैसे बहुत दिन बाद घर लौटा हो। सलोना उसे आज अंतर में बसी लग रही थी। उसके अंग-अंग से उसे उष्मा मिल रही थी और वह बच्चे की तरह उस उष्मा से घिर रहा था।

सलोना रात भर रोती रही। उसका चित्त आज गल गल कर बह रहा था। पुत्र के मर जाने से उसका उपेक्षित हृदय और भी जम गया था किन्तु आज बगी घर लौटा था। एक विचित्र ममता, प्यार और करुणा से वह अपने को द्रवित होना पा रही थी। जैसे धारा द्वीप को चारा ओर से लपेट कर हुए फिर बहती है उसी प्रकार सलोना का द्रवित व्यक्तित्व बगी को अपने में लपेट कर आज बहना चाहता था। रोती हुई बोली— स्वामी, मेरे मालिक।'

बसी के लिए यह नया शब्द था, इन शब्दों ने बसी की रग रग को दूह लिया। वह समस्त भाव मे निचुड कर पत्नी के ऊपर बरस पडना चाहता था। अटकते हुए बोला—'मैं स्वामी नही, मैं मालिक नहीं, मैं तो घर नाशक हूँ, अभागा हूँ, आवारा हूँ, मुझे स्वामी मत कहो क्या किया मने इस घर के लिए?' सलोना भी रोती हुई बोली—'अभी तो बहुत कुछ करने को शेष ह स्वामी। अपने को कोसिए मत। घर सँभाल लीजिए। बेटी ह, भाई हैं, तीना के प्रति आपकी कितनी बडी जिम्मेदारी ह।'

दूसरे दिन लोगों ने आश्चर्य के साथ देखा कि बसी दत्तचित्त होकर अपने खेत से घास निकाल रहा ह और दोपहर होते-होते घास का एक बडा-सा गटठर घर ला कर पटक दिया और गडासा लेकर उसे काटने बठ गया। पुत्र मृत्यु से जमी हुई उदासी के वातावरण में गडासे का स्वर बजने लगा छट्ट छट्ट और मानो उदासी कट कट कर बिखरने लगी। बसी ने साद भरा, बलो को खिलाया पिलाया, उस दिन भाटगार का बाजार था खुद नही गया दूबे को भेज दिया और स्वय लाठी लेकर खेतो की ओर निकल गया। शाम को अर्जुन को बुलाया, 'क्या अर्जुन तुम पढ़ने की इच्छा होती ह?'

'बहुत बहुत भइया।'

अच्छा तो चल तुझे अभी से पढाना शुरू करता हूँ। मगर पटरी और कलम तो अभी नही ह, कल शुरू करूँगा।'

'मेर पास हैं भइया।'

'तेरे पास? तेरे पास कहाँ से आया?'

मं अपन दोस्त से माँग लाया हूँ।

'अच्छा लिखो क। क ऐसे लिखते हैं अपना हाथ पकडाओ मुझे।'

'यह तो सब आता है मुझे, आगे बताइए।'

'तुझे आता ह? कब आया।'

'यह तो मैं लोगों के साथ बैठ-बैठ कर सीख चुका हूँ। मुझे तो सारा बारी भी लिखना आता है और तीन तक पहाड़ा भी आता है। आगे पढ़ाइए।

बंसी चकित रह गया। पर सहसा याद आया कि इतना प्यार-दुलार और सुविधाएँ पाकर भी यह पढ़ गया। स्कूल में अच्छे तरह पाया गया लेकिन माता पढ़ाई में उसका अभ्यास कर रहा और अब यह है कि अपने आप सब कुछ सीखता जा रहा है। बड़ा होनहार है यह जंगल के फूल की तरह बिना किसी की चिन्ता के सब कुछ सीख रहा है।'

बंसी खुश हो गया। शाबाश, भइया अर्जुन शाबाश! तुम बहुत तेज हो, मेरी आशा पूरी हो गयी, मैं तुम्हें पढ़ाऊँगा, आज से रोज घर पर पढ़ाऊँगा, तुम इस घर का नाम रोशन करोगे।'

अर्जुन ने खुशी से नाचते हुए कहा—सच भइया सच आप मुझे पढ़ायेंगे? मुझे तो पढ़ने की बहुत इच्छा होती है। इच्छा होती है कि सारी विद्या पी जाऊँ लेकिन लेकिन सब लोग कहते हैं भइया, कि बहुत पढ़ने के लिए बड़ा रुपये चाहिए और तुम तो अब गरीब हो गए हो। तुम्हारे बापू तो मर गए जो बेईमानी से रुपया बटोरते थे और तुम्हारे भइया तो लापता हो गए हैं, तुम्हारे बापू के रुपये चले गए हैं। सच भइया बापू ने बेईमानी से रुपये बटोरे थे? और आप लापता हो गए थे?

बंसी की आँखों में आँसू आ गए। 'हाँ भइया, मैं लापता हो गया था लेकिन अब नहीं हूँगा भइया, तुम्हें अब पढ़ाऊँगा।

'सच भइया।

'हाँ।'

अर्जुन फिर खुशी से नाचने लगा और बंसी ने उसे गोद में भींच लिया। पारवती साग काट कर आई थी, मास्टर सुगन को कल्लो नोता का गाली बक रही थी, सुगनवा को नानी आकरे बारे के हैजा ले जा, ओकर माई राँड़ि हो जा, ओकर भाई उपकर पड़े।

'क्या है क्या है पारवती, यह सब क्या बक रही हो ?'

'देखो न बाबू, सुगनवाँ की नानी गितवा कहती है कि मैंने उसके खेत में से सरसो तोडा है। दलिद्दर कही की अपनी औकात नही देखती, हमरे आगे नजारा मारने आती ह सोगनवनी छाती चीर कर खून पी लूँगी राड की, चोर बताती है मुझे '

'चुप रह पारवती, तू बहुत बक-बक कर रही ह, इतना बेकाबू होना लडकियो के लिए अच्छा नही होता।'

'अरे!' आश्चर्य के साथ पारवती बोली। 'आज सूरज कहा उगे हैं महाराज।'

'हाँ हाँ मैं ठीक कहता हूँ पारवती, लडकिया पराये घर की धरोहर होती ह उन्हे अच्छी-अच्छी बातें सीखनी चाहिएं। 'अरे बाबू तुम तो आज कुछ बदले-बदले से दिखाई पडते हो, तुम तो आज गियान की बात करते हो। अरे वाह रे बाबू '

'कहाँ ह धनपाल की नाना, कहाँ ह हरजाई परवत्ती '

बसी और पारवती दोनो ने चौंक कर देखा कि सुगन बहू मास्टरनी गरगराती गाली देती हुई पडोसी के दरवाजे पर खडी है।

पारवती को आग लग गयी। 'देखा बाबू, इस दलिद्दर मास्टरनी, इस हरजाई का? घर से कुदक्का मारती हुई यहाँ तक लडने आ गयी है इस मरदमारी को लाज-शरम थाडे ही है। और तुम मुझे उपदेश देते हो। अभी इस राड का बाल-बाल न नोच लूँ तो मेरा नाम पारवती नही।' पारवती इतना कह कर बाघिन की तरह मुडी और दौड कर वह सुगन बहू के सामने आ गयी और ठीकरे के टुकडे लेकर तडातड मारने लगी। और मुँह से झाग उगलती हुई बकने लगी—'आ गितवा की नानी आ, गाँव भर की जोरू आ, वहेल्ला आ, रडी आ, तुझे मार-मार कर आज भुरकुस न कर दिया तो मैं पारवती नहीं।'

मास्टरनी भी लपक-लपक कर इट के टुकडे फेंकने लगीं—'तूने

मेरी गाय-सी बेटी को गाली दी है, बड़ी सौह बनी फिरती है न, गाँव भर मे छोकरों से मार-मटक्को मारती फिरती है और नाम है सती पारवती—आहा हा क्या कहने है सती पारवती के ? आजा ने बेइमानी से चार पैसे कमा लिए तो बड़ी सार हो गयी है। इसी पाप का फल है कि तेरा भाई मर गया।'

'भाई !' गीता चिल्लाई। उसकी आँखें आँसुओ से तर थीं। 'यह क्या बक रही है तू भाई ! मरना-जीना तो भगवान के हाथ है इतनी निदय चोट नहीं करते भाई !' वह मास्टरनी को पकड खीचने लगी।

वंसी इस चोट से आहत हो गया। उसके लडके का सारा चित्र एक बार आँखो मे बह गया। 'इतनी कमीनी ह मास्टरनी मरने जीने पर घात करती ह। उसे गुस्सा आया पारवती पर। य० कमबख्त नहीं लडती तो यह नौबत क्यो आती, बडी मुहजोर हो गयी ह। वसी उठा और खीच भर तीन थप्पड पारवती के मुँह पर जड दिए और बाँह पकड कर खीच घर अदर ठेल दिया। पारवती मार खा कर भी रोती हुई मास्टरनी को गाली बके जा रही थी।

पारवती को मार खाया देख मास्टरनी के होश ठढे हुए—बस कहीं उस पर भी न पिल पडे। कौन जाने बदमाश छोकरा ह मार ही बठे।' वे धीरे धीरे घर की ओर खिसकने लगी।

पारवती आँगन के क ने में पडी सिसक रहा थी। वसी धीरे-धीरे उसके पास गया, उसकी बाँह पकड कर उठाया—बाला, पारवती इस तरह गाँव भर स लडती चलोगी क्या ? तुम्हें ससुराल जाना है, यही तो नही रहना ह ससुराल मे भी ऐसे ही लडोगी तो ससुराल वाल क्या कहेंगे ? और यह मास्टरनी तो जनम की नगी ह गाँव भर से लडती ह, मरदों से भी लडती ह कोई लिहाज नही। जा हाथ मुँह धोले और कुछ खाले। पारवती वसी को बिल्कुल समझ नही पा रही थी। इतना झगडालू, गाँव भर में बदमाश बाबू आज कसी-कैसी बातें कर रहें

हैं। कोई दूसरा दिन होता तो ये मास्टरनो की सात पुश्त याद कर जाते मगर आज ।

हँसुली के रुपये खतम हो गए तो फिर फाकामस्ती के दिन आये लेकिन तब तक मटर गदरा गयी थी। धीरे धीरे उसका आधार लिया जाने लगा।

बसी नौकरी खोजने लगा। सतीश के पास गया। रोने कलपने लगा। सतीश ने कहा कि तुम्हें कौन सी नौकरी दिलाई जाए? बाबू महीपसिंह जिला बोड के मेम्बर हैं, ये तुम्हें मास्टरी या बोड में कोई क्लर्की दिला सकते थे मगर कम से कम सात तो पास होना चाहिए था। बसी का चचेरा भाइ रामकुमार हाई स्कूल म मास्टर हो चुका था। और उस जवार में उसका प्रभाव भी जम चुका था। उससे बसी ने नौकरी के लिए कहा। रामकुमार ने भी यही कहा कि भाई तुम्हें कौन-सी नौकरी दिलाई जाए? स्कूल में कोई काम पाने से तो रहे, बस कनडक्टरी में भी थोडी-बहुत अगरेजी की आवश्यकता होती है। अब तो मट्रिक इटर पास लोगों की लाइन लगी रहती है। बसी वहाँ से भी हताश हो गया। उसे अपनी पढ़ाई की कमी अब धिक्कार रही थी—वह देख रहा था गाँव के गरीब से गरीब लड़के भी मैट्रिक इटर पास करके कोई न कोई नौकरी पकड बठे हैं और अपना घर सँभाल लिया है मगर एक यह है, बाप की कमाई का आसरा पाकर भी नहीं पढ सका, घूम घूम कर आवारागर्दी करता रहा, बाप की कमाई आवारागर्दी में फूँक दी और अब? अब उसे कोई पूछता ही नहीं। यही रामकुमार है जो बचपन में फटेहाल घूमता था, मने उसे कितना सताया था किन्तु पढ़ लिख कर बड़ा आदमी हो गया है। कहाँ जाए वह क्या करे? अब तो उपास पर उपास (उपवास) होने लगे हैं हे राम!

बसी ने सतीश से घिघिया कर कहा कि 'अरे चाचा महीप बाबू के

यहाँ कोई नौकरी लगा दीजिए न। बड़ा पुण्य मिलेगा आपको, बच्चे भूखों मर रहे हैं।'

सतीश ने समझाया—'देखो बसी, मुझे तुमसे और तुम्हारे परिवार से पूरी सहानुभूति है मगर महीप बाबू के यहाँ तुम्हें क्या मिलेगा ? इनकी जमींदारी खत्म हो रही है, धीरे धीरे सारे नौकर यहाँ से सरक रहे हैं, बाबू साहब सारे खेत बेच बेच कर खा रहे हैं, नौकरों को खाने के लिए कभी-कभी अन्न भी नहीं मिलता। कभी-कभी तो हम लोग भी दिन में केवल एक बार सत्तू खाकर काट दे रहे हैं, नौकरों की तनखाहें महीनों से बाकी हैं, तनखाहें मांगने पर मार खाते हैं और भाग खड़े होते हैं, तुम कौन सा काम करोगे ? किसी प्रकार तुम्हारा पेट पल भी जाए तो परिवार के लिए क्या करोगे ? और नहीं तो तुम्हारी अपनी खेती भी बिलायेगी। और एक बात और, महीपसिंह बड़े उलटे पुलटे आदमी हैं। मैं हूँ जो किसी प्रकार इनके आशीर्वाद से बचा हुआ हूँ नहीं तो किसकी बेइज्जती इन्होंने नहीं की ? दुधारू गाय हो तो चार लात भी सहो, इस ठठा गाय की लात खाने क्यों आओगे ?'

बसी को लगा कि सतीश उसे टाल रहा है। वह दीनदयाल के पास गया। दीनदयाल ने महीपसिंह से बातचीत की और सतीश की नियुक्ति हो गयी। भाटपार छावनी का छावनीदार मार खा कर भाग गया और वहाँ बसी को लगा दिया गया, बसी बहुत खुश हुआ। दीनदयाल ने समझाया— देखो बेटा, इसे कहते हैं भाग्य। नौकरी मिली और वह भी गाँव के पास की ही छावनी पर। अब देखो, ढंग से सँभालो काम-काज। घर के पास की छावनी है इसलिए अब छावनी का बहुत सा माल असबाब अपना ही समझो, समझे न बेटा, हें हें हें हें'

'हाँ हाँ काका समझ गया, आपने मेरा बड़ा उपकार किया है' कहते-कहते बसी कृतज्ञता से दीनदयाल के पैरों पर गिर पड़ा—'हे काका, जो हैं सो आप ही हैं।'

'अरे उठो भाई, तुम्हारी तकदीर कोई छीन लेगा। एक नहीं सो सतीश टालमटूल करें, तुम्हारा क्या बिगड़ सकता है?'

बसी को सचमुच सतीश के प्रति क्रोध उपज आया। सचमुच इन्होंने बहाना बनाया था। गाँव वाले गाँव का उपकार नहीं देख सकते।

सतीश घर आया हुआ था और बसी ने सतीश के घर के सामने मास्टर मुगन के दरवाजे पर खड़े होकर घोषित किया कि 'हाँ-हाँ महीप बाबू ने मुझे भाटपार छावनी का छावनीदार बना दिया है।'

सतीश को लगा कि यह उसी को सुनाया जा रहा है। वह हँसा—'फँस गया बेचारा।'

बसी लम्बा चौड़ा तो था ही, लम्बी चौड़ी लाठी का सेवन करने लगा। कलकत्ते में उसने जो लम्बे लम्बे बाल रखवाये थे, कटवा दिये, बाबू साहब का शौक सिगार से सख्त नफरत थी। वह खेतीबारी की पहरा चौकी देने लगा, हालाँकि अब खेती-बारी थी ही कितनी? तीन चौथाई खेत तो बिक चुके थे। बसी जमींदारी के सारे ठाट-बाट सुन चुका था और जब वह बचपन में स्कूल पढ़ने आता था तो छावनीदारों और सिपाहियों की धींगा मस्ती देख चुका था, वह भी उजड़े खड़हर में जमींदारी के ऐश-आराम के सपने देखने लगा। उसे लगा कि वह भी कुछ है, और कुछ और को सिद्ध करने के लिए वह हजाम से देह दबवाने, तेल मालिश कराने का प्रयास करने लगा लेकिन हजाम दो-चार हाथ यहाँ-वहाँ मार कर भाग जाने लगा—अभी उनकी हजामत बनानी है, उनके घर कथा है बसी सोचता कि कैसा बदमाश है यह हजाम, पहले के छावनीदार की सेवा घंटा करता था और मेरी सेवा में आना कानी करता है। यह नहीं समझता कि मैं भी बाबू महीपसिंह का आला दरजे का छावनीदार हूँ। अच्छा तो मजा चखाऊँगा एक दिन।

हरवाहे बहुत से थे उस जमाने में, अब चार-पाँच रह गए थे। सभी छोड़ छाड़ कर कहीं न कहीं भाग गए या किसी और का काम पकड़

लिया। वे तीन चार भी बहुत चाँय-चाँय करने लगे थे और अक्सर मागा पारते थे। वंसी लाठी लेकर खेत खलिहान घूम आता और बड़े रुआब में नौकरों-चाकरों या गाँव वालों की ओर देखता परन्तु उसकी ओर कोई ध्यान ही नहीं देता, तो वह खुद बड़े जोर से खँखार कर लाठी जमीन पर ठोकता या किसी छोटी जाति के लड़के को बड़े जोर की गाली देकर कहता—'यहाँ क्या कर रहा है रे साले! टाँग तोड़ दूँगा अगर इस खेत की ओर आया, जानता नहीं बाबू साहब के खेत है।'

वंसी कुछ खुशी जरूर हुआ। छावनी पर अभी भी काफी गल्ला पताई हो जाता था, जिसमें का अधिकांश बेंच कर महीपसिंह के लिए रुपये भेजे जाते थे, बाकी में से वंसी कुछ व्यवस्था अपने घर के लिए भी कर लेता था। कभी-कभी छावनी के बैलों का उपयोग अपने खेतों पर भी कर लेता था। अर्जुन भाटपार ही रहता था। उसे रात का वही अपने साथ ही खिला पिला भी देता था। गन्ने की फसल के समय कुछ पैसे भी हाथ आ जाते थे, और कुछ गुड़-महिया भी। बीच बीच में उसने दो चार बार नौकरों को पीट कर अपना जमींदारी रुआब भी संतुष्ट किया।

गाँव आता तो दीनदयाल के यहाँ बैठकी होती और बड़ी लम्बी चौड़ी बातें बतियाता महीपसिंह की बड़ाई में। राजा हैं महीपसिंह, इतना लापरवाह तो कभी देखा सुना नहीं। उनके पट्टीदार लोग हैं—वे पैसे वाले हैं मगर बनिया हैं, उसमें राजपूती खून नहीं। कोई गाली भी दे दे तो चुपचाप सह लें, मगर वाह रे बाबू महीपसिंह कोई अपमान करके निकल तो जाय। कलट्टर जज का भी जूता से पिटवायें और पैसे को तो ठीकरा समझते हैं—वाह रे वाह और जानते हैं दीनदयाल चाचा! सतीश चाचा को तो वे कुछ समझते ही नहीं, मेरी बहुत कदर करते हैं। सतीश चाचा को वे बेईमान समझते हैं। एक दिन मुझे सारा

काम-काज सौंपने वाले हैं। और फिर वह सतीश के दरवाजे से झूमता हुआ निकल जाता।

बसी सिंहपुर गया हुआ था, सतीश उस दिन गोरखपुर गया हुआ था। नौकर-चाकर दीवानखाने के ओसारे में पड़े हुए थे। किसी दूसरे जमीन्दार के यहाँ से एक आदमी आया हुआ था, कोई चिट्ठी लेकर। बाबू साहब ने नौकर से कहा कि इसे ले जाओ दीवानखाने में, इनके खाने-पीने का इतजाम करा देना।

सतीश था नहीं, नौकर ने आकर बसी को सुनाकर कह दिया कि इनके खाने पीने का इतजाम करना ह बाबू साहब ने कहा है।

बसी ने सोचा कि वह तो भाटपार का छावनीदार ह उसे क्या? और और नौकरों ने सोचा कि वे तो नौकर हैं उनके हाथ में ह ही क्या? उन्हें क्या करना है?

उस दिन खाने को भी कुछ नहीं था। नौकर सब कई दिन से इस बात को जानत थे कि मुश्किल से रात को कोई प्रबन्ध हो पाता है। दोपहरी सूनी कटने वाली थी, कौन कहा से प्रबन्ध करे? बसा भी चुपचाप उदास पड़ा रहा।

तिजहर का बाबू साहब घूमते घामते दीवानखाने का ओर आ गए। सबसे पूछा कि क्या इसके खाने पीने का इतजाम हो गया था।

सभी चुप थे।

'तुम लाग बालते क्यो नहीं? चुप क्या हो? बसी! मैंने कहलाया था, कि इनके खाने-पीने का इतजाम हो जाना चाहिए।'

'हाँ बबुआ, कोई नौकर कह तो गया था।'

तो खिलाया कुछ खाना-वाना इसको?' बाबू साहब की आँखें जलने लगी यों बसी भय से सहम गया। बोला—'बबुआ, मने यहाँ के नौकरा से पूछा तो मालूम हुआ कि कुछ खाने ही को नहीं है।'

'चटाक' बंसी की पीठ पर बाबू साहब का खड़ाऊँ पड़ा। बाबू साहब का भाल मुख गुस्से से लाल हो गया—'अरे धनपल्वा का साला रसिया, तू घर दुआर पर का अपमान करता है, बाबू महीपसिंह के यहाँ खाने को न रहे? और तू साला दस हाथ की निकम्मी देह लिए दायनो दार घरा फिरता है और एक मेहमान के खाने का इन्तजाम नहीं कर सकता है! नाक कटा दी साले तूने। सतीश न रहे, तो तुम लोग इस राजपाट का सत्यानाश करके छोड़ोगे।'

चटाक चटाक

बंसी घिघियाने लगा—'अरे नहीं बबुआ गलती हो गई, माफ कइल जा।' बाबू साहब मुँह से फेंचकुर फेंक रहे थे। सभी लोग स्तब्ध थे। बंसी उठकर भागने लगा, बाबू साहब के हाथ में एक लाठी आ गयी। पीठ पर ताबड़तोड़ मारने लगे। बंसी घिघियाता रहा और इधर-उधर भागता रहा। बाबू साहब लाठी फेंक फेंक कर मारते रहे। बंसी भागने लगा, बाबू साहब ने दौड़ा लिया। गाँव के बाहर आकर बंसी खदक में छिप गया, बाबू साहब वहाँ भी पहुँच गए और पन्द्रह-बीस लाठी उसकी पीठ पर बरसा दी। बंसी अब जोर से भागा और काफी दूर जाकर एक बन-खड़ी में छिप गया। बाबू साहब हाँफते हुए उसे खोजते रहे और अपने आदमियों को गाली देते रहे, साले खड़े-खड़े मुँह क्या ताकते हो, पकड़ लाओ धनपाल के साले को आज उसको जिन्दा नहीं छोड़ूँगा। बंसी शाम के झुटपुटे तक उस बनखड़ी में छिपा रहा फिर रात को वहाँ से निकल भागा। घर नहीं गया, कहीं निकल गया। यहाँ वहाँ लुकता-छिपता रहा। रोम रोम परिताप से जलता रहा। सतीश चाचा ने ठीक कहा था—मैंने नहीं माना, समझा कि वे मुझे झुठला रहे हैं। कैसे घर जाऊँ? वहाँ भी यह हत्यारा न पहुँच जाए परदेस भाग जाऊँ, परदेस भाग जाऊँ

लेकिन परदेस के कड़वे अनुभव अपनी सारी तिक्तता उसकी रग-रग में घोल जाते थे। हाँ, ये कड़वे अनुभव ही थे, जिन्हें उसने अपनी शेखी बघारने के लिए गाँव वालों के सामने मीठा बना कर कहा था।

वह महीने भर बाद एक रात को छुप छिप कर लौट आया और सलोना से मिल कर रात भर रोया। सलोना महीपसिंह को जी भर-भर कर गालियाँ देती रही। महावीर दूबे ने धिक्कारा—'अरे तनि हेहर देख, ई सारे राजपूत की लाठी खा कर आ रहे हो, बाभन होकर। इतना भी तेज नहीं रहा? अरे इतनी बड़ी देह किस काम की? तनि हेहर देख, उसी मुजहनी की आड़ में सारे राजपूत को पटक कर चहल दिया होता उसके मुँह पर थूक कर भाग गए होते तो कोई बात होती, हेहर देखा।'

'अरे फूफा, मारना कोई मुश्किल नहीं था, साले पचीसों सिपाही जो थे, वे मुझे मारने लगते।'

'अरे तो मार तो तुमने खाई ही। दो लाठी भी—मार दी होती तो एक मरदानगी तो मालूम पड़ी होती, बाभन का तेज तो मालूम पड़ा होता। थुड़ी है थुड़ी ह।'

'अरे हाँ हाँ, सिखाना आसान ह। करना मुश्किल ह।' बसो चिढ़ कर बोला।

'अरे मुसकिल क्या ह मुझे कोई मारकर तो देखे।'

सतीश ने यह सारी कहानी सुनी तो दाँत पीस कर रह गया। नाक कटा दी इस बसिया ने गाँव की।

फिर वही ढाक के तीन पात। बसो परिवार भूखा मरने लगा। वह बसो जो फैमा धोतिया के कई जोड़े साल भर में फाड़ कर फेंक देता था मोटी-सी पुरानी धोती सी-सी कर पहनने लगा। घर के बच्चों के ऊपर चिथड़े लिपटे हुए थे। बसो को अपने बचपन के दिन याद आकर सालने लगते और एक हूक-सी मार कर लौट जाते। महावीर दूबे

सर्दी, गर्मी, बरसात, भूख-प्यास उपवास में अपनी प्रकृतिस्थता को सँभाले जो रहे थे जैसे उन्हें किसी से कोई शिकायत न हो, न गुरु मेन्न दुख से, अपने काम से काम।

आखिर जब जाड़े के दिनों में कई दिनों तक चूल्हा नहीं जला तो बंसी घर छोड़ने पर उतारू हुआ। रास्ते के लिए रुपयों की जरूरत थी किससे माँगे, दीनदयाल ने साफ नाहीं कर दी। सलोना ने कुछ रुपये दिये और बंसी कलकत्ते भाग गया। गाँव के कई लोग थे—चटकल में काम करते थे, वह भी उसी में शामिल हो गया। जबरदस्त काम शरीर श्रम की इन्तहा। महीपसिंह के यहाँ तेल मालिश की हुई देह गाँधा चलाते चलाते बिखरने लगी। उसकी सलोनी प्रवृत्ति ललकारती—छोड़ दो गाँधा-बोचा और भाग चलो इस काम से। इससे तो भली नाटक मंडली थी वह जोगरई ही थी कुछ राग रंग भी रहेगा। मगर परिवार के सारे उदास चेहरे उसके सामने खिंच जाते। जोकरई से पेट पालना छि छि परिवार को फाँसी देना है। फिर उस साहुब के घर चला जाए, जाना ही होगा, उस भुन पर विश्वास नहीं रह गया है। और तनखाह भी क्या थी? खाना पीना जरूर अच्छा था लेकिन अपना ही पेट पाल कर क्या करूँगा? और वह जोर से साँचा चलाने लगता और चाहता कि दिन में वह अधिक से अधिक कमा ले। दिन में डेढ़ रुपया कमा लेता। गाँव वालों के साथ एक गन्दी चाली में रहता था। सूखी रोटियाँ कभी नमक से कभी तरकारी से खा ली जातीं। कुल मिला कर वह बीस रुपये घर के लिए बचा लेने लगा। लेकिन ये बीस रुपये महँगाई के जमाने में किस ओर के होते। आजादी के कई वर्षों बाद भी बाढ़ वैसे ही आती रही, रबी की फसल वैसी ही कमजोर होती रही, महँगाई दिन दिन बढ़ती जा रही थी। किस ओर के होंगे ये बीस रुपये। बंसी साल भर पर घर आया तो उसकी गोरी देह काली पड़ गयी थी, उसने कपड़े निकाले तो सलोना उसे देखकर रो पड़ी—इतनी भरी-

पूरी देह क्या हो गई? परदेस ने पूरी देह ही सोख ली है। बसी मुशकिल से घर एक महीना रह पाया, कि घर उसे परदेश ठेलने लगा, आँखों में अकथ व्यथा लिए महावीर दूबे, चिथड़ा में लिपटी पत्नी, जवान होती हुई गरीब पारवती, होनहार पत्ते की तरह पियराता हुआ अर्जुन सबकी पीर की चुभन अनुभव करता हुआ वह स्वयं

कलकत्ते भाग गया। साल भर पर आया और हाय, ठीक से एक महीना भी नहीं रह सका हाय रे तकदीर—सलोना रो रही थी।

और वमों कलकत्ते कमा रहा है, हाड़-हाड़ पेर रहा है मगर घर की गरीबी नहीं जा रही है। एक बच्ची और हुई सलोना कपार ठोक कर रह गई—हाय रे कोख। बस लड़की और लड़की कहाँ निस्तार होगा इनका?



: २३ :

दूसरे दिन दीनदयाल के यहाँ महावीर दूबे आ पहुचे। दीनदयाल उन्हें अपने कमरे के भीतर ले गए। आवभगत की। फिर पूछा कि कहिए दूबेजी—'पचायत की सरगर्मी क्सी है ?

'आ सालो क्मी भी हो, तनि टेहर देखो—बवाल खडा ह, अपने को तो कोई रस नही।' दूबे जो उदासीन होकर बोले। फिर भुनभुनाये—'पहले भी तो ऐसा कई बार हुआ ह फिर एक बार बवाल खडा हो रहा है।'

'अरे नही दूबे जी, पहले में और इसम फरक ह। यह एक पोख्ता चीज होने जा रही ह। पचा के हाथ म बडी ताक्त आन जा रही ह। उदासीन होकर तो हम लोग ताक्त गल्त लोगा के हाथ म दे देंगे।'

'हूँ', महावीर दूबे मानो समझने के लिए अपनी उदासीन आँखा से देखने लगे।

'हाँ और क्या ? मेरी तो राय ह कि आप भी इस पचायत म खडे हो। आप से सबको न्याय की आशा ह।'

'ना भाई ना, म इस बखेडे में पडने से रहा। अचायत पचायत मेरे मान की नहीं और सो भी तनि हेहर दखो, इस गाँव की पचायत।

'नहीं-नहीं, मालूम होता ह आप कुमार का सकोच करते हैं या डरते हैं। उसने आपसे कहा भी तो होगा और बात यह ह कि आप लोग एक ही घर के ठहरे, सकोच भी तो करना ही चाहिए।'

'अरे नाही हो, हल्ला कर दूबे जी बोले—कुमार समुरा लुच्चा लफगा की परवाह करता हूँ, कोई हमारे घर की खरचो चला रहा ह इस मुसीबत म अगर पूछने आये त दीनदयाले आये। मैं इनका लिहा छोड कर और कौन समुरे का कर्रुगा, तनि हेहर देखो।'

दीनदयाल बहुत खुश हुए भीतर भीतर। 'मैं तो चाहता रहा आप खुद उठते अगर नहीं उठते तो मेरा समर्थन करिए परे परिवार और संगी साथियो के साथ।'

'अरे हा तब का, आपका समर्थन नही करूँगा तो क्या लुच्चा लफगो का करूँगा।

दीनदयाल ने एक एँड और लगाई—'अरे नहीं दूबे जी, कुछ भी हो अपने घर घराने का मोह आखिर में उमड ही आता है। कुमार नेता ह, जानते है न दूबे जी, नेता लोग भी सौ जूता खा कर तमाशा देखने वाले होते ह। कल को आएगा और आपको तलियाने लगेगा तो आप फिर चिकने होकर उधर ढरक जाएँगे।' दीनदयाल अपने मजाक के 'टोन' पर भभा कर हँसने लगा मगर दूबे जी झल्ला कर बोले—आ हटऽमरदवा, मजाक करते हो। आरे तनि हेहर देखो, हम सबको समझते हैं—कौन क्या है? आ ए दीनदयाल, तुम तेल्याओ, यह सब आदत तुम्ही का ह। आ हमको समझा क्या ह इस कुमार ने? उसके तेल लगाने से फिसलूँगा? मरद की जबान एक ह।'

दीनदयाल अपने काइयाँपन पर हँसता रहा और दूबे जी बडबडाते रहे। दूबे जी चले गए तो मउगा दर्लसिंगरा पहुँच गया—ताली मार कर बोला—'अरे ए बहिनी, ई दुबाइन कोठरी में से कहा से निकल रही है। हाय राम, ए दिनदयाल भाई, अब दुबाइन के ऊपर छोहाए हा।'

दूबे जी बोलने में बडे बेधर थे। वे किसी का जवाब लौटाये बिना सम नही होते। जाते-जाते बडबडाते जा रहे थे 'और जा रे मउग जो-जो करवाना हो सो करवा, अब मैं जा रहा हू। मउग साला जिनगी भर आदत नहीं गयी। अरे मुझे क्या, मुझे क्या रे मउग, तू जिनगी भर नहीं सात जनम ऐसे ही रह, रह साले ऐसे ही, मुझे क्या?'

दूबे जी अकेले बडबडाते चले जा रहे थे और मउगा दर्लसिंगरा पिहँकारी मार कर ताली बजाकर हँस रहा था।

'क्या है दलसिंगार क्या ह क्या समाचार ?'

'अरे हाय मइया, आप समाचार पूछने हैं गजब हो रहा ह 'दीन दयाल ने प्रश्न सूचक गम्भीर आँखों से दलसिंगार की ओर देखा—'मानो यह, कह क्या गजब हो रहा है।'

'अरे गजब यही कि कुंजुवा गाना गा गा कर सतीश का प्रचार कर रहा ह। उसने एक गाना बनाया ह—उसे वह खेत में, रास्ते में, रात को किसी के चोपाल में गाता ह, लोग ध्यान से सुनते हैं और खास करके बेवकूफ औरतें प्रभावित हो रही हं। हाय मइया, ई साला तो परलय कर देगा।'

'मन भी सुना ह कोई नयी बात नहो।' दीनदयाल चुप रह कर बोले, 'फिर क्या करना होगा ?'

'मैं जानता हूँ क्या करना होगा ? हो-हल्ला करना होगा। कुजुवा और बदमी महाइन को एक साथ पकड़वा कर समाते का दम मोड़ना होगा और रघुनाथ के खिलाफ कुछ उड़ाना होगा—आप तो जानते ही हं बड़ा कुपदी ह वह, भोजाई के साथ समन्ने न।'

हाँ ठीक ह कुछ करना तो पड़ेगा ही, सतीश के लिए बाबू महीपसिंह को कुछ करना होगा और कुमार के लिए '

'अरे कुमार के लिए क्या ? सब जानते ह कि वह शराबी कबाबी है, मुसल्मानों के घर खाता पीता है, जनेऊ नहो पहनता ह और मैं इसका प्रचार भी खूब कर रहा हूँ।'

फिर दोनों म गुसपुस-खुसपुस होती रही

बाहर से कुंजू की आवाज़ तड़पती हुई गुजर गया—

× × ×

माघ की शाम गहरा गयी था। चारो ओर सनाटा छा गया था। कुंजू बगीचे की झोपड़ी में आधा लेटा हुआ गीत गा रहा था

बटिया जोहत जोहत जिनगी सेराइल
हेराइल नयनवा क जोतिया हो राम
जहाँ-जहाँ चितई ले, रोवे सुनसनवा रे
थर-थर काँपे ले पिरीतिया हो राम
थर-थर काँपे ले
थर-थर

कुंजू गाते गाते चुप हो गया उसे लगा कि उसी की आवाज चारों ओर म घूम फिर कर उसके कान म भर गयी ह। वह न जाने कैसा-कैसा अनुभव कर रहा है, जो अनुभव कर रहा ह उसे कह नहीं पा रहा है। गीत गाता ह, बाँसुरी बजाता ह, फिर भी लगता है कि वह नहीं कहा जिसे वह कहना चाहता था, और फिर गाता ह, फिर बाँसुरी बजाता ह और फिर उसे लगता ह कि वह कुछ नहीं कह सका फिर गाना बन्द कर देता ह, बाँसुरी रख देता ह और सोचता ह क्या ह वह जिसे वह कहना चाहता ह, क्या है जो बाहर बहने के लिए उसके भीतर हमेशा घुमड़ता रहता ह, क्या ह क्या ह ? और उसे लगता है कि कुछ नहीं ह भीतर कुछ नहीं ह—एक अकेलापन ह, एक सन्नाटा ह, एक हाड़-हाड़ को तोड़ता हुआ दरद ह, एक आवारा की तरह भटकता हुआ कुछ ह कुछ ह। ये गीत उसी के मथे हुए ह, बंसी के सुर उसी के फूँके हुए हैं, वह रोज रोज बंसी फूँकता ह, गीत बिखेरता ह फिर भी वह जो कुछ ह, वह है और कभी कम नहीं होता। सुनसान सुनसान और जैसे सुनसान में से किसी ने आवाज लगा दी हो। आवाज जोर से लूक की तरह सुनसान को फाड़ती हुई लहरी हो और फिर खुद सुनसान में खो गयी हो। मगर फिर आवाज आती ह फिर एक बार सुनसान थरथरा कर चीख जाता ह और फिर आवाज खो जाती ह और फिर आवाज आती ह और लगता ह कि वह आवाज खोई नहीं ह, कभी नहीं खोयेगी। वह केवल चुप हो जाती ह, उस आवाज को अपनी भी ता

बेचारी है प्यारी भी तो। उसी आवाज को तो पाना चाहता हूँ लेकिन कितना गहरा अँधेरा है कितना जबरदस्त सन्नाटा है, मेरे उसके बीच यह सन्नाटा है, जो जाए मुझे या उसे या दोनों को इससे पहले कि हम मिल पायें। और जो हो गया होता, ये तो हम हैं कि सन्नाटे का पट चीर कर निकल आते हैं। बदमी तू कहारिन है मैं बाभन हूँ। हाँ बाभन हूँ निच जाति के दीनदयाल का। ऊँची जाति का हूँ और तू कहारिन है छोटी जाति का। इसलिए हम मिल नहीं सकते। कितनी कितने दिनों से हम भटक रहे हैं एक दूसरे के लिए कितने पास हैं हम बदमी, लेकिन भटक रहे हैं। हम एक-दूसरे के कितने करीब हैं बदमी और हमने एक सही चीज को देख लिया है पहचान लिया है लेकिन उसे पकड़ने से डरते हैं, उसे पाने में डरते हैं क्योंकि हमारे समाज का एक बहुत बड़ा झूठ हमारे बीच में आ खड़ा होता है—हम बाभन कहार हैं। यह कितना बड़ा झूठ है बदमी, कितना बड़ा झूठ, सच तो इतना ही है कि मैं कुंजू हूँ और तू बदमी है। हम दोनों के भीतर एक दर्द है, वह दर्द एक-सा है और हम एक हैं बदमी हम क्यों भटकें एक दूसरे के लिए? हम इस झूठ से क्यों डरें बदमी? नहीं अब नहीं भटकेंगे हम। नहीं भटकेंगे। हम झूठ को ठोकर मार देंगे। कुंजू उत्तेजित हो गया। उसे लगा कि वह उस शाम के सन्नाटे में पुकारे, बदमी

'अरे जल्दी चलो भाई, बड़ा जाबिल साँप काटे हुए है, बेचारी कहारिन मर गयी तो गाँव का कार बार कौन करेगा?'

'हाँ भाई जल्दी चलो भाटपार से ओझा को बुला लाएं'

अपनी झोंपड़ी के पास आवाज सुनकर कुंजू चौंका। कौन कहारिन, किसे साँप काटे हैं? कौन हैं ये लोग।

'कौन हो भाई!' झोंपड़ी में लेटे लेटे कुंजू ने पूछा?

'यह तो मैं हूँ दलसिंगार कुंजू भाई।

क्या है? किसे साँप काटे हैं?'

'अरे भाई बदमी को साँप काटे हैं हम लोग ओझा बुलाने जा रहे ह।'

'बदमी का।' कुंजू उछल-सा पड़ा और वह झोपड़ी से निकल कर सरपट भागा बदमी के घर की ओर। अंधेरे में कहीं-कहीं मेड पर स गिर भी गया। शीत से भीगते हुए खेतों में भीग कर लथपथ हो गया। साँप बदमी, बदमी और साँप—क्या होगा राम? यह भी सहारा छिन जायगा? नहीं आज वह लोकलाज का झूठ नही मानेगा। उसके जहर को वह मुँह से चूसेगा

और जब कुंजू झपाटे मारता हुआ बदमी के घर के पास पहुँचा तो देखा वहाँ तो सन्नाटा छाया हुआ हैं। बदमी का घर गाँव के दूसरे छोर पर, कुछ गाँव से हटकर पड़ता था। दो-एक गडेरियों के घर के साथ बदमी का घर था। उस अकेलेपन में सन्नाटा और भी गहरा रहा था। कुंजू ने देखा—सूना पड़ गया है, वहाँ किसी प्रकार की आहट नहीं मिल रही है, फिर भी वेग से बदमी के दरवाजे तक चलता गया। घर क्या था पास पास दो कमरे थे। कुंजू ने आवेश में आकर सोचा शायद गाँव का कोई आया ही न हो तो, एक कहाइन की मौत कौन बड़ी मौत ह, और कहीं बदमी अकेले पड़ी पड़ी मर गयी हो तो यहीं! नहीं, वह नहीं मर सकती, कुंजू अपने आप में उफना और जोर से दरवाजे को धक्का दिया। किवाड अभी भीतर से बन्द नहीं था धक्का लगाते ही खुल गया। अभी कमरे के भीतर एक ढेबरी जल रही था। बदमी अपने छोटे भाई को सुला कर अभी अभी चुकी थी। किवाड को खोलने के साथ ही कुंजू चिल्लाया—'बदमी।

बदमी चौंक कर उठ बैठी। 'अरे तिवारी क्या हुआ? क्या हुआ तिवारी? इतने घबराये क्यों हो?'

बदमी उठकर खड़ा हो गयी। कुंजू सामने खड़ा था, बदमी को एक टक निहार रहा था। उसकी आवाज बन्द हो गयी थी।

'क्या हुआ तिवारी ? क्या हुआ ? बोलते क्यों नहीं ?'

'बदमी तू जिन्दा है ? तू जिन्दा है बदमी ?'

'हाँ क्या चाहते हो मर जाऊँ ? क्या तुम भी यही चाहते हो !'

'नहीं बदमी !' चीख कर मुंजू बोला—'नहीं बदमी, नहीं, मैंने अभी सुना कि तुझे साँप काटे हुए है। तुझे साँप काटे हुए है। मैं मैं बगीचे वाले खेत की झोपड़ी में लेटा हुआ था कि मउगा दलगिंगार कहता गया कि तुझे साँप काटे हुए है, वह भाटपार ओझा बुलाने जा रहा है। और मैं मैं तो घबरा गया बदमी, मैं तो मरा-सा हो गया और वहाँ से कूदता फाँदता भागा तुम्हारे पास कि अगर आज मरी सभा में तुम्हारे लिए जान भी देनी होगी तो दूँगा, आज मैं किसी भी झूठ को नहीं स्वीकारूँगा, तू मेरी है बदमी यह जान भी तेरी है और-और नहीं बदमी मैं बहुत बोल गया, मगर तू जिन्दा ? अभी तू जिन्दा है, जैसे मैं खुद मर कर जिन्दा हो गया।

ढेवरी के प्रकाश में मुंजू की परछाईं बड़ी होकर बदमी पर झुक रही थी। मुंजू खड़ा-खड़ा मारे खुशी के हाँफ रहा था। उसकी आँखों में जमे बादल उठ गिर रहे थे। बदमी तिवारी को एक टक देख रही थी, खुशी के मारे थर-थर काँप रही थी। उसे लगता था कि तिवारी बादल है और वह एक छोटा सा ताल—वह ताल के ऊपर झुक कर बरस रहा है ताल काँप रहा है छोटी छोटी लहरें ताल को छेड़ छेड़ कर उसे कँपा रही हैं

दोनों अभिभूत से खड़े एक दूसरे को देखते रहे, दोनों काँप रहे थे। यह एकान्त दोनों में एक विचित्र तरह का भय, उन्माद उल्लास का मिला-जुला रस पैदा कर रहा था दोनों नायक उसे सँभालने में लगे थे और दोनों जैसे एक साथ उस सम्मोहन में तन्मय होकर एक दूसरे पर टूट पड़े बदमा ?

तिवारी ?

दोनों एक दूसरे से चिपट गए जैसे लोहे के दो जलते हुए तार लिपट गए हों। तिवारी ने बदमी का शरीर जोर से खींच कर अपनी छाती में समा लिया। बदमी समर्पण की मुद्रा में अपनी देह को ढील देकर मानो कह रही थी—ले लो—सब तुम्हारा ही तो है, समेट लो। कब तक तुम्हारी थाती को ढोती फिरूँ? कब तक सँभालूँ इसे? नहीं सँभलता मुझसे, ले लो तिवारी, इसे ले लो। इसके सारे दरद और रस के साथ इसे समेट लो।'

और तिवारी को लग रहा था जसे उसके और उसके बीच का जो झूठ था वह टूट कर खतम हो गया है सुनसान में। खो जाती हुई आवाज अब कभी नहीं खोयेगी, वह नहीं खोने देगा। उसे लगा जसे वह गुनगुने पानी की झील में धस गया है, कुछ नहीं ह वहाँ, न किनारा न धारा, न पेड़ न पौधे, न पछी, बस वह ह और पानी की गुनगुनी अनुभूति।

'तुम भीग गए हो तिवारी', सहसा बदमी होश में आती हुई बोली। बदमी अलग होना चाहती रही परतु तिवारी उसे जकड़े रहा। 'तिवारी, तुम्हारी धोती तो बिलकुल भीग गई ह, ठढक पकड़ लेगी तिवारी। बदमी धीरे धीरे बुदबुदा-सी रही थी।

तिवारी अभिभूत सा बदमी को समूचा अपने में भरे खड़ा था। उसी अभिभूत अवस्था में बुदबुदा रहा था—'कुछ नहीं होगा मुझे, कुछ नहीं होगा मुझे। तेरे प्रेम की गरमाई बहुत ह ठढक चूसने के लिए। बस इसी तरह तेरे कधे पर सिर रखे मर जाऊँ तो भी बहुत ह बदमी। तेरे बिना तो जीना भी बेकार लगता ह '

बदमी ने झट तिवारी के मुँह पर अपना हाथ रख दिया। 'चुप, ऐसा नहीं कहते तिवारी, अब तो तुम्हारे साथ जीने की इच्छा जागी है मुझे दुनिया तुम्हारे लिए अच्छी लगने लगी ह—अरे तुम रोते हो!

तिवारी। बदमी को ऐसा लगा कि उसके कधे पर कुछ गरम गरम चू रहा है—तिवारी के आँसू थे।

'रोता कहाँ हूँ पगली, यह तो यो ही ह। न जाने क्यों लग रहा ह कि तुझे सचमुच साँप ने काट लिया था और तुम जी उठी हो फिर तुम्हें नये जन्म में पा रहा हूँ बदमी। न जाने क्यो न जाने क्यो ?'

'तिवारी, तुम्हारी धोती भीग गयी है, मुझे डर है ठढक पकड लेगी, कितनी सर्दी है और कितनी भयानक हवा चल रही ह, लगता है, कोई दरवाजा पीट रहा है बार-बार '

कुंजू ने बदमी की आँखो में देखा—बदमी सिहर गयी, सच तो धोती तो भीग गयी ह लेकिन वह क्या कर सकती ह नगा तो रहेगा नहीं तिवारी—

तिवारी धोती तो भीग गयी है, बुरा न मानो तो इसे छोड दो और मेरी-पुरानी धोती है उसे लपेट लो।

कुजू हँसा, एक दयनीय हँसी। मगर बदमी मझे तो अभी फिर जाना ह धोती भीग जाएगी और तुम्हारी धोती पहने-पहने कहाँ-कहाँ घूमूँगा '

चले जाना तिवारी, म कहाँ मना करती हूँ, मगर थोडी देर मेरी धोती पहन कर अपनी निचोड कर फला दो—एकाध घटे में पहनने लायक हो जाएगी।

तिवारी चुप रहा। बदमी ने अपनी साडी ला कर तिवारी के सामने कर दी, तिवारी फिर हँसा और साडी ले ली ? एक ओर हट कर धोती खोलकर साडी लपेट ली। उसे लगा उस साडी में से बदमी की गध फूट रही ह, साडी नहीं, बल्कि बदमी का गरम-गरम परस लिपटा हुआ है उससे। उसने बरसात की सीलन भरी फ़र्श पर चने भुटका भुटका कर खाए थे—बरसात की उदास सीलन में क्यो गरमाई होती है भुटकाए जाते हुए चने की। हाँ, कुछ वसी ही गरमाई है इस भीगती

चिल्लाती हुई माघ की रात की ठडक में उसका रोम रोम काटे की तरह खडा हो गया था जैसे उसी को यहाँ-वहाँ चुभ रहा था।

'तुझे डर नही लगता बदमी ?'

'क्यो, काहे का डर ?'

'अकेलेपन का।'

'अकेली तो रोज ही होती हूँ तिवारी! बाबू को इसकूल पर ही सोना पडता ह। बस मै और मेरा यह भाई। कब से तो आ रही हूँ मह अकेलापन होती। डर काहे का।

'लेकिन जब उस अकेलेपन में रात के समय कोई मरद आ जाए तो, तो बदमी!'

'तो क्या? तो उस मेहमान की दया के लिए उसे असीस दूँगी कि दो घडी के लिए कोई आया तो। दो घडी के लिए तो कोई '

'सच बदमी, तुझे डर नही लगता? मुझे तो डर लग रहा है इस अकेलेपन से न जान क्यों आज इस सुदर घडी में भी जी कॉप रहा है। आज तुम इतनी नजदीक हो मगर तुम्हारी ओर हाथ बढाते डर लग रहा ह। न जाने क्यो लग रहा है कि अँधेरा हमे घूर रहा ह और बदमी!' कुजू जैसे एकाएक चमक कर बोला—'म तो भूल ही गया था, मउगा दलसिंगरा ने झूठे हो तेरे सॉप काटने की खबर मुझे क्यो दी?'

बदमी थोडा मुसकराई—'इसलिए कि मेरे तिवारी इस रात के अकेले में मेरी जिन्दगी की दो घडी मीठी करने आ जाएँ।'

'तू नहीं समझती बदमी, तू बडी भोली ह इसके पीछे कोई सडयन्त्र दिखाई दे रहा ह।'

'और तुम बडे चतुर हो तिवारी, तभी तो गाँव भर तुम्हें निकम्मा, बुद्धू कहा करता है। क्यों?'

कुजू फिर एक व्यथित हँसी हँसा। 'पर मुझे सचमुच डर लग रहा ह बदमी जैसे कोई मन्दिर में भी जाकर भूत से डरे '

बदमी ने तिवारी को बाँह फिर पकड़ ली और खींच कर छाती से भींच लिया—'तिवारी, डर छोड़ो तिवारी, मजुगा दर्लासिंगार या ही मजाक किया करता है, लेकिन उसका मजाक तो मेरे लिए वरदान ही हुआ।'

बदमी के स्पर्श से तिवारी फिर एक ऐसी गरमाई में डूब गया कि भय और आशंका घुल गए। 'ठंडक लग रही है तिवारी, तुम थोड़ा सो जाओ मेरी गुदड़ी ओढ़ कर।

'और तुम ? थर-थर काँपती हुई बदमी को पकड़े-पकड़े ही तिवारी ने पूछा।

'मेरी क्या, मेरी तो आदत है सहने की।

'और मेरी ?

'हाँ तुम्हारी भी तो, लेकिन आज मेरे मेहमान हो न। तुम्हारी सेवा करूँगी।'

'क्यों मुझे अपने से दूर फेंकती है बदमी ?, मैं मेहमान हूँ पगली तेरा मेहमान हूँ ?' तिवारी ने बैठते हुए बदमी का हाथ पकड़ कर अपनी ओर झटके से खींचा और बदमी का सिर उसकी गोद में आ गिरा। और हवा के एक झोंके से ढेबरी बुझ गयी।

बदमी ने मुग्ध भाव से अपने को कुंजू की गोद में छोड़ दिया। कुंजू ने गुदड़ी अपने और बदमी के ऊपर डाल ली। बदमी के अंग-अंग से एक गरमाहट फूट फूट कर ओढ़ने के नीचे फैलती लग रही थी जैसे पहली वर्षा में धरती के कण कण में छिपी सोंधी गंध फूट पड़ती हो।

दोनों को नींद नहीं थी, एक दूसरे में बहते जाने की एक मुग्धता थी फिर भी दोनों को एक अजाना डर रह रह कर काँच देता था।

रात भीगती जा रही थी—दोनों एक दूसरे में समाये पड़े थे।

'तिवारी।'

'बदमी।'

'कैसा लग रहा है तिवारी ? यह अँधेरा, अकेलापन मैं और तुम, तुम और मैं और रह रह कर छेड़ता हुआ एक भय कैसा '

'कुछ अजब लग रहा है बदमी, जिसे मैं नहीं कह सकता। मैं तो जीवन भर कुँवारा ही रहा हूँ गोद के लिए तरसता हुआ। थोड़ा चेता तो माँ और बाप दोनों की गोद मुझसे छिन गयी। हाँ, एक याद जरूर है कि माँ-बाप के न रहने पर छोटे भाई बिरजू को इस गोद में भर कर रात रात भर रोया हूँ, वह और ही गोद थी बदमी। और मैं खुद सुनसान की बड़ी गोद में छटपटाता तड़पा किया हूँ किसी स्त्री से मेरा कोई सम्बन्ध कभी नहीं रहा। बदमी ! मुझे नहीं मालूम था कि स्त्री की गोद का सुख क्या होता है ? उस गोद में कितनी पिघलती हुई गरमाहट बहती है ? उसमें जीने का कितना जलता हुआ विसवास भरा होता है ? मेरे लिए यह सब कुछ नया है बदमी, सब कुछ अजाना अजाना सा लेकिन तेरे लिए तो कुछ नया नहीं होगा बदमी ।'

मेरे लिए भी नया है तिवारी मेरे लिए भी। मुझे तो गोद ही गोद मिलती गई है—जलती हुई गोद कसती हुई गोद, निचोड़ती हुई गोद, फिर निचोड़ कर फेंकती हुई गोद। ऊख के कोल्हू को तो देखा है ? तिवारी, कितने लगाव से ऊँख को अपनी गोद में कसता है और उसका सारा रस चूस कर पिछवाड़े के रास्ते फेंक देता है। सारे मरद कोल्हू होते हैं तिवारी, मुझे तो ऐसा ही लगा है, मुझे तो गोद से ही घिन लगने लगी थी तिवारी, लेकिन आज कुछ नया-सा लग रहा है कुछ बहुत नया-सा। मुझे लगता है कि मरद मुझे आज मिला है। किसी जानवर को कसाई के आगे काँपते देखा है तिवारी ? मैंने देखा है। कसाई को देखते ही मानो जानवर का खून सूख जाता है और मालिक को देखकर उसका खून पिघल कर उमड़ चलता है। दोनों ही तो आदमी होते हैं तिवारी ! मैं भी जब-जब मरदों की गोद में बसती रही हूँ तो लगता रहा है कि मेरे भीतर की औरत मर गयी है नाड़ियाँ बन्द हो गयी हैं,

खून जम गया है और गोद से फेंक दी जाने पर घायल चिड़िया की तरह धीरे-धीरे अपने आप साँस लेने लगती थी, फिर नाड़ियाँ खुल जाती थीं और खून बहने लगता था। और आज की गोद कुछ और ही लग रही है। लगता है, आज ही मरद की गोद मिली है। मेरा हाड़-हाड़ पिघल कर बह रहा है मेरी साँस साँस फूल की तरह महक रही है, मेरे रोयें-रोयें में रस भर आया है तिवारी! यह सब तुम्हारा है तुम्हीं इसके मालिक हो, तभी तो यह छलक आया है'

'बहुत मान दे रहो है वदमी हम अभागे को जिनगी दे रही है तू। हम कब से इस जिनगी के लिए भटकने फिरे वदमी यह जिनगी हमें छू छू कर निकल गयी लेकिन इसे पकड़ने म डरते रहे और आज आज मौत के मरम ने हमें इस जीवन की धारा में ढकेल दिया और हम बह रहे है तू रो रही है। वदमी नहीं बोली हल्की हल्की सिसक भरती रही।

तिवारी ने उसे खींच कर भींच लिया और उसके जलने काँपने ओठों पर अपने जलने काँपते ओठ धर कर दुलार से पूछा— बोल पगली बोल रोती क्या है? वदमी, तेरे गरम गरम आँसू पर रहे हैं'

'हाँ तिवारी रो रही हूँ हमारा यह सुख दुनिया सँभाल नहीं पाएगी, पता नहीं क्या यह डर धक धक धक कर उठता है। मेरा सुख ठहर नहीं पाता तिवारी! मुझे लगता है कि अँधेरे में खड़ा होकर कोई हमारा सुख देख रहा है फिर सुबह होगी तिवारी दुनियावालों की सुबह जो हमें बीच से चीर कर अलगा देगा आखिर हमारा दुख बड़ तक अलग अलग छटपटाता रहेगा।'

'वदमी, रो मत पगली, मेरे इस पहले सुख की वेला में रो मत। सुबह होगी तो फिर रात होगी और मुझे तो ऐसा लगता है कि जिनगी का हिसाब किताब नहीं रखने। और दो घड़ी सच्चा सुख मिल जाए तो उसे आगे की मुसीबतों की चिन्ता में छोटा क्यों किया जाए?'

ठीक कहते हो तिवारी, ठीक कहते हो, जितना मिल जाए उसे क्या इकारा जाए ?'

'तिवारी !'

'क्या ह बदमी।'

'सोचती हूँ कब तक ऐसे चलेगा ?'

'ऐसे यानी ?'

'ऐसे यानी ऐसे—कि तुम बाभन, मैं कहाइन—दिल ने नहीं माना इस भेद को, लेकिन दुनिया तो मानती ह, कहा हमें मिलने देगी यह दुनिया ? अभी तो यो ही ताने मारती ह ऐसे छिप छिप कर मिलना तो चोरी ह न तिवारी। दुनिया तो यही समझती है। चोरों की तरह मिलना तो प्यार को बदनाम करना है तिवारी, और बिना मिले हम रह भी कसे सकते ह, दिल ही जानता ह जब तुम पास स गुजर जाते हो ।'

'चोरा की तरह मिलना तो सचमुच प्यार का बदनाम करना है बदमी ! और आज भी म कहा आता प्यारी, अगर तुझे साप ने न काटा होता मगर मिलने ही तो रहने हं पगला, हर जगह मन जहाँ चाहता ह पुकार लेता ह और उत्तर पा जाता ह। ऐसे ही पुकारते और उत्तर पाते, जिनगी काट देंगे बदमी !'

'ठीक है तिवारी, लेकिन लेकिन तन की भी तो एक भूख होती ह प्यारे। जब तन तन को पुकारता ह तो तो जब किसी की गोदी म अपने को छोड देने की इच्छा हाना ह, जब बाहें किसी को बाँहो में फस जाना चाहती हैं तो ता तो तिवारी इसे कसे झुठलाऊँ ?'

तिवारी कुछ बोल नही सका, लगा जसे बदमी ने उसी के तन की आग को वाणी दे दी हा मन को तन से कहाँ तक अलग किया जा सकता ह उसे लगा कि उसके भीतर जीवन भर की छिपी आग

धधक उठी हो और उसने बदमी को उस धधकती आग में लपेट लिया, लगा जैसे दोनों एक दूसरे की आग में जल रहे हों ।

बाहर दरवाजे पर दस्तक हुई तो दोनों हड़बड़ा कर जागे। दोनों एक दूसरे की ओर देखने लगे मानो कह रहे हो कि लगता है सवेरा हो गया। उजास फूटने के पहले ही कुजू को अपने खेत में चला जाना था मगर मगर यह तो सवेरा हो गया अब क्या हो ?

कुजू ने बदमी को हाथ से आश्वस्त किया—यानी घबराओ नहीं देखता हूँ कौन है और आज यह भी देख लूँगा कि हमें क्या करना है ?

कुजू ने उठ कर दरवाजा खोला तो देखकर दंग रह गया—दरवाजे पर पुलिस का दारोगा दो सिपाहियों, दीनदयाल मउगा दर्लसिंगार और कुछ और लोगों के साथ खड़ा है

सिपाहियों ने बढ़कर कुजू का हाथ पकड़ लिया और रस्सी से बाँध दिया। दारोगा ने बढ़कर उसे जोर की झापड़ लगायी और वह गिर पड़ा। बदमी जोर से चीख उठी। दारोगा एक भद्दी सी गाली देकर झपटा। छिला हुआ हाथ लिए कुजू उठ खड़ा हुआ और कुछ तिलमिलाता-सा बोला—'दारोगा जी, उसे कुछ मत कहिए। कुछ तो औरत की आबरू रखना सीखिए।'

दारोगा आग्नेय नेत्रों से देखने लगा, तब तक मउगा दर्लसिंगार अपनी पतली आवाज में चिचिया उठा—'हाय मइया इस कुजुवा का देखो, ससुर अपन बहनो से कुकरम करता ह और हमरे दरोगा जी को आदर करना सिखाता ह।' दीनदयाल ने आगे बढ़कर उसके गाल पर चार पाँच थप्पड़ जड़ दिए— साला कँहार हो गया, दूसरे की बहन बेटी के साथ तमाशा करता फिरता है, बामना की नाक कटा दी। क्या कहेंगे दारोगा साहब ? क्या कहेंगे ये सिपाही, क्या कहेंगे दूसरे गाँव वाले ? साला कहार हो गया ?'

भीड़ जुटने लगी थी। गाँव में हल्ला हो गया था कि कुंजू घाटि करता पकड़ा गया है

कुंजू रोष से तिलमिला रहा था। उसके हाथ खुले होते तो दीनदयाल को आज जरूर मारता, फिर भी उसने बंधे हाथों से जोरदार प्रतिरोध किया लेकिन सिपाहियों ने बाँह पकड़ कर मरोड़ दी। फिर भी वह दीनदयाल को गाली के उत्तर में बोला—'दारोगा साहब कहेंगे, ये सिपाही कहेंगे दूसरे गाँव वाले कहेंगे कि जिस गाँव में दीनदयाल जैसा घटिया आदमी रहता है उसी गाँव में कुंजू जैसा एक पवित्तर प्रेमी भी रहता है।'

भीड़ हँसने लगा। दीनदयाल तिलमिला कर रह गए, बोले—'देखा न दारोगा साहब, उल्टे चोर कोतवाल को डाँट रहा है।' मउगा दलसिंगार ताली पीट पीट कर चीखने लगा—'हाय मइया, ई देखो कुंजुवा को, ससुरा पवित्तर प्रेमी बनता है और दीनदयाल भाई जैसे पुण्यातमा को घटिहा बता रहा है—अरे जा रे साला तेरा नाश हो।' यह कह कर मउगा कुंजू को मारने को लपका, मगर कुंजू ने लात से उसे मारा वह भड़भड़ा कर दारोगा के ऊपर गिरा और दारोगा ने मउगा को जोर से ढकेलते हुए कहा—'ऊँह, कैसा मउगा आदमी है—जनखे की तरह बोलता है।'

'मउगा तो यह है ही दारोगा साहब।' कुंजू उस मुसीबत में भी मुसकरा कर बोला।

'चुप रह! तुमसे कौन पूछता है, अभी जेल की हवा खाओगे तो मउगा मउगा कहना भूल जाएगा। लगाओ साले को चार हाथ और।'

सिपाहियों ने दोनों ओर से उसे चार चार झापड़ जड़ दिए। बदमी चिल्ला उठी—'नहीं सिपाही जी, नहीं इनको मत मारिए, मुझे मारिए।'

'चुप हरजाई कहीं की, गाँव की नाक कटाती है और कहा सिपाही

जो, नहीं सिपाही जो चिल्लाती है।' दीनदयाल डपट कर क
बदमी ने दीनदयाल की ओर घृणा से देखा और उसकी इच्छा
कि चिल्ला कर कह दे—क्यों नहीं देखता अपनी मरण का
नहीं, वह नहीं कहेगी, दीनदयाल नीच है तो क्या? सन्दा बहिनी
है। उसके बारे में एक बात भी नहीं कहेगी। औरत किसी की
हो उसका दरद औरत का ही है, मरद उसे नहीं पहचानता

कुंजू को इच्छा हुई चिल्ला कर कह दे कि वह बदमी का
करता है वह उसके साथ रहेगा, वह उसकी है, वह उसका है मगर
जानता था कि ये लोग इस चीज को नहीं समझेंगे। ये लोग समझ
दोहरी जबान को दोगलेपन को। ये लोग इन छोटे घरों में अगले द्वा
से घुसते हैं, पिछले दरवाजे से निकल आते हैं, अगले दरवाजे से नि
की हिम्मत नहीं, इसलिए अगले दरवाजे से निकलने वाले को ज
नहीं समझेंगे। और यह दीनदयाल—मेरी माँ का खूनी, मेरे बाप
खूनी, साला चला है मुझे पटिहा बनाने और थप्पड़ मारता है औ
मउगा दलसिंगार और मैं टुकड़ेखार सिपाही और और

'ले चलो थाने पर इसे।' सिपाहियों को दारोगा ने हुक्म दिया।

क्यों क्या किया है इसने? चौंक कर लोगों ने देखा कि स
और रामकुमार पूछ रहे थे। इतवार होने से रामकुमार भी आज
पर ही था।

'क्या नहीं किया है इसने, प्यार करता पकड़ा गया है इस बह
के साथ।'

झूठ है, झूठ है सरासर झूठ है मुझे किसी ने नहीं पकड़ा।
कुंजू जोर से चीखा, मानो उसे सतीश और रामकुमार को देखते ही
शक्ति मिल गई।

'क्या प्रमाण है दारोगा जी कि इसने पाप की है?' सतीश बोला

'अरे साहब, वह सुबह-सुबह इसी के घर में से निकला है दे
न, वह औरत की साड़ी पहने [illegible] है।'

'मगर मान लीजिए, सुबह-सुबह कोई आपके घर में से निकले तो आप उसका क्या अर्थ लगायेंगे ?' रामकुमार हँस कर बोला।

दारोगा तड़पा—'देखिए आप लोग सीमा के बाहर जाकर बात कर रहे हैं, रात को कोई किसी औरत के कमरे में से निकले और कोई मेहमान किसी के घर में से निकले, इसमें काफी फरक है। आप लोग कुतर्कों से इस केस को दबा रहे हैं। इसका चालान करेंगे घटियाई में।'

कुंजू आज अपनी सारी सच्चाई को लेकर झूठ के आगे लपट की तरह जल जाना चाहता था मगर बदमी की बदनामी हो यह यह बात किसी कीमत पर नहीं चाहता था। उसने ललकार कहा—मुझे किसी ने नहीं पकड़ा है, यह सब जाल है भउगा का, धीनदयाल का । कल रात को मैं अपने खेत में सोया था तो भउगा ने आकर कहा कि बदमी कहाइन को साँप काटे है, हम लोग भाटपार ओझा बोलाने जा रहे हैं। मैं साँप का नाम सुनकर जल्दी-जल्दी बदमी के घर की ओर भागा। मगर यहाँ आकर देखा तो बदमी के यहाँ कोई नहीं था, दरवाजा ठेल कर अन्दर गया, बदमी ऊँघी हुई थी। मैंने समझा शायद साँप काटने की बेहोशी में है और बाभना के गाँव में कहाइन को साँप काटने की परवाह किसी को न हो, कोई न आया हो। मैंने उसे धीरे से जगाया, वह उठ बैठी, तब तक मुझे लगा कि दरवाजे का बाहरी साँकल कोई बन्द कर रहा है। बदमी को स्वस्थ जानकर मैंने दरवाजा खोल कर बाहर आना चाहा तो लगा कि दरवाजा बाहर से बन्द है। मैंने कुछ भागते हुए पैरों की आहटें भी सुनीं। मैं समझ गया कि दर्रासिगार ने कुछ छल किया है। मैं करता भी क्या ? रात को दरवाजा खोलने के लिए किसे किसे आवाज देता। चुपचाप कमरे में बन्द हो गया और यह धोती । इसकी भी कहानी लम्बी नहीं है मैं साँप काटने की खबर सुनकर दौड़ा-दौड़ा आया धोती भीग कर लथपथ हो गयी थी। इधर किसी ने बाहर से

साँकल लगा दी करता भी क्या ? भीगी धोती पहन कर तो रात भ
रहना नहीं, लपेट ली यह साड़ी।'

बदमी मुसकरा सी पड़ी। दारोगा तड़पा—'झूठ बोलता है हम यहाँ आय तो कोई साँकल-वोकल बन्द नहीं थी। क्या दानदयाल तिवारी, साँकल बन्द थी ?'

'अरे नहीं हजूर साँकल कहाँ से बन्द थी। अब दया लाजिए इस दुष्ट पर। चोरी भी करता है और सीनाजोरी भी। यही हाल है कलजुग का।'

सउगा दर्शसिगार चिचिया उठा—हाय मइया, यह कुजुरा झूठे मुझे गाय की तरह बक रहा है मन इससे बदमी के साथ बाटने बाटन की कोई बात नहीं कही थी '

भजन कहार स्कूल पर से दौड़ा आया और आते ही दारोगा स पूछा—'क्या है माइ बाप ई फेटवार काहे को लगी है मेरे दरवाजे पर।

'क्या लगी है पढ़ो अपनी बेटी से। आसनाई करता है इस बाभन से। दानों का पकड़ कर थाने ले जा रहा हूँ।'

भजन कहार ने आव देखा न ताव—अपने कमजोर हाथों से बदमी को पीटने लगा—क्यों रे डाइन तू इसीलिए मायके ं याह नहा करती है ? इ कलक लगान के लिए हा तू जामी थी ?

कुजू की आँखों में आग उतर आई बोला—भजन क्या करते हो, ठीक नहीं होगा बदमी पर हाथ उठाया तो।'

'चुप रहो बवारे कहीं के, दूसरे के घर में सेंध मारते हो, इज्जत लूटते हो और उल्टे आग थूक रहे हो।' और भजन फिर बदमी को पीटने लगा। लड़के हँस रहे थ और कुजू की ओर मटकी मार मार कर उसकी साड़ी देख रहे थे।

'भजना।' जोर से सतीश चीखा। हाथ बन्द कर नहीं तो हाथ तोड़ दूगा।

भजना सहम कर रुक गया।

'क्या है मालिक, मेरी तो इज्जत लुट गई।'

'चुप रह बेवकूफ कहीं का। इज्जत तुम्हारी नहीं लुटी है, उनकी लुटी है, जो झूठ बोलकर, फरेब रच कर दूसरों को फँसाते हैं। इन्हें शरम आनी चाहिए।'

बदमी यह सहारा पाकर फफक उठी। दारोगा क्रोध से तिलमिला कर बोला— चुप रह छिनाल कहीं की, नकल करती है।'

मिस्टर इन्सपेक्टर! आधी अँगरेजी और आधी हिंदी में कुमार तड़पा—'आप जानते हैं क्या कह रहे हैं। एक झूठे मामले में हिन्दुस्तान के दो नागरिकों को फँसा कर उन्हें गाली दे रहे हैं। इसलिए न कि वे गरीब हैं, उपेक्षित हैं। आपको बदमी को छिनाल कहने का क्या अधिकार है? मान लीजिए आपने उसे व्यभिचार के केस में पकड़ा है तो अभी तो पकड़ा है, यह साबित तो नहीं न हो सका है कि व्यभिचार हुआ है। जुर्म साबित होने के पहले किसी को मुजरिम करार देना अपने आप में एक जुर्म है। समझे आप।'

दारोगा सकते में आ गया। सँभल कर बोला—'समझता हूँ समझता हूँ सब समझता हूँ, नेता टाइप के लोगों के मारे तो हम लोगों के नाकों दम हो गया है। कोई भी केस पकड़ो ये लोग अड़गा जरूर लगा देंगे, यहाँ से लेकर वहाँ तक जाल बिछा देंगे। इस तरह कहीं राज चलता है?'

'नहीं साहब! इस तरह राज नहीं चलता है। राज तो चलता है निरपराध व्यक्तियों को पकड़कर उनसे रकम वसूलने से। साहब, अब भूल जाइए पिछले जमाने को, अंगरेजी राज की खुमारी अभी भी आप लोगों में से नहीं जा रही है। लेकिन वे दिन गए दारोगा साहब, जब खलीलखाँ साहब फाख्ता उड़ाया करते थे।'

'चलो जी चलो, ले चलो थाने पर इन दोनों को।' दारोगा ने सिपाहियों से कहा।

हाँ, कुंजू का खेत काट लिया गया है और यही खेत दिन भर यह रखा रहा था।' रामकुमार ने कहा।

'हे राम!' कुंजू मर्माहत स्वर में कराहा।

'और यह भी कुंजू ने ही कटाया होगा। सतीश ने ताना मारा।

'अरे यह गाँव है कि तमाशा। एक बात सुलझी नहीं कि दूसरी उलझ गयी।' दारोगा ने क्रुद्ध नेत्रों से दीनदयाल और दर्शनिगार की ओर देखा। मानो पूछ रहा हो यह सब क्या है? तुमने जो रुपए मुझे दिये थे, वे कुंजू को पकड़ने के लिए दिये थे और यह भी यह विश्वास दिला कर कि उसका कोई नाजायज सम्बन्ध है उस कहाइन से। उसके खेत कटाने के रुपये तो नहीं दिये थे। कसरम कम्माल! दारोगा की क्रुद्ध आँखों को देख कर दीनदयाल सब समझ गया और हँस कर बोला—'हुजूर, भाटपार के अहिर सब बड़े बदमाश हो गए हैं जहाँ मौका देखते हैं खेत लोच ले जाते हैं और ई ससुर कुंजू को तो कहाइन न अमृत धनी है इन्हें खेत की चिन्ता है?

'अरे भाई, नारी तो अमृत है ही, वह चाहे कहाइन हो चाहे ब्राह्मणी। कवियों ने नारी को अपने भीतर की सारी सुन्दरता के साथ गढ़ा है ब्रह्मा ने तो गढ़ा ही है। और ऐसा लगता है कि जीवन की सारी माया के मूल में नारी के अमृत का स्रोत ही है। उसी के लिए समस्त ब्रह्माण्ड गतिशील है, स्वयं ब्रह्म उसके बिना अपने को अकेला अनुभव करता है। नारी तो नारी है, वह कोई जाति नहीं है। इसी तीर्थ में स्नात होकर पुरुष पवित्र होता है और दीनदयाल जी! इस तीर्थ का लाभ आपसे अधिक किसने लिया होगा? आप तो स्वयं ब्रह्म हैं जो सभी जगह रमते हैं।' समझदार लोग मुसकराने और हँसने लगे, दारोगा भी मुसकराने लगा, लेकिन दीनदयाल इस चोट से तिलमिला गया। जानने वाले समझ गए कि अमलेश जी ने अपनी साहित्यिक शैली में

दीनदयाल पर करारी चोट की है, ऐसी चोट जो देखने में भोली-भाली लगे, पर धँस जाए आर-पार।

सतीश बोला—दारोगा साहब, खेत काटने में उस्ताद भाटपार के अहीर ही नहीं है बल्कि तिवारीपुर के तिवारी लोग भी है। आर कुंजू को बदमों के घर भेजना और उसका खेत कटा लेना, ये दोना ही एक ही षड्यन्त्र के दो पहलू है। अब आप मामले पर दूसरी तरह से गौर कीजिए। पूछिए, दलसिंगार ने क्या कुंजू को खेत पर से भेजा झूठ बोल कर कि बदमो का बाप काटे है। पूछिए दलसिंगार से।

दलसिंगार चिचियाया—'हाय मैया, मैंने कहाँ कहा है? कुंजू झूठ बोलता है। इसे इसकबाजी करनी थी तो एक बात गढ़ ली इसन।'

'झूठ तो बात नहीं लगती। बहुत से लोग खेत पर नहीं सोते किन्तु कुंजू के हटते ही उसका खेत क्या साफ कर लिया गया? सतीश ने पूछा।

दारोगा ऐसी उलझन में पड़ गया था कि उसकी समझ में कुछ नहीं आ रहा था। वह स्वयं इस परिस्थिति से मुक्ति चाहता था। उसके सामने ही देखते-देखते दोनों दलों में कौआ रोर मच गया। दोना अपने अपने ढंग से प्रहार करने पर तुल गए। दारोगा सत्य क्या है जानता ही था। दीनदयाल के सौ रुपये भी उसे इस परिस्थिति में इतना दम नहीं बना सके कि वह असत्य को जबरदस्ती ओढ़ ले। आगे आकर उसने सिपाहियों से कहा कि 'छोड़ दो कुंजू को, यह मामला बड़ा रहस्यमय है, सत्य का पता लगाना बड़ा मुश्किल है।'

कुंजू छोड़ दिया गया। खेत साफ होने की खबर सुनकर उसकी आँखें भर आईं और वह खेत की ओर लपका। दारोगा ने भी घोड़े पर सवार होकर कहा कि चलो खेत की तहकीकात कर लें। सभी लोग खेत की ओर चले। बच्चों को कुंजू के छूट जाने से अब तमाशे में कोई रस नहीं था तितर बितर हो गए। खेत में आकर दारोगा ने वहाँ से

वहाँ तक घोड़ा घुमा कर देखा, कुछ नोट किया और फिर लोगों की ओर मुखातिब होकर कहा—'कारवाई की जायगी और घोड़े को चलने के लिए हाँक दिया।

दीनदयाल घोड़े के साथ साथ चलने लगे। लोगों ने मुसको मार कर देखा, कुछ लोग बुदबुदाये— जा रहा है तेल लगाने।'

जब काफी एकान्त हो गया तो दारोगा ने दीनदयाल से कहा— 'अब क्या पीछे पीछे लगे हैं सारा खेल तो बिगाड़ दिया। तुम लोग कुँअर का अपराध में फँसाने के बदले खुद अपराध में फँस गए। उसका खेत कटाने की क्या आवश्यकता थी? यह साफ जाहिर हो गया कि जिसने उसे खेत पर से उस पहाड़न के यहाँ भेजा वही खेत कटानेवाला हो सकता है। और मैं आपके इन स स्पुल्लियों के चक्कर में नहीं पड़ता। मुझे तो बाबू महीपसिंह ने भी कहा था इस केस में रस लेने के लिए। शायद आपने उनसे बातचीत की हो। शायद दोनों का इसमें सम्मिलित रहा हो। बाबू साहब ने बहुत जोर देकर कहा था इस केस को हाथ में लेने के लिए। लेकिन आपके गाँव में तो बड़े ही जोरदार लोग बसते हैं, आसान काम नहीं है इनकी आँख में धूल झोंकना। नेता टाइप के लोगों से तो हम लोग बहुत घबराते हैं साहब! अरे क्या नाम है उस नेता का नाम हाँ हाँ रामकुमार।

'सोसलिस्ट हैं हजूर।'

'अरे कोई इस्ट हो, है तो नेता ही न। नेता नाम आजकल अपने आप में बड़ा तोपखाना हो गया है। जो चमार सियार हमारा नाम सुनकर भागते थे, वे अब हमारे खिलाफ काग्रेस दफ्तर में सीधे रिपोर्ट कर आते हैं और हम लोगों को सफाई देते-देते परेशान हो जाना पड़ता है। नेता तो नेता है जनाब! बाबू साहब हों चाहे आप, समझना चाहिए जमाने को। अब कौन किसकी सुनता है?

'अरे नहीं हुजूर अभी आप लोगों का इकबाल कम नहीं हुआ है।

अभी भी राजा ह आप लाग। इन लुगरी-फटरी वालो को क्या मजाल कि हुजूर का कुछ बिगाड सकें ? हुजूर मेरा तो अभी भी विश्वास है कि ये नीच लोग लात से मारने पर ही ठीक रहते है।'

'म सब समझता हूँ पडित दीनदयाल जी। रोज दुनिया देख रहा हूँ। जमाना बहुत बदल गया ह, नहीं तो आपके गाव से इस तरह मुँह की खाकर नही लौटना पडता।'

'अरे नही हुजूर, आपने जरा कडाई नहीं बरती नही तो—'

'चुप रहिए, बकवास मत कीजिए।' दारोगा तडपा और जोर से घोड़े को ऐंड लगायी, घोडा भाग चला।

दीनदयाल क्षण भर के लिए जहाँ के तहा खडे रह गए। 'हाय! उनके सौ रुपये बडा दगाबाज निकला दारोगा, काम भी नही किया और सौ रुपये भी मार ले गया '

दीनदयाल भारी मन से लौटने लगे—सारी बातें आहत पछी की तरह मन में तडपने लगीं। 'हाँ, उसने सोचा था कि कुजू को पकडवायेगा। कुजू प्रचार करता ह सतीश दल का। बदनामी हो जाने पर उल्टा असर हागा। लेकिन बात इतनी ही नही थी। वह दूर की सोचता था, वह जानता था कि कुजू के पकड जाने पर सतीश रामकुमार वगैरह उसकी तरफदारी करेंगे। उधर कुजू जेल में जाएगा, इधर दीनदयाल प्रचार कराएगा कि देखो सतीश वगैरह इतने विधर्मी हो गए ह कि ब्राह्मण धर्म का बिल्कुल ख्याल न कर कहाइन चमारिन रखनेवाले एक आवारा का पक्ष ले रहे हैं और धर्म को डुबा रहे हैं। रामकुमार तो खुद भ्रष्ट हैं ही, सारे भ्रष्टा का समथक है। इस तरह धर्मभीरु गाँव वाले इस दल के विरुद्ध होकर धम के नाम पर इसका बाइकाट करेंगे। वह इसीलिए बाबू महीप सिंह से भी मिला था। महीपसिंह सतीश से नाराज ता थे ही, साथ ही साथ अदालत पचायत में वे सतीश को अपना प्रतिस्पर्धी समझ रहे थे। उन्होंने दीनदयाल का समथन ही नहीं किया, उसे

खूब भरा भी। यह भी कहा कि मैं तुम्हारे षड्यन्त्र को सफल बनाने के लिए दारोगा को भी कहूँगा और मैं जल्दी ही सतीश को एक दूसरे केस में उलझा रहा हूँ। दीनदयाल सफलता का सपना लेकर लौटे थे, मगर यह क्या ? सारा पासा ही पलट गया। वह हारे हुए सिपाही की तरह आकर धम्म से खाट पर बैठ गया।

तभी लड़कों का एक झुण्ड दरवाजे पर से यह गाता हुआ निकल गया—

कुंजू करै तिरो री री गावे ला नचारी
गाव की कुतियवा स कुंजू करै यारी

लड़के हँस हँस कर गा रहे थे और नाच रहे थे। पड़ोस में कुछ लोग हँसते हुए बातें कर रहे थे—अरे भाइ, जमाना है कुंजुआ का, लुहाये हुए है पट्ठा। मौज भी करता है और सफाई से छूट भी जाता है'

दीनदयाल के मन में एक आशा सुगबुगा गई, वह उठ बैठा—चलो कुंजू छूट गया तो क्या लोगों के मन में उसके व्यभिचार की कहानी छप गयी है वह अभी बहुत कुछ कर सकता है, कर सकता है। उत्साह से पुकारा—शारदा।'

शारदा धीरे धीरे आकर उसके सामने उपस्थित हो गई—क्या है बाबू जी, दतुअन पानी लाऊँ ?'

'हाँ बेटा, सो तो ला ही, मगर तू थकी थकी-सी क्या दीखती है ?'

'कुछ नहीं बाबूजी, जरा सिर दुख रहा है,' कहती हुई शारदा अन्दर चली गई, फिर दतुअन पानी लेकर आयी, धीरे से पिता के सामने रखा और फिर अन्दर सरक गयी।

दीनदयाल सोचते रहे—क्या हुआ है इसको, सिर दुखता है ? अच्छा ठीक हो जाएगी।'

: २४ :

शारदा का घर में मन नही लगा तो निकल गयी। निकल गयी खेतों की ओर वह एकान्त चाहती थी, जहाँ बैठकर जी भर रो सके। उसके जी में जाने कैसा कैसा हूल उठ रहा था

उसके पिता ने पूछा कि जी अच्छा नही है—वह क्या कहती? जी अच्छा नहीं है मगर क्या हुआ है वह कैसे बताती? वह कैसे कहती बाबूजी, आपने जो कुछ किया है वह अच्छा नही किया है एक गरीब सताई हुई कहाइन को सता कर जुलुम किया है वह कैसे कहती कि वह जो कुछ गाँव में बाबू जी के बारे में सुनती है अच्छा नही है कैसे कहती वह, इसीलिए चुप रही, मगर जी तो चुप नही रहता लगता है कि पूस को मारी गोली छाहें उसी के कलेजे में भर गई है, भर कर थरथरा रही है। उस यह मउगा दर्लसिगार फूटी आँख नही सुहाता, बडा अधिक्का है। वही बाबू जी को फोडता फाँसता रहता है। यह पचायत क्या आ गई मुसीबत आ गई। कुजू बेचारा कितना गरीब है? उसे फँसाने की क्या जरूरत थी? सतीश बाबा तो बहुत भले आदमी है उनसे लडने की क्या जरूरत थी? बाबू जी से उसने दबी जबान से उस दिन कहा था तो वे बोले—'बेटा यह सब राजनीति है, तुम्हारा काम नही है, इसमें दखल देने की जरूरत नही, तुम नही समझोगी ।'
हाँ, वह नही समझती है, सचमुच राजनीति नही समझती है मगर इतना तो समझती है कि इस राजनीति में जो बदमो को बेपदगी हुई कुजू की बदनामी हुई खराब-खराब बातें कही जा रही है वे अच्छी तो नही हैं। वह राजनीति नही जानती मगर जो इधर उधर से सुनती है उससे उसके पिता की तसवीर बहुत अच्छी नही उभरती और आज दारोगा के सामने जो कुछ कहा सुनी हुई, उससे तो साफ हो गया कि कुजू और बदमो को फँसाने वाले मेरे बाबू जी और मउगा दर्लसिगार हैं। मगर वह

कैसे कहे उनसे कि इस मउमा को घर मत आने दीजिए। क्या कहे कि आप राजनीति में मत पड़िए? नहीं वह नहीं कह सकती

इस गाँव में लड़कियों को कौन पूछता है? वे तो पाँव तले की जूती हैं। हे राम, लड़की का जीवन भी क्या नरक का जीवन है! लड़के दूध पियेंगे, घी खायेंगे, मिठाई खायेंगे, सामने उनसे छोटी लड़कियाँ टुकुर टुकुर ताकती रहेंगी। बाद में तो ताकना भी छोड़ देती हैं क्योंकि लड़कों में और अपने में इस अन्तर को स्वाभाविक मान लेती हैं। हाय ईश्वर! तूने लड़की जाति पैदा ही क्या की? लड़का पैदा होने पर माँ को एक महीना तक दूध पीने को मिलता है मगर लड़की के पैदा होने पर पन्द्रह दिन तक। इतना बड़ा अपमान नारी जाति का? जैसे लड़की पैदा होने पर माँ को आधा ही दरद होता है। लड़का पैदा होने पर सोहर होता है लड़की पैदा होने पर मातम मनाया जाता है। इतना बड़ा अपमान लड़कियों का जैसे कीड़ा मकोड़ा हों—गाँव के घर घर में तो यही देख रही है। मगर मेरे बाबू जी? कितना प्यार दिया है उन्होंने मुझे। दोनों भाइयों को उन्होंने कुछ समझा ही नहीं, दोनों नालायक जो निकले। माँ के मर जाने पर उन्होंने यह महसूस नहीं होने दिया कि मैं बिना माँ की लड़की हूँ छाती में छिपा कर पाला—व माँ भी थे, पिता भी। गाँव की लड़कियों को देखती हूँ कितनी उपेक्षा होती है उनकी, मगर बाबू जी ने बेटे से बढ़कर माना मुझे, कोई साध अधूरी नहीं रहने दी और जब गाँव के लोग लड़कियों को पढ़ाना अपराध मानते हैं तब उन्होंने मुझे पढ़ाया और जब कोई रास्ता आगे पढ़ने का नहीं रहा तब घर पर पढ़कर परीक्षा देने को उत्साहित किया और मास्टर जी मास्टर जी तब आते-आते शारदा रुक गई जैसे उसके भीतर एक मधुर टीस-सी उठी कितने अच्छे हैं मास्टर जी, और जैसे उसकी सारी उमस को चीरती हुई एक ताजी हवा बह गई और तभी उसे लगा कि वह एक ऐसे संत के पास आ गई है जो साफ कर लिया गया है, हाँ

कुजू का खेत ह—यहाँ-वहाँ बुरी तरह नोच लिया गया है, जैसे किसी अनाडी नाई ने सिर पर यहाँ-वहाँ बाल छोड दिये हो। वह कुजू ह घुटने पर माथा टेके बठा हुआ, वह जमे खेत को लाश को निहार निहार कर थक गया है बेचारा अभागा और लोग कहते हैं बाबू जी ने यह सब कराया है। उस यह सब अच्छा नहीं लगता, उसके बाबू जी यह सब क्या कराते ह हाय, क्या कराते हैं ? गरीब को क्या सताते हैं ? कसे कहें उनसे वे माँ बाप और सब कुछ ह कैसे जो दुखायें उनका ? मगर यह सब सहा नहीं जाता खेतो के ऊपर जाडे की एक अजब चुप्पी छाई हुई ह, इस चुप्पी के नीचे धीरे धीरे फूल हिल रहे ह। इस सन्नाटे में मानो शारदा खो गई ह—फूल और सन्नाटा, सन्नाटा और फूल शारदा देखती है मानो चारा ओर उसी के भीतर की परछाई ह सन्नाटा और फूल

'ह हैं, ए कुजुवा बैठा क्या ह रांड की तरह ? अरे दीनदयाल ने खेत उखडवा लिए तो क्या हुआ ? तुझे नहीं न उखाड दिया, अरे मरद होकर रोता है रे, उठ। दीनदयाल को देखा जाएगा। वोट लेगा, सरपच बनेगा, हुँह मैं देखूँगा। प्रचार कर मेरे लिए, मै सरपच बनूँगा, तू देखना अदालत में दीनदयाल को बँधवा कर बुलवाऊगा और सारा हिसाब लूँगा '

शारदा का लगा कि उसी को सुना कर ये बातें कही जा रही ह। फेंकू बाबा ह न। कसे-कसे लोग है ? मुझे सुनाने की क्या जरूरत थी ? उस रोना आ गया बाबू जी यह सब क्या करते ह ? वह उनसे कहेगी, जरूर कहेगी, मगर वे कहेंगे यह राजनीति ह तू नहीं समझेगी, इसमें मत पड तू नहीं समझेगी नहीं समझेगी

शारदा उदास मन घर को लौट आई, दीनदयाल कहो निकल गए थे मउगा दर्लसिगार आया था भाई बता रहा ह।

× × ×

पूरा गाँव जसे हिल उठा ह, रामकुमार सतीश से मिल रहा है, फँकू बाबा कुंजू को लिए वहाँ पहुँच जाता है। जग्गू हरिजन, झिलमिट तेली, रघुनाथ सभी मिल रहे हैं वहाँ। दीनदयाल दर्लसिंगार को लिए हुए महावीर से मिल आए हैं मास्टर सुगन को सहेज आए ह और अब चले गए है बाबू महीपसिंह के यहाँ

सतीश और रामकुमार दीनदयाल की कुचालो की व्याख्या कर रहे थे, उसके दावों को समझने का प्रयत्न कर रहे थे और शेष गण लोग वानर सेना की तरह चुपचाप बठे थे। फँकू बाबा बीच म ललकार उठे—'देखूँगा दीनदयाल को, पापी, लफंगा चोर साले को। आप सब लोग हमें सभापति बनाइए फिर देखिए इस अदालत में बधवा कर हाजिर कराऊँगा हूँह और कुंजुवा सारे, तू रोता क्या ह रांड की तरह ? दिनदयला ने तो तर घर को उजाड़ दिया तेरी माई का खतम किया, बाप को खतम किया, जमीन हड़प ली, अब तेरी इज्जत के पीछे पड़ा ह, बठा क्या है ? गा, गा मेरे प्रचार में। मुझे सभापति बना कर तो देख, फिर मैं एक एक का बदला लेता हूँ।'

सतीश ने क्रोध से देखा फँकू बाबा को, कुमार ने कुछ मुसकान भरी नाराजी के साथ निहारा और शेष लोग हसने लगे।

'फँकू बाबा अपनी लनतरानी बन्द कीजिए यहाँ हम लोग चुपचाप विचार कर रहे ह कि क्या करना चाहिए और आप ह कि सब कुछ खोला रहे ह।

अरे बच्चा, दिनदयला स डरते हो ? इसम चुपचाप रहा का क्या बात है ? दब की घोट एलान कर दो उसके खिलाफ लड़ाई और फिर देखो मुझे, ह हँ, इसमें डरने की क्या बात ह ?

चुप रहिए फँकू बाबा। सतीश जोर स तड़पा और फँकू बाबा चुप होने के बदले बकते बकते वहाँ से चले गये—हैं ह इसमें चुप रहन की क्या बात है ? दिनदयला स म कोई डरता हूँ डरो तुम लोग, मुझे

सभापति बना कर देखो। इस बेईमान को सारी शेखी उतार देता हूँ। चुप रहो, चुप क्यों रहूँ म, कोई हिंजडा हूँ, कोई डरपोक हूँ '

फेंकू बाबा के चले जाने के बाद फिर विचार शुरू हुआ। कुमार ने कहा कि 'दीनदयाल ने जिस ढग से कुजू को बदनाम किया है उसी ढग से दानदयाल को बदनाम किया जाए। नीचता का जवाब नीचता ही है।'

सतीश ने जवाब दिया—दीनदयाल तो बदनाम है ही, जनम स बदनाम ह उसे कौन नहा जानता ?' वह फिर कुमार की ओर देखता ह मानो पूछ रहा हो तुम्हारो कोई ठोस योजना ह क्या ?

'नहो, वह बदनाम तो ह लेकिन ताजो बदनामी का असर अधिक होता ह। और उसमे यहा तो दोहरी बदनामी हो सकती ह।' कुमार बोला।

'यानी ?' सतीश का स्वर था।

'यानी वह तो बदनाम ह ही किसी भी चमाइन धोबिन के साथ पकडा जा सकता ह लेकिन उसमे घर वह मास्टर भी तो आता ह।' कह कर वह रहस्यमय ढग से मुसकराने लगा।

नहीं, यह नही होगा कुमार। दीनदयाल को व्यक्तिगत रूप से चाहे जितना बदनाम करो किन्तु गाँव का लडकी सबकी लडकी होती ह, उसका बदनामी सबका बदनामी हाती ह और वह बहुत ही शरीफ नेक दिल लडको ह, कीचड में कमल ह।' सतीश तैश में बोला। और लोगा न भी मनीश का समथन किया।

'आप तो हर चीज को भावुकता से लेते हैं। क्या वदमी गाव की लडकी नही थी, माना वह दूसरे गाँव से आयी ह परन्तु यहाँ बस गयी तो यहाँ की हो गई। क्या इसे बदनाम करने का हक दीनदयाल को ह ?'

'यह कौन कहता है? दीनदयाल ने जो पाप कम किया है उसका जवाब हम पाप धर्म से दें, यह कोई नीति नहीं हुई।'

'नीति नहीं, राजनीति तो हुई। राजनीति में यह सब कुछ न्याय है, जायज है। आप लोग राजनीति और आदर्श को एक करके मत देखिए। इस भावुकता से राजनीति नहीं चलती, बहुत कुछ अप्रिय काम करने पड़ते हैं विजय के लिए। चाणक्य और कृष्ण का उदाहरण हमारे सामने है।'

'मगर हमारे अधिक निकट तो गाँधी का उदाहरण है जिन्होंने साधन और साध्य दोनों की पवित्रता पर बल दिया है। माफ करना कुमार, मैं आदर्श को राजनीति से अलग करके नहीं देख पाता और इस बात को बहुत साफ तौर पर देख रहा हूँ कि शारदा जैसी लड़की की इज्जत को अपनी विजय का साधन बनाना अनीति है मुझे नामंजूर है।'

कुमार समझ गया कि सतीश चाचा अपनी आदर्शवादिता से डिग नहीं सकते। चालाक राजनीतिक खिलाड़ी कुमार हँस कर कहने लगा—

'अच्छा चाचाजी छोड़िए इस योजना को कुछ और ही सोचिए।'

तब तक एक लठधारी सिपाही ओसारे में आकर खड़ा हो गया।

'क्या है मनराज, फिर कोई फरमान है?'

'हाँ बाबा, बबुवन बुलावत हं, कहा है थोड़ी देर के लिए चले आएं, कोई हिसाब किताब समझ में नहीं आवत है, समने खातिर बुलावत हं।'

'कौन सा हिसाब किताब बाकी है उनके यहाँ? अब हिसाब किताब रहा ही कहाँ रे, सब कुछ तो खतम हो गया है और जो नहीं खतम हुआ है उसे भी तुम्हारे बबुवन जल्दी ही खतम कर देंगे।'

'अब ई सब हम का समुझी बाबा ऊ जवन कहे हं आके कहि देत बाटी।'

'अच्छा तो जाकर कह देना कि अब मैं सब पहला हिसाब किताब भूल गया हूँ दूसरा हिसाब किताब शुरू किया है उसे मौके पर समझा दूँगा।'

'ओ बाबा, ऊ कहेन है कि लैके हो आना।'

'तो क्या तुम मुझे कंधे पर लाद के ले जाओगे।'

'आ नाहीं बाबा, कधा पर कइसे ले जाव। उन बबुवन कहे हैं ऐसे कहि दिहलो हइ।'

'अच्छा तो जा।'

'अच्छा बाबा।'

'अरे सुन मनराज!'

'हाँ बाबा।'

'हमारे गाँव के भी कोई हैं बबुअन के यहाँ।'

'हाँ बाबा, बाबा दीनदयाल, आ वा नाव ह नीके नाव बा, मउगू दर्लमिगार बाबा गइल बाटें। लेकिन बबुअन बतावे के मना कहले रहले हवें।'

'अच्छा अच्छा जा।'

'अच्छा ले ।

तो जोड़ी पहुँच गयी ह।' हँसकर कुमार ने कहा।

'हाँ मुझे भी बुला रहे हैं महीप सिंह, मैं उनकी चाल समझता हूँ।'

'हूँ।'

'कुजू!'

'हाँ भइया!' कुजू जो अब तक उदासा-सा बैठा था, बोला। 'देखो उदासने से कोई काम नहीं चलेगा। मानता हूँ कि दीनदयाल ने तुम्हें बदनाम किया, तुम्हारा खेत कटवा लिया परन्तु मरद हो, मरद की तरह जियो। यह पचायत का चुनाव इस बात का फैसला करने वाला है कि दीनदयाल शाही को खतम करके हमारे तुम्हारे जसे सकड़ों लोगों को अमनचैन से रहने का मौका दिया जाए या दीनदयाल जसे लफगा और स्वार्थियों के हाथ अपनी जिन्दगी का सब कुछ सौंप

दिया जाए। हम सबका गाँव की नयी जिन्दगी के लिए हवा करना पड़ेगा, गुर न कुछ सहना ही पड़ेगा।'

'तो मुझे क्या करना है?

'बस जैसे प्रचार करते रहे [illegible] वसे ही करते रहो। उन्माग मत होओ, उदास होने से दोस्ताल गुन होगा समझेगा कि तुम्हें बेशार कर दर मारगर हो गया। गीत गाओ और प्रचार करो पचायत म हम स्थान नाम गये तो गाँव का नरना हो भल जायगा इस नर नारी के लिए तुम्हारी रागिनी को बजना ही होगा। इसे चुप मत होने दो मजू!'

मजू के ओठ कुछ देर तक थरथराये जैसे गाने से इनकार कर रहे हो, फिर फूट पडे एक करुण रागिनी में—

—कि अइहो लोगवा
रोवे ले जिनिगिया
जुल्मवाँ की छइयाँ कि अइहो लागवा।

उसकी रागिनी जसे सन्नाटे की अली-गली तरने लगी और एक जमा हुआ ठहराव गल-गल कर बहने लगा। गाँव के लड़के धीरे धीरे जुट आये और गाने लगे—

कि अइहो लोगवा

भाटपार का बाजार है। मास्टर सुगन सप्ताह भर के लिए जो खरीद रहे हैं। दलसिगार को शायद दानदयाल ने एकाध रुपया दिया [illegible] वह भी खर्चा खरीद रहा है। महावीर को अभी डाकिया कुछ रुपये दे गया है वशी ने भेजा है, बनिया उससे तकाजा कर रहे हैं। हरिजन नेता जग्गू जूता बेच रहे हैं, और रघुनाथ उनसे जूता माँग रहे हैं उनकी जमीन में जो बसे हैं नेताजी। बाजार का हलहलाहट उदासी से भरी है, जसे उसे ठढ मार गयी हो, एक अजब सन्नाटा इस शोर के बीच रेंग रहा है

दीनदयाल पान की दूकान पर खडे-खडे पान चुभला रहे हैं और उनका नौकर उनके लिये गोश्त खरीद रहा है कसाई के हाथों में बकरा छटपटा रहा है, उसकी आँखें निकल आई हैं, फिर ठंडा हो जाता है। बहे हुए रक्त पर दो कुत्ते लड़ते-लड़ते एक दूसरे पर चढ बैठते हैं। दीनदयाल पान की दूकान से पान खाता हुआ बडे रस से यह सब देखता है, फिर हस पडता है। जैसे कुछ सोचता है—उसके सामने अनेक बकरे उभर जाते हैं। लगता है उसके हाथ में भी कसाई का एक छुरी आ गयी है और काट रहा है एक एक को, वह फिर हँस पडता है

कि अइहा लोगवा
रोवे ले जिनिगिया
जुलुमवाँ की छुर्याँ कि अइहा लगवा।
काँपे ले निगाउ
और धरमवा की गइया कि अइहो लोगवा।
पान खा के, छुरिया छिपा के बेइमनवाँ
हँसे ला कसइया कि अइहो लागवा।

दीनदयाल धक से रह जाते हैं। उन्हें लगता है उनकी छुरी भरे बाजार में पकड़ ली गयी है। उनका मुँह तीता हो जाता है और पान की गिलौरी थूक देते हैं और फिर बलपूर्वक हँसते हैं। पानवाला कहता है कि कितना जालिममार गाना गाता है और कितना सच्चा लगता है कि वह हम सबकी बात कर रहा है दीनदयाल फिर वहाँ से धीरे-धीरे सरक जाते हैं कुंजू को घेर कर भीड बढने लगती है कुंजू का स्वर सत्य की एक नयी तीव्रता से पैदा होकर कंठ ताड कर फूट रहा है—तरह-तरह की आवाजें उसे घेरने लगती हैं—देखो साला बेहया है कहाइन के साथ पकड़ा गया था, इसे शरम नहीं आती, घूम घूम कर गाने गाता है

शरम क्या आये तुम तो बेवाहियात बात करते हो, सुना नहीं

दीनदयाल ने उसे धोखे से पकड़ा दिया था। भडगा दर्लसिंगार तो दीनदयाल का दलाल है। उसी ने सब ताना-बाना रचा था'

'नही जी, उसकी आसनाई है उस कहाइन से, अच्छा हुआ पकडा गया, बामन होकर कहाइन रखता है'

'रखता है तो तुम्हारे बाप का क्या? रखता है तो रखता है, सुनते हो। दीनदयाल बड़ा आया पकड़ाने वाला साला खुद तो छुट्टा साँड है'

'है तो क्या? छिपे छिपे करता है कोई रखता थोड़े ही है? सवाद लेना क्या बुरा?'

'साला सवाद लेता है छिप छिप कर सवाद लेना तो सबसे बडा पाप है, उससे तो अच्छा है किसी की बाँह पकड कर बठ जाना उसमें मरदानगी है, दीनदयाल साला जनम का नामर्द और धूर्त है।'

'अरे भाई सुनो कितना अच्छा गा रहा है—'

कि अहहो लोगवा

जुग-जुग बाद

घरिया आइल बा समइया कि अहहो लोगवा।

सुनऽ पचइतिया में

जे हो धरमी भइया कि अहहो लोगवा।

दीनदयाल धीरे धीरे बाजार के बाहर हो रहा है कि वह ठमक कर सुनता है—

चोर बेइमनवाँ बनल बाटें गोसइयाँ

कि अहहो लोगवा!

सारा बाजार ठहर कर कुंजू के पास घिर गया है। मौका देख कर सतीश कुंजू को रोक देता है और बोलने लगता है—

'भाइयो,

कुंजू ने अपने संगीत के जादू से जो कुछ कहा है वह कटु यथार्थ है। आप सभी लोग जानते हैं कि पंचायत राज्य कायम होने वाला

है। यह पचायत राज्य पिछली पचायतो से भिन्न होगा। यह सरकारी राज्य होगा, इसमें पचो को सरकार की ओर से मजिस्ट्रेट के अधिकार दिए जाएगे। इसलिए जो अब तक ब्रिटिश सरकार के पिटठू जमीदार, मुखिया और दलाल रहे है वे इस बहती गगा में हाथ धोना चाहते है, व आज देश भक्त हो गये है। वे पच-सरपच बनकर अपना उल्लू सीधा करने को और लोगो से बदला लेने की सोच रहे हैं। पच बनने के लिए तरह-तरह की बुरी चालें चल्ते है, कही किसी का खेत कटवा रहे है, कही किसी को व्यभिचार में फँसा रहे हैं, कही और तरह से बदनाम कर रहे है, हमारे गाँव की घटना से तो आप लोग वाकिफ हैं ही। एक गरीब बेचारे को दुष्टो की नीति का शिकार होना पडा। जब अभी से ये लोग तरह-तरह के पाप के रास्ते अपना रहे हैं तो पच-सरपच बनने पर क्या करेंगे, यह आप को सोचना है? हर गाव में यह समस्या है। इसलिए आप लोग सोच-समझ कर वोट दें पच चुनें और आपको जो अपना भाग्य बनाने का अवसर मिला है उसका अच्छा उपयोग करें। जयहिन्द।'

कि अहहो लोगवा
पान खाके हँसे
बेइमनवा कसइया, अहहो लोगवा

शाम हो गई थी लोग धीरे धीरे खिसकने लगे। सतीश ने कुजू को बुला लिया और घर की ओर लौट चला। कुहरा धीरे-धीरे बरसने लगा था। रास्ते निर्जन होने लगे थे। सतीश कुजू को लेकर ताल के खेतो की ओर निकल गया चक्कर लगाने के लिए। पता नही कौन क्या कर बठे? सतीश को लगा कि ताल के खेतो के बीच से निकल कर कोई पीछा कर रहा है।

'कौन है? चौंक कर सतीश ने पूछा। आहट थमक कर माना सरसों के घने खेतों में खो गई।

'शायद कोई जानवर रहा है।' कुजू बोला।

'हाँ जानवर ही रहा होगा। पचायत ने बहुत से आदमियों को जानवर बना दिया है कुछ ऐसे ही जानवर रहे होंगे।' सतीश बोला।

'तो चलिए लौट चलें, पता नहीं कुछ गुडे हों मारने के लिए पीछा कर रहे हों। इन सबका क्या विश्वास? कुजू ने कहा।

'हूँ सो तो है कुजू, लेकिन ऐसे डरने से कब तक काम चलेगा? हमें रहना तो इन्हीं लोगों के बीच है, इन्हीं तालों के खेतों के बीच, इन्हीं सुनसान ग्रामों और रातों के बीच कब तक कोई डरेगा? हो सकता है ये ही लोग किसी और खेत में छिप कर खेत काट रहे हों, खेत अपनी जिन्दगी है उन्हें कैसे छोड़ सकते हैं, चलो आगे के खेतों का एक चक्कर लगा आवें।

'चलिए', डरते हुए कुजू ने कहा। दोनों चलते-चलते दूर तक चले गए। अपने खेत के पास सतीश पहुँचा तो कुछ छायाएँ खेत में नजर आई।

सतीश ने ललकारा—'कौन है पकड़ो पकड़ो!' और वह अपनी लाठी उठा कर दौड़ने को ही था कि उसे लगा कि अगल-बगल में निकल कर कुछ बाँहों ने उसे जकड़ लिया है 'मारो इसे' एक आवाज तड़पी। 'कौन मार सकता है सतीश भाई को' कुजू अपनी लाठी लेकर उछल पड़ा—'मेरी जान रहते कोई हाथ नहीं उठा सकता।'

जकड़ने वाली बाँहें ढीली पड़ने लगीं और एक छाया घिघियाती हुई सतीश के पैरों पर गिर पड़ी—बाबा सतीश बाबा, आप हैं और यह आपका खेत है, हे ईश्वर! यह कौन-सा पाप हो गया हमसे? अरे छोड़ो रे लाग और आकर सतीश बाबा के पैरों पर गिर कर माफी मांगो।'

धीरे-धीरे चार पाँच आदमी फिर आये और सतीश के पाँव छान कर रोने लगे।

'तुम गुरदीन !'

'हाँ बाबा मैं, मुझे लात से मारिये, इस अधम को जूते से पीटिये कि अनजाने आप और आपके खेत पर हाथ उठा बठा '

'हाँ तो यह गुरदीन पासी है, यह इस जवार का सरहँग चोर बदमाश और हत्यारा कई हत्याएँ करके बच गया ह '

'मारिए बाबा, जूता स मारिए मुझे, अधम हूँ, पापी हूँ गुरदीन घिघियाए जा रहा था।

'छोड़ो गुरदीन, मेरा पाँव छोड़ो, क्या बात ह ? क्या तुम नही जानते थे कि यह मेरा खेत है ?'

'नही बाबा म नही जानता था।'

बाबू महीपसिंह ने मुझे सौ रुपये दे कर कहा, तुम्हें यह काम करना ह। मने बहुत पूछा, किसका खेत ह लेकिन उन्होंने बताया नहीं। उन्होंने यही कहा कि दीनदयाल तिवारी तुम्हें जो खेत बताएँगे उसे साफ कर देना ह और कोई रोकने-टोकने आये तो उसे भी साफ । दीनदयाल तिवारी ने मुझे लाकर यहाँ खड़ा कर दिया और मैं अपने आदमियों के साथ इस पर पिल पड़ा। मुझे क्या मालूम था, यह आपका खेत है और इस अंधेरे में आपका नाम न लिया गया होता तो अब तक तो म क्या कर बठा होता। हे भगवान क्या कर बैठा होता !' मारिए बाबा इस अधम को जूता से मारिए '

'इसम क्या फक पड़ता ह गुरदीन, तुम खेत ही तो काटने आये थे, हत्या ही तो करने आये थे, किराया लेकर किसी का खेत काट लिया किसी का खून कर दिया क्या फक पड़ता ह ?'

'आप इतना नीच समझते ह मुझे, बहुत फक पड़ता ह। म चोर हू, डाकू हूँ हत्यारा हूँ लेकिन म किरतघ्न नहीं हूँ। मेरे लिए जो पसीना बहाता ह उसके लिए खून बहाता हूँ। मेरे में सौ बुराई है लेकिन मं इस पाप से बचता रहता हूँ। यह मेरा अपना धरम है—अपना धरम ह क्या

मैं भूल सकता हूँ कि आपने भूख से मरते मेरे परिवार की मदद की थी, मैं जेल में था और आपने मेरी बीवी बच्चों को रुपये भेजवाये थे, उन्हें मजूरी पर लगाया था। लोगों ने विरोध किया था तो आपने कहा था कि गुरदीन डाकू चोर है उसके बाल-बच्चे तो वैसे ही पवित्र हैं जैसे किसी और के बाल-बच्चे और जब से मैंने सुना, आपका बिना दाम का गुलाम हो गया। और इस जवार में कौन है जिसका आपने कोई न कोई उपकार न किया हो, लेकिन देखिए इस महीप बाबू का, जिनकी भर जिसकी जमींदारी की आपने हिफाजत की वह आपके जान माल का दुसमन हो गया है और दीनदयाल बाबा जो आपके पटटीदार हैं आपके पीछे पड़े हुए हैं। मैं डाकू हूँ लेकिन मैं इतना धरम तो निभाता ही हूँ शायद इसीलिए महीप बाबू और दीनदयाल बाबा ने आपका नाम नहीं बताया, मुझे धोखा दिया मुझे धोखा दिया'

गुरदीन रोते रोते तैश में आ गया। बाबा! छिमा आपसे बाद में मागूँगा, पहले दीनदयाल का सिर फोड़ता आऊँ।'

गुरदीन उसी अँधरे में झपटा, सतीश चिल्लाया—'गुरदीन क्या करते हो मत जाओ, अनय मत करो लौट आओ'

गुरदीन कुहरे में डूबता हुआ भागता गया—'कल मिलूँगा आपसे आज नहीं, आज नहीं रुकने का।'

सतीश चिल्लाया—'गुरदीन तुम्हें मेरी कसम लौट आओ लौट आओ'

कोई आवाज नहीं आई। अब सतीश ने अपने कटे हुए खेत की ओर देखा—एक कोना के आस-पास गाँठ उखाड़ा गया था—शायद अभी शुरूआत ही हुई थी। तीन-चार और पासी उस अँधेरे में सिकुड़े सिमटे खड़े थे। सतीश का ध्यान अब उनकी ओर गया।

'कौन हो तुम लोग?'

फिर गुरदीन की ही सिसकती हुई आवाज सुनाई दी वह लौ आया था—'बाबा बडा जुल्म किया आपने अपनी कसम दिला कर। दिल में जलती आग दबा कर लौट आया हूँ। इच्छा तो थी कि इस बेइमान दलाल का सिर फाड़-फाड कर रख दूँ और मौका पडने पर महीप सिंह के नाती को भी समझता, मगर आपने अपनी कसम दिला दी इच्छा नहीं किया बाबा। ये लोग भी हमारे साथ ही थे इनका भी क्या कसूर? मैं ही लाया था इन्हें। माफ करें बाबा हम सबको माफ करें।'

'गुरदीन माफ किया तुम्हें, अपने किये पर पछताना सबसे बड़ा दंड है। और तुम्हारे भीतर पछताने की भावना है, ज्योति है, तुम आदमी बन सकते हो, क्या इन गंदे कामों में लिपटे रहते हो?'

'आदमी तो बनना चाहता हूँ लेकिन बनने नहीं पाता। आदमी बन कर जीना मुश्किल है बाबा। कोशिश करूँगा बना, अभी तो मुझे बहुत से काम करने हैं, बहुतों का हिसाब चुकता करना है। कहता हुआ गुरदीन अपने साथियों के साथ अंधकार में विलीन हो गया।

सतीश ने कुन्नू की ओर देखा, बोला— उठा रा भाई जो कुछ कटा है। पंचायत की शुरुआत भी नहीं हुई कि ये सब इनाक होने शुरू हो गए। महीपसिंह को देखा और देखा इस दलाल दीनदयाल को। आजादी के दुश्मन हैं ये, जनता के दुश्मन हैं ये मगर इन्हें अधिकार पाने के लिए बड़े-बड़े पतरे बदल रहे हैं।'

'हां भइया, लगता है गरीबों का कोई नहीं है—कल भी नहीं था, आज भी नहीं है। ये गंदे जानवर कल भी राज करते थे आज भी राज करने के लिए हाथ-पाँव मार रहे हैं, इनके मुँह खून लगा है न आदमी का।'

हाँ लेकिन अब इन्हें बरदाश्त नहीं किया जाएगा। इनको राज बदलना ही होगा। इसीलिए तो पंचायत राज्य का बदलना हो रहा है। किसी भी कीमत पर इन्हें रोकना होगा मैदान में आने से। ये

खलबलाये हुए ह । जब शकर का ताडव नत्य होता ह तब राक्षस खलबला उठते ह । आज शकर का नत्य हो रहा ह, सत्य उघड कर सामने आ रहा है, ये राक्षस खलबलाये हुए ह, इन्हें रोकना होगा राकना होगा '

'हाँ भइया रोकना होगा, नही तो खा जायेंगे ये जनता को मैं अपना सारा दुख-दरद भूल कर करूँगा, वह सब कुछ करूँगा जो आप कहेंगे अच्छा तो इस घटना के बारे में आप क्या कहते ह, इसका प्रचार किया जाए ?'

'नहीं इसका प्रचार करना अच्छा नही होगा, लोग समझेंगे हम लोग चुनाव प्रचार करने के लिए ये झूठी बातें दीनदयाल के खिलाफ उडा रहें ह, इसका काई प्रमाण नही ह । मौका आन पर खुद गुरदीन ही इस राज को खोलेगा । इन लोगा को यह भी पता नही हाना चाहिए कि हम लोग इनके हथकडों से परिचित ह ।'

'ठीक है, म कही भी चर्चा नही करूँगा मगर गीत तो गा सकता ह उसके बिना म रह ही नही पाता ।'

'हाँ-हाँ गीत गाओ, बाँसुरी बजाआ, वह तो तुम्हारी जिन्दगी ह उसे कौन छीन सकता ह ?

कि अइहो लोगवा
रोवे [illegible] जिनिगिया जुल्मवा का छइयाँ
कि अइहो लोगवा

गीत से सारी रात में झूजू का करुण मीठा स्वर भटके हुए बटोही सा घूमने लगा ।

## : २५ :

अमलेश जी ने सतीश को मना किया—देखते हो न बेटा, गाँव का रंग ढंग। पंचायत बनी भी नहीं कि चमत्कार शुरू हो गए। दुनिया का रंग-ढंग बिगड़ता जा रहा है। एक जमाना हमारा था कि लोग गाँव की इज्जत अपनी इज्जत मानते थे अपने में लड़ते थे लेकिन गाँव की इज्जत के लिए सामूहिक ढंग से लड़ते थे। आज तो दूसरों की इज्जत लूटने के लिए लोग बाहर का सहारा लेते हैं। पहले के लोग भले बुरे रूप में जो भी थे साफ थे मगर आज के लोग क्या हैं समझ में नहीं आता। शहर का असर धीरे धीरे गाँव को बदजात कर रहा है और मुझे लगता है कि ये गाँव न शहर बन पायेंगे न गाँव रह जायेंगे और उन्होंने बड़ी भंगिमा से गुनगुनाना शुरू किया—

शिक्षा की यदि कमी न होती तो ये गाँव स्वर्ग बन जाते —

सतीश बोला—ठीक कहते हैं पिता जी, लेकिन जो स्थिति है उसे स्वीकार करके ही चलना चाहिए। पुराने आदर्श यदि नहीं रहे तो उनके प्रति मोह व्यक्त करने से तो वापस आ नहीं सकते और बदलते हुए जमाने को नकारने से वह रुक तो सकता नहीं। इसलिए अच्छा तो यही है कि जो स्थिति सामने है उसका सामना किया जाए। आप जानते हैं कि पंचायत का चुनाव होना है और इसे अधिकार मिलना है। यदि दीनदयाल और उसकी पार्टी अधिकार में आ गयी तो गाँव का विनाश ही समझिए। अभी यह हाल है तो ये लोग अधिकार पाने पर क्या-क्या करेंगे ?

'हूँ यह भी ठीक है अच्छा जो चाहो सो करो।' कहकर अमलेश जी चुप हो गए और उनकी आँखों में न जाने अतीत के कितने सरल चित्र उतरते गए।

कपि ले जिनिगिया
जुल्मवाँ की छइयाँ कि
अइहा ेगवा

कुछ इधर को ही आ रहा है, आज सवेरे से ही बड़ी सरगर्मी है पंचायत का चुनाव है न। दीनदयाल ने चुनावस्थल पर लाई गट्टे और गुड़ की दूकान लगवा रखी है जो जितना खाये उसे उतना खिलाओ। दलसिंगार, महावीर और सुग्गन तिवारी आने वाला की आवभगत कर रहे हैं। दलसिंगार नेताओं की अदा में हरिजनों से भी हाथ जोड़ कर मिलते हैं मजगा दलसिंगार कमर नचाता हुआ औरतों के झुंड में भी जाता है और दलसिंगार को मुखिया पद के लिए वोट देने को कहता है। औरतें भी काफी संख्या में वोट देने आई हैं आज पहली बार इतनी औरतें बाहर निकली हैं एक सामाजिक काम के लिए।

पेंकू बाबा झलपल-भलपल आते हैं और जोर-जोर से बोलते हैं— 'भाइयो मुखिया मुझे बनाओ, गाँव का मालिक मैं हूँ अरे ई देखो दीनदयाल का, गट्टा मिठाई की दूकान खोले हुए है, अरे दादा। ई देखो सारी अनीति करके मुखिया बनने चला है। नहीं ई बात बेइंसाफ है, मुखिया न दीनदयाल बनेगा न रघुनाथ। रघुनाथ कम कुपढी नहीं है मुझसे पूछो, इसने क्या-क्या किया है?'

सतीश समझ गया कि पेंकू बेकार की बातें छाँटने जा रहे हैं उसने लपक कर उनकी बाँह पकड़ ली और पुचकारते हुए कहा—'अरे बाबा, आप ही गाँव के राजा हैं इसमें कोई शक है? आपको चुनाव फुनाव लड़ने से क्या फायदा? आप तो बिना ताज के बादशाह हैं।'

पेंकू सतीश से खिंचते चले जा रहे थे और बक रहे थे— ठीक कह रहे हैं सतीश बाबू आप। आप ही तो इस पूरे जवार में विद्वान आदमी हैं जो मुझे समझते हैं अच्छा जरा रुकिए।'

सतीश ठहर गया और फेंकू बाबा लाई-गट्टा की दूकान पर ठहर गए—इधर कर बनिया से बोले—दे सारे एक सेर गट्टा, एक सेर लाई, दीनदयाल भी क्या समझेंगे कि कोई वोट देने आया था —और वे लाई, गट्टा लेकर कुएँ के पास बैठ कर हापुर-हापुर खाने लगे।

कुन्नू गा रहा था—

बिं अइहा लागवा
रोवे ले जिनगिया
गुलुमवा को छइयाँ

और दीनदयाल लगातार बरबस मुसकराने का सजा भोग रहे थे

शाम को परिणाम घोषित हुआ—रघुनाथ सभापति चुन लिए गए थे और सतीश, रामकुमार, जग्गू हरिजन, झिलमिल तेली, मास्टर सुगन ग्राम पचायत के सदस्य चुन लिये गए थे। दीनदयाल को भी सदस्य के रूप में ले लिया गया। फेंकू बाबा को केवल एक वोट मिला था वो भी उनका ही। वे दौड़े दौड़े सतीश के यहाँ आये और बोले—इसलिये आप मना कर रहे थे। नहीं खड़ा होता तो यह एक वोट कैसे मिलता ? सभी लोग हँसने लगे

रात को कुजू ने फिर एक बार बड़े मन से बंशी बजायी। बंशी का स्वर दीनदयाल को रात भर काचता रहा, वे ठीक से सो नहीं सके और अजब अजब योजनाओं से व्यथित होकर करवटें बदलते रहे।

दूसरे दिन शाम को उमाकान्त पाठक फिर आये थे। आये थे हाल-चाल लेने, लेकिन शारदा को भी प्रेरणा कम ना नहीं थी। वे आय तो मालूम हुआ कि दीनदयाल महीप बाबू से मिलने गए हुए ह, न जाने कब तक आयें। उमाकान्त पाठक चलने को हुए तो शारदा ने अलसाये स्वर में कहा—जाइए मुझसे क्या पूछते हैं ? म कौन होती हूँ ?'

'हाँ तुम कौन होती हो, यही सवाल तो, मैं अकसर अपने स पूछता हूँ, लेकिन कोई जवाब नहीं मिलता।'

कोई जवाब नही मिल्ता ?

'नही शारदा, नहीं, कोई जवाब नही मिलता और ऐसा लगता ह कि तुम्ही तुम सारी खामोशी में तर रही हो और फिर जवाब कौन द किसको दे ।'

शारदा ने एक लम्बा सी साँस ली—'मास्टर साहब, आप जा रह्रे ह तो कोस कौन खत्म करगा ? आप तो आते ही नही, जसे डरते हो ।

मास्टर को एक झटका सा लगा—सच ही तो ह वे डरते ह यहाँ आने म डरते ह—अपने से डरत ह शारदा से डरते ह जमान से डरत है । लेकिन उन्हाने बडी सफाई से कहा—नही शारदा इसमें डरने की क्या बात ह ? और—और कोस तो खत्म करना ही ह निकालो किताब, हाँ-हाँ किताब निकालो ।'

शारदा ने तरल मन्द मुसकान से मास्टर को देखा और बस्ते म स किताब निकालने चली गई । मास्टर सिहर स गए ।

'हाँ तो मास्टर साहब, यह रही किताब और यह रही कविता । शारदा न हिन्दी पुस्तक खोल कर दे दी । मास्टर साहब ने देखा—कविता, सूर की कविता, विरह की कविता—गोपियाँ उद्धव के सामने अपना तडपता हुआ हृदय उडेल रही ह—कभी व्यग्य से हसती ह कभी सदेश देती हैं कभी हाहाकार करके रो पडती ह

क्यो शारदा तुम्हें हमेशा हिन्दी ही पल्ली रहती ह ? और भी तो विषय ह—इतिहास, भूगोल गणित कोई और किताब लाओ '

'और तो म अपने आप पढ लेती हूँ हिन्दी समझ म नही आती । ऐसे-ऐसे गूढ अथ भरे ह इन कविताओ म कि अपनी अकल ही काम नहा करती ।

शारदा मुसकराने लगी और मास्टर भीतर से भीगन लगे ।

निस दिन बरसत नन हमारे !

मास्टर ने अपनी झुकी हुई पलकें ऊपर उठाइं—उनमें एक अदभुत भीगापन था और वे शारदा की पलकों के भोगेपन को छू गईं।

इसमें क्या है शारदा—'इसमें तो कुछ कठिन नहीं है। गोपियाँ कृष्ण के वियोग में तड़प रही हैं। वे अपनी दशा का वर्णन करती कहती हैं कि रात दिन मेरे नयन बरसते रहते हैं यानी रोते रहते हैं।'

मास्टर ने आँखें पुस्तक पर हो घँमाये घँमाये ही पढ़ना शुरू किया—

सदा रहत पावस ऋतु हम पै,
जबते स्याम सिधारे।

जब से श्याम यहाँ से चले गए हैं हमारे ऊपर पावस ऋतु छाई रहती है यानी हम पावस ऋतु की तरह बरसती रहती हैं।

दृग अंजन लागत नहिं कबहूँ
उर कपोल भये कारे।
कंचुकि नहिं सूखत सुनु सजनी
उर बिच बहत पनारे।

आँखों में काजल ठहरता ही नहीं, गाल और हृदय बहते हुए काजल से काले हो गए हैं। हमेशा उर पर पानी के नाले बहते रहते हैं इसलिए कभी चोली नहीं सूख पाती

मास्टर ने शारदा की ओर देखा कि वह समझ रही है या नहीं। मास्टर देखकर धक से रह गया—शारदा की आँखों से तर-तर आँसू बह रहे थे, उसके काजल आँसुओं में बह कर कपाल पर फैल रहे थे। उसकी बड़ी-बड़ी पलकें मास्टर की ओर डरी हुई, भीगे पल की तरह हल्के हल्के काँप रही थीं।

'यह क्या शारदा?' मास्टर ने भीगे स्वर में कहा।

शारदा धारे धारे सुबकने लगी।

'अरे यह क्या करती हो शारदा, कोई देखे तो क्या कहेगा?'

शारदा ने अपने आँसू पोंछ लिए और हँसने का प्रयास करती हुई बोली—हाँ मास्टर जी, ठीक कहते हैं कोई देख लेगा तो क्या कहेगा ?

वह चुप रही, फिर कुछ देर बाद बोली—'लगता है लोगों के देख लेने का भय ही हमें लूट लेगा हमें-जैसे लोग हैं जो दूसरों का देखने ही रहते हैं अच्छा पढ़ाइए मास्टर जी।'

'अब क्या पढ़ाऊँ तुमने तो मुझे भिगो दिया।'

'आप भी भीगते हैं मास्टर जी! चलिए आप भी भीगते हैं। मैं तो समझती थी कि मैं ही भीगती रहती हूँ और आप सूखे सूखे घूमते हैं '

'शारदा यह सब तुम क्या कह रही हो, बकवास बन्द करो।

'हाँ मैं बकवास कर रही हूँ ठीक है बकवास ही तो है हाँ मुझे रोना नहीं चाहिए था, मगर क्या करूँ मास्टर जी, मुझे लगता है कृष्ण की समूची विरहिणी गोपियाँ मेरे भीतर उमर कर रो रही हैं। चारों ओर पावस उमड़ा हुआ है जल थल एक हो गया है मैं डोंगा-नाव की तरह अपने भीतर थकी-हारी चिंतित गोपियों को लादे पानी में भटक रही हूँ कोई किनारा नहीं मिलता तमाम लहरें थपेड़े मारती हैं और आप किसी टीले पर बैठे हैं जहाँ का आसमान खुला है धूप है आप बैठे हैं एकदम सूखे कोरे

शारदा, पता नहीं तुम क्या-क्या कह जाती हो, तुम्हें पढ़ाई में मन लगाना चाहिए और तुम इस हँसने खेलने की अवस्था में इतनी उदास होती जा रही हो भीगती जा रही हो मैं मैं क्या हूँ, क्या शारदा मैं मैं कैसे कहूँ अच्छा तो निकालो किताब और और भूल जाओ इस पागलपन को '

शारदा की आँखें फिर तरल हो आईं। उसने किताब मरोड़ कर हाथ में भींच ली बोली—ठीक कहते हैं मास्टर जी, मुझे खुश रहना चाहिए और खास कर आप जैसे मास्टर जी जिसे मिले हों उसे तो खुश

रहना ही चाहिए, मगर क्या बताऊँ मास्टर जी, मुझे कुछ वैसे ही चारा ओर सब कुछ थर्राता हुआ लगता है। लगता है, मेरे भीतर हमेशा पूस की रात थरथरा रही है, एक डर सा छाया रहता है, पता नहीं किस बात का जैसे मैंने कोई चोरी की हो, या कुछ खोने वाली हूँ आपको देखती हूँ तो मन में एक बदली-सी घिर आती है, ठंडी ठंडी छाँहें भीतर भर जाती है, सूखी हवाएँ खुशबुओं से भीग कर बहने लगती है लेकिन तभी लगता है कि बिजली कड़कने लगी है, हवाएँ डालियों को तोड़ कर गरजने लगी हैं मेरा नाम ले लेकर चीखने लगी हैं और मैं भय के मारे आँखें मूँद कर बैठ गयी हूँ आँखें खोलने पर देखती हूँ कि आप चले गये हैं और गुजरे हुए तूफान की छूटी हुई साँस धीरे धीरे छटपटा रही है '

'तो मैं न आया करूँ शारदा, मेरे कारण तुम्हें न जाने क्या-क्या सहना पड़ता है तूफान बिजली ।'

आप तो एकदम बुद्धू हैं मास्टर जी, बात नहीं समझते ।'

फिर एकाएक शारदा रुक गई और अपनी जबान काट ली—'हाय मास्टर जी, मैं क्या कह गई, माफ कीजिएगा ।'

मास्टर जी हँसने लगे लेकिन उनकी हँसी में एक व्यथा उभर आई थी धीरे धीरे बोले— शारदा ठीक कहती हो । मैं बुद्धू हूँ ।'

'नहीं मास्टर जी, मैं भूल से कह गयी', शारदा ने लपक कर मास्टर जी का वाक्य छीन लिया ।

'नहीं शारदा भूल से भी कभी कभी बड़ी सही बात निकल आती है मैं बुद्धू हूँ, तुम्हारी बात नहीं समझता हूँ लेकिन जिस संस्कार जिन परिस्थितियों में पला हूँ उनमें बुद्धू होना ही सम्भव था । मैंने बनारस में भी कई लड़कियों को पढ़ाया था—अनेक लड़कियों ने मुझे कई बार चालाक बनाने की कोशिश की लेकिन मैं बुद्धू बन कर उन्हें पढ़ाता रहा । मुझे पैसे की जरूरत थी विद्या की जरूरत थी, यदि तनिक भी चालाक बनता तो विद्या मेरे हाथ से खिसक गई होती । गरीबी ने मुझे कहीं भी

होशियार नहीं बनने दिया। इस तरह लड़कियों से दूर-दूर बच कर रहने का संस्कार मेरे रक्त में भीन गया है।'

'यह सब क्या कह रहे हैं मास्टर जी, मैंने एक बात कह दी और उस पर महाभारत खोल बैठे, मैं अपनी बात वापस लेती हूँ।'

'नहीं शारदा, वापस लेने की बात नहीं, वास्तव में मुझे ही तुमसे क्षमा माँगनी चाहिए कि अब तक तुम्हारी भावना के प्रति जानबूझ कर उदासीनता दिखा कर तुम्हारा अपमान किया है।'

शारदा मानो 'जानबूझ' शब्द पर आश्चर्य से मास्टर को देख कर कुछ समझने का प्रयास करने लगी। मास्टर समझ गए। बोले—हाँ शारदा जानबूझ कर ही उदासीनता दिखाई है। मैं जिस दिन पहले आया उसी दिन मुझे लगा कि तुम मेरी देखी सुनी लड़कियों में सबसे अलग हो, जैसे मेरी आत्मा तुम्हारी ही खोज में वर्षों से भँवर में पड़ी हुई चक्कर काट रही थी लेकिन लेकिन मेरे संस्कार का बोध मेरे भीतर हमेशा सावधान था—किसी की बहू-बेटी पर आँख उठा कर विश्वासघात करना सबसे बड़ा नीच काम है, यह आवाज बार बार मेरे भीतर बजती रहती लेकिन साथ ही साथ यह स्वर भी उभरता रहता कि यह तुम्हीं हो जिसे मेरी आत्मा खोज रही थी अनजान हो। और इसी द्वंद्व में महीनों मेरी भावना यातना सहती रही। तुम्हारी सरल निश्छल स्नेह धारा मेरी यातना को तोड़ती रही लेकिन मेरी यातना और उलझती गयी द्वंद्व और बढ़ता गया लेकिन लगता है कि अब इस द्वन्द्व को ओढ़ कर चल पाना मुश्किल है। तुम्हारे जी को मैं दुखा नहीं सकता शारदा!

दोनों ने साथ ही नीचे से ऊपर को आँखें उठाईं दोनों की आँखें मिलीं दोनों में एक दूसरे के लिए अगाध विश्वास, तरलता अपण की सुकुमारता तैर रही थी। दोनों एक-दूसरे की ओर कुछ क्षण देखते रहे, फिर आँखें झुका ली, फिर आँखें उठाईं और दोनों की आँखों में हँसी खेल रही थी।

'शारदा !'

'जी'

'तुम्हारे बाबू जी कब आयेंगे ?'

'कह नहीं सकती मास्टर जी, वे राजनीति के चक्कर में पड़े हैं, मुझे कुछ अच्छा नहीं लग रहा है। कुछ अजीब-अजीब चक्कर चल रहा है। मेरा तो जी पता नहीं कैसा कैसा होने लगा है ? वे हार गए हैं पंचायत में, पता नहीं क्या हो ?'

'तुम उन्हें मना क्यों नहीं करती ?' पाठक जी की आंखों में व्यथा उभर आई थी।

शारदा की आंखों में उससे दूनी व्यथा उभर आई। बोली—'कैसे मना करूँ मास्टर जी, वे मेरे पिता हैं— छोटे मुँह बड़ी बात होगी। एक दिन कुछ कहा भी तो कहने लगे—यह राजनीति का खेल है तुम क्या समझो ? चुप रहा करो इस मामले में। पता नहीं राजनीति क्या होता है मास्टर जी, मैं तो नहीं जानती।'

'हूं' कह कर पाठक जी चुप रहे फिर बोले—'बदमी कैसी है ?'

शारदा समझ गई कि बदमी और राजनीति का कोई सीधा सम्बन्ध है तभी राजनीति की बात आते ही मास्टर जी ने बदमी की बात पूछी है।

बोली—'ठीक ही है, इधर कुछ उदास उदास-सी रहती है। दो एक बार बुलाया भी तो नहीं आई उसने कहला दिया कि तुम्हारे बाबू जी से डर लगता है। बेचारी दुखिया'

'हाँ क्या आये ? उसके प्रेम का मजाक बनाया गया है। मैं नहीं सोच पाता शारदा कि आदमी को आदमी के पवित्र प्रेम का मजाक बनाने का क्या अधिकार है ?' कहते-कहते मास्टर जी का स्वर भारी हो आया।'

'मैं भी नहीं समझ पाती—मास्टर जी।'

'हाँ, मगर हमारे तुम्हारे न समझने से क्या होगा शारदा लोग मजाक उड़ाते आते हैं, उड़ाते रहेंगे यह शाम पता नहीं कब तक चलेगा ?'

दोनों को एक ही साथ लगा कि उन दोनों के भी प्रेम का मजाक उड़ाने वाले लोग उसके आस पास घिर आये हैं और तो और स्वयं दीनदयाल तिवारी उन दोनों के बीच खड़े होकर लाल लाल आँखों से कभी उसकी ओर घूरने लगते हैं, कभी उसकी ओर। दीनदयाल की काया चौड़ी होती जा रही है और ये दोनों एक दूसरे से दूर हटते जा रहे हैं। दूर होते हुए दोनों के पीछे एक एक नदी है और दोनों कगार से गिर पड़ते हैं और दोनों एक साथ चिल्ला उठते हैं—शारदा! मास्टर जी!

दोनों को आश्चर्य होता है कि दोनों ने एक साथ ही एक दूसरे का नाम क्या पुकारा? दोनों एक दूसरे की ओर देखते हैं देखते रहते हैं जाड़े की शाम गहरा रही है, हल्का हल्का कुहरा फलने लगा है, कम्पन बढ़ने लगी है जो बाहर से भीतर की ओर फैल रही है।

अच्छा अब चलूँ शेष पढ़ाई फिर कभी।'

दोनों मुसकराने लगे। और दोनों के मन में फिर वही बिम्ब उभरने लगा है—तुम आते हो तो मन में बदली छा जाती है, प्राण छाँहों से भर जाते हैं तब तक बिजली कड़कने लगती है, हवाएँ चीखने लगती हैं नाव सा मन थपेड़े खाता लहरों में भटकने लगता है अकेला

दोनों को लगता है कि वे पास पास होकर भी बहुत दूर हैं एक अजब उदासी फैलने लगती है।

'अच्छा शारदा चलूँ।'

शारदा कुछ नहीं बोलती चुपचाप उठ खड़ी होती है और हाथ जोड़ लेती है

मास्टर चुपचाप शाम की छाया में सरक जाते हैं।

मास्टर चले जा रहे हैं, रास्ते में कोई बोली मारता है—'खूब मजा ले ले मास्टर !' मास्टर चारों ओर देखता है कोई दिखाई नहीं पड़ता। मास्टर मन में तड़प उठता है। उसे लगता है कि यह आवाज किसी एक की नहीं बहुतों की है। इस आवाज को वह बहुत दिनों से पहचानता है, यह आवाज सभी जगह है फगलें धीरे धीरे शीत में भीग रही है, चांदनी में सारे फूलों का रंग डूब चुका है मास्टर चले जा रहे हैं दूर बागीचे में कहीं कोई आग जल रही है मास्टर चले जा रहे हैं गाँव की आवाज के भीतर आवाज उभरती है शारदा की कितनी कातर सी शारदा उसके जीवन में फूलों की बहार की तरह आयी है और मास्टर इस बहार में भी डरा हुआ है। हाँ, वह मास्टर है, हेड-मास्टर। इस सारे जवार का एक आदर्श माना जा सकने वाला मास्टर वह शारदा को पढ़ाता है। पूरा का पूरा वातावरण इसी एक बात में तनाव से भरा हुआ है। तरह तरह की दकालु दृष्टियां बिच्छू के डंक की तरह तनी हुई है और शारदा—बरसात की एक सुगंधित भीगी हवा की छोटी लहर—मेरे जीवन के बन्द कमरे में धीरे से ढरक पड़ी है फुहार की तरह ढर पड़ी है अपने आप चुपचाप मास्टर क्या करे ? शारदा को देखते ही उसके भी तो बन्द किवाड़ अपने आप खुलने लगे थे और हवा का झोंका धीरे धीरे भीतर फैलने लगा था, किसी ने किसी के लिए प्रयास नहीं किया जैसे दोनों सहज भाव से चुपचाप जुड़ गए। यह सब कुछ ऐसे हुआ कि इसे होना ही था वह करता भी क्या ? उसने तो बहुत कुछ अपने को चुप्पी में बाँधे रखा मगर शारदा की मासूम सांसों ने चुप्पियां को उतार फेंका—वह कब तक उसे अकेले तड़पने देता। मगर अब ? अब क्या होगा ? शारदा ठीक ही कहती है कि इस बहार में भी एक उदासी उसे घेरे रहती है, एक अव्यक्त आशंका एक अनभिव्यक्त घबराहट । अब क्या होगा ? शारदा से विवाह क्या यह सम्भव है ? क्या नहीं सम्भव है ? वह भी ब्राह्मण है। ब्राह्मण है तो क्या, शारदा

भिखारी है, वह पाठक। भिखारी शारदा का रूपी पाठक शान्तमान
में कैसे जायेगी ? और पुराने जमाने में हमारे गाँव की लड़कियाँ भिखारियों
के यहाँ आ सकती है... लेकिन जमाना कितना आगे बढ़ गया है। क्या
शादी के मामले में जात-पाँत का ऊँची-नीची रखा नहीं लांघी जा सकती ?
कुछ करना पड़ेगा। लेकिन आज के जमाने में एक दूसरी जाति पैदा
हो गयी है धनी-गरीब की इसे लाँघना आसान नहीं है। दीनदयाल
के पास काफी पैसे हैं और वह उन्हीं के स्कूल में एक गरीब मास्टर।
हाँ, बहुत पैसे हैं दीनदयाल के पास पैसे पैसे की माया आते ही मास्टर
उमापति के मन में दीनदयाल की बड़ी विद्रूप विद्रूप आकृतियाँ उभर
आयीं। पैसे वाला के अनेक कुत्सित चित्र उभर कर दीनदयाल के आस-पास
घिरने लगे। थू है दीनदयाल पर उसके पैसे वाले पर। इसका पवित्रता
स्वयं सम्बन्ध जोड़ना चाहे तो लात मार देना चाहिए। मगर शारदा
एक दम अलग पाप के कीचड़ में पुण्य का कमल नहीं बाप के संतान
को नहीं और शारदा चाहिए शारदा हजारों में एक है। उसने शहर की
तमाम लड़कियाँ देखी हैं बहुतों के सम्पर्क में आया है मगर शारदा की
उसने कहीं नहीं देखा तो यदि पैसा रास्ते का दीवार बनता है तो
उस नौकरी छोड़नी पड़ी भी तो तो तो पाठक का सिर चकरान
लगा। इच्छा हुई कि इस स्कूल का नौकरी छोड़ कर यहाँ और चल दे
ताकि सारे द्वन्द्वों से छुटकारा मिल जाए। मगर शारदा उसने क्या
अपराध किया है उसे क्यों छोड़ दे ? नहीं छोड़ेगा तो उसकी बदनामी
के साथ शारदा की भी बदनामी फैलेगी उसके भले के लिए उसे छोड़
देना चाहिए। हे ईश्वर, वह क्या करे ! कैसे जाल में जा उलझा है !

बंसी बज रही है कुंजू है, कहीं इधर ही है बंसी कुंजू और
चदमा कहीं कहीं रो रही है अकेली बीच की दूरियाँ कभी कितना
काटेगी कुंजू और चदमी बीच में इतने सारे लोग, शोर करते हुए, उस

शोर के बीच कांपती बांसुरी वह, शारदा और बीच में नहीं वह आगे नहीं सोच सकता

कौन ?

'मैं'

'मास्टर सुग्गन जी !'

'हाँ पाठक जी !'

'कहिए कहाँ से ? इतनी रात गये ?'

'आज छुट्टी थी, सुना था कही एक वर है मितवा लायक, देखने गया था !'

कहिए क्या हुआ ?

'हुआ क्या ?—भाव ताव नही पटा। लड़का बी० ए० में पढ़ता ह। हालांकि तीन साल से फेल हो रहा है और कुछ खास वेतन भी नहीं ह, लेकिन करकरा शुकुल है इसलिए लोग चार हजार दहेज माग रहे ह। मने बहुत कोशिश की लेकिन वे लोग कम पर राजी नही हुए।

'तो क्या शुकुल के नाम पर ही लड़की की जिन्दगी बीतेगी। अगर कम पर भी राजी हो जाए तो क्या आप अपनी लड़की दे देंगे ?'

हाँ शुकल हं, इसलिए इसका तो ख्याल करना ही पडेगा। वसे कुछ शादियाँ और देखी ह वे ठीक ह, वे लोग सम्पन्न भी हैं, लड़के भी अच्छे ह लेकिन व जाति में हमसे घट कर है यानी चौबे हैं।'

'आप शिक्षक हैं लोगो को शिक्षा देने वाले। जमाना आगे बढ गया है यथाथ के पहलू बदल गए है और आप लोग तिवारी और चौबे की भी दूरी नही पाट सके है। इसीलिए तो इन मूर्ख दरिद्र लोगो को अपने नालायक पुत्रो के लिए इतना दहेज माँगने की हिम्मत होती ह। देहात में ये लोग शुकुल तिवारी बने हुए हं, शहरों में एक मेहतर भी इन्हें नहीं पूछता और दरवानी की नौकरी भी इन्हें नहीं मिलती मने देखा है इन लोगों को शहरों में लात खाते हुए।

'आप ठीक कह रहे हैं पाठक जी, मैं भी सोचता हूँ कि जमाना बदल गया है मगर लोकनिंदा का भय बना रहता है लोग तरह-तरह की बातियाँ बोलते हैं ।'

'यह सब कुछ नहीं तिवारी जी लोग डरते हैं यह ठीक है मगर इसमें बड़ी बात यह है कि लोग अपनी संतानों के मूल्य पर अपने अहंकार की तृप्ति करते हैं, संतानों को अभावों के हाथ में देकर वे यह दावा ही पाना चाहते हैं कि उन्होंने कभी कुल और जाति से बाहर लड़की ब्याही है ।'

मास्टर सुगन चुपचाप सुनते रहे जैसे वे कुछ समझ न पा रहे हों या द्वन्द्व में फंस गए हों या सचमुच समझ कर उस पर विचार कर रहे हों

पाठक जी बोलते गए— लोगों का क्या ? वे तो तमाशाई होते हैं, उनकी वाह वाह या हाय-हाय का शोर एक दो दिन के लिए होता है और उसका मूल्य भी क्या होता है ? पढ़े लिखे लोगों को आगे आना चाहिए परम्पराएं बदलनी चाहिए ।'

सुगन मास्टर जैसे ऊब रहे थे । एकाएक पाठक जी को याद आया कि वे दिन भर के थके हारे सुगन मास्टर पर जुल्म कर रहे हैं । वे हंस के बोले— अरे मास्टर साहब आप दिन भर के थके हैं और मैं आपको उपदेश दे रहा हूँ जाइए आराम कीजिए और वे नमस्ते करके आगे बढ़ गए ।

पाठक जी को स्वयं आश्चर्य हुआ कि वे इस बुजुर्ग मास्टर को क्यों उपदेश देने लगे थे वे अनजाने ही कहीं अपनी व्यथा आक्रोश व्यक्त कर उठे थे । हाँ सुगन मास्टर कहता है कि चौबे को अपनी लड़की कैसे दें ? समाज का भय है एक दिन उसके और शारदा के बीच दीनदयाल भी खड़े होकर चिल्लायेंगे कि पाठक को अपनी लड़की क्यों दूं ? यह सुगन मास्टर भी कैसा निर्जीव पुतला है ? बाबू साहब

ने कह दिया तो पंचायत में खड़ा हो गया, दीनदयाल के बहकावे में आकर सतीश से झगड़ा कर बैठा, और लोगों के भय से मूर्ख दरिद्र गुकुल को लड़की देने के लिए चक्कर काट रहा है लाहे का टोटा है। उसे एक झटका-सा लगा, वही वह मास्टर सुगन के प्रति अन्याय कर रहा है और उसकी आंखों में प्राइमरी स्कूल के मास्टरों की असहायता और दयनीयता के चित्र उभर आये

पाठक जी घने बगीचे में पहुँच आये चारों ओर सन्नाटा ओस की बूँदें टप-टप पत्तों पर चू रही थीं, बगीचे में पुरव और मूज का घना जंगल-सा है और सदक मार कर नये आम के पेड़ों को घेर दिया गया है। वहीं थोड़ी दूर पर एक ताल है। पाठक जी रास्ता छोड़ कर धीरे धीरे उधर ही बढ़ गए, सोचा इधर से ही निवृत्त होते चलें। वे वहाँ पहुँचे तो मूज में सरसराहट हुई। सोचा—सियार, लोमड़ कुछ होगा। मगर धीरे धीरे आदमी की आवाज भी सुनाई पड़ने लगी। हाँ, आवाज एक पुरुष और एक नारी की लग रही थी। पाठक जी पशोपेश में पड़ गए—क्या करें? वे चुपचाप एक पेड़ के पीछे खड़े होकर अकनने लगे कि माजरा क्या है? और वे जो कुछ समझ पाये उससे मालूम पड़ा कि पुरुष मउगा दलसिंगार है और औरत भाटपार की मशहूर बीहड़ चमाइन डलवा है, दोनों प्रेम कर रहे हैं।

पाठक जी को हँसी आ गई—'वाह रे जोड़ी'! मउगा दलसिंगार पुरुषों में औरत और डलवा औरतों में पुरुष डलवा का चित्र पाठक जी की आँखों के सामने उभर उठा—पैंतीस साल की लम्बी चौड़ी कुरूप विधवा चमाइन जो मिहनत और ताकत में मरदों का कान काटती है—वह हल जोतती है, कछाड़ मार कर कुदाल चलाती है और वे सारे काम कर लेती है जो मरद चमार करते हैं। वह किसी के आगे सहायता का हाथ नहीं फैलाती—प्रेम की भी भिक्षा किसी से नहीं माँगती। अपने अनुकूल व्यक्ति को खुद घसीट ले जाती है। पाठक को फिर हँसी आ गयी

कि आज उसे यह दर्लसिगार ही मिला है। पाठक को यह आभास हुआ कि यह प्रेम सम्बन्ध केवल आज का नहीं है, बहुत पुराना है। हलवा विधवा है और दर्लसिगार रँडुआ, दोनों समानधर्मी हैं और अक्सर मिलते होंगे। पाठक को गुस्सा आ गया कि इसी कमबख्त ने बदमी और कुंजू को पकड़वाया था, खुद क्या कर रहा है? बदमी और कुंजू में तो प्रेम है और इन दोनों भुक्खड़ों में तो खाली भूख का सम्बन्ध है अच्छा देखा जाएगा।'

पाठक जी धीरे धीरे गुनगुनाते हुए आगे बढ़ने लगे और दोनों प्रेमी झुरमुट में से निकल कर भड़भड़ा कर भागने लगे। पाठक जी ने गाना बन्द कर जोर से पूछा—'अरे ये कौन भाग रहे हैं रे' और हलवा और दर्लसिगार दो दिशाओं की ओर तेजी से भागने लगे।

पाठक जी स्कूल को लौटे तो काफी देर हो चुकी थी। वहाँ पहुँचे तो देखा बदमी बैठी हुई है—'क्या रे तू क्या इतनी देर तक?' 'ए मास्टर साब, म खाना बनवाने को बैठी हूँ।'

अरे इ लड़की की जात इतना इतनी रात तक खाना बनवाने को बैठी रहती है। क्या भजन करती है?'

'ए मास्टर साब, आप डरिये नहीं आज आपको तकलीफ नही दूगी पहुँचाने की। बपई एक काम से कस्बा गए हैं। वे कह गए थे—म देर से आऊँगा तू मास्टर साब का खाना बनवा देना, मं जब कस्ब से लौटूगा तब तुझे साथ ले लूँगा।' हँसने लगी।

'अच्छा अच्छा मुझे तकलीफ नही देगी आज मगर मुझे तो आज खाने की इच्छा नही है।'

'क्यो सरधा वहिनी की ओर गए थे क्या?'

'हाँ गया तो था लेकिन वहाँ जाने और भूख न लगने से क्या सम्बन्ध?'

'अब मुझसे क्यो पूछते हैं, ए मास्टर साब, आप तो खुदे मास्टर

साव हैं बिद्मान पुरख, अपने से ही पूछिए। मैं तो गँवार औरत हूँ मुने क्या मालूम ?'

'हूँ, तू गँवार है ?' कह कर मास्टर मुसकराने लगे। बदमी लाल्टेन जला लाई और चूल्हा जलाने लगी। मास्टर ने रोका—'नहीं, नहीं बदमी मुये आज भूख बिल्कुल नहीं है।'

'नही मास्टर साव, ऐसा नही हो सक्ता, कुछ तो खाइए आप असकतिया जाते हैं' और मास्टर के नहीं-नहीं करने पर भी बदमी ने चूल्हा सुलगा कर दाल चावल का अदहन रख दिया और गूँधने के लिए आटा निकालने लगी।

मास्टर ने रोका—'नहीं-नहीं, इतना अट्टर करने की जरूरत नहीं, रोटी-सब्जी से ही काम चल जाएगा।'

बदमी के शरीर पर एक सूती चादर थी वह रह रह कर काप उठती थी। चूल्हे का गरमी पाकर उसे कुछ राहत मिली। चूल्हे की आँच उसके स्वस्थ गोरे मुँह पर उठन गिरने लगी। वह चुपचाप आटा गूँधने लगी।

मास्टर चारपाई पर बठे-बठे सब देखते रहे। एक सद सन्नाटा बिछा हुआ था। बदमी ने सन्नाटा तोडने के लिए पूछा—'सरधा बहिनी कैसी हैं मास्टर साव, म तो उधर कई दिना से नहीं गया।

'अरे छोडा सरधा बहिनी का। जिसके बाप ने तुम्हारे साथ यह व्यवहार किया उसके बारे में इतनी दिलचस्पी क्या लेती हो ?'

'मास्टर जी, मैं तो गँवार हूँ और वा भी छोटी जाति की। आप तो इतन पढ़े लिख हैं। मैं क्या कहूँ लेकिन गुसताखी माफ हो तो कहूँ कि मरद हमेशा स यही अनियाव (अन्याय) करता आया ह कि जुलुम मरद करता ह और उसका फल औरत भोगती ह। वह कभी भी औरत को अलग स पहिचानने की कोसिस नहीं करता।'

'यानी। मास्टर ने हँसते हुए पूछा।

'यानी क्या मास्टर साब, अब इहे देख लीजिए मेरे साथ नियाव अनियाव किया दीनदयाल बाबा ने और आप उसका नाता जोड़ रहे हैं सरधा बहिनी से। मरद मरद से नहीं निपटता औरत से निपटता है। वही वीर बनती है पुलिस, जब वह मरदों को नहीं पाती तो औरत पर जुलुम ढाती है।' कहते-कहते उसकी आँखें भर आईं और आँचल से आँखें पोंछने लगी।

'अरे तू रोती है, क्या हो गया?'

भरे हुए गले से बदमी बोली—'कुछ नहीं मास्टर साब आप समझते होंगे कि मैं छोटी जाति की गँवार औरत होकर आपको उपदेश दे रही हूँ लेकिन यह उपदेश नहीं है मास्टर साब मन अपनी आज तक की जिनगी में इसी जहर को पाया है और व सब एकाएक उभर गए जैसे बरखा का पानी पाकर एकाएक धरती के भीतर की गरमी भकभका कर फूट जाती है।'

मास्टर एक तल्खी भरे सत्य की पीड़ा में डूब कर मौन हो गए।

'अब इहे देखिए मास्टर साब, कि दीनदयाल बाबा ने क्या नहीं किया? उन्हें बदला लेना था कुंजू तिवारी से, सतीश बाबू से और न जाने किन किन लोगों से लेकिन भोग बनी मैं। और दीनदयाल बाबा का बदला लेंगे लोग सरधा बहिनी से। भगवान जानते हैं कि सरधा बहिनी कितनी अच्छी है जितनी ऊपर से अच्छी उतनी भीतर से अच्छी। मैं जानती हूँ कि मेरे साथ जो कुछ हुआ है उसे सुन कर उन्हें केतनी तकलीफ हुई होगी लेकिन करें क्या? मरद चाहे बाप हो, चाहे भाई हो, चाहे दुल्हा हो, औरत का कहा नहीं मानता है?'

'ठीक कहती हो बदमी मगर तुम शारदा से मिली क्यों नहीं? वह सचमुच तुम्हारे साथ जो व्यवहार हुआ है उससे दुखी है।

बात ई है मास्टर साब कि दीनदयाल बाबा के घर जाने से खाली सरधा बहिनी ही तो नहीं मिलेंगी ना भी तो मिलेगा मरणा दरसिंगार

भी तो मिलेगा और पता नहीं कौन कौन मिल जाए। अभी तो ये लोग रास्ते में देखते ह तो बोली बोलते हैं।'

दलसिगार भी बोली बोलता है।

'अरे ए मास्टर साव, ऊ दहिजरा तो जोर वालवा है।'

'हरामी कमीना' मास्टर बुदबुदाया, अपनी नहीं देखता।

'कौन मास्टर साव?

'अरे यही दलसिंगरा, अभी आते हुए मने उसे डलवा के साथ पकड़ा था।'

'ई कौन नई बात कह रहे हैं मास्टर साव, छिपे छिप तो यहाँ खूब चलता है। डलवा क्या कोई एक डलवा है? गाँव गाँव मोहल्ले मोहल्ले डलवा फली हुई ह और ये बाभन लोग? किसे नहीं जानती मास्टर साव। दीनदयाल बाबा से कोई जूठी हाँडी बची ह? जब से दुल्हिन मरी ये यहाँ सब करते घूम रहे ह और मास्टर साव धीरे धीरे लोग यह भी कहने लगे हैं कि अपने छोटे भाई की जोरू से भी ।'

वह चुप हो गयी।

'ऐसा!' विस्मय के साथ मास्टर ने पूछा।

ऐसा नहीं तो कैसा होगा मास्टर साव, लोग जोरू के दरद को थोड़े समझते हैं पैसे के आगे। रामदयाल बाबा बियाह करके बंगाल पड़े हुए ह, दस साल में एक बार आयेंगे पइसा खरियाने के लिए। तो क्या जोरू उनका पइसा लेकर चाटेगी और ई दीनदयाल बाबा तो जनम का दोखी ह। बचारी सरधा बहिनी सती साबितरी जैसी लड़की के मन पर क्या बीतती होगी? हे भगवान्!'

'हूँ, हर गाँव में यही सब हो रहा ह बदमी।'

'हो रहा ह तो हो मास्टर साव, लेकिन जब लोग लगते हैं दूसरे को दोखी समझने और अपने को पुनिआतमा तो करेजा सुलग जाता है रीसि के मारे। जी होता ह कि सबकी छिपी हुई जूठी हाँडिया को

चौराहे पर ला-ला कर पटक दूँ। छिप छिप कर करते हैं तो वह पुनि बन जाता ह और कोई सच्ची आतमा से किसी की आतमा को पाना चाहता है तो वह पाप बन जाता ह लेकिन मेरे कहने से क्या होगा, मास्टर साब, म एक गरीब कहाइन हूँ, कौन सुनता ह मेरे दिल की आह को ?'

'नहीं बदमी, अब वह दिन आ रहा ह जब गरीबों की आह आग बन जायेगी, आग बनकर उठेगी और इन सारे नकली लोगा को अपन ताप में भुलसा देगी, उसम से एक ऐसी आवाज उठेगी जो इन नकली लोगों के कान के परदे फाडती आर पार निकल जाएगी और ये लोग अपनी टूटी आवाजें सँभाले चौरस्ते पर खडे होकर अपना नगापन छिपा नहीं पायेंगे।'

पता नहीं वह दिन कब आयेगा ? मुझे तो बिसवास नहीं होता कि वह दिन कभी आयेगा। म तो अपनी जिनगी में यही देख रही हूँ कि सच्ची बात, नियाव की बात हारती जाती ह और झूठ और फरेब जीत जाता ह '

'आयेगा बदमी, आदमी को कभी निराश नहीं होना चाहिए '

मास्टर फूली फूली रोटियाँ निकाल रहे थे, सब्जी चूल्हे पर बुदबुदा रही थी

'एक बडी नाजुक बात पूछ रही हूँ बदमी, बताएगी ?

'पूछिए मास्टर साब, आपसे कुछ नहीं छिपाऊँगी।

कुजू को तुम बहुत चाहती हो ?

बदमी के चेहरे पर चूल्हे की एक हिलती लपट पडी, गाल लाल हो गए थे। कुछ देर तक नहीं बो[illegible] [illegible]र सँभल कर कहने लगी—
'मने बहुत मरदो को देखा ह ले[illegible] [illegible] को मने कुछ अलग [illegible] साब। वे अपने [illegible] दरद तक पहुँचे हं।

-

दरद सही ढग से आदमी-आदमी को मिलाता है मास्टर साब, मुझे तो ऐसा लगता है।

'लेकिन लेकिन ठीक है, लेकिन बदमी बदमी में तुम्हारे और कुजू के प्रेम की पवित्रता को समझता हूँ। आदमी आदमी के बीच आदमियत के सम्बन्ध के अलावा और कोई सम्बन्ध न होता, जाति-पाँत का, छोटे बड़े का, ऊँच-नीच का, भेदभाव न होता तो दुनिया कितनी अच्छी होती मगर जब ये हैं तो इसे भी देखना होता है। क्या तुमने सोचा है कि तुम्हारे और कुजू के सम्बन्ध का भविष्य क्या होगा ?'

'वही जो उस दिन हुआ था।' कहकर वह हँसने लगा फिर गम्भीर होकर बोली—'सो तो मैं नहीं जानती मास्टर साब, और उसका जानना अपने बस में भी कहाँ है ?'

और मास्टर को लगा कि उसके और शारदा के प्रेम सम्बन्धों के भविष्य का पता स्वयं उसको भी कहाँ मालूम ?

और चूल्हे की एक ही लपट एक ही साथ मास्टर और बदमी के चेहरों पर चमकी और फिसल गयी।

'बदमी !'

बपई आ गए। मास्टर ने ही आवाज दी—'हाँ हाँ आ जाओ भजन !'

भजन थोड़ा तुम भी खा लो।

'नहीं नहीं मास्टर साब, आप भोजन कीजिए हम लोग घर जाकर खा-पी लेंगे।'

भजन के नहीं नहीं करने पर भी मास्टर ने बचा हुआ या बचाया हुआ भोजन भजन के आगे सरका दिया, 'घर लेते जाओ।'

और जब बाप बेटी विदा हुए तो दीवार घड़ी नौ बजा रही थी। रात के सर्द सन्नाटे में घड़ी का बजता हुआ संगीत विलीन हो रहा था और हल्की-हल्की पग ध्वनियाँ कुहरे में डूब रही थीं।



जानते हैं। कुमार को यह न ज्ञात हो पाता कि लोग उसका समर्थन कर रहे हैं कि विरोध। बाबू महीपसिंह ने कुमार को अपने यहाँ बुला कर बड़ी आवभगत की। उसे और भी उत्तेजित किया कि कोई भी सरपंच हो जाए, सतीश न होने पाए।

सतीश कुछ समझ नहीं पा रहा था कि सरपंची के चुनाव का परिणाम क्या होगा? वह भी लोगों से मिलता रहा। चुनाव के दिन बड़ी सरगर्मी थी, चुनाव भाटपार में था। लालमणि यह चाहता रहा कि महीपसिंह सरपंच न होने पायें लेकिन वह खुद उम्मीदवार था और चाहता रहा कि उस हो सरपंच चुना जाए। वह सतीश का समर्थक था परन्तु इस समय अजब ढंग से सबके मन में सरपंच बनने की स्पृहा जाग गयी थी और एक दूसरे को समझना मुश्किल हो गया था, लेकिन लालमणि के गाँव वाले लालमणि को नहीं चाहते थे, वहाँ का सभापति सतीश के पक्ष में था। गुरदीन ने सतीश के पक्ष में अपना नाम वापस ले लिया था और अपने गाँव के सभापति को सतीश को वोट देने के लिए सावधान कर दिया था। बाबू महीप सिंह का यही उम्मीद थी कि गुरदीन उसे ही वोट दिलायेगा। दीनदयाल भी उसमें कह चुका था लेकिन वह इन दोनों को देख कर गुस्से से पागल हो उठता है बाहर कुछ नहीं कहता।

चुनाव के दिन काफी लोग एकत्र हुए थे देखने के लिए, मगर यह ज्ञात नहीं हो रहा था कि कौन किसके पक्ष में है। सतीश अपनी स्पष्टवादिता के कारण परेशान था कि लोग इतने गुमसुम क्या हैं! सबसे अधिक परेशान अमलेश जी थे जो जमाना देख चुके थे। वह भी एक जमाना था कि लोग ललकार कर मैत्री और दुश्मनी करते थे समर्थन और विरोध करते थे अपनी बात पर मर मिटते थे। वही गाँव है लेकिन इसे समझना मुश्किल हो गया है। शहरों की सी जटिलता यहाँ भी आ गयी है। भाई भतीजों को भी समझना कठिन हो रहा है राजनीति की

स्वायगत दुरूहता यहाँ इस कदर फैल गयी है, यह बात सभी के सामने आज जाने अनजाने प्रत्यक्ष हो रही थी। कुमार को कुछ नया नही लग रहा था। वह गाँव में पैदा होकर भी जीया है शहर की राजनीति में। वह इसीलिए गाँव की इस नयी परिस्थिति की न तो व्याख्या कर रहा था और न आश्चय।

बाबू महीपसिंह भी चुनाव में आये थे। उनके साथ सात आठ स्टेट धारी सिपाही थे, दो खवास थे और छैल बिहारी भी था। काफी दिना बाद सतीश और महीपसिंह की मुलाकात हुई थी। महीपसिंह ने सतीश को प्रणाम भी नहीं किया और रोष भरी आँखों से उसे देखता रहा। सतीश म उसकी उपेक्षा की और यही सोचता रहा कितना मूर्ख है यह उजडा हुआ जमीदार। घर पर खाने का नहा है, कर्ज चढा हुआ है, दुनिया भर के समझदार जमींदार अपनी आवश्यकताएँ बटोर कर नये जमाने के साथ चलने की कोशिश कर रहे हैं, अपनी पूँजी का नये ढग से उपयोग कर रहे है लेकिन यह जमींदार अभी भा वही टूटा हुआ सपना फूटी खपरी की तरह सिर पर ओढे घूम रहा है, यह जालिम सरपच बनेगा, न्याय करेगा? उसने सिपाहियो की ओर मुसकरा कर देखा। सिपाहियों ने प्रणाम किया था और इस ढग से सतीश को देखा था कि वे मानो कह रहे हों—क्या कहें बाबा फँस गए हैं, भूखे पेट सिपाहगीरी कर रहे है, आप तो भाग्यवान थे कि छोड आये, हम अभी फँसे हैं, क्या करें?

सतीश सोच रहा था कि आखिर इसकी गुंडागीरी की—ताकत तो ये सिपाही ही हैं न। वह कभी इनके खिलाफ उनको, कभी उनके खिलाफ इनको तयार करता रहता है और ये सिपाही जब तक इस तरह तैयार होते रहेंगे तब तक वे स्वय इस जालिम की गुंडागीरी के आतक से मुक्त नहीं हो पायेंगे और दूसरों के लिए आतक बनते रहेंगे। वह यह भी जानता था कि महीपसिंह हारने पर गुंडागीरी भी कर सकते हैं

लेकिन गुंडागर्दी नहीं करेंगे, किसी और तरीके से बदला लेंगे।

वोट पड़ चुके थे, गणना हो रही थी, सभी लोग सांस रोक कर फल की प्रतीक्षा में थे।

'सतीश तिवारी विजयी हुए', घोषित होते ही तहलका-सा मच गया। जो लोग सतीश के विरोध में तमाशा देखने आये थे वे दुम दबा कर भागे। सतीश के हिमायतियों ने जय जयकार किया।

कुंजू बाँसुरी पर राग अलापने लगा। रामकुमार छुट्टी लेकर आया था। उसने अपना नाम तो पहले ही वापस ले लिया था, खाली सतीश की हार का तमाशा देखने आया था। साइकिल उठाई और भागा वहाँ से। एक आदमी ने टिपारा मारा—'अरे रामकुमार जी, पीछे कैरियर पर दीनदयाल बाबा को भी लेते जाइए।' दीनदयाल लजाये से महीप सिंह के पास खड़े थे। महीपसिंह अपनी झेंप मिटाने के लिए आगे बढ़े और सतीश की पीठ पर हाथ फेरते हुए बधाई दी। सतीश की इच्छा हुई कि वह महीपसिंह का हाथ झटक दे—कमीना पीठ पर हाथ फेर रहा है, अभी भी मेरा मालिक बन रहा है। लेकिन उसने यत्न किया और महीपसिंह की आँखों में आँखें मिला कर उन्हें धन्यवाद दिया। महीपसिंह की आँखें अजब प्रकार की क्रूरता से चमक रही थीं मानो चुनौती दे रही थीं कि अब देखना, और सतीश की आँखों में उसका जवाब था देख लूँगा।



## : १७ :

फागुन का महीना पूज रहा था, सारे वातावरण में खुलापन आ गया था। आमों में बौर ओर के लद थे और हवा उनकी सुगंध उड़ाती दूर दूर तक उड़ जाती थी—लगता था कि इस साल आम की फसल अच्छा आयेगी। फसलें पक रही थी—कुछ पक भी चुकी थी जो कट रही थी, खलिहान डाठों से भरने लगे थे और अन्न की उन्मित गन्ध सन्नाटे के बीच फलने लगी थी। पगडंडियाँ घर लौटते परदेसियों की प्रीति से रग उठी थी।

दोपहर ढल रही थी, खेतों पर ओर-ओर से लौटती हुई हवा साँप की तरह फन पटक पटक कर धीरे धीरे शान्त हो रही थी। कुजू अपने खेत को देख रहा था, अभी उसे पकने में दस बारह दिन की देर है। मटर तो वह काट चुका है, दूसरे छोटे-छोटे दो खेत भी अभी कुछ देर से ही पकने वाले थे। वह खेत की मेड पर स्थित आम के नीचे खड़ा होकर बाँसुरी म फाग का एक राग गा रहा था, वह राग तेज हवा बिखेरती रही। लेकिन अब मन्द होती हुई हवा उसे सहेज कर सतीश के खेत में काम करती हुई बदमी के पास तक पहुँचा दे रही है। बदमी चुपचाप और मजदूरिनो के साथ तन बटोर कर काम कर रही हैं लेकिन मन चचल हिरन-सा कुलाचें मारता हुआ खेता म दौड़ रहा है।

एक मजदूरिन पूछती है—'कैसा लग रहा है रे बदमी। सुन बुला रहा है।'

'हिश हरजाई कहीं की', बदमी चौंक कर जवाब देती है और सारी मजदूरिनें खिलखिला कर हँस पड़ती है। मजदूरिनो में नाग्रेसी हरिजन नेता जग्गू की नयी प्रवोह भी है। नेता जग्गू कस्बे जा रहे हैं, वे गाँव के गाडइत भी है। कस्बे जाने के समय सतीश के खेत के पास आते है और वह चौताल गाती हुई मजदूरिनो का नेतृत्व कर रही है—

चौताल की कड़ियाँ मस्त हवा के आँचल में लहरा रही हैं—

'बहू' जग्गू पुकारते हैं।

बहू रुक कर बिना बोले सुनती है—

'बहू, मैं कस्बे जा रहा हूँ, देर से लौटूँगा, तुम यहाँ से जाकर दीन दयाल बाबू के खलिहान से गोबरहा बटोर लेना और मैं देर से आऊँगा। हाँ, कल खाने को नहीं है, आज की मजूरी लेकर ही घर जाना।'

बहू सुनती रही और जब जग्गू की बात खतम हो गयी तो फिर खेत काटने लगी।

'क्या बात है जग्गू कस्बे कोई खास काम है क्या ?'

'अरे बाबा परसा फेंकू बाबा के इहाँ भागवत का होम है न, पनरी दोनरी लेने जा रहा हूँ।'

'हाँ हाँ, फेंकू काका के यहाँ भागवत की कथा हो रही है न, ठीक है ठीक है, शंख बज रहा है'

जग्गू चले गए। जग्गू नेता कैसा कैसा अनुभव कर रहे हैं पता नहीं लेकिन सतीश एक अजब तल्खी भरे स्वाद से भर गया। आजादी मिले कितने बरस हो गए। नेताओं ने कितने कितने सपने देखे थे और लोगों को दिखाये थे। गरीबों को, अनाथों को, अछूतों को नयी जिन्दगी मिलेगी, उन्हें खेत मिलेंगे उनके लड़के पढ़ेंगे लिखेंगे अफसर बनेंगे उनकी बहुएँ भी सम्मान और सुख की जिन्दगी बिता सकेंगी। उसे याद आया जयप्रकाश नारायण का एक भाषण जिसमें वे समाजवाद का अर्थ समझाते हुए कह रहे थे 'समाजवाद का अर्थ यही है कि सबको समान सुविधा मिले, गरीबों और अछूतों के पास भी मिट्टी का ही सही एक मकान हो, उनके पास कुछ खेत हों, उनके लड़के भी साफ सुथरे रह कर स्कूल जाएँ उनकी दवा का इंतजाम हो और जब आकाश में बादल घिरें तो उनकी भी बहुएँ राग अलाप उठें। कितना मोहक था यह भाषण और ऐसे ही कितने भाषण गांधी जी के, नेहरू जी के हे राम, भाषणों

॥ हमारा देश कब तक जियेगा ? इतने दिनों बाद भी आजादी क्या लायी ? जग्गू हरिजन जो बड़े-बड़े नेताओं के जूठे भाषण अपने मुँह में दबा कर हरिजन मढ़ली में फिरते थे, तिरंगा झंडा उठाये झोली लटकाये और उन भाषणों को अपने ढंग से उगलते थे और वे नेताओं के लिए वोट बटोर लाते थे—आज भी बटोरते हैं। वे ही जग्गू हरिजन आज भी गाड़ढ़ते हैं, पत्तल ढोते हैं, गोबरहे की रोटी खाते हैं और जिनकी औरतें आज भी मुरदार हँसिया लिये औरतों को बच्चा पैदा कराती घूमती हैं, जिनकी नयी-नयी बहू आज भी मजूरी करने पर ही मजबूर होती हैं और मालिकों के गाँव में जिसकी अस्मत आज भी उसी तरह खतरे में होती है, जो आज भी मजूरे हैं गाँवों के खेतों में या शहरों के कारखानों में। चें चें चें सुअरियों का एक झुण्ड निकल गया। सतीश ने देखा कि हरिजनों के कुछ नंग धड़ंग लड़के सूअर के झुण्ड के पीछे भाग रहे हैं कोशिश कर रहे हैं कि वे किसी के खेत में न पड़ने पायें।

हाँ ये ही हैं हमारे नेताओं की कल्पना के हरिजन बालक बड़े बड़े पेट निकले हुए, भगई लपटे हुए, नाक बहती हुई, हाथ में सुटकनी और आँखों में बहुत भय कि उनकी सुअरियाँ कहीं मालिकों के खेत में न पड़ जाएँ। हाँ, सभी बाभन उनके मालिक हैं—ये बाभन चाहे बाहर भीख ही क्यों न मांगते हों मिलों में दरबानी, चपरासगीरी और कुलीगीरी ही क्या न करते हों, रिक्शा ही क्यों न हाँकते हों,—चोरी डकैती ही क्या न करते हों, लेकिन गाँव में सभी हरिजनों के मालिक हैं सतीश व्यंग्य से मुसकरा पड़ा सरकार कहती है कि वह हरिजनों के लड़कों की मुफ्त शिक्षा की व्यवस्था कर रही है और उनकी नौकरियों के लिए विशेष सुविधाएं दी गयी हैं उनके लिए अलग सीटें बना दी गयी हैं ठीक है, सरकार यह सब कुछ कर रही है लेकिन जिन हरिजनों के यहाँ खाने को कुछ नहीं होगा वे अपने बालकों को मजूरी पर लगायेंगे या पढ़ने को भेजेंगे—वह देख रहा है छोटे छोटे बच्चों के सिरों पर मिट्टी

की खाँचिया लदी हैं, बोझे ल्दे हैं, हाथ में हल की मुठिया हैं, पीठ पर कपडा फटा है जिस पर धूप काली होकर जम गयी है। बच्चे किसी कदर देहात के स्कूल में चार पाँच तक पढ़ते ह फिर अपने पेशे पर लौट आते हं, मुश्किल से कोई मिडिल स्कूल या हाई स्कूल तक जा पाता ह। इस दहात में तो ऐसा कोई नही दीखता।

चोय चोय चोय सतीश का ध्यान भग हुआ—कुछ चमार एक सूअर को लादे जा रहे ह।

चोय चाय चोय

पू उ ऊ शख बज रहा है सूअर और शख की आवाजें एक साथ मिल जाती है सतीश सोचता ह ठीक ही तो ह

सूअर काच कोच कर मारा जाएगा, वह चटो चिल्लायेगा फिर चमरिया को चढाया जाएगा, चमरिया खुश होगा, चमारो को आशीर्वाद देगा और हरिजन मडली जुट कर चमरिया का प्रसाद पाएगी

और भागवत कथा सुनकर फेंकू काका पवित्र होगे और और लोग भी जो कथा सुन रहे है और वे भी जो शख की आवाज सुन रहे ह, हाँ वह भी सुन रहा ह वह भी पवित्र होगा, और वह मुसकरा पडा। वाह रे फेंकू काका सारे गाव को पवित्र कर रहे ह। कल कथा बाँचने वाले पडित जी कह रहे थे कि वे ही कथा वाच रहे हं, वे ही सुन रहे हैं वे ही शख बजा रहे ह। बात यह ह कि फेंकू तिवारी तो खेत कटवा रहे ह घर में उनकी नयी बहू पडी पडी सोती ह। बेटा ह सो पढता ह शहर में। सो भागवत कौन सुने ? फेंकू तिवारी ने अपनी धोती लपट कर रख दी ह।

'तो भागवत सुनने की इतनी जल्दी क्या थी जब फुरसत होती तो सुनते। सतीश ने पूछा।

पडित जी ने कहा कि 'उनको फुरसत की बात नहीं थी मेरी

फुरसत की बात थी, उनका उद्धार हुआ हो या न हुआ हां मेरा उद्धार हो गया।'

'यानी।'

'यानी यह कि फेंकू तिवारी की माँ ने दस साल पहले पाँच रुपया उधार दिया था। वे मर गईं। वह रुपया बढ़ते बढ़ते पचीस हो गया। मेरी औकात कहाँ कि मैं रुपये जुटाऊँ। मैंने उनसे कहा कि बड़ा जस यज्ञ किया है भागवत सुन लीजिए, मेरा भी उद्धार हो जाए और आपका भी।'

पहले तो वे नहीं माने लेकिन जब देखा कि रुपया नहीं मिलने का, तो वे भागवत सुनने को राजी हो गए। सो वे भागवत सुन रहे हैं।'

पूऊऊ शंख बज रहा है और दूर जाते हुए सूअर का चिग्घाड़ हवा में हिल रहा है।

दोनों की आवाजों में कोई अंतर नहीं है वही अन्धविश्वास, भूत-पूजा, अकर्मण्य पुण्य भावना। चमार चमरिया पूजता है ब्राह्मण बरम पूजता है, क्षत्री गोंड़ पूजता है, मुसलमान जिन पूजता है और सच तो यह कि सभी एक दूसरे के भूत को पूजते हैं, और केवल भूत पूजते हैं चमरिया डीह बरम सभी भूत हैं और भूत-पूजा आज भी कम नहीं हुई है और सच बात तो यह है कि आजादी के बाद भी शिक्षा-दीक्षा का ठीक विकास नहीं हो पा रहा है। जो अपढ़ गँवार हैं वे भूत पूजते हैं और जो पढ़े लिखे हैं जिन्हें अपने शिक्षित होने का गर्व है, वे पैसा पूजते हैं स्वार्थ का भूत पूजते हैं, बेटे बेचते हैं, घूस लेते हैं, चोर बाजारी करते हैं देश के निर्माण के नाम पर विनाश की पटरियाँ बिछाते हैं गाँवों में भी कैसी तसवीर बदल रही है, लोग कैसे कैसे उस्ताद होते जा रहे हैं महीन मार करने वाले

एक लड़का चिल्ला रहा है, हाँ उसकी सूअर किसी बाभन के खेत में पैठ गयी थी। वह बाभन मार रहा है—'साले मेरे खेत में तेरा सूअर

घसे आ गया ? हालांकि उस सूअर ने खेत का कुछ नुकसान नहीं किया है, लेकिन यह बाभन उसे मार रहा है—शायद इस छोकरे के भाई-बहन ने इस बाभन के यहां काम करने से इनकार किया होगा। बाभन गरज रहा है—साले मेरे खेत में पाँव रखा तो टांग तोड़ दूँगा। सतीश सोचता है सारे ही खेत तो इनके पराये हैं, सारी जमीन पराई है कोई खेत कोई बगीचा इनका नहीं है, केवल रास्ते इनके हैं। हमेशा चलते रहें कहीं न बैठें न सुस्तायें कहाँ जायें ये ? आजादी के बाद भी कोई जमीन इनकी अपनी नहीं हो सकी।

जमींदारी टूट रही है ये खेत कहां जा रहे हैं ? पैसे वालों को खेत मिल रहे हैं पैसे वालों को व्यापार मिल रहा है मकान मिल रहा है, दूकान मिल रही है, चुनाव के लिए टिकट मिल रहे हैं पद मिल रहे हैं, शिक्षा मिल रही है दवा मिल रही है बाबू महीपसिंह जिला बोर्ड के सदस्य बनते हैं सरपंचों के लिए उठते हैं और ये हरिजन कहाँ जायं ?

पेट पालन के लिए ये बेचारे भाग भाग कर बाहर जा रहे हैं कालरी में जा रहे हैं सेना में जा रहे हैं, कारखानों में जा रहे हैं और वहां से लौटते हैं तो कुछ बदले हुए से और गाँव के लोग इनका मजाक करते हैं गाली देते हैं कि ये साले नीच जाति के लोग बेमान होते जा रहे हैं बात ही नहीं सुनते, मजदूरी अधिक माग रहे हैं, काम पर नहीं आते नखड़े करते हैं

बात सच है कि अब वे मजदूरी अधिक माँगते हैं काम पर मुश्किल से आते हैं। उनके घरों के लड़के भाग भाग कर बाहर जा रहे हैं मजदूरों की संख्या कम हो रही है। सो तो होगी ही काम करने के लिए मुश्किल से आयेंगे ही। मजदूरी भी अधिक मांगेंगे ही—तो भी क्या मजदूरी मिलती है उन्हें ? आज भी हलवाहा को पचीस-तीस रुपये महीने मिलते हैं और औरतों बच्चों को आठ आना रोज। महगाई कितनी बढ़

गयी है अन्न का दाम तो चौगुना-पचगुना वसूल करेंगे लोग और हलवाहा को दूनी मजदूरी देने में उनकी छाती फटेगी। ये ही मजदूर जब शहर में जाते हैं तो स्टेशन पर सौ कदम सामान ढो देने का आठ आना, एक रुपया ले लेते हैं और बाबू लोगों से डटकर झगड़ा भी कर लेते हैं, मकानों में, दूकानों में काम करते हैं तो बड़ी मान मनुहार से काम करते हैं और बाबू लोगों की बाबूगीरी झड़ जाती है सदियों का संस्कार साथ नहीं छोड़ता लोग कहाँ से कहाँ चले गए, सब कुछ टूट रहा है विदीर्ण हो रहा है लेकिन अभी बभनई और ठकुरई लिए बैठे हुए हैं। शहरों में लोग मालिकों की गाली सुनेंगे और गांव में बाभन ठाकुर बने हुए बैठे हैं—शहरों में ही क्या, यहीं प्राइमरी स्कूल में हरिजन मास्टर आया है वह डंग से बाभनों ठाकुरों के बच्चों को मारता ही है लेकिन लोग चाहते हैं कि चमार-चमार ही रहें भाई भाई रहें, धोबी धोबी रहें, ये भले ही बाभन और ठाकुर न रह गए हों। ये लोग हरिजनों के बच्चों की पढ़ाई का मजाक उड़ाते हैं मानो इनको हलवाही करने के लिए ये हमेशा चमार बने रहें मैंने तो कई बार यह आवाज उठाई कि हल उठाओ और अपना काम खुद करो लेकिन अभी इनका ब्राह्मणत्व इनके चन्दन की तरह इनमें लिपटा है। सारे दुष्कर्म करते हैं ये लोग लेकिन हल जोतने में इनका सारा धर्म नरक में पड़ता है। जब गाँव में एक भी हरिजन नहीं रहेगा तब झख मार कर ये लोग अपना अपना हल खुद उठायेंगे लेकिन पता नहीं वह दिन कब आयेगा? अभी तो कोई आवाज नहीं सुनाई पड़ रही है

जग्गू को पताहू फिर चौताल का नेतृत्व करने लगी थी। गेहूँ की फसल हल्के हल्के फड़फड़ा रही था, शाम उतर रही थी

कुंजू की वंशी का धुन निखरती जा रही थी और उसका सारा दर्द बदमा की आँखों में उभरता जा रहा था, रह रह कर उसका आँचल हिलता था, केश बिखर जाते थे और वह उन्हें सँभालने के बहाने उस

दिया को देख लेती थी जिधर से बंसी की धुन पुकारती हुई आ रही थी दलती हुई तिजहर

फागुन की तिजहर महावीर को खदेड़ते हुए कुछ लड़के आ रहे हैं नेता है दर्लसिगार दर्लसिगार रंग से भीगा हुआ है और वह मास्टर सुगन की औरत जमुना के नाम पर कबीर गाता हुआ महावीर के पीछे पीछे दौड़ रहा है बात यो हुई कि वह सुगन मास्टर के घर के पास से आ रहा था तो जमना भौजी ताक में ही थी और लल्कार देकर रंग दे मारा और दर्लसिगार कबीर गाने लगा कुछ लड़के जुट आये तब तक महावीर दौड़ पड़े और दर्लसिगार ने ललकार कर खदेड़ लिया— देखो है महावीर दूबे। तुम्हारी बहन ने मुझे भिगा दिया—महावीर जानते थे कि मउगा परेशान करेगा व भाग। महावीर पागल भर गाँव वालों की हंसी मजाक का निशाना होते हैं। ऐसा मजाक के पद में होने के कारण लोग उन्हें खूब सताते हैं ये सब चिढ़ और गरियाते हैं इसलिए मजा भी खूब आता है—दूसरा आर सुगन मास्टर की पत्नी जमुना से पाला न मन पड़ता है किसी भी देवर का सहा सामना नहीं छोड़ती हैं। देवर तो देवर देवर के जहेन्। और ससुर लगने वालों को भी समान भाव से छेड़ती हैं वही च हड़ें सो एक बहुत घर पर उनके दरवाजे ▮ निकलते हैं मउगा दर्लसिगार भी एक निचारा है वह छिनार नवाब की तरह भागता है और वह औरतों का विशेष स्वर गाया करता है फागुन भर। मगर आज जमुना भौजी से न बच सका— रँग गया। दर्लसिगार हाथ में ... उठाये महावीर के पीछे दौड़ रहा है और कुछ लड़के ... ... गाते ... रहे हैं।

'... ... ... ... तो ... न होगा। ... दहि दे रहे हैं ... ... ... ... ... रहे हैं'

महावीर ... ... रहे हैं ... ललकार कर पूछा— क्या है, क्या है दूबे जी।

'अरे कुछ नहीं हो सतीश बाबू, 'ई मउगा है न, इसी को उदबेग बेधे हुए ह, ससुरा मेरे पीछे-पीछे दौड रहा ह !'

अरे जहाँ माल मसाला मिलेगा वहीं न लाग दौड़ेंगे।' सतीश ने मजाक किया।

'अरे अब तुहूँ के उदबेग लगने लगा सतीश बाबू, ई मउगा सार तो पीछे लगा ही ह '

सारी मजदूरिनें हँस रही थी, सतीश हँस रहा था और सबको ललकार रहा था।

महावीर अब दूसरी ओर भागे यह कहते हुए कि अरे सारा गाँव साला अधिरा ह, मेरे पीछे पडा ह। जहाँ का सरपंच तक अधिका हो उस गाँव का क्या कहना ? महावीर भाग कर खलिहान में चले गए। मटर जौ के डाँठ यहा वहाँ रखे हुए थे—महावीर मुड़की कटा कटा कर खलिहान में भाग रहे थे

शाम हो गयी थी, खेतो से डाँठो की ढुलाई शुरू हो गयी थी—खलिहान में यह दृश्य देखकर लोग उत्साहित हो रहे थे और मिल-जुल कर ललकार रहे थे। दीनदयाल शायद महीपसिंह के यहा से आ रहे थे, हँसकर मउगा को ललकारने लगे—अरे फागुन है महावीर राम, भागते काहे का हु, लडका का मन काहे नहीं रख देते हो।'

'अब ई हो साला आ गइले, आरे ए दीनदयाल तू ही काहे नाही मन रख देते, सौ दिन तो मउगा तुहार मन रखता ही ह।'

उधर से रामकुमार कस्बे से घर आ रहा था टन टन टन टन सायकिल बजाता हुआ ललकारा—

'हा हाँ, दूबे जी को आप लोग क्यो डाल रहे ह।'

'अब ई देखो ई हो अधिका आ गया सारे अधिका के आने की साइत आज ही बनी हुई है। ई हो कहा-कहाँ की जूठी हाँडी ढूँढने वाला सोसरलिस्ट आ गया।'

महावीर भागते जाते े और हर आदमी का जवाब देते जाते थे किसी की बात अनुत्तरित नहीं रह सकती थी।

मउगा दर्लसिंगार हाथ में गोबर लिए खाली ललकार रहा था। वह जानता था कि जहाँ गोबर फेंक दिया सारा खेल खतम हो गया। वह खाली खेल करने के लिए उनका पीछा कर रहा था

ठडी ठडी हवा बहने लगी थी, शाम उतर रही थी, चाँद आकाश में दिखाई पडने लगा था मजरियो की महक हौले-हौले बिखर ही थी और खलिहान को पाकड की नगी डाल पर बठी कोयल बोल रही थी

फागुन की यह शाम मस्त शाम, फसलो स भरता हुआ खलिहान और महावीर के पीछे गोबर लेकर दौडता हुआ दर्लसिंगार चारों ओर फूटता हुआ आपसी टुराव और सतीश खलिहान में आ गया था, देख रहा था अपने को, दीनदयाल को, दर्लसिंगार को रामकुमार को, महावीर को और बहुत से चेहरा को चुनाव के समय के सारे तनाव सारे घिराव सारे ठहराव एक पल को याद आ गए और सामने फागुन का यह क्षण उन्हें तोडता हुआ फल रहा ह कहाँ राजनीति का वह कुहरा। यह जीवन को खुली हवाआ का सौदय महावीर डूबे ह यही महावीर ह जो सर्दी के कुहरे से मारे हुए बुझी हुई अगीठी की तरह चेहरा लटकाए दीनदयाल का दया चाहते थे और कहाँ आज शात जल को तोडती उछालती लहरें उठाती हवा की तरह दौड रहे है और यह दर्लसिंगार जो चुनाव में नीचता पर उतर आया था आज इतना खेला करता घूम रहा ह।

छप्प। आखिर दर्लसिंगार ने महावीर का गोबर मार ही दिया और महावीर गाली देते हुए धूल लेकर दर्लसिंगार की आर दौड और अब दर्लसिंगार किलकारी मारता हुआ घँडरोज की तरह भागा गाँव की ओर महावीर ने खदेड लिया लडके लिहो लिहो करने लगे

रात एक अजब सूनेपन से शुरू हुई। सतीश पल भर के लिए

पुलकित हो गया—काश हमारे गावों की जिन्दगी भी ऐसी ही खुली होती हमेशा जीवन में ऐसे ही फागुन बहता रहता। मगर वह अनुभव कर रहा है कि यह खुलापन धीरे धीरे उड़ता जा रहा है। उसे याद आया अपने बचपन का फागुन। खिचड़ी शुरू होते ही सरसों की पीली रंगीनी उगते ही खेतों में, गाँवों में एक अटूट मस्ती छा जाती थी, फागुन आने के पहले ही आ जाता था। खेत, पगडंडियाँ, गाँव सभी में एक अल्हड़ मस्ती उड़ने लगती थी, गीतों की फसल झूमने लगती थी और अब धीरे धीरे सब खतम हो रहा है, किसी को राग रंग की फुरसत नहीं, नाचरंग को लोग बेकार की चीज समझने लगे हैं। लड़के पढ़ने लगे हैं, बाहर से आते हैं तो अधकचरा शहरीपन लेकर आते हैं। वे समझते हैं कि देहाती राग रंग असभ्यता है, दहातीपन है, वे सिनेमा के गाने गायेंगे, होली नहीं। वे शरीफ बनने के चक्कर में तटस्थ द्रष्टा हो गए हैं, साबुन से धुले उनके शरीर पर कोई गोबर न डालने पाये और देहात के लोग हैं जिन्हें अब अपने काम से फुरसत ही नहीं मिलती, अपने व्यवसाय धंधे और खेती बारी के कामों में पिसते रहने और एक-दूसरे से बढ़कर चालाकी करने में उनमें होड़ मची है। अब ये जिन्दगी के राग रंग को अड़ुआ और निकम्मा का काम समझने लगे हैं, सौंदर्य और आनन्द इनके हाथ से छूटता जा रहा है जो पहले के लोगों की अभाव-ग्रस्त जिन्दगी में भी एक उल्लास और मूल्य भरता था। अब तो एक दूसरे की जमीन लिखाने में एक दूसरे का खेत बढ़कर जोत लेने में, एक-दूसरे से बढ़कर सचय करने में, स्वार्थ साधने में, अपकार करने में, एक-दूसरे को पीछे छोड़ना चाहते हैं, लोग पूरे बनिया हो गए हैं, कुली हो गए हैं। बनियागिरी और कुलीगिरी ही इनके जीवन का मूल्य बनती जा रही है और इनके अपढ़ या पढ़ते हुए बच्चे इनकी छाया में व्यक्तित्वहीन होकर इनकी बनियागिरी और कुलीगिरी के निर्जीव यन्त्र बन जाते हैं पहले जो पर्वों त्यौहारों और गाँव के उत्सवों में सम्मिलित

रूप से भाग ऐने या उत्साह या यह आग मरयहीन मान लिया गया है। लोग इन अवसरों पर दो क्षण के लिए फर्ज अदायगी के तौर पर शामिल होते हैं और सब भी उनका मन अपने स्वार्थ में ही अटका रहता है। लड़कों की शादी हो रही है पर पट्टीदार खेत में काम कर रहे हैं और शाम को बारात आने के समय फर्ज अदायगी के लिए पट्टीदार के यहाँ जाते हैं, हाजिरी देकर चले आते हैं और हर आदमी अब अपने अपने उत्सवों के थामों का बोझ अकेले कंधे पर उठाये छटपटाता है ये उत्सव उत्सव न रह कर अब बोझ बनने जा रहे हैं, सामूहिकता एक-एक में बट कर इकाइयों में छटपटा रही है।

अब यही देखिए फागुन बीत रहा है प्रकृति अभी भी उसी उल्लास से आती है, मगर आदमी उल्लास से उसे भोग नहीं पाता पूरा फागुन बीत गया ठंडा ठंडा-सा जीवन की एकरसता कहीं से टूटी ही नहीं, वह नवल काम में डूबी रही। मगर आज एकाएक जमुना भौजी ने पूरी एकरसता पर रंग उडेल दिया और रंग एक से दूसरे तक दूसरे से तीसरे तक बिखरता फैलता रंगता चला गया और जैसे एक ठहराव फूट गया, एक खुलापन आ गया, काम के बीच एक महक आ गया, कई विरोधी धाराएँ एक जगह मिल गइं, हँसी-खुशी की उमंगों में खेत खलिहान नहा कर हल्के हो गए मगर कहाँ टिकता है यह देर तक

वंशी बज रही है मगर रुक रुक कर, शायद अब बन्द हो रही है चाँदनी छिटक गयी है रात की मादकता उभर उठी है डाँठ ढोये जा चुके हैं और खलिहान में बोझ पीटे जा रहे हैं मजदूरी देने के लिए— मजदूरिनें मजूरी के लिए बैठी हुई हैं न ले जाएँगी तो कल सुबह घर के लोग क्या खायेंगे ? रात काफी हो गई है बच्चे शायद सो गए होंगे— बदमी सतीश से कहती है कि मजूरी कल ले लेगी उसका छोटा भाई अकेले होगा। और वह चल देती है चाँदनी में एक छाँह तरती हुई जा रही है बाग के बगीचे में डूब जाती है उसका मन पत्ते की तरह

काँप रहा है कि अब न यहीं से बंशी बज उठे हाय रे यह बंशी तो उसके भीतर ही बज रही है कब से बज रही है फागुन है सभी सबसे मिलते हैं मैं सबसे बोलत बतियाती हूँ, मगर उसी से बोलने बतियाने में क्यों मर जाती हूँ लगता है सभी मुझी को देख रहे हैं हवा मेरा नाम लूट कर सारे जर-जवार में छीट आती है, चिड़िया ताना मारती है फसल कानाफूसी करती हुई खिलखिला उठती है क्यों न इन बाभना को अपनी चहेती चमाइनों से कस मवक सामने हँस हँस कर बोलते हैं, भद्दा भद्दा मजाक करते हैं और वे भी कसे इठला इठला कर हँस हँस कर हँसा दिला दिखा कर जवाब देती हैं। दुनियाँ जानती है उनके सम्बन्धों को लेकिन व बवंडर की तरह सबकी आँखों म धूल झोंकते चक्कर काटते निकल जाते हैं लेकिन मुझ मुई को पता नहीं क्या हो गया है कि उनसे मिल नहीं पाती, उन्हें देखती हूँ तो बचती हूँ कि कहीं मुठभेड़ न हो जाए। व मुझे पुकारते रहते हैं और मैं भागती रहती हूँ कि कहीं हमारा रिश्ता बदनाम न हो जाए बदनाम तो हो ही गया है। बदमी कब तक यह जहर पियेगी ? हाँ कब तक यह जहर पियेगी ? जी होता है एक दिन सारी लोकलाज उड़ा कर उनकी गोद में समा जाऊँ और समा कर फिर न उबरूँ

बदमी की साँस तेज चलने लगी, मन्द की भीनी भीना गंध साँसों में फल गयी यहाँ है तियारी, कहाँ है सिवारी ! अब तो बंसी भी चुप है, अरे यही तो खेत है उनका, यहीं भी यहीं है बड़ा जुलुम किया दिन भर तो पुकारता रहा जब मेरे आने का वखत हुआ तो कहीं चला गया

और बगीचे की घनी छाँह में से निकल कर बदमी फिर खुली चाँदनी में आ गयी और धीरे धीरे हवा के एक थके हारे झोंके की तरह चलती-चलती अपने मकान में जाकर खो गयी जहाँ उसका बाप अपने छोटे बेटे को लिए इन्तजार में बैठा था—हाँ बदमी को अभी रोटी भी सकना थी। वह चूल्हा जलाने लगी और पास की बँसवारी से एक

मेंढक के दयनीय स्वर में चोलने की आवाज आती रही, शायद उसे कोई साँप पकड़े था

चाँदनी चारो ओर ऐसी फली थी मानो कोई घड़ा फूट गया हो जिसका जल बिखर गया हो, जिसे देखा जा सकता है पिया नहीं ।

× × ×

माई,

'हाँ बटी'

'इस साल होली पर बाबू घर नहीं आयेंगे ।

सलोना चुप रही ।

बोलती क्या नहीं माई ।' पारवती जिद करती हुई बोली ।

'चुप रहो बेटी सो जाओ ।'

सो क्यों जाऊँ माँ तुम जवाब क्यों नहीं देती ?'

वेटी क्या जवाब दूँ, लगता है नहीं आयेंगे, परसों ही तो होली है अब क्या आयेंगे ?

सलोना की आँखें भर आइ—उसने चाँदनी म एक बार पारवती को देखा—भरी पुरी लड़की, अग अग से जवानी फूटती हुई, गोरा रग, सुदर चेहरा ठीक बाप को पड़ी है पगली

'क्या देख रही हो माँ, इस तरह घूर घूर कर ?'

'क्यों रे अब देखने भी नहीं देगी ? दो एक साल म ससुरे चली जाएगी तब, तब किसे देखूँगी ?

दोनो ने एक साथ लम्बी साँस भरी

अरे हाँ रे माई आज मरदे मेहरारू कऽ फगुवा हो रात भर । सतीश काका के इहा, काकी ने बुलाया है जाऊँ ? हाँ देख शुरू भी हो गया है '

'जाओ, मगर अकेली चली जाओगी ?'

'अरे माई गाँव में कैसा डर ? अकेली चली जाऊँगी, सिर नहीं फोड़ दूँगी जो टकरायेगा मुझसे ?

'अच्छा-अच्छा जा, बड़ी वीर बनी है।'

पारवती चली गई और माँ एक भारी साँस लेकर खाट पर लेट गयी—हे ईश्वर

पारवती के बाबू नहीं आये, लिखा है इस साल होली पर नहीं आयेंगे, कुछ रुपये इकट्ठा कर रहे हैं परवतिया के बियाह के लिए। कितनी बड़ी दीखती है। अभी है तो चौदह साल की ही, मगर कितनी बड़ी लगती है, बाप की ही डाँडी पाई है हमेशा डर लगा रहता है बियाह हो जाए तो जी हल्का हो। लड़की की जात कहीं पाँव ऊँचे खाले पड़ें नहीं मेरी बेटी ऐसी नहीं है ऐसी नहीं है हे भगवान! पिछले साल भी होली पर नहीं आये थे, लिखते हैं कि आने-जाने में बेकार में सौ रुपये खर्च हो जाते हैं, इतने में तो कुछ काम हो जाएगा। पता नहीं कैसे होंगे ? बचपन में इतना खाया पिया आराम किया और अब दिनरात घर के लिए कारखाने में खटते होंगे टागी लड़की का विल्ली है, कोई साँप भी हो सकता है हाय, इसी टाटी में से वह साँप आया था—मेरी बच्ची को डँस गया था दीवारें गिरी हुई हैं, कब तक गिरी रहेंगी खाने को तो जुटता ही नहीं मकान कैसे उठेगा ?

सलोना ने दीवार की ओर से मुँह फेर कर करवट ली और तन पर का लुगा परपरा कर थोड़ा और फट गया। सलोना ने निराश आँखों से लुगे की ओर देखा—डेढ़ साल तो हो गए इसे पहनते कितना चर बेचारा परसों होली है किसी के पास नये कपड़े नहीं हैं कुछ रुपये कलकत्ते से आये तो हैं होली के लिए मगर क्या उन्हें होली के लिए खर्च कर देना चाहिए। कर्जा-पताई, मालगुजारी कितनी चीजें तो

चुकानी है देखा जाएगा नंगा तो नहीं न रहा जा सकता, कुछ न कुछ तो करना ही होगा अभी तो मटर कटी है खेत के गेहूं पके नहीं हैं होली के लिए क्या होगा ? दूबे जी से कहूँगी कि कल थोड़ा गाहूँ पाटकर ले आवें, पीस पाम कर होला का तो काम निबटाया जाए फिर देखा जाएगा

फाग की कड़ियां सूनी रात में फल रही थी । सुगमन बहू की आवाज यहा से सुनाई पड़ रही है बड़ी गजब की मेहरारू है जबरजस्त दिल पाया है बड़ा अच्छा गाती है मेरी परबतिया भी गाने में कम नहीं है मगर उसकी आवाज सुनाई नहीं दे रही है अरे इतनी औरतें गा रही हैं किसकी किसकी आवाज सुनाई दे !

लड़कों की एक टोली गली की ओर से भागी आ रही है, अर्जुन भी उसम सम्मत बटोर रहे हैं सब पता नहीं आज किसका किसका गोहरा साफ करेंगे सब । लेकिन अब लड़कों म उतना जोस नहीं रहा महीने में दो एक बार निकलते है सम्मत बटोरने के लिए और अब तो सम्मत गाड़ने म भी कोई रस नहीं लेता अपना अर्जुन थोड़ा उत्साही जरूर है वही लड़कों को ले गया होगा पढ़न में उसकी बड़ी तबियत लगती है । वे लिखते हैं कि म अर्जुन को अपना तन बेंच कर पढ़ाऊंगा हाय ईश्वर किस किस चीज के लिए तन बेचेंगे ? अर्जुन बड़ा समझदार है, वह अक्सर कहता है—भउजी घर की हालत देखी नहीं जाती अब मैं नौकरी करूँगा । भइया तो प्रेमवस लिखते रहते है लेकिन घर की हालत मुझसे नहीं सही जाती और सलोना समझाती है अरे इंटरेंस सा पास कर लो बाबू !' और अर्जुन अनमना हो जाता है—मान लो कि वह यहाँ स इंटरेंस भी पास कर ले तो आगे क्या होगा ? क्या शहर जाकर पढ़ने की औकात है उसको ? और यहाँ भी भाटपार स्कूल की हालत अजीब ही है अब टूटे तब टूटे, अभी ता आठवीं तक है बाद में पता नहीं क्या हो ?

गली में भगदड़ मच रही है, लड़के जोर से भाग रहे हैं और फॅकू बाबा गाली देते हुए लाठी लेकर पीछे-पीछे दौड़ रहे हैं। लड़कों ने उनका गोहरा उजाड़ दिया है लेकिन फॅकू बाबा तो सम्मति में पड़ा हुआ अपना गोहरा निकाल लेंगे बड़े विकट जीव हैं। पिछले साल लड़कों ने उनका कटा हुआ पेड़ डाल दिया था, वे बाप-बेटा मिलकर पेड़ निकाल लाए। नींद आ रही है।

× × ×

पारवती घर से निकली चारों ओर रास्ते ही रास्ते दिखाई पड़ रहे थे साफ सुथरे, चाँदनी में चमकते हुए वह किधर जाए? यद्यपि उसकी माँ उसे चौदह साल की बताती थी लेकिन उसकी उमर सोलह साल से कम न थी। पारवती बहुत ही स्वस्थ होने से और भी बड़ी दीखती थी। उन्माद उसके अंग अंग से फूटता था। उसका सुन्दर गोरा चेहरा बड़ा ही नशीला था। उसे देखने ही रसिक लोग एक बार ठमक जाते थे लेकिन जानते थे कि पारवती जितनी ही सुन्दर है उतनी ही मुँहफट। थोड़ी-सी बात पर केवल सात पुश्त ही नहीं बखानेगी वरन ईंट पत्थर से सर भी फोड़ देगी। लेकिन लोगों में यह भी मशहूर था कि पारवती मनचली है, इस द्विधा में लोग पारवती के पास खड़े होते थे और उसका रुख देख कर या तो भाग खड़े होते थे या लहरा उठते थे। पारवती अपने को वश में नहीं पा रही थी उच्छृंखल हवा के झोंके की तरह भटक रही थी कौन रोके उसे? घर पर माँ ही है, पिता घर पर नहीं, महावीर की तो क्या खतियानी। अर्जुन उम्र में उससे बहुत बड़ा नहीं था समवयस्कों की क्या चिन्ता? कौन रोके इस झोंके को? वह चाहती थी किसी से टकराना। वह चाहती थी कि कोई पेड़ उसे रोक कर ठहरा उठे अपने में उलझा कर। वह अपने को सँभाल नहीं पा रही थी चलती थी तो जैसे टूटती हुई, बिखरती हुई, राहों को मसलती हुई, दिशाओं को मथती हुई। दो कदम चल लेने के बाद झटके से किसी ओर

देख लेती थी और यों ही आँचल झटके से खींच कर फिर दे मारती थी—लोगों में इसके सम्बन्धों को लेकर बड़ी-बड़ी चर्चाएं थी, गाँव के कई लोगों के किस्से साथ गुँथे हुए थे। कई बार जमुना भौजी के साथ होने वाले झगड़ों में इस रहस्य का उद्घाटन हुआ था। पर, ऐसे झगड़ों में सचाई का पता लगा लेना हँसी खेल नहीं  तो भी तो पारवती में ठहराव नहीं है यह बात साफ थी और इन नामों में एक नाम था हँसिया हरिजन का जो सत्रह अठारह साल का स्वस्थ सुन्दर युवक था और पारवती के यहाँ ही हलवाहा था। पारवती किसी से प्रेम नहीं करती थी, उसे तो शारीरिक भूख का उन्माद था यह यहीं ठंडा होना चाहिए। हँसिया अपना ही हलवाहा था चौबीस घंटे का सम्पर्क और चमार होने से क्या हुआ। कहीं कोई बात कहेगा भी नहीं—हलवाहा है। बाभन ठाकुर तो मजा भी लूटेंगे और थोंकते भी फिरेंगे।

औरतें गा रही थी और पारवती गली से निकल कर सोच रही थी किधर जाए। कहाँ होगा हँसिया इस समय? कहीं नहीं चूल्हे भाड़ में जाए हँसिया। जमुना भौजी का स्वर उभर रहा था हँसिया खलिहान में होगा, सोया होगा, नहीं, उसने आज बगीचे में बुलाया था वह वहां बैठा होगा। नहीं वह वहाँ नहीं जाएगी? वह फाग गाने के लिए चल पड़ी लेकिन पता नहीं कैसे पाँव बगीचे की ओर चल पड़े। उसने दो काछें मार लिया था और चदरा से सिर और तन ढक लिया ताकि मालूम न हो कि कोई औरत जा रही है

हँसिया पेड़ की आड़ में छिपा इंतजार कर रहा था। पारवती के पहुँचते ही उसे अँकवार में भर लिया और सरपतों से घिरे एकान्त की ओर ले गया

पारवती बहिनी, अइसे कब तक चलेगा?'

'जब तक चलेगा, चलेगा

'नहीं पारवती बहिनी, हम तो कहते हैं कि एक गाँव में निबाह नहीं हो सकता, कहीं भाग चलें हम।'

पारवती हाँफ रही थी, उसे इस उत्तेजना में कुछ भला-बुरा नहीं सूझ रहा था। 'कहाँ ले जाओगे?'

'कहीं ले चलूँगा, कहीं दूर भाग चलेंगे। मैं मजूरी करके अपनी रानी को खिलाऊँगा सेवा करूँगा' और और दोनों उत्तेजना में कुछ और नहीं सोच पा रहे थे, एक भँवर था जिसमें गोल गोल चक्कर काट रहे थे, साँसें टकरा रही थीं। दूसरा क्षण होता तो पारवती कहती—मार मरकीलवना र, तेरी साँस से सूअर की गंध आ रही है लेकिन वही सूअर की गंध उसके भीतर के पशु को इस समय आँच में तपा रही थी। वह हँसिया से लिपट गई। हँसिया ने उसे अपने मजबूत बाजुओं में इतने जोर से जकड़ लिया कि पारवती की नस-नस चिटक जाये

'आओ भाग चलें।' हँसिया रह रह कर टूटी आवाज में फुसफुसा रहा था।

'नहीं, नहीं, नहीं, भागेंगे नहीं।'

'क्यों, इहाँ कब तक चलेगा?

और पारवती और जोर से लिपट जाने के सिवा और कुछ नहीं कह पाती थी। हँसिया ने हाथ पकड़ा और खींचने लगा—'चलो भाग चलें।'

पारवती नहीं नहीं करती हुई भी खींची चली जा रही थी

'कौन है?'

और दोनों इस आहट से चौंक उठे। पारवती का सारा नशा एकाएक झड़ गया। वह जोर-जोर से हँसिया को मार-मार कर बोलने लगी—छोड़-छोड़ अभागे, नहीं तो मैं तेरी जान ले लूँगी, कमीने मुझे कुछ ऐसा वैसा समझा है क्या?

और रामबहादुर ने लपक कर हँसिया को पकड़ लिया और लात

से मारते हुए कहा—क्या रे साले तेरी यह हिमाक्त कि बाभनों की लड़कियों की ओर आख उठाये—

हँसिया गुर्रा कर बोला—'मत देखो रामबहादुर बाबू, हाथ उठाओगे तो ठीक न होगा।'

क्या ठीक न होगा रे साले, तू क्या कर लेगा। कहते हुए राम बहादुर ने एक थप्पड जोर से हँसिया के गाल पर मारा, हँसिया तिल-मिला उठा और अपने को सँभाल न सका और रामबहादुर को उठा कर लद पटक दिया। रामबहादुर जोर से चीख उठा और चिल्लाया दौड़ो लोगो दौड़ो

तमाम लड़के यहाँ वहा बिखरे हुए थे। लड़के सम्मत बटोरने निकले थे। भाटपार के एक तिवारी के खेत की पलान उठा कर ला रहे थे सम्मति में डालने के लिए। तिवारी को मालूम हुआ और कई पहलवान भाई लाठी ले लेकर दौड पड़े। लड़के भाग कर यहाँ वहाँ छिप गए। राम बहादुर भी छिपने के लिए ही सरपत म आया था कि अचानक यह देखा। उसकी चीख सुनते ही तमाम लड़के यहा वहाँ से दौड़े। हँसिया को अब स्थिति का भान हुआ, भागा लेकिन चारो ओर से लड़को ने घेर कर उसे पकड़ लिया। पारवती चिल्ला रही थी—हरामखोर सुअर-मार, मेरी इज्जत लेना चाहता था म तो आई थी डोल्चाल होने यह मरकौननवा इधर छिपा था जबरदस्ती खीच लाया।

लड़के हसिया को पकड़ कर मारने लगे। पकड कर बसी के दरवाजे पर लाए। मिनसहरा फूट रही थी हो हल्ला सुनकर फाग बन्द हो गया। औरत मरद सभी बसी के दरवाज की ओर उमड पड़े। पारवती दरवाजे पर बनी बठी कहर रही था कि रामबहादुर भइया न पहुँच गए होते तो इस मरकौनवना ने मरी इज्जत ही लूट ली होती।

और हसिया लात खा रहा था, जो आता था चार लात मारता

था लेकिन वह कुछ बोल नहीं रहा था, चुपचाप लात खाता हुआ सारा इलजाम अपने ऊपर ओढ़ रहा था।

उसकी बूढ़ी माँ दौड़ी हुई आयी। हँसिया की हालत देखकर छाती कूटने लगी। वह उसके ऊपर बिछ गयी।

महावीर मरा हुआ-सा चेहरा लटकाये चुपचाप ओसारे में बैठे थे। उन्हें यह सारा हो-हल्ला बड़ा बुरा लग रहा था। इससे तो-बदनामी ही बढ़ेगी, लोग जुट कर मजा ले रहे हैं, लेकिन वह इस बाढ़ को कैसे रोकें, कुछ बोलें तो लोग कहेंगे कि इन्हाने ही छूट दे रखी है

बामनों का खून खोल रहा था कि चमार के लड़के की यह हिमाकत कि बामन की लड़की से प्रेम करे, साले को खत्म कर देना चाहिए।

'साला जबरदस्ती करता है, यह हिमाकत !' जमुना भौजी मुसकराती हैं। आसपास के लोग उनकी मुसकान पढ़ते हैं। जमुना भौजी देखती हैं, यह हरजाई कैसी बैठी सिसक रही है और यह बेचारा चुपचाप बैठा मार खा रहा है, सत असत कुछ नहीं बोलता। पारबती की बात पर किसी ने विश्वास नहीं किया कि हँसिया जबरदस्ती उठा ले जा रहा था। यह साँठ गाँठ तो कब से चल रही है सभी जानते हैं लेकिन आग लगाने के लिए इतना ही काफी है कि चमार के लौंडे ने बामन की छोकरी से यह सम्बन्ध ही क्यों जोड़ा।

तड़ातड़ तड़ातड़ मार पड़ रही है और महावीर सोच रहे हैं कि इस खेत-खलिहान के मौसम में ये लोग हलवाहे की जान लेकर रहेंगे। मगर मना करें तो कैसे करें ?

और जैसे एक आँधी आ गयी

'क्या हुआ अगर मेरे भाई ने एक बामन की लड़की से भला-बुरा किया ?' लोगों ने चौंक कर देखा—हँसिया की बहन लवँगी है। चमाइन है, लेकिन कमबख्त जैसे भरी हुई घटा हो। चमार का खून, खून नहीं है ? बामन का ही खून, खून है। हमारी कोई इज्जत नहीं होती क्या, बामनों की ही इज्जत होती है ?

लवँगी जग्गू हरिजन की ओर घूम गई जो चुपचाप मुँह लटकाये खड़े थे, जैसे हँसिया ने बहुत बड़ा गुनाह करके हरिजन मंडली की नाक कटा दी हो। वह उनसे बोली—'क्यों नेता जी, आप चुप क्यों हो? कल तक झंडा लिए घूमते रहे और वोट दिलाने के लिए लेक्चर झाड़ते रहे कि अब देश अजाद हो गया है सभी बराबर हैं, सबको खेत मिलेंगे सबको इज्जत बराबर होगी और आज आपका लेक्चर आपके मुँह में चला गया है? जब चमरौटी की तमाम लड़कियों पर ये बाबा लोग हाथ साफ करते हैं तो कोई परलय नहीं आती और कोई चमार बाभन की लड़की को छू दे तो परलय आ जाती है।'

'चुप रह, चुप रह हरजाई कहीं की। बड़ी बक बक करेगी तो मार मार कर तेरा भी भुरकुस निकाल देंगे। कई लोग एक साथ तड़पे।

लवँगी ने तड़पने वाले लोगों की ओर जलती आँखों से देखा और उसके सामने कई चेहरे पड़े जिन्हें देख कर उसे उबकाई आ गयी। तड़प कर जग्गू से बोली—'हरिजनों के नेता, मैं तुमसे फरियाद करती हूँ कि वोट लेने वाले नेताओं से जाकर कहो कि हमारा खून-खून नहीं है, हमारी इज्जत इज्जत नहीं है, तो हमारा वोट ही वोट क्या है? ये देखो जग्गू नेता, तुम्हें याद है कि जब मुझे दर्लसिगार बाबा ने पकड़ कर बेइज्जत करना चाहा था तो मैं फरियाद के लिए कहाँ कहाँ नहीं रोई, लेकिन सबने मजाक करके टाल दिया था। और तुमने भी कहा था कि जाने दो बाबा लोगों से कौन लगे? आप पूछ दीनदयाल बाबा से पूछिए कितनी बार काम करते समय मेरी बाँह पकड़ कर घसीटा है इन्होंने और मैं भीतर भीतर रोकर चुप हो गई हूँ यह जानकर कि मेरी कोई नहीं सुनेगा। और, और तो और पारबती बहिनी के बाबू जी उस बार जब होली में आये थे तो गली में मुझे पकड़ कर रंग लगाने के बहाने खूब बेइज्जत करना चाहा था और और जब फरियाद की थी- लोगों ने मजाक में उड़ा दिया था, जैसे चमारों की बहू बेटियाँ इसीलिए होती हैं। और ये जग्गू नेता हैं जो कल तक चिल्लाते थे कि नया जमाना आ रहा है नयी जिनगी आ रही है —

कुछ लोग हँस रहे थे, कुछ लोग गुस्सा हो रहे थे। कुछ लोग लाठियाँ तान रहे थे कि भाई बहन दोनों को पीटो लेकिन सतीश जो थोडी देर पहले आया था और लवेंगी का लेक्चर सुन चुका था, बडा विचित्र अनुभव कर रहा था। वह देख रहा था कि लवेंगी की बात में सत्य की शक्ति है, उसके आँसुओं में विद्रोह है, नये जमाने की आवाज है और सचमुच कब तक यह भेद चलता रहेगा? हँसिया की करतूत उसके संस्कारों का भी धक्के मार रहा थी, उसके ब्राह्मण संस्कार को चमार के लडके की यह बदतमीजी बहुत अखर रही थी। लेकिन लवंगी की आवाज उसके न्याय को बल दे रही थी। न्याय ही तो है, दुष्कर्म चाहे ब्राह्मण करे चाहे चमार करे, क्या फरक पडता है। और यदि बाभन छोकरा, छोकरा ही क्या सम्मानित वयस्क भी हरिजन की बेटी पर जुल्म करता है और कोई आफत नही आती तो हरिजन छोकरा द्वारा बाभन की लडकी पर किये गये जुल्म पर आफत क्यों आये? जुल्म जुल्म भी इसे क्यों कहा जाये? पारवती सिसक रही है। यह ब्राह्मण खून है कि स्वयं एक हरिजन बालक को अपनी काम पिपासा के लिए उत्तेजित कर सारा दोष उसी पर थोप कर नकली ढंग से सिसक रही है और दूसरी ओर यह हरिजन खून है, हँसिया है जो भरी सभा में लात खा रहा है और सारा अपराध अपने ऊपर ओढ कर पारवती के सम्मान की रक्षा कर रहा है, सत असत कुछ भी नही बोल रहा है और लवेंगी एक ज्वाला लपट की तरह ब्राह्मणों के तमाम चेहरों पर उडती हुई उन पर लिखी अस्पष्ट लकीरों को उभारती गरज रही है। ठीक ही कहती है, वह भी जानता है कि लवेंगी के पीछे कितने लोग पागल हैं। और पता नहीं क्या क्या वाली ठोली मारते रहते हैं इसे। काम करती हुई मजूरिनों का मजाक कर लेना, बाँह पकड लेना बडा आसान है रामबहादुर गुस्सा होकर गाली दे रहा था—'हरामजादी मुझे तो बदनाम करती ही है मेरे बाप को भी बदनाम करती है, और लाठी तान कर उसे मारने ही

जा रहा था कि सतीश ने आगे बढ़कर उसे पकड़ लिया और पीछे ढकेलता हुआ बोला—'जाओ बक-झक मत करो और अपने बाप की बदनामी बचाने की कोशिश करो।' सतीश समझ रहा था कि लवँगी की लपट से कितने बामना का चेहरा उदास हो रहा है और अब नक्शा पलटने वाला है अत उसने सबसे कहा—जाइए आप लोग अपने-अपने घर जाइए। बहुत तमाशा हो चुका। और उसने महावीर से पूछा—'दूबे जी, अब क्या करना है ?'

'मैं क्या बताऊँ सतीश बाबू, मेरे मुँह तो कालिख पुत गयी है आप जो उचित समझें करें।'

'म तो समझता हूँ इसे छोड़ दिया जाए।'

'हाँ, छोड़ दीजिए।'

सतीश ने हसिया को छोड़ते हुए उसकी माँ से कहा—ले जा और उसे काबू में रख।'

हँसिया लँगड़ाता हुआ चला मगर लवँगी ने चीख कर कहा—सरपंच बाबा, म अब चुप नही रहूँगी। आपके इजलास में एक दिन हाजिर हूँगी फरियाद लेकर।' 'हाँ हाँ जरूर आना।' सतीश भी चले गए। लोग चले गए। जाते जाते जमुना भौजी ने एक ठहाका लगाया—देखा कैसा नाटक किया इस लौंडिया ने। महावीर उसी प्रकार बठे रहे। पारवती की माँ सलोना भीतर के दालान में बैठी सिसक रही थी। उठकर पारवती के पास आई और उठाकर [redacted] गई—'बेटी कुछ भला बुरा तो नही करने पाया मरकीजवना।'

'नही माई।' पारवती ने और जोर से सिसकते हुए कहा।

'हे प्रभु, आपने मेरी बेटी की रच्छा की। अजुन जो हसिया को मारते-मारते थक गया था, अब कुछ विचित्र उदासी थकान लिए तख्ते पर बठ गया। सोच रहा था—भौजी ने इस लड़की को बड़ी छूट दे रखी है, अब जो घर से निकलेगी तो इसकी टाँग तोड़ दूँगा।

●

गर्मी की बलबलाती हुई धूल, और सनसनाती हुई धूप चमरौधा जूता पहने, टोपी लगाए सुगन मास्टर घर लौट रहे हैं। क्या करें वे, कहाँ जायें ? बेटी की शादी तो मुसीबत हो गयी है। कोई अच्छा घर-बर नहीं मिलता है, मिलता है तो औकात के एकदम बाहर दहेज माँगता ह और जो औकात के भीतर माँगते हैं वे या तो बूढ़-ठेल होते हैं या गरीब, जिनके यहाँ सुबह का खाना ह तो शाम का पता नहीं। गरीबी घृणित चीज तो नहीं है, वह भी तो गरीब हैं, तो क्या वह घृणित हैं ? मगर बेटी ने यहाँ सुख नहीं पाया क्या वहा भी जिनगी भर दुख ही पाये ? और गरीब घर का लडका पढ़ा लिखा हो तो यह भी आशा हो सकती ह कि एक दिन वह सब कुछ बना लेगा लेकिन गरीबी के बीच कितने लडके पढ पाते ह और जो पढ लेते हैं वे भी अपने को बडा मान कर धनिकों की झूठी माया में दहेज माँगने लगते हैं।

चारों ओर जलती हुई रेत फैली हुई है, नदी अभी बहुत दूर ह, प्यास तेज लगी है। कब से वह इस रेती भरे रास्ते मे गुजर रहा है लेकिन मंजिल नहीं मिल पाती।

लडकी सयानी हो गयी, अब घर रखना ठीक नहीं है। पारवती और हँसिया वाली घटना उनके सामने साकार हो उठी—और जलती धूल का एक बगूला उन्हें रौंदता गुजर गया, पेड हहर उठे। नहीं उनकी गितवा ऐसी नहीं ह, बडी शालीन लडकी है, घर से बाहर भी नहीं निकलती। उसका पारवती से क्या मुकाबला ?

अरे हाँ, आज तो पारवती की शादी भी है। सुना ह कि वर अधेड ह और...और सुना ह कि उसने खरीदा है हे राम, यह क्या किया वसी ने ? बेटी बेचना कितना पाप है ? यह कुकरम उसने क्यों किया ? कुकरम ? गरीबी खुद ही कुकरम है और लोग बेटे बेचते हैं तो बेटी

बेचने में क्या हर्ज है, नहीं नहीं बेटी बेचने की बात और होती है। हमारे
शास्त्र वेद ने जो नियम बना दिए हैं उनके साथ अपेल नहीं करनी
चाहिए, बेटी बेचना अधरम है और अधरम इसलिए कि बेटी वही
खरीदता है जो किसी तरह कमजोर होता है, बूढ़ा हो, दुबाह बियाह हो,
कोई बरमदोख हो घर में, और तमाम बातें। मगर आदमी क्या करे ?
दहेज देने की औकात न हो तो क्या करे बेटी घर में रखे ? क्या यह
अधरम नहीं है ? सो बसी तो आज पार हो रहा है, और वह ? वह क्या
करे ? क्या करे हे ईश्वर। और फिर एक बवंडर जोर का आया और
उसकी टोपी उड़ने लगी, वह दौड़ कर टोपी पकड़ने लगा लेकिन टोपी
उड़ कर बाँस की फुनुई टँग गयी और वह देखता रहा जोर जोर से देर
तक बाँस को हिलाया तो टोपी वापस लौटी। नहीं-नहीं ऐसा नहीं करना
चाहिए, यह पाप है, अधम है, हे प्रभु, ऐसे विचार मेरे मन में कैसे उठ
रहे हैं, नहीं नहीं नहीं

तीन महीने से फिर तनखाह नहीं मिली है। सुना है बड़े बड़े लोगों
की तनखाहें बढ़ रही हैं, देश में बड़ी-बड़ी योजनाएँ बन रही हैं, बड़े
बड़े मकान बन रहे हैं चारों ओर पैसा ही पैसा शहरों में जाकर
देखो पैसे वालों को। पैसा पैसे को खींच रहा है और पैसों का पहाड़
बनता जा रहा है, जहाँ पैसे नहीं है वहाँ और अभाव बनता जा रहा
है। बेचारे मास्टरों की तनखाह पर ही न जाने इतना ग्रह क्यों ?
कोई सुनता नहीं है देहात की आवाज को, आवाजें उठती हैं और खो
जाती हैं

बँसुरी और डफला बज रहा है, हाँ बरात आ गयी है। सुग्गन
देखता है कि दस-पाँच बराती बगीचे में जमा हैं, कुछ आ रहे हैं और
बाजे वाले धीरे धीरे बाजे बजा रहे हैं।

शाम को थके मांदे सुग्गन मास्टर घर पहुँचे तो जमुना भौजी आँगन
में चारपाई पर बैठी थीं। जाते ही सुग्गन ने कहा कि बसी का तो

बेड़ा पार हो गया आज।' जमुना भौजी ने छूटते ही कहा—'आ चूल्हे भाड़ में जाए ऐसा बेड़ा पार। इस पांचिगड़ में बेटी बेच दी है। कोई ढड-ढंग होगा। इससे तो अच्छा है बेटी कुँआरी घर में बैठी रहे।' मास्टर सुगन का सारा द्वन्द्व झड़ गया और उदास हो रहे।

'क्या कुछ पता बैठा ?' जमुना ने पूछा।

'अरे पहले पानी वानी पीने दोगी कि आते ही आते सिर पर सवार हो जाओगी ?'

मास्टर झुंझला कर बोल उठे। फिर कुछ देर चुप रहने के बाद अपने आप बोले—यही कुछ ठीक नहीं हो रहा है। अच्छी शादी तो किसी भी तरह एक हजार से कम पर तै नहीं हो रही है और यहाँ घर में कानी कौड़ी नहीं है। एक शादी है जो पाँच सौ में तै हो जायगी।'

कैसी है ?' जमुना भौजी ने पूछा, ऐसे पूछा जैसे पाँच सौ की तो कोई बात नहीं वह तो हो जाएगा।'

शादी तो ठीक है अपने गाँव की रिश्तेदारी में ही आते हैं वे लोग। इसीलिए कुछ छूट दे रहे हैं, लेकिन ।

'लेकिन क्या।'

'लेकिन यह कि लड़के की माँ नहीं है सौतेली माँ है, लड़के के पास भाई बँधत बात भी नहीं है, अपने ननिहाल में इन्ट्रेंस में पढ़ता है। बस यही एक लालच है कि लड़का पढ़ लेगा तो सिवा के खाने-पीने की चिंता नहीं रहेगी ? और दूसरे यह कि वे लोग कनवरा सुकुल हैं।

'हाँ है तो लेकिन एक तो सौतेली माँ और दूसरे बँधत बात नहीं हाँ लड़के का लालच जरूर है कैसा है लड़का ?'

'लड़का अच्छा है, छुट्टियाँ हो गयी हैं न। घर आया हुआ था सुन्दर और तन्दुरुस्त है। हाँ, उमर अभी कम है १४, १५ साल।'

'तो ?'

'तो क्या, तुम सोचो !'

'मुझे क्या सोचना है ? अब इसका विवाह तो कर ही देना होगा, लड़की सयानी हो गयी है लेकिन पाँच सौ रुपये।'

'यही तो बात है।'

'हाँ कुछ न कुछ तो करना ही होगा।' कुछ तो तनखाह के रुके हुए रुपये मिल जायेंगे, कुछ अनाज पताई बेच दिया जाएगा, कुछ कर्ज वोज।'

'कर्ज कौन देगा ?'

'खेत चढ़ा देंगे।'

जमुना भौजी ने एक उसाँस लिया—हे भगवान, खेत हैं ही कितने। दो महीने को खाने भर को तो नहीं दे पाते हैं ये।

'भाई, बरात आ गयी है अगवानी होने जा रही है, जाऊँ।' गितवा खड़ी थी। 'हाँ हाँ जा बेटी, अरे भाई हम लोगों को भी चलना चाहिए।'

वर चौक पर बैठा था, सामने पीली धोती पहने बसी बैठा था—लड़की का बाप बसी। लोग हँस हँस कर उछल उछल कर वर को देख रहे थे, चालीस साल का एक उजड्ड देहाती। चौड़ी चौन्ह हड्डियाँ और नसें उभरी हुई, काला रंग, लम्बी-सी नाक, छोटा-सा लिलार, छोटी-छोटी आँखें औरतें अच्छत मार मार कर हँस रही थीं हंसिया ने पालकी में बैठे दुलहे को देखा था—उसे गुरदीन पासी की शक्ल याद आ रही थी, ठीक ऐसा ही वह—एकदम चोरों की सकल। जरूर यह चोर होगा। बसी बाबा को यही दुल्हा मिला है पारबती बहिनी के लिए। उसकी इच्छा हो रही थी उछल कर चढ़ जाए इस चोर की गरदन पर और गला पकड़ कर टीप दे। वह मारे क्रोध के दूर-दूर ही घूम रहा था।'

और लोगों में कानाफूसी थी कि इसका भी बियाह नहीं हो रहा था—घर में कुछ जायदाद तो जरूर है लेकिन दुलहा चोर है निरक्षर भट्टाचार्य और सुना है इसके यहाँ बरमदोख भी ह, हाँ जबरजस्त बरमदोख है। किसी को हिम्मत नहीं होती इसके यहाँ लटका डालने की मगर वाह रे बसी, इसे भी तार दिया तूने।

'बरमदोख ह तो क्या उसे तो पारवती खा जायेगी, काला माई के सामन बरम को क्या बिसात। जमुना भौजी हँस-हँस कर बतिया रही थी।

पारवती को शादी के ही अवसर पर विदा होना था। वह रो रही था—रन बन लहरा रहा था। लडकियों को भीच-भींच कर चिल्ला रही थी। माँ-बपई से लिपट लिपट कर घिघिया रही थी, महावीर और अर्जुन के पाँव पकड़ती तो छोड़ती ही नहीं थी। अजब भय, करुणा से तडपती हुई उसकी आवाज चारों ओर फैल रही थी—लगता था कि उसकी आवाज पूरे घर को, गाव को, अपने में भर लेना चाहती थी। पता नहीं फिर कब लौटना हो, लौटना हो कि न लौटना हो।

और पारवती बिदा हो गयी—तेज धार की तरह एक तेज आवाज छोडती हुई एक सन्नाटा उसकी डोली के पीछे-पीछे बिछता गया और सिवान के पास आकर ठहर गया—माँ बाप की आँखें उसकी राह को देखती-देखती धूप में खो गयी।

अजब ह लडकी जाति। सयानी लडकी छाती पर भार बन जाती ह, रहती है तो लगता ह कब विदा होगी और चली जाती है तो सब कुछ सूना कर जाती है।

हँसिया बागीचे में अकेले बैठ कर रो रहा है—

गीता का मन भारी ह। उसके सामने एक अपरिचित लम्बा मदान उभर रहा ह जिसमें कुछ अनजानी—अजनबी शक्लें इधर से उधर तैर जाती हैं जिसमें कुछ फूल उगते है, कुछ काँटे चुभते ह, एक नदी

थरथराती है, एक नाव डगमगाती है और वह किसी को नहीं पहचानती

शारदा के आगे एक मैदान है जो परिचित है उसमें फूल उगे हैं, जो भीगे हुए हैं गंध से और जल से भी, एक हवा लहराती है इस रास्ते से उस रास्ते तक और उन्हें जोड़ती है रास्ते आपस में हवा के मुलायम झोंकों से जुड़े हुए मैदान के दूसरे छोर तक जाते हैं मगर वह छोर दिखाई नहीं पड़ता, वह अनजाना है अदृश्य है और रास्ते काँपने लगते हैं शारदा आँखें मूँद लेती है

'बेटी।'

जी बाबू जी।'

वह आँख खोलती है मगर वहाँ तो कोई नहीं है। उसे क्या हो गया है? देखती है दूर के ताल से ईंटे के भट्ठे का धुआँ उठ रहा है एक विचित्र गंध के साथ यह धुआँ पूरे गाँव पर छा रहा है, इसकी गंध गली-गली भटक रही है। वह अन्दर लौट जाती है। हाँ, यह भट्ठा दौलत राय का है। दो लाख ईंटें पक रही हैं। अब इनका टूटा हुआ कच्चा घर पक्का मकान बन जाएगा। अब ये कर्जखोर से महाजन बन गए हैं दौलत का भाई छकौड़ी राय सिंगापुर में दरबान है। लड़ाई के जमाने में सारी खबरें बन्द-हो गयी थीं और सालों तक उसका कोई समाचार नहीं आया तो लोगों ने विश्वास कर लिया कि वह मर गया है और घर के लोग रो-धो कर चुप हो गए थे। घर में था ही कौन? शादी किसी की हुई नहीं थी दरिद्र की शादी कौन करता? माँ थी, बाप मर चुके थे, कुछ भाई थे। मगर एक दिन जब छकौड़ी राय की चिट्ठी मिली तो घर खुशी से फूल उठा और एक दिन छकौड़ी राय सिंगापुर से आ धमके और इतने वर्षों की कमाई के तमाम रुपये घर में खरखरा दिये।

और एकाएक इनका घर रुपयों से महक उठा। देखते-देखते दो

महीने में ही दौलत राय बड़े आदमी बन गए। फटाफट दोनों भाइयों की शादियां हो गयीं, घर में घड़ियाँ चमक उठीं, साइकिलें आ गयीं, पानी का नल गड़ गया और गाँव के प्रतिष्ठित लोगों में गिने जाने लगे—प्रतिष्ठित इस माने में कि गाव के दस-पाच आदमी उनका दरबार करने लगे। दलबंदिया होने लगी। दीनदयाल ने अब दौलत राय को बराबरी का दर्जा दिया और उसके साथ उठने-बैठने लगे। उनका लड़का रामबहादुर उसका साथी हो गया, मउगा दर्लसिंगार कुत्ते की तरह उसके यहाँ दुम हिलाने लगा और उसके साथ-साथ रह कर उसके खेत में काम भी करने लगा।

उसकी सबसे पहली मुठभेड़ हुई गाँव के सबसे बड़े बदमाश बल्ई तिवारी से। बल्ई (जिसका असली नाम बालेश्वर तिवारी था) स्वभाव से चोर था। वह किसी को नहीं छोड़ता था। किसी के खेत की फसल काट लेना, किसी का बैल चुरा लेना, किसी का खलिहान फूँक देना, किसी के यहा सेंध मार देना उसके बाएँ हाथ का खेल था। खास कर जो लोग गरीब थे, जो बहरवाँसू थे (वे उसके हितैषी ही क्यों न हों) उनकी जायदाद पर हाथ साफ कर देना उसकी विशेषता थी। कोई उसे सर नहीं कर पाता था। दौलतराय को उसने बहुत परेशान किया था। जायदाद पर तो हाथ साफ किया ही था उसे पीटा भी था। दौल्त राय अपनी गरीबी की वजह से ही मसोस-मसोस कर रह गया था। पैसा हाथ में आते ही उसकी प्रतिहिंसा जाग उठी।

फुलवा गड़ेरिन बल्ई की रखेल थी। उसकी शादी नहीं हुई थी। वह फुलवा को रखे हुए था। फुलवा का पति बाहर-बाहर भेंड़ चराया करता था, फुलवा बल्ई के यहाँ काम-धाम करती थी। लोग कहते हैं कि वह बाँझ है इसलिए कुछ अधिक अवस्था होने पर भी जवान बनी हुई थी। दौल्त राय ने भी दो-चार बार उस पर दाँत गड़ाने चाहे थे और जब जब उसने ऐसी हरकत करनी चाही तब तक फुलवा की

शिकायत पर बलई ने दौलत राय को पीटा भी और उसकी सम्पत्ति पर भी हाथ साफ किया।

लेकिन जब दौलत राय पैसे वाले हो गए, फुलवा धीरे धीरे बलई की ओर से दौलत की ओर सरक आयी और उसके यहाँ काम करने लगी। दौलत का उस पर पूरा अधिकार हो गया। बलई का राक्षस पूरी तौर पर जाग उठा। उसने फुलवा की झोपड़ी फूँक दी दौलत की घारी में आग लगा दी जिसमें दो बैल डॅकर-डॅकर कर मर गए और फुलवा को एक दिन रास्ते में पीटा भी। छकौड़ी तो शादी करके और अपनी नवागता पत्नी को घर छोड़ कर सिंगापुर लौट गए रुपये कमाने के लिए लेकिन दौलत राय का पैसा उसे बेचैन कर रहा था। दो-चार आदमी उसके साथ थे। उसने भी वही धन्धा शुरू किया जो बलई करता आया था। बलई दीनदयाल को भी परेशान कर चुका था इसलिए वे भी दौलत को शह देने लगे और आज गजब हो गया—

फुलवा दौलत के काम पर जा रही थी कि बलई ने उसे पकड़ लिया और कहा कि चलो, मेरे काम पर तुम्हें चलना होगा। उसने कहा आपके काम पर कैसे जाऊँ आज दौलत का भटठा खोलना है। मैं नहीं जाऊँगी तो भटठा खराब हो जाएगा।

बलई ने भद्दी भद्दी गालियाँ उगलनी शुरू कीं—'हरे हरजाई अब तुम्हें बलई काहे को अच्छे लगेंगे अब तो महाजन का स्वाद पा गयी है न तब तो तेरी परवरिश मैंने की, अब जब मुद्दहार के पास पइसा हो गया है तो कर्म सरक गयी है छिनार कहीं की, हरजाई कहीं की। चल मेरे काम पर नहीं तो तेरी एसी-तसी करके छोड़ूँगा।

'नहीं, मैं नहीं जाऊँगी आपके काम पर।'

'जायेगी कइसे नहीं, साली मेरे इतने पइसे खा चुकी है तेरे ऊपर इतना करज है सब चुका दे तो जा नहीं तो समझ ले।'

'करज कइसा हो, जब मजा लेते रहे तो नही करज का नाम लिया, आज वह सब करज हो गया है। पइसा दिया तो मजा भी तो लिया।'

'मजा तो तूने भी लिया, मजा एकतरफा थोडे होता है मेरे पइसे लाके दे।'

'मेरे इहाँ कोई पइसा फइसा नही है किसी का।' और फुलवा आगे बढने लगी।

बलई ने फुलवा को पकड लिया और उठा कर पटक दिया और मारता-मारता उसे अपने दरवाजे पर खींच ले गया। फुलवा चिल्लाने लगी और बलई उसे मारने लगा। लोग आस पास से दौडे। खबर गाँव में फैलती गया। दौलत राय अपने भटठे पर चले गए थे, सुमा तो दौडे हुए आये, दर्लासगार को हांक लगाई, राम बहादुर को सहेजा और अपने लगुओ भगुओ को ललकारा—आज हो जाए, आज बजड जाए ताकते क्या हो पटठो और दौलतराय भाला लेकर गाली देते हुए बलई के दरवाजे पर पहुँच गए, लाठी लेकर दर्लासगार भी पहुँच गया। रामबहादुर भाला लेकर जाने लगा तो दीनदयाल ने भाला छीन कर डाँटते हुए कहा—पगला गए हो इस मुइहार के लिए पट्टादारी से कोई मार झगडा करेगा ? मार झगडा करने वाले कम तो नही हैं, तुम खाली हाथ बस चले जाओ। रामबहादुर खाली हाथ चला गया।

बलई ने ललकारा—'आओ मुँहहरल्ली तेरी सामत सवार हो तो आ जा।'

दौलत ने आगे-पीछे देखा उसके लोग खडे थे लेकिन दर्लासगार और दो एक और के सिवा सभी खाली हाथ थे। सबको तौला उसने उधर बलई अपने पट्टीदारो को ललकार रहा था—'क्या ताकते हो भाइयो, मुइहार बामना को अपना नौकर समझता ह। ई मउगा दर्लासगार उसके इहाँ मजूरी करके बामना की नाक कटा रहा है। आज हो जाए और इस नये धनी की सारी सेखी उतार दी जाए।'

सभी लोग माद, पलाता के आस-पास चुपचाप खड़े थे, कोई किसी की ओर से उत्साहित नहीं हो रहा था। तब तक दौलतराय ने अपने साथियों को ललकार कर कहा—मारो इस चोर साले को, और उसने लाठी छोड़ दी। दर्लसिंगार ने भी लाठी तान कर बलई की पीठ पर मारी। बलई ने उछल कर एक लाठी दर्लसिंगार के चूतड़ पर दे मारी और वह मुँह के बल गिर पड़ा। फिर उठकर हाय भइया मार डाला कहते हुए तिरनिक तिरनिक भागा। बलई ने ललकार कर कहा 'आओ औरतों में मउगई करने ओ आना लड़ाई करने।' दौलत राय के साथियों ने बलई को घेर लिया। बलई लाठी चला रहा था और पुकार रहा था अपने पट्टीदारों का— अरे राम कुमार, अरे महावीर, अरे फेंकू काका लेकिन कोई सुन नहीं रहा था सभी लोग चुपचाप देख रहे थे। फेंकू बाबा उफन तो रहे थे लेकिन परिस्थिति देखकर लाचार थे। जब कई आदमी बलई को घेर कर मारने लगे और बलई उछल-उछल कर सबका वार रोकने लगा तो लोगों ने मामला संगीन समझा। फिर पकड़ धकड़ शुरू की। रामबहादुर बराबर बलई को ही पकड़ पकड़ कर अलग कर रहा था और इस पकड़ धकड़ में दौलत राय और उनके साथियों को लाठी मारने का मौका मिल जा रहा था। सतीश भी पहुँच आया। कुछ देर तक दृश्य देखता रहा फिर दोनों पक्षों को डाँट डपट कर दरहम बरहम करना शुरू किया। फेंकू बाबा अब गरगराने लगे थे— कि है दीनदयाल के बेटा, तू बलई को ही पकड़ता है। ए ससुरा कुम्हार को नहीं मना करता है। इतने में बलई ने राम बहादुर को पाँव से अलगी मारी और वह चित्त गिरा। फेंकू बाबा ने किलकिला कर कहा—'अच्छा किया, अच्छा किया दीनदयाल के साले को मारा।' काफी लोग झगड़ा छुड़ाने में मशगूल हो गए और किसी तरह दोनों पक्षों को अलग अलग किया।

सतीश ने अनुभव किया कि अगर पहला जमाना होता तो गाँव में

तहलका मच गया होता, महाभारत मच गया होता या फिर दौलतराय को इतनी बड़ी पट्टीदारी वाले बाभना के गाँव में किसी बाभन से उलझने की हिम्मत ही नहीं होती। लेकिन आज कोई किसी का नहीं है पट्टीदारी अब एक लाश रह गयी है जिसे लोग खामखाह के लिए गले में बांध कर घूमते हैं। पट्टीदारी केवल खाने-पीने के वक्त दिखाई पड़ती है। पट्टीदारी का नशा जीवित होता तो आज लाशें बिछ गयी होतीं। अच्छा ही हुआ यह नशा उड़ गया बुरा भी हुआ क्योंकि गाँव में भी अकेलापन फैलता जा रहा है। हाँ, जिनके पास पैसे हैं उनके साथ जरूर किराये के टट्टू घूमते रहते हैं। दौलतराय और किराये के टट्टू। बलई अकेला, मगर वह कब किसका हुआ है? किसी को तो नहीं छोड़ा इस बदमाश ने। और अब पट्टीदारी और जाति से न्याय नहीं चल सकता। न्याय को इन सबसे ऊपर उठना होगा—उसकी दृष्टि में बलई न तो हमारा पट्टीदार ब्राह्मण है और न तो दौलत विजातीय भूमिहार दोनों आदमी है। ब्राह्मण-ब्राह्मण का भेद मिटता जा रहा है नहीं, नहीं मिट रहा है लगता है जहाँ स्वार्थ सधता है, जहाँ खतरा नहीं होता वहाँ लोग ब्राह्मण होने में कसर नहीं रखते। उस दिन हँसिया को सभी पीट रहे थे, सबके भीतर का मिथ्या ब्राह्मणत्व उभर आया था। बेचारे गरीब को मारने में कोई खतरा नहीं था लेकिन आज ब्राह्मणत्व के नाम पर कोई खतरे में नहीं कूदा, और नहीं तो भूमिहार के पैसे से पवित्र होकर लोग अब्राह्मण भी बन गए। एक अजब असंगति एक विरोध, एक दोगलापन उभर कर फैलता जा रहा है रंग बिरंगी खोल ओढ़े लाग जी रहे हैं.. और देखता है कि हवा के तेज झोंका के साथ दौलत राय के भट्ठे का धुआँ उड़ रहा है और चारों ओर भट्ठे की धूमिल गंध फैल रही है।

आगे-आगे फेंकू बाबा और पीछे-पीछे जग्गू-चहू हाथ में बच्चा पैदा कराने का हँसिया लिये हुए जल्दी जल्दी भागे जा रहे हैं।

'क्या बात है फेंकू बाबा, क्या बात है ?' लोग पूछते हैं।

'अरे भाई मेरे नाती हो रहा है न। हाँ, मेरे नाती हो रहा है।' फेंकू बाबू बड़े उछाह में बोलते हैं। फेंकू बाबा का लड़का रामसहाय भी छुट्टियों में आया हुआ है। वह मुँह लटकाये खाट पर बैठा है और झूम रहा है। भीतर से उसकी पत्नी चिल्ला रही है। गाव की कुछ बड़ी-बूढ़ियाँ वहाँ इकट्ठा हैं।

फेंकू बाबा दरवाजे पर जल्दी-जल्दी चहलकदमी कर रहे हैं।

'बाबा ब़ुत बाउर हुआ, लड़िका तो फंसि गया है निकलता ही नहीं।' अग्गू बहू घबराई हुई आती है।

'तो तू किस मरज की दवा है, तू ठीक नहीं कर सकती। फेंकू बाबा क्रोध में बोलते हैं।

'बाबा ई हमरे मान का नहीं है, लड़िका अड़स गया है, उल्टा हो रहा है इसलिए।

'तो ?'

'तो क्या जल्दी अस्पताल ले जाइए दुलहिन की जान खतरे में है।'

राम सहाय ( जिसे फेंकू बाबा वकील साहब कहते थे गो कि वह पहले ही साल में तीन साल से फेल हो रहा है ) को पुकार कर फेंकू बाबा ने कहा— वकील साहब, उठो और कोई इन्तजाम करो, बहू को गोरखपुर ले चलने का। वकील साहब झटके से उठ खड़े हुए। कैसे ले जाया जाए ? लोग जुट आये और चर्चा होने लगी कि कैसे भेजा जाए ?

गोरखपुर यहाँ से बीस मील है। बैलगाड़ी के सिवा कोई सवारी नहीं जा सकती और बैलगाड़ी भी सौ-सौ हिचकोले खाती हुई चलती है। ऊँचे-नीचे रास्ते, कहीं बालू का ढेर, कहीं टूटी हुई कच्ची सड़क, कहीं छोटे-छोटे गहरे-गहरे नाले, कहीं बड़े-बड़े कगारो वाली नदियाँ बैलगाड़ी चलती है तो सकड़ों स्वरों में चीत्कार करती हुई, और सकड़ों ताल पर उठती-गिरती हुई।

इस हालत में बलगाडी ? बलगाडी पहुँचेगी आधी रात तक और बैलगाडी पर इस अवस्था में कैसे जा सक्ती है

हे ईश्वर! अब क्या होगा ? किसी ने सुझाव दिया कि कौडीराम तक डोली बॅंमवा में पहुँचाओ, वहाँ से कोई सवारी मिल जाएगी ?

मगर आदमी कहा मिलें। कॅहार तो लगन कमाने में लगे हुए ह, बाभन तो डोली ढो नही सकते। सतीश ने सुझाव दिया कि तीन चार आदमी अपने अपने हलवाहे दे दें तो काम चल जाए। मैं अपना हलवाहा खेत पर से बुलवा देता हूँ। दीनदयाल भी थे वहा, हलवाहो की बात सुन कर चुपके से चले गए। दौलत राय आये ही नही क्योकि दो घटे पहले झगडा हुआ था, उसमें फेंकू बाबा ने गाली दी थी। बल्ई ने कहा— मेरा हलवाहा तो बाहर गया हुआ ह लेकिन मै खुद डोली ढोऊँगा यही बात मुजू ने भी कही। लेकिन कहा सुनी होते-होते चार हलवाहे मिल गए और दो घटे बाद जब डोलावॅंसवा उठा तो बारह बज चुके थे। भयकर धूप-गर्मी से प्राण उबलिक। डोली चली तो वकीलानी जोर जोर से चीख रही थी लडका अॅंडसा हुआ था। डोली के पीछे-पीछे बाप बेटे चल पडे। घर म ताला मार दिया। उनके साथ कोई नहा गया। पर-पट्टादारी के लोग अपने-अपने काम पर चले गए। बनवारी बाबा लपके हुए घर गए और धोती लेकर बाप-बेटे से आ मिले। राम कुमार ने रोका—'कहाँ चले ? जिदगी भर की अधिकई गयी नही, लेकिन बनवारी बाबा नही माने और बडबडाते हुए घर से निकल गए— गाँव के लोग गाँव के सहायक नहीं होंगे तो कौन होगा ?' रामकुमार कुनमुन कर रह गया—जीवन भर ये गाँव का उपकार ही करते रह गए और गाँव वाले हमेशा इनके साथ धोखा ही करते आये। ऐसे बाप से पाला पडा है कि क्या बताऊँ ?

अमरेश जी से सतीश ने कहा—बाबू, मैं जा रहा हूँ इनके साथ।' क्या बताऊँ पिता जी इस धूप में आप को जाने देने की हिम्मत नही

ती मगर किसी को जाना चाहिए। मुझे तो आज शाम को एक मुकद्दमा उना है नहीं तो मैं ही खुद चला जाता। वकीलानी मूअर के तौन ी तरह कराहती रहीं। फेंकू बाबा डोली ढानेवालों से बड़ी नरमी से हते 'बढ़ चल भइया, बढ़ चल।' दूसरा वक्त होता तो डाँटते मगर इस मय तो आँसुओं से भीग रहे हैं।

तीन घंटे में कोडोराम पहुँचे तो बस का समय। और और घोड़ ावारी क्या मिल सकती थी? एक घंटे बाद बस चली। बस आन र अधिकारी ने जल्दी-जल्दी कुछ सवारियाँ लेकर उस खोलने का आडर दिया और उसे एक्सप्रेस बना दिया।

कमलेश जी का हृदय भर आया। इस याताह जमाने में भी एस ोग जीवित हैं जो दूसरा का दुख दर्द समझते हैं उनका हृदय इस अधिकारी के प्रति आभार से भर आया

राजघाट का पुल पार करते-करते एकाएक वकीलानी का स्वर न्द हो गया। लोग चौंक उठे। वकील साहब रिक्श में बैठे-बैठे चिल्ला उठे—पिता जी सब कुछ खतम हो गया और हहरा कर रो पड़े।

रिक्शे रोक दिये गये। फेंकू बाबा का चेहरा झाँवा के समान निस्पद काला पड़ गया। बनवारी बाबा ने कहा, अब सब खतम हो गया फेंकू हाय बेचारी कितने तकलीफ में मरी है। लेकिन अब फूकने तापने का इन्तजाम करना चाहिए। वे फफक-फफक कर रोने लगे। कमलेश जी भी निस्पन्द खड़े थे। उन्होंने बनवारी की बात का समर्थन करते हुए कहा कि हाँ फेंकू, अब क्या किया जाय? ईश्वर की लीला बड़ा विचित्र है अब शव को जलाने को तयारी करनी चाहिए। वलई दौड़ धूप कर लकड़ी आदि का इतजाम करने लगा।

शव जला दिया गया। इन चार प्राणियों के सिवा कोई और साक्षी भी नहीं हुआ वकीलानी की मृत्यु का।

चारों आदमी शव को फूँक कर गाँव को लौट आये।

पंकू बाबा ने ताला खोला तो अब तक का उनका रुका हुआ रुलाई का बाँध टूट पड़ा। बच्चा की तरह फूट-फूट कर रोने लगे। रामसहाय जो रोकर थ्क गया था फिर फूट चला।

धीरे धीरे सारे गाँव में रोती हुई हवा खबर बाँट आयी और लोग आपस में कहने लगे—हे राम, बेचारी मर गई।

'क्या हुआ पिता जी ?' सतीश ने शका से पूछा।

'वही हुआ बेटा, जो ईश्वर को मजूर था।' अमलेश जी ने उदास दार्शनिक स्वर में कहा।

सतीश चुप रहा जैसे किसी गहरे मानसिक सकट में फँस गया हो। अमलेश जी गम्भीरता से कहते रहे—ईश्वर की लीला भी कितनी विचित्र है बेटा, कभी कुछ करना है कभी कुछ, किसी को किसी तरह मारता है, किसी को किसी तरह। हम लोग तो उसके हाथ के कठ-पुतली है

सतीश के मन में एक विद्रोह भड़क उठा सरकारी व्यवस्था के प्रति। वह बोला— पिता जी, ईश्वर तो ठीक ह, वह जो कुछ करता है करे लेकिन आदमी भी तो कुछ कर सकता ह, वह कर ही रहा ह। आदमी को मरना होता ह मरता है। लेकिन ये बडे-बडे अस्पताल ये बडे-बडे डाक्टर किस मज की दवा है। सुना है, बडे-बडे मर्ज जो पहले असाध्य माने जाते थे ठीक कर दिये जाते हैं। मेरा विश्वास ह कि रामसहाय की औरत शहर में मरने नहीं पाती। वहाँ तो उलटे होने वाले बच्चों को आसानो से पदा कराया जा सकता ह। बडे-बडे चमत्कार हो रहे हैं आज दवा के क्षेत्र में। इस पूरे जवार में ले देकर कस्बे में एक टूटहूँटूँ सरकारी अस्पताल है जहाँ मामूली दवाएँ मिलती हैं मामूली रोगों के लिए। सुना ह सरकार जो अच्छी दवाए देती है उन्हे डाक्टर लोग प्राइवेट बना कर बेचते हैं। देखा नहीं है उस डाक्टर को जो दवाखाने पर देर से आता

है, जल्दी चला जाता है और रोगियों के साथ ऐसा बरताव करता है मानो रहम कर रहा हो और पैसे वाले बुलाते हैं तो साइकिल लेकर टिन टिन टिन टिन घूमता ही रहता है। साहब बना फिरता है देहात में, और सरकारी दवाएँ और मुफ्त देने पर लोगों से पैसे ऐंठता है। जब डाक्टरों का यह हाल है तो जनता का कुशल-क्षेम कौन करेगा ?'

'अरे नहीं बेटा, ये डाक्टर-वाक्टर तो निमित्त हैं, किया तो ईश्वर का ही होता है। डाक्टरों के करने से क्या हो सकता है ?

'हो तो बहुत सकता है पिता जी, लेकिन आज कोई अपने काम के प्रति ईमानदार नहीं रह गया है। और तो और, हमारी रहनुमा सरकार ही को देखिए। वह समझती है कि शहर के लोग ही जान, जान हैं, सारी सुविधाएँ वहीं इकट्ठी की जाती हैं और वह भी पैसे वालों के लिए। टी० बी० का अस्पताल वहीं है, दाँत का वहीं, आँख कान का वहीं, प्रसूति का अस्पताल वहीं और यहाँ के लिए तो जग्गू बहू चमाइन का मुरचार हँसिया, सुकुमार वैद्य की पुड़िया, पंडिताई और ओझाई तथा कस्बे के सरकारी अस्पताल का पानी ही काफी है। और शहर के अस्पताल तक कोई जाए भी तो कैसे ? कोई दुर्घटना होती है कोई आकस्मिक बीमारी होती है कोई गम्भीर रोग होता है तो कोई कैसे ले जाय ? ये खन्दकें, ये खाइयाँ, ये नाले, ये नदियाँ, ये रेतियाँ सदियों से मुँह बाए हुए इस जवार को निगल रही हैं, सारे रास्ते इनके पेट में समाये हुए हैं मीलों तक सड़कें नहीं, सवारियाँ नहीं कोई कैसे ले जाये मरीजों को शहर में ?'

'अरे हाँ सतीश, कब से सुन रहा हूँ कि गोरखपुर रुद्रपुर वाली यह कच्ची सड़क पक्की होने वाली है लेकिन अभी तक कुछ नहीं हुआ।'

'अभी तक नहीं हुआ और न होगा। हमारे जिले के जितने एम० एल० ए० और एम० पी० हैं सभी—मूर्ख—और कायर हैं विधानसभा और संसद में किसी का बोल नहीं फूटता। दूसरे जिले वाले अपने जिलों

की जनता की समस्याओं के लिए लड़ते हैं और ये बछिया के ताऊ खाली हाथ उठाते हैं।—इसीलिए यह सड़क नहीं बनने की। और जब तक नहीं बनती तब तक कितनी ही औरतें वकीलानी की तरह मरेंगी, कितनों की साँसें नदी-नालों के चढ़ाव उतार के झटके से टूटेंगी, कितने बच्चों को भूत जमुआ बन कर पकड़ेगा, कितने ही घायल लोग शहर पहुँचने के पहले रेत में विलीन हो जायंगे, कितनी नावें डूबेंगी और ये नदियाँ पेट फुलाये हुहकारती रहेंगी—'

'हे राम, कब से यह क्रम चल रहा है।' कह कर अमलेशजी ने खाट पर करवट बदली और ऊंघने लगे।

सतीश को नींद नहीं आ रही थी। वह चाँदनी रात में दूर-दूर तक देख रहा था—दौलत राय के भट्ठे का धुआँ रात में भी साफ दीख रहा था और उसकी गंध हवा में लोट रही थी।

वासती सतीश को समझा रही है—सुनते हू जी, मैं तो समझती हूँ कि आप सरपची छोड दीजिए। रोज रोज खबरें आती है कि आज वहाँ के सरपंच का कतल हुआ, कल वहाँ के। गाँव के लोग न्याय अन्याय का फसला सुनने को तयार नहीं। जहाँ किसी का स्वाथ दबा कि कतल करने को तैयार हो गया।

सतीश ने हँस कर टाल दिया—'चिन्ता क्यो करती हो? न्याय के लिए यदि सर भी कट जाए तो क्या हज?

'नहीं, हमें यह न्याय-अन्याय नहीं चाहिए, मेरे माथे का सुहाग बना रहे, मैं यही चाहती हूँ।'

'तुम गलत समझती हो। अगर इसी तरह हर आदमी सोचने लगे तो कोई सरपची ही न करे। दुनिया के जितने बडे काम होते हैं सबमें खतरा होता ह, वे सारे काम ठप्प हो जाएँ अगर हम इस तरह सोचने लगें।'

वासती के गले के नीचे बात नही उतरी वह डबडबाई आँखो से देखती रही और अत में बोली लेकिन कम से कम आप महीप बाबू वाले झगडे में मत पडिए।

'कोई भी हो, महीपसिंह हो या उनके बाप हों, म किसी को नही छोडूँगा इसाफ के नाम पर।' और सतीश वहाँ से उठकर बाहर आ गया लेकिन चिता चक्र ने उसका साथ नही छोडा—ठीक ही कहती ह वासन्ती गाँव के लोग अभी स्वाथ से ऊपर नहीं उठ सके ह। वे न्याय की महत्ता को नही समझ सके हैं। जहाँ किसी के खिलाफ न्याय हुआ कि गुडई पर उतारू हो जाता ह। इतने ही महीनो में कई सभापति और कई सरपंच कतल कर दिये गये। भला कौन करेगा सरपची और

समापतित्व। लेकिन नहो, सरपच और समापति भी न्याय नहीं कर रहे हैं। वे पक्षपात करते हैं, घूस लेते हैं, बलवानो से डरते हैं, अपना जेब भारी करने में और पुरानी दुश्मनी का बदला लेने की फिराक में रहते ह फिर कतल न हो तो क्या हो? दीनदयाल इसीलिए तो सरपची चाहता था ये सरपच समापति भी तो इसी स्वार्थी जनता के बीच से हैं क्यों न हों वसे?

हा, आज शाम को बाबू महीपसिंह का मुकदमा ह। जगपतिया ने दावा किया है इनके खिलाफ।

सुना ह जगपतिया कलकत्ते से आ गया है। सुना ह क्रान्तिकारी होकर आया है। वह तो पहले से ही बडा गुमुन्न रहा करता था, जब कभी महीपसिंह उसे मारते थे तब रोता नहीं था,—आंखो में खामोश सुलगता हुआ धुआं लिए वहां से टल जाता। उस दिन का दृश्य भी सतीश की आंखो में तैर गया, जब महीपसिंह के लाख बुलाने पर भी जगपतिया नही आया और जब आया तो उसने बडे निर्भीक स्वर में कहा था—वह बीमार है कैसे आये? और बडे कठोर स्वर में महीपसिंह से कहा था कि गाली मत दीजिए हमारी भी इज्जत इज्जत है।

और वह कलकत्ते भाग गया था सुना है वह मजदूर यूनियन में नेता बन गया था। नेता तो क्या बना होगा—हां मजदूरो का मेठ जरूर रहा होगा। नेता तो पढे लिखे लोग ही होते हैं, जो इनके असली दुख दर्द स परिचालित होकर नही, अपनी पार्टी की भलाई के लिए इनकी नेतागिरी करते हैं और ऐसे-ऐसे काम करवाते हैं इनसे जो इनके हित में कम उनके हित में अधिक होते हैं सो जगपतिया कलकत्ते से आग भर कर लाया है, लाल झडा लिए फिरता है और गाँव के तमाम मजदूरो को ललकार रहा है कि क्रांति कर दो, क्रांति कर दो मजदूरी बढवाओ, जो मजूरी कम दे या खराब जबान बोले उसके यहाँ काम करने मत जाओ, खेत तुम्हारे हैं, तुम उनके मालिक हो जगपतिया के हृदय

में महीपसिंह के खिलाफ बहुत घृणा है, बचपन से ही वह मार खाता आया है, अपने सामने ही अपने बाप को, माँ को भाई को अनेक मजूरों को महीपसिंह और उनके गुर्गों से पिटते हुए देखा है, सारी मार, सारा दर्द उसके दिल में जमा होता गया है और अब आँवा बन कर दहक रहा है पता नहीं क्या करेगा ? और महीपसिंह ऐसा जड़ और बेहूदा है कि जमाना बदलने के बावजूद वह अपनी टटली अधी प्रतिष्ठा और अहंकार को पकड़े हुए है गुड़ई से नये जमाने को भी प्रभावित करना चाहता है कमीना कमबख्त लेकिन जगपतिया उन्हें जीने नहीं देगा शांति से बाभनों की जाति को तो देखो आज भी ये लोग जाते हैं और इस तरह उसकी झूठी बातों से अनुगृहीत अनुभव करते हैं मानो महीपसिंह उन्हें राज्य दे देगा आज भी वह नौकर रखता है, झूठी झूठी नयी-नयी चमकीली योजनाएँ बनाता है और इस गाँव के लोग फँसते हैं चार-पाँच महीने काम करते है, जब भूखों मरने लगते है तब भाग खड़े होते हैं चुपके से। फिर दूसरे गुर्गे फँसते हैं और कुछ दिन तक फूले-फूले फिरते हैं और जब वे भी भूखों मरने लगते हैं तब भाग खड़े होते हैं लेकिन उसके सामने किसी को कुछ कहने की हिम्मत नहीं होती और जगपतिया है जो इतने दिनों तक उसके यहाँ खवास रहा है लेकिन आज महीपसिंह के सामने अंगारा बन कर खड़ा है—आगे बढ़े कि तुम्हारा बड़ा पेट फोड़ दूँगा

सतीश को सारी खबरें पहले ही मिल चुकी हैं। जगपतिया के पास महीपसिंह के दिये हुए कुछ खेत हैं नौकरी के रूप में। जगपतिया कलकत्ते से आया तो रमपतिया को भी महीपसिंह की नौकरी पर से छुड़ा दिया। महीपसिंह बहुत बौराये और फूटे ढोल की तरह बजते रहे कि तुम्हें उजाड़ दूँगा, बरबाद कर दूँगा, जान ले लूँगा। और जगपतिया गरात हुआ कहता रहा—देख लूँगा इस राक्षस के बच्चे को।

और जगपतिया के पास महीपसिंह के जो नौकरी में दिये हुए दो

है और जगपतिया सबके आगे चमचमाता गड़ासा लिए लाल-लाल आँखें किये खड़ा था—और गुर्रा रहा था—आ जायें महीपसिंह, अगर माँ का दूध पिये हो तो आज वारा-न्यारा हो जाएगा।'

उधर से हल्ला-गुल्ला करते हुए महीपसिंह के दल के लोग आ रहे थे। आगे आगे छलबिहारी हाथी पर था। जगपतिया सँभल गया। पार्टी के लोग नारा लगाने लगे और जगपतिया के नेतृत्व में हथियार चमक उठे, लाठियाँ खड़खड़ा उठीं, सब म उत्तेजित खून दौड़ने लगा। महीपसिंह के दल म काफी लोग थे और जगपतिया के साथ कम लोग। महीपसिंह के किराये के आदमी खेत के पास न आकर कुछ दूर पर खड़े हो गए और यह दृश्य देख कर स्तब्ध रह गए। जगपतिया के साथ जितने लोग थे सभी अपने दद में खौलते हुए अगार बने थे लेकिन महीपसिंह के जितने लोग थे वे किराये के टट्टू थे आधे मन से लड़ने आये थे। उन्हें इसके बदले कुछ नही मिलने वाला ह बल्कि वे लोग भी मन से अपने को जगपतिया के सताये हुए दल में ही पा रहे थे लेकिन बाहर से महीपसिंह के आदमी बनकर गरज रहे थे। अलग अलग सबने यह महसूस कर लिया कि आज जान जाएगी, आज अगारों से मुकाबला ह राख की ढेरियों से नही। ये ही सिपाही कई बार महीपसिंह के लिए लड़े थे पूरे जोश के साथ, पूरे अपनेपन के साथ लेकिन तब वे जानते थे कि महीपसिंह का मतलब क्या होता ह? महीपसिंह मरने वालों के खानदान का परवरिश कर सकते थे उन्हें नौकरियाँ और खेत दे सकते थे और न लड़ने वाला को उजाड़ कर बरबाद कर सकते थे। हाँ, तब दारोगा हाकिम सभी डरते थे इनसे सरकार के कितने बड़े खैरख्वाह थे ये। सरकार इन्हें नाराज नहीं करती थी। देखो कुत्ते मरें या जियें सरकार अपने पिट्ठू को नाराज क्यों करे? मगर आज बात बदल गयी ह। दारोगा भी इनकी नही सुनता ह, छोटे छोटे नता इनकी नाक में दम किये रहते ह, मर जाने पर ये हमारे परिवार की परवरिश भी नहीं

कर सकते, खुद तो सब बेच-बाच कर खा गए हैं। खाने को जुटता नहीं है, हमारी परवरिश क्या करेंगे? और अगर हमने किसी का खून ही कर लिया तो हमें ये बचा भी नहीं सकते। और और हम क्यों लड़ें? सबके भीतर एक जगपतिया उभर आया। सभी लोग तो इसी के दल के हैं। सभी के पास इनके थोड़े-थोड़े खेत हैं, हमें फोड़ फोड़ कर सबके खेत छीन लेंगे। हम भी तो जिनगी भर से इनकी गारी-मार खाते आ रहे हैं सो सभी लोग बँटे हुए मन से हाथ में हँसिया और लाठी लिए खड़े थे, केवल छैलबिहारी पूरे मन से हाथी पर बैठा-बैठा अपना कमजोर हाथ फेंक कर थूक उगलता हुआ चिल्ला रहा था—'हाँ भाइयो, खड़े क्यों हो, काट लो खेत को, मार कर बिछा दो इन बदमाशों को।' जगपतिया गरजा—'अरे जनखा छैलबिहारी, तू क्या करने आया है, एक भी झापड़ का तो नहीं होगा। जाकर अपने बबुआ का भेज, बहुत दिना से उनका रास्ता देख रहा हूँ, आज उनकी सारी जमींदारी खाक समझने को तैयार हूँ, अपनी एक एक आह का बदला लेने को खड़ा हूँ माई का दूध पिये हों तो आ जायें। तुम लोगो को लड़ाई पर भेज कर अपने दुलहिन के अचल में मुँह छिपाये बैठे होंगे। जाकर भेज उन्हें।'

सभी लोग खामोश खड़े थे। छैलबिहारी भीतर से डर रहा था लेकिन बाहर से गरज रहा था कि उजाड़ दूँगा, बरबाद कर दूँगा, छोटी जातियों की यह हिमाकत

जगपतिया चिल्लाया—'अरे हरामजादा, तू क्या है? तू तो कुरमी है और जाकर अपनी माई से पूछ कि कैसे पैदा हुआ है?

पिलवान पूछ रहा था छैलबिहारी से कि हाथी बढ़ाऊँ?

छैलबिहारी जानता था कि हाथी के आगे बढ़ने पर जुलुम हो जाएगा। पहले वहा शिकार बन जायेगा और हाथी यदि घबड़ा कर भागा तो पता नहीं उसका क्या होगा? उसने पिलवान को हाथी बढ़ाने

ने मना कर दिया और जवानों को आगे बढ़ने के लिए ललकारता रहा लेकिन कोई आगे बढ़ने को तयार नहीं था—

अंत में छत्तिहारी चिल्लाया—'अच्छा भाइया, आज छोड़ दो फिर देखा जाएगा' और उसने पिलवान से हाथी मोड़ने को कहा।

सेना लौट चली तो जगपतिया चिल्ला कर बोला—'अब अपने बाप महीपसिंह को भेजना, तुम मरतव क्या आते हो? जाओ अपनी बीबी से तेल मालिस कराओ और सोपारी काटो।

पार्टी के लोग नारे लगाते रहे और उसी दिन जगपतिया ने सबके साथ मिलजुल कर खेत काट लिए। लेकिन उसने अदालत पंचायत में नालिश कर दी कि महीपसिंह के आदमी बलवा करने आये थे, उसकी जायदाद की डकती करने आये थे। उसके दल के कुछ लोगों को चोट आयी है। वे फिर फिर धमकी दे रहे हैं खून-खराबा करने की।

आज उसी मुकद्मे की पहली सुनवाई थी। सतीश को घटना की सच्चाई ज्ञात थी लेकिन मुकद्मे की सुनवाई तो होती ही है।

सतीश ने महीपसिंह के नाम सम्मन जारी किया था और महीपसिंह हँसे थे, 'अरे अब महीपसिंह के झगड़ा का फसला ये अरवस बबुवा करेंगे! दरिद्रों और मूर्खों की पंचायत में महीपसिंह नहीं जायेंगे। देखता हूँ इन देहाती जजा को।' उन्होंने चपरासी को डाँट कर खदेड़ दिया था। सतीश ने फिर सम्मन भेजवाया, महीपसिंह इस बार चपरासी को मारने उठे। और तीसरी बार चपरासी की जाने की हिम्मत नहीं हुई। सतीश ने रजिस्टर्ड डाक से सम्मन भेजवाया और मुकद्मे की तारीख लिख दी। और महीपसिंह के व्यवहार का एक नोट पंचायत आफिसर को भेज दिया।

सतीश सोच रहा था कि सरकारी व्यवस्था में हस्तक्षेप करने वाले, उसका मजाक उड़ाने वाले महीपसिंह अभी न जाने कहाँ का सपना

देखते हैं और विडंबना यह है कि सरकार भी ऐसे ही लोगों को मान दे रही है टिकट दे रही है और क्या क्या? लेकिन वह अपनी अधिकार-सीमा में इस राक्षस को नहीं छोड़ेगा। इसका अंजाम चाहे जो हो। अंजाम तो कुछ न कुछ बुरा होगा ही क्योंकि महीप अपनी ताकत भर मेरा अपकार करने की कोशिश करेगा। कई लोग संकेता से समझा भी चुके थे कि वह इस मुकदमे को दबा दे या इधर-उधर कर दे। वह क्यों एक मामूली मजूर के लिए एक बड़े आदमी से रार मोल ले रहा है? सतीश जानता था कि ये सारी बातें परोक्ष रूप से महीपसिंह की ओर से कही जा रही हैं। महीपसिंह स्वयं अपने नाम से कुछ कहलाना अपनी हेठी समझता होगा, वह सतीश का अभी भी अपना नौकर ही समझता होगा और बड़े बड़े हाकिमों के तलवे चाटने वाले महीपसिंह जैसे लोगों को गाँव के लोगों के अधिकार के प्रति आस्था ही कैसे हो सकती है! हाँ, इन पंचायतों में उन्हें आस्था कैसे हो सकती है जहाँ वे स्वयं सभापति और सरपंच नहीं हैं।

सतीश बहुत गुस्से में है। महीपसिंह की ओर से अगर कोई कोई बात कहता है तो पगला उठता है अपने सहज कर्कश स्वर में डाँट कर कहता है—'जाओ-जाओ महीपसिंह से कह देना कि यह सिंहपुर का दरबार नहीं है, यह न्याय की भूमि है।' लोग सतीश की डाँट सुनकर चले जाते।

सतीश बैठा बैठा इसी मुकदमे के बारे में सोच रहा था कि भाट पारका रामधनी बनिया आ गया। उसे देखते ही सतीश बौखला उठा लेकिन जब्त किये रहा।

'बाबा!' रामधनी ने डरते डरते कहा। सतीश गुस्से के मारे बैठा रहा।

'सरकार, जरा मेरी ओर भी निगाह हो जाए।'

'हरे बेईमान बनिया, मैंने तुमसे कितनी बार कहा कि जो कुछ

कहना हो अगालत में आकर कहना, यहाँ कोई अदालत लगी है ? तुम्हारे खिलाफ तमाम चाज हैं और एक एक को जब उठाऊँगा तब तुम्हा ी अकल ठिकाने आएगी। फिर कभी घर पर कुछ कहने के लिए आया तो पुलिस के हवाले करा दूँगा।'

रमधनिया चुपचाप बठा रहा और इधर उधर देख कर बडी हिम्मत करके खँखार कर कहा—'सरकार मेरी दूकान बन्द हो गयी तो तबाह हो जाऊँगा, कुछ नजर हो जाय, क्यो हमारी इज्जत और रोजी बरबाद होने देंगे ? और उसने सौ रुपये का एक नोट सतीश के पाँव पर रख कर अपना सिर रख दिया।

सतीश गुस्से से पागल हो गया और जोर जोर से बोलन लगा—'साले हरामखोर मुझे घूस देन आया ह, तेरी जाति में ही नीचता भरी ह, डाँडी मारते मारते इन्साफ की भी डाँडी मारने लगा ? सौ का नोट खिसोर कर उसके मुँह पर दे मारा। कुछ लोग इधर उधर से आ गये—'क्या ह क्या ह भाई !' कहने लगे।

सतीश इ साफ के मामल में गाँव के अगुओ भगुओ की हाँ में कभी हाँ नही मिलाता। वह चुप रहा।

रमधनिया चुपचाप मुँह लटकाये चला गया

सतीश अकेला रह गया और आज के मुकद्दमे के बारे में सोचने लगा, 'कहिए चाचा जी किस चिता में मग्न ह ?'

सतीश ने देखा—रामकुमार ह। क्या है कामरेड आओ आओ।

रामकुमार आ कर बठ गया तो सतीश ने कहा—'आज तो तुम्हारे कामरेड, जगपति का मुकदमा ह।

'हाँ ह।' रामकुमार ने खट्टे मन से कहा।

'क्यो रामकुमार, तुम्हारी पार्टी इस केस को लेकर कुछ आदोलन वगरह नही कर रही ह ? जमीदारो की औलादों के खिलाफ कुछ न कुछ

आप लोगों को करना ही चाहिए ताकि वे इस तरह मजूरो किसानो न सता सकें।'

रामकुमार नही बोला जैसे उसे इस केस में कोई रस नही है। रुक र बोला—'अरे छाड़िए इस झमेले को, इसमें कुछ ह नही। वेकार ह बड़े आदमी से दुश्मनी मोल लेनी ह। जगपतिया गुडा है, पार्टी वोटी । मेम्बर वह कभी नहीं रहा, वह कलकत्ते में गुडई करता रहा और हाँ आकर पार्टी का मेम्बर होने का ऐलान कर बठा ताकि उसे पार्टा । सहायता मिले।'

सतीश रामकुमार की ओर अवाक होकर दखने लगा। वह स्तब्ध ा और उसे लग रहा था कि महीप, दीनदयाल रामकुमार सभी एक सार में खड़े ह एक आवाज से गुँथे हुए उसने कहा—'कामरेड तुम्हारी बात से मुझे ताज्जुब हो रहा ह। तुम्हारी पार्टी ने उसे मेम्बर स्वीकार किया है और मुझे यह भी मालूम ह कि पार्टी ने इस केस की देखभाल के लिए आपको जिम्मेदारी सौंपी थी—मगर आप न तो कभी सिंहपुर घटना की जाँच के लिए गए औ' न तो घटना घट चुकने के बाद ही कोई रस दिखाया। अब समझ में आया क्या आप भागते रहे इस मामले से। बड़े आदमी से दुश्मनी आप क्या मोल लेंगे एक गुंडे के लिए ?

'नहीं नहीं चाचा जी, आप मुझे गलत समझ रहे ह और गलत ही समझते आये हैं। जिन दिनों यह घटना हो रही थी उन्ही दिनो कालेज में परीक्षाएँ चल रही थी, इतना फुरसत नहीं मिली कि घर का ओर आ सकूँ।'

क्या, मैंने देखा है खेत कटाने तो आप कई बार आये थे। और पार्टी का जिम्मेदारी भी तो कोई चीज ह।' कह कर सतीश मुसकराने लगा।

और रामकुमार मुस्कुरा कर उठ खड़ा हुआ—'आपको राजनीति जिन्दगी भर नहीं आयेगी। सरपंची का सेहरा बाँधे बैठे हैं तो लड़िए महीपसिंह से और भोगिये।'

सतीश एकाएक गुस्से में आ गया—'कामरेड अपनी जनखा राजनीति लिए चाटते रहो, मैं तो जीवन को देखता हूँ। सरपंची का मजाक उड़ा रहे हो इसी के लिए तो मर रहे थे और न्याय के लिए महीप तो क्या ईश्वर से लड़ आऊँगा।

रामकुमार चला गया। सतीश अपने गुस्से को सम पर उतारता हुआ बोला—हूँ बड़ा बना है कामरेड की दुम। दलाल कहीं का।'

अदालत पंचायत थी इस बेंच में सतीश के अलावा लालमणि भी था और कई गाँवों के तीन एक आदमी थे। महीपसिंह नहीं आये। छैल बिहारी आया था हाथी पर चढ़ कर। मुकद्दमा महीपसिंह के खिलाफ था सम्मन भी उन्हीं के नाम था। वे नहीं आये तो अदालत ने आपत्ति की कि प्रतिवादी तो आया नहीं सुनवाई कैसे हो? बेंच के और लोगों ने धीरे से सुझाया कि इतने बड़े आदमी अदालत में नहीं आये तो उन्हें क्या मजबूर किया जाए। छैल बिहारी से ही काम चलाया जाए लेकिन सतीश ने स्पष्ट स्वरों में कहा कि अदालत के सामने कोई छोटा-बड़ा नहीं होता उन्हें आना ही होगा। लेकिन चूंकि मुकदमे में छैलबिहारी भी मुलव्विस है इसलिए इस बार उनकी सुनवाई हो जाए।

छैलबिहारी बड़े अन्दाज से हाजिर हुआ, दूसरी ओर आँखों में गुर्राता हुआ जगपति खड़ा था। भीड़ काफी जमा थी।

छैलबिहारी बोलते-बोलते चीखने लगा और जगपति को धमकी भरे उपेक्षा भरे अपशब्द कहने लगा। अदालत के सारे पंच हँस-हँस कर सुन रहे थे लेकिन सतीश का पारा गरम होता जा रहा था। जगपतिया फूटने ही वाला था कि सतीश चीख कर बोला—'छैलबिहारी जी, अपनी बकवास बन्द कीजिए। आप अदालत का अपमान कर रहे हैं। आप में

इतनी तमीज होनी चाहिए कि बाबू महीपसिंह के दरबार और अदालत में भेद कर सकें। अगर आपका बोलना जारी रहा तो आपको अदालत से निकलवा दूँगा। अन्य पंच भी गम्भीर हो गए। सामान्य जनता जो अपने गाँव के सभापतियों की अदालतों में इस प्रकार की कहा सुनी, गाली गलौज और हाथा-पाई का दृश्य देखने को अभ्यस्त रही है, इस प्रकार के निर्णय को देख कर मुग्ध रह गयी। अलबत्ता यह कोई सरपंच है जो गरीब-अमीर, बलवान-कमजोर का भेद किये बिना न्याय कर सकता है। और पंच तो डरते हैं, पक्षपात करते हैं और चेहरा देख कर न्याय करते हैं।

जगपतिया बड़े ही जोरदार पर संयत स्वर में बयान देता रहा। गवाहों के बयान के लिए अगली बैठक की घोषणा करके अदालत उठ गई।

## : २० :

फैसला महीपसिंह के खिलाफ हुआ। महीपसिंह आये नही इसलिए उन पर पचायत के अपमान का अपराध लगाया गया और बल्वा करने के प्रयत्न के लिए चालीस रुपये का जुर्माना किया गया। महीपसिंह ने खोखला कर इस निर्णय के खिलाफ कोर्ट में दावा दाखिल कर दिया और सतीश से बदला लेने की ठान ली। सतीश ने दो साल पहले महीपसिंह से दो बीघे खेत लिए थे उसके आधे रुपये महीपसिंह ने ले लिये थे मगर अभी कुछ पक्का लिखा पढ़ी नही हुई थी। महीपसिंह न उन खेतों पर दावा किया और यह कहा कि ये खेत तो मने मुफ्त में दिए थे। अगर सतीश को ऐसे ही हों तो दो हजार रुपये मुझे देकर ले सकता है, नहीं तो मैं इस पर अधिकार कर लूँगा। ये खेत काफी अच्छे थे उन पर दीनदयाल और रामकुमार की आँख लगी थी।

सतीश ने कह दिया कि मने इसके आधे रुपये दे दिए हैं और आधे रुपये दो साल की नौकरी से पूरे कर लिये गये हैं। दो साल से उसे कुछ मिला नहीं है इसलिए ये खेत उसके हैं। उसके पास कुछ कागज पत्र भी थे लेकिन पक्का कुछ भी नहीं था। इसलिए वह भीतर भीतर घबराया हुआ था कि यदि यह जालिम बेईमानी पर तुल ही गया तो क्या होगा? जो भी हो वह उसके सामने भीख नहीं माँगने जाएगा। उसने कहला दिया कि ये खेत उसके हैं, किसी के बाप का भी अधिकार उस पर नही हो सकता।

उधर महीपसिंह ने दीनदयाल और रामकुमार से अलग-अलग बातचीत की कि कौन अधिक दे सकता है? दीनदयाल ने कहा सरकार दोनों बीघे खेत उसी को दे दिये जाएँ। मगर महीपसिंह ने कहा—नही रामकुमार उनका हितैषी है और हर मामले में उसकी मदद की है इसलिए कुछ खेत उसे भी मिलने चाहिए।

दीनदयाल ने अपनी लिजलिजी मुद्रा में कहा—'सरकार वह तो सोसलिस्ट है और सोसलिस्ट तो सोसलिस्ट जयपतिया का साथी होगा और वह सतीश का भी दोस्त है। हजूर धोखे में न रहें।'

महीपसिंह ने मुसकराते हुए कहा—'नहीं आप पूरी बात नहीं जानते। दोनों आदमी एक-एक बीघा खेत ले लीजिए।'

'लेकिन हजूर पहले कब्जा तो आपको ही करना पड़ेगा, हम लोग पट्टादार हैं साधे संघर्ष में क्यों आयें ?'

'नहीं नहीं कब्जा तो मैं हा कराऊँगा लेकिन आप दोनों आदमी अपनी अपनी जान पहचान के गुंडों को तो सहेज सकते हैं। आपके भी तमाम अहिर चेले हैं और मास्टर रामकुमार का भी कस्बे के पास के आसियों-पासियों से बड़ा सम्बन्ध है।

'हाँ यह तो हो जायगा सरकार।'

और जब आषाढ़ में खेत बोये जाने लगे तो महीपसिंह के आदमियों ने आकर खेत छेंक लिया और उनके हलवाहों ने खेत जोतना शुरू किया। सतीश खेत पर था और अमलेश जी भी धीरे धीरे वहाँ आ पहुँचे। यह सारा माहौल अप्रत्याशित नहीं था, सतीश जानता था कि यह होने वाला है इसलिए वह गाँव के तमाम लोगों से कह आया था कि ऐसा हो सकता है ?

लेकिन गाँव के किसी भी आदमी ने इसमें रस नहीं लिया। इस हल्ले गुल्ले से गाँव के कुछ लोग धीरे धीरे जुट आये और तमाशाई की तरह खड़े रहे, कुछ लोग तो आये ही नहीं, काम पर जुटे रहे। बलई और कुंजन धीरे से सतीश से पूछा—'भइया क्या करना है ? जान दे दें ?'

सतीश ने उन्हें संकेतों से रोका। वह देख रहा था तमाम अजनबी चेहरों को जिन्हें उसने कभी महीपसिंह के यहाँ नहीं देखा था कौन हैं ये

लोग ? सतीश का गुस्सा पगहा तुड़ा रहा था लेकिन अमरेश जी उसे रोके हुए थे और गुस्सा करके भी वह क्या करता ? जहाँ पचासों आदमी लाठी लिए खड़े हों वहाँ वह क्या कर सकता है ? वह देख रहा था गाँव के लोगों को—बुत बने खड़े है तमाशा देख रहे हैं। यदि वह उबाल में आकर कुछ करता है तो मार भी खायेगा, बदनामी भी होगी और सरपंची कलंकित होगी। बलई और कुजू भी उबल रहे थे लेकिन वे सतीश का मुँह जोह रहे थे।

अमलेश जी सतीश की बाँह पकड़ कर खींचते हुए बोले—बाबू घर चलो इन्हें जोतने बोने दो, देखा जाएगा। गाँव के लोगों के लिए हम तमाशा क्यों बनें ?

सतीश घर लौटने लगा, उसकी आँखों में उठती हुई लपटें धीरे धीरे गिरने लगी उसके साथ बलई और कुजू भी आये।

'अब गाव में कोई किसी का नहीं रहा भइया। बलई ने कहा—'उस दिन जब भुइहार के बच्चे ने मेरे ऊपर हमला किया था तब भी कोई साथ नहीं आया और आज जब पूरे गाँव की नाक कट रही थी तब भी कोई नहीं आया, सभी तमाशा देखते है।

सतीश चुप रहा। अमलेश जी का स्वर भीग आया था। बोले—यह कैसा जमाना आया है, जब कोई नहीं है किसी का। हमारे जमाने में इतनी-सी बात पर तो पूरे गाँव में आग लग गयी होती। यही महीपसिंह है, इसके पिता इसी के समान जालिम थे लेकिन कभी भी हमारे गाव पर आँख उठाने की हिम्मत उनकी नहीं हुई। वे तब तप रहे थे चारों ओर उनकी तूती बोलती थी। लेकिन हमारे गाँव से वे भी थर्राते थे। और आज जब कि महीपसिंह टूट चुके है तब इस गाँव पर हमला करते हैं और गाँव का कोई भी आदमी नहीं बोलता और नहीं तो गाँव के लोग अपने चेले-चाटियों को महीपसिंह के गुर्गों के साथ भेज देते हैं।'

'चेले-चाटी ?' सतीश चौंका।

'हाँ बाबू, मैं जानता हूँ इस मोड में बहुत से गुंडे दीनदयाल के चेले थे दूर दूर गाँवा के और एकाध तो कस्बे के पास के पसियाने के पासी थे।'

सतीश किसी गहरे सोच में डूब गया, रामकुमार ठीक कहता ह— 'मुझे राजनीति नहीं आती। मैं तो न्याय की पगडी बाँधे बैठा हूँ जिन लोगा के लिए न्याय करो मौके पर वे ही तमाशाई बन जाते ह। न्याय सत्य आज सभी झूठे हो गए ह। रामकुमार ठीक कहता ह—मुझे राजनीति नही आती, राजनीति जो छुरा भोंक कर मुसकराती रहती ह, राजनीति जो कभी भी कोई करवट ले सकती है। बेहयाई से जो किसी को भी बलि दे सकती ह ठीक ह अब वह राजनीति सीखेगा, सीखेगा, जरूर सीखेगा उसके भीतर एक प्रतिध्वनि-सी होने लगी सत्य न्याय सभी निकम्मे ह झूठे ह वह बलवानो का पक्ष लेगा जहाँ स्वार्थ पूरा होगा उसका पक्ष लेगा

'गाँव टूट रहा है, मूल्य टूट रहे है, सत्य टूट रहा है कोई किसी का नही, सभी अकेले ह, एक दूसरे के तमाशाई, वही क्यो सबका ठीका लिए फिरे गाँव टूट रहा ह मगर नहीं एक नया गाँव बन भी रहा ह वह ह किसानो मजूरा का। जगपतिया का खेत नही कटवा सके महीपसिंह। वह अकेला नहीं था उसके साथ अनेक हाथ उठ गए थे मरने-मारने को तयार। मगर वह सरपच ह सबका उपकार कर चुका है, प्रतिष्ठित व्यक्ति ह और महीपसिंह के गुंडे उसका खेत जोत गए, कोई साथ नही आया। वह करता क्या? झगडा करता? अकेले इतने गुडा से झगडा करके मार खाता क्या? इस जमाने में भी दो ही शक्तियाँ विकासमान ह पैसा और गुण्डई उसके पास तो कुछ भी नहीं है। वह मुकद्दमा लडेगा लेकिन उसके पास तो पर्याप्त कागज भी नहीं ह। पटवारी के कागज में उसका नाम तो ह, मगर सुना ह महीपसिंह ने पटवारी को बुला कर धमकाया ह, वह बुजदिल भला उनके खिलाफ क्यो जाएगा?'

'बाबा।'

सतीश ने चौंक कर देखा—जगपतिया हाथ में लाल झंडा लिए खडा है।

'आओ जगपति।'

आयें क्या बाबा। मुझे तो इस गाँव पर नफरत से थूकने की इच्छा होती है।' वह जोर-जोर से बोल रहा था ताकि आते-जाते और आस पास के घरो के लोग सुन सकें। वह कह रहा था—'इस गाव में सभी हिजडे बसते ह क्या? सतीश बाबा के खेत पर ई जालिम छत्री कब्जा कर ले और गाव के लोग मेहरारू की तरह टुकुर टुकुर ताकते रहें।'

सतीश चुप रहा—'म क्या करता जगपति? क्या म लाठी लेकर गुडा से मारपीट करता?

चुप रहिए सतीश बाबा, आप भी बिल्कुल वही ह। आप मुझे बता तो सकते थे कि ऐसा होने वाला ह। म अपने दल के साथ आता और गँडासा से एक एक को वाल कर किनारे कर देता। मेरी और महीपसिंह की लडाई केवल निजी नही है, जहाँ कही महीपसिंह ऐसी गुडई करेगा म अपने दल के साथ पहुँचूगा और उसे खतम करके रहूगा।' वह चुप हो गया। फिर बोला 'और आप, आपका परेम तो मेरी नस-नस में समाया ह क्या मैं भूल सकता हूँ आपके उपकारो को? आपने किसका उपकार नहीं किया मगर आपके गाँव वाले हैं जो बस लोटा उठाकर दही-बूरा खाना जानते हैं, किसी के उपकार की कीमत क्या समझें?'

गाँव के लोग सुनते थे और चले जाते थे। बलई और कुजू पास बठे हुए जगपति को बात का समर्थन कर रहे थे। बलई गरज उठा—'सतीश भाई हुकुम दें तो मैं महीपसिंह के घर में पठ कर आग लगा आऊँ लेकिन ये कभी हामी ही नहीं भरते ह।'

सभी लोग हँसने लगे।

जगपति ने कहा—'बलई बाबा तुम अपनी आदत से बाज नहीं आओगे।'

सतीश ने जगपति से कहा—'मुझे नहीं मालूम था कि गाँव में ऐसी नपुंसकता छा गयी है और तुम्हारी सहायता लेने का मतलब होता है न्याय को बदनाम करना। लोग यही समझेंगे कि मैंने जान-बूझकर तुम्हारे पक्ष में फैसला किया है और तुमने उसके बदले मेरी सहायता की। जब कि बात यह है कि मैंने न्याय न्याय के लिए किया और उसे यह टूटा हुआ जमींदार नहीं सह सका।'

'हाँ यह सब मेरे कारण हुआ है और मैं यह नहीं होने दूँगा। मैं पार्टी के सामने भी यह सवाल उठाऊँगा।'

'हाँ, और पार्टी के सामने क्या यह भी सवाल उठाओगे कि उसी पार्टी के एक सदस्य उस खेत को खरीदने को तैयार हैं और सच बात तो यह है कि उन्होंने ही इस खेत के बारे में महीपसिंह को उकसाया है।'

'हाँ यह भी सवाल उठाऊँगा। मैं जानता हूँ उस मेम्बर को जिसे पार्टी ने मेरे मामले की देख रेख करने के लिए जिम्मा सौंपा था और मौके पर जिसका पता ही नहीं चला।'

'हाँ, उन्हें राजनीति आती है न इसलिए।'

'राजनीति नहीं, सब खाने पीने वाले लोग हैं ये। अच्छा देखा जाएगा। खेत न काटने का समय आये तो खबर दीजिएगा। देखता हूँ कौन माई का लाल आता है खेत पर।'

जगपतिया चला गया। सतीश के मन पर एक धक्का मार गया।

वह बैठा रहा और आस-पास के गाँवों के कुछ लोग बारी-बारी आये और अपनी सहानुभूति प्रकट कर गए। सतीश ने अनुभव किया कि अपने गाँव में वह जितना ही अकेला है उतना ही दूसरे गाँवों में प्रिय।

साफ छूट गया और सतीश ने यह भी कह दिया कि रामधनी चाहे तो झूठ मूठ आरोप लगाने वालो के खिलाफ मुकदमा दायर कर सकता ह

सामान्य जनता सतुष्ट होकर जाने लगी लेकिन रामकुमार, दीनदयाल, दर्लसिंगार सभी टीका टिप्पणी करते साथ जा रहे थे। रामकुमार और दीनदयाल दोनो ने एक साथ कहा कि घूस लिया ह रमधनिया से। दर्लसिंगार बोला—'हाँ मने देखा था आज रमधनिया आया था और ओसारे वाले कमरे में कुछ खुसुर फुसुर हो रही थी।'

सतीश दूसरी गली से निकल रहा था उसके साथ कुजू भी था। सतीश ने सुन लिया और अपने को सँभाल नही सका किचकिचा कर बोला—हरे बेईमान सालो, असे तुम लोग चोरी-बेईमानी करते हो, मूठ बोलते हो दूसरे का खेत अपने नाम लिखाते हो, पाई पाई के लिए ईमान बेचते हो, राजनीति का नाम लेकर मउगई खेलते हो घटियाही करते हो वसे ही सब को समझते हो। म जानता हूँ तुम लोगो ने रमधनिया से मुफ्त में सामान माँगे ह उसने नही दिये ह तो उसके खिलाफ मुकदमा दायर कर दिया। इतना जोर था तुम्हारे सत्य में तो क्यों नही साबित कर लिया? वहा तो बकरी की तरह मिमियाने लगे। खबरदार यदि ऐसा जबान फिर निकाली तो।'

तीनो सिटिया गये लेकिन अपना तेज दिखाने के लिए लड़ने को तयार हो गए—'इस तरह डपटने क्या हो, ऐसी गाली-गलौज करोगे तो बजड़ जाएगी।

तो बजड़ जाए।' पाछे स बल्ई लाठी ताने खड़ा था। बहुत सह रहा हूँ मैं आज तीनो को छिनगा कर रख दूँगा।'

'चलो हो, चलो हो।' मउगा दर्लसिंगार ने दीनदयाल और रामकुमार की बाँह पकड़ कर ठेलते हुए कहा।

'बस।' बल्ई हँसने लगा।



: २२ :

शारदा का ओर सूना-सूना सा लगने लगा। वैसे वह थी भी गाँव में अकेली थी किसी से विशेष मिलना जुलना नहीं, लेकिन लड़किया एक एक करके विदा होने लगी तो अकारण उसका सूनापन दूना होता गया। पारवती चली गयी मास्टर सुमन ने भी गीतवा को पार उतार दिया। अच्छा वर है उसका, पढ़ता है इंटर में, गरीब है तो क्या? शारदा को वह दृश्य नहीं भूलता जब मास्टर सुमन बाबूजी के पास पैसे के लिए गिड़गिड़ा रहे थे। बड़ी दया आती थी बेचारे पर लेकिन बाबूजी टस से मस नहीं होते थे। मास्टर ने कुछ खेत बोत देने की बात चलाई थी उसे पता नहीं फिर क्या क्या हुआ लेकिन बाबूजी ने पुकार कर कहा था बेटी—'चाची से पाँच सौ रुपये तो माँग लाना।' बेचारे के पास खेत हैं ही कितने, अगर बाबूजी को दे दिये होंगे तो क्या हाल होगा उनका?

शारदा भीतर से भीग आई। उसका वश चले तो वह गाँव की सारी गरीब लड़कियों की शादी अपने पैसे से कर दे। और भी लड़कियाँ चली गयीं, उसे गाँव सूना लग रहा है

छुट्टियाँ पूरी हो रही हैं। मास्टर जी घर गए हुए हैं अब आने वाले होंगे। स्कूल की हालत बड़ी खराब है, उस दिन मीटिंग हुई थी। बाबूजी से मीटिंग का हाल पूछा तो हँस कर कहने लगे—'तुमसे क्या वास्ता मीटिंग से।' हाय, वे कुछ बताते ही नहीं। पता नहीं क्या हो? स्कूल टूट गया तो क्या होगा? मास्टर जी। रामबहादुर से पूछा तो कहने लगा कि उसने सुना है कि स्कूल चलेगा। लोग चन्दा इकट्ठा करेंगे, सरकार से मदद देने के लिए कहा गया है लेकिन कुछ मास्टरों को निकाला जाएगा। शारदा ने बहुत बेसब्री से पूछा—'किन मास्टरों को?

'मुझे क्या मालूम, बाबू जी जानें।'

शारदा परेशान है— किहें निकाला जाएगा? रामबहादुर मूर्ख है उसकी बात का भी क्या विश्वास? बाबू जी बताते ही नहीं। सतीश काका से पूछे? हाय दइया पागल हो गयी है क्या? उनसे कैसे और क्यों पूछेगी स्कूल के बारे में? और वे तो नाराज हैं हम लोगों से। नहीं हम लोगों से नहीं बाबू जी से बाबू जी भी अजब हैं कि सबसे रगड़ मचाते रहते हैं। बड़े भले हैं सतीश काका। मुझे देखते हैं तो बहुत स्नेह से बोलते हैं लगता ही नहीं है मेरे बाबू जी में उनमें अनबन है। उनसे पूछूँ तो बताएंगे। लेकिन लेकिन कैसे पूछूँ उनसे? सकोच लगता है। मन में क्या सोचेंगे कि मैं क्या पूछ रही हूँ? रामकुमार से पूछे? धत वह तो लफंगा है बिना पेंदे का लोटा और अच्छी निगाह से लड़कियों को नहीं देखता हाय क्या करें? किससे पूछे? मास्टर जी नहीं आये तो क्या होगा? एक और सूनापन उसके आगे बिछ गया। बदमी से उस दिन पूछा था तो वह भी कुछ बता नहीं सकी बल्कि इस समाचार से हक्का-बक्का रह गयी।

सतीश सोच रहा था स्कूल का क्या होगा? बड़ा मुश्किल से तो इस अभागे जवार में एक अंग्रेजी स्कूल खुला और विश्वास बँधा कि इस जवार के अभागे लड़के भी पढ़ लेंगे। मगर स्कूल चरमरा रहा है, कोई मकान बिल्डिंग नहीं, मास्टरों की तनखा की कोई व्यवस्था नहीं, कई महीनों से तनखा बाकी है, और लोग हैं कि दे सकने की योग्यता रखते हुए भी फीस माफी चाहते हैं और सबसे बुरी बात तो यह कि मास्टर लोग ऐसे भर गए हैं जैसे भेंड़ बकरे हों। जिसे कहीं ठिकाना नहीं उसे यहाँ ठिकाना मिला हुआ है। कोई इस जवार के किसी बड़े आदमी का भाई भतीजा है, कोई किसी का सम्बन्धी है, कोई किसी मेम्बर का, दुम लगवा है और सभी लोग अपनी मर्जी से आते हैं, टाँग पसार कर

ों पर लेटते हैं। ले देकर हेडमास्टर उमाकांत पाठक ही योग्य और नता है लेकिन मास्टर लोग भी उनसे नाराज हैं कि वे उन लोगों से । कम स्कूल का काम लेना चाहते हैं और उन मास्टरों से सम्बद्ध लोग जो यह सोचते हैं पता नहीं कब हम हेडमास्टर की रिपोर्ट पर हमारे बच्चे अयोग्य करार दिये जाकर निकाल दिये जायेंगे। इसीलिए सभी न जाने-अनजान उमाकांत पाठक से नाराज थे और चाहते कि वे काल दिए जाएं। लालमणि और मास्टरों की नालायकी को समझता । और यह भी जानता था कि उमाकांत योग्य शिक्षक है, लड़के भी हैं खूब चाहते हैं लेकिन वह भी उनसे नाराज था क्योंकि उमाकांत ठक उसकी बात नहीं मानते थे। वह सेक्रेटरी है और उसकी बात डमास्टर न मानें यह कितनी गलत बात है। अतः वह चाहता था कि से निकाल कर किसी पिट्ठू को लाया जाए। लेकिन सतीश ने जोरदार मर्थन किया उमाकान्त पाठक का। यह स्पष्ट कर दिया कि यदि माकांत पाठक को निकाल कर दो चार और गदहा का भर देना है तो कूल तोड़ दो। इतने परिश्रम से इस इलाके में एक स्कूल खुला तो इतने ग्रह लगे हुए हैं इसके साथ। अभी तो ठीक है कि तनखा समय पर नहीं दी जा पाती इसलिए इस देहात के सारे अरवस बथुआ भरे हुए हैं। जिस दिन स्कूल की हालत ठीक हो जाएगी बाहर से अच्छे शिक्षक बुलाए जायेंगे। राजनीति स्कूल को ले डूबेगी।

दीनदयाल ने भी समर्थन किया पाठक का। रामकुमार उमाकांत पाठक के खिलाफ रहता है अनायास। शायद इसलिए भी कि पाठक की अच्छे शिक्षक के रूप में ख्याति है। वह तारीफ सुनता है तो मुँह बिचका कर कहता है, कुछ नहीं आता उन्हें, खाली लफ्फाजी करते हैं। लेकिन दीनदयाल के साथ सतीश का खेत ले रहा था इसलिए उनके कहने पर उमाकांत का समर्थन किया था सतीश ने मीटिंग में उन मास्टरों के नाम प्रस्तुत किए जो पढ़ाने में एक दम कमजोर थे और नियमित नहीं

थे। बड़ी मुश्किल थी मीटिंग के सामने। ये सारे मास्टर कहीं न कहीं सम्बद्ध हैं, यही है वह आपत्ति थी कि उन्हें कैसे निकाला जाए। तब ये बाबू महीपसिंह के भेजे हुए तब ये मास्टर ... आत्मा पारस मल के भतीजे और ऐसे हो तमाम ... महीपसिंह और पारसमल के व्यक्ति नियुक्त किये थे। सतीश ने कहा ... हेडमास्टर

रपोट पेश कर दी थी उसमें इन दोनों व्यक्तियों के खिलाफ काफी लिखा गया था। महीपसिंह और पारस मल दोनों कार्यकारिणी के सदस्य हैं। महीपसिंह तो कभी आते ही नहीं पारसमल ना नहीं आये थे। इसलिए इन दोनों नामों पर आसानी से चर्चा हो सकती थी लेकिन कोई चर्चा करने को तैयार नहीं था सतीश ही बोला क्योंकि उसे राजनीति नहीं आती है। लेकिन तय हुआ कि फिलहाल रहने दिया जाए आगे देखा जाएगा, इन्हें वार्निंग दे दी जाए।

सतीश उदास था इस निर्णय से। स्कूल यहाँ के गरीब विद्यार्थियों का भाग्य है। एक तो यों ही विद्यार्थियों को वातावरण नहीं मिल पाता, दूसरे ये अभागे मूर्ख मास्टर इकट्ठा होकर इन्हें बरबाद कर रहे हैं और राजनीति का शिकार हो रहा है स्कूल। कितनी मेहनत से यह सपना पूरा हुआ है। उसे याद है कि लालमणि उसका छोटा भाई चन्द्रकान्त, और कितने ही पढ़े और अपढ़ जवान घूम घूम कर बांस और फूस इकट्ठा कर रहे थे स्कूल के बच्चे मकान के लिए। गर्मी में अनाज इकट्ठा कर रहे थे और शुरू में दो-तीन व्यक्तियों ने जिनमें वह खुद भी था अपना समय दे देकर विद्यार्थियों को पढ़ाया था। बाहर से चन्दे इकट्ठे किये थे। सबकी आँखों में एक सपना था कि यह अभागा जवार भी विद्या से सम्पन्न होगा। धनी लोग तो अपने बच्चों को बाहर भेज कर पढ़ा ही लेते हैं लेकिन सामान्य लोगों के बच्चों का भी भाग्य खुल जाएगा। लेकिन वह देख रहा है स्कूल की नींव अभी से डगमगा रही है अभी तक वह फूस के छप्पर में चल रहा है, अभी उसे बहुत सी

मंजिलें पार करती हूँ किन्तु स्वार्थपरता और राजनीति के घुन अभी से इसमें पठ गये हैं देखा जाएगा, सरकार से मान्यता मिल जाने पर कुछ समस्या हल होगी।

बनवारी बाबा चिल्ला रहे थे, मुझसे अब काम नहीं होगा। मैं अब घर से निकल जाऊँगा, कहीं भीख माग कर खाऊँगा, साधू-सन्यासी हो जाऊँगा, इस घर में रहने से क्या फायदा जब मेरी कोई वक्त ही नहीं है, इधर से आओ तो चार हूँसा, उधर से आओ तो चार हूँसा, जैसे मैं आदमी नहीं हूँ

रामकुमार भी गुस्से में चीख रहा था तो जाइए, निकल जाइए, आपके रहने से यह घर रसातल में पहुँच जाएगा। बूढ़े हो गए लेकिन अमराई नहीं गया। मैं स्कूल म पढ़ाऊँ कि घर गिरहस्ती देखूँ। इन्हें न हलवाहा मिलेगा, न मजूरे मिलेंगे न बीज मिलेगा, न खाद मिलेगी। और नहीं तो खेत बोने काटने के समय नताइत और मेला करते घूमेंगे। बूढ़े हुए लेकिन मेला बजार और नताइत करने की हवस नहीं गयी। राम लीला में अब तक हनुमान बनते हैं जहाँ जायेंगे बे बात का चोकरेंगे। अपने तो काम नहीं ही करेंगे रामप्रकाश को भी वाहियात कामों में लगाये रखेंगे। तंग आ गया समझाते-समझाते। खेती बारी तो पहले ही बेच कर खा गए थे और अब भी इनकी आदत नहीं जा रही है। औरतों की तरह अनाज बेच-बेच कर सुरती भेली खायेंगे।

'अच्छा अच्छा' चुप रहो, बड़े आये हो सपूत बन कर। मैं लाख नालायक था लेकिन मैंने किसी का अहित नहीं किया, सबसे प्रेम किया। एक तुम हो कि सबके साथ राजनीति खेल रहे हो धोखे घड़ी से सबका खेत लिखाने के चक्कर में हो, एक एक अमट्ठ काम कर घरम बदनाम किया। मैं मेले में गया, नातेदारों के यहाँ गया, हनुमान बना, तो क्या हुआ? शराब तो नहीं पी, अंडे तो नहीं खाये, जनेव तो नहीं तोड़ा, सुरती

मजिलें पार करनी ह् किंतु स्वार्थपरता और राजनीति के घुन अभी से इसमें पैठ गये हैं देखा जाएगा, सरकार से मान्यता मिल जाने पर कुछ समस्या हल होगी।

बनवारी बाबा चिल्ला रहे थे, मुझसे अब काम नही होगा। म अब घर से निकल जाऊँगा, कहीं भीख माँग कर खाऊँगा, साधू सयासी हो जाऊँगा, इस घर में रहने से क्या फायदा जब मेरी कोई वकत ही नही ह, इधर से आओ तो चार हूँसा, उधर से आओ तो चार हूँसा, जैसे मैं आदमी नही हू

रामकुमार भी गुस्से में चीख रहा था तो जाइए, निकल जाइए, आपके रहने से यह घर रसातल में पहुँच जाएगा। बूढे हो गए लेकिन अभाई नही गयी। मै स्कूल में पढाऊँ कि घर गिरहस्ती देखूँ। इहें न हलवाहा मिलेगा, न मजूरे मिलेंगे, न बीज मिलेगा, न खाद मिलेगा। और यहा ता खेत बोने काटने के समय नताइत और मेला करते घूमेंगे। बूढे हुए लेकिन मेला-बजार और नताइत करने की हवस नही गयी। राम लीला में अब तक हनुमान बनते हं जहाँ जायेंगे वे बात का बोकरेंगे। अपने तो काम नहीं ही करेंगे रामप्रकाश को भी वाहियात कामा में लगाय रखेंगे। तग आ गया समझाते-समझाते। खेती-बारी तो पहले ही बेच कर खा गए थे और अब भी इनकी आदत नहीं जा रही है। बैलों की तरह अनाज बेच-बेच कर सुरती भेली खायेंगे।

'अच्छा अच्छा' चुप रहो, बड़े आये हो सपूत बन कर। मैं लाख नालायक था लेकिन मने किसी का अहित नहीं किया, सबसे प्रेम किया। एक तुम हो कि सबके साथ राजनीति खेल रहे हो धोखे धडी से सबका हक हथियाने के चक्कर में हो, एक एक अमट्ठ काम कर घरम बदनाम किया। म मेले में गया, नातेदारों के यहाँ गया, हनुमान बना, तो क्या हुआ? शराब तो नही पी, अंडे तो नहीं खाये, जनेव तो नहीं तोडा, चुरकी

तो नहीं कटवाई, सतीश जैसे देवता आदमी के साथ धोखा तो नहीं किया। अमलेश मेरे बचपन के यार हैं सुख दुख के साथी। उनके घर के साथ तुम जो कुछ कर रहे हो इसे अपनी लायकियत समझते हो, मैंने यही सब नहीं किया, इसीलिए नालायक हूँ'

'चुप रहो, तुम घर के भेदिया हो।' रामकुमार बहुत जोर से तड़पा। 'तुम घर को बेच खाओगे, तुम दरिद्र के अवतार हो।'

बनवारी बाबा और जोर-जोर से गरजने लगे और अपना कपड़ा लोपड़ा सँभाल कर जाने की तयारी करने लगे—'लो सँभालो अपना घर, मेरा दो रोटी खाना अगर भारी पड़ रहा है तो जा रहा हूँ, भीख भवन माँग कर खाऊँगा और किसी पेड़ से गिर कर मर जाऊँगा। बनवारी बाबा धोती काँख में दबा कर घर से निकल गए।

रामकुमार दखता रहा। वह भी क्रोध से काँप रहा था। वह यह जानता भी था कि ये कहीं जायेंगे नहीं, हर बार की तरह भाटपार के चेले के यहाँ जाकर लिट्टी-दूध खायेंगे और लौट आयेंगे।

बात बढ़ी थी इस बात पर कि दूर की रिश्तेदारी में एक शादी थी लड़के की। न्योता आया था। बनवारी बाबा जाने के लिए मार करे रहे थे। रामकुमार कह रहा था कि यह खेता को जोतने बोने का समय है कि रिश्तेदारों की बरात करने का। बूढ़े हो गए लेकिन अक्ल नहीं आयी। अपने शौक के आगे घर के सुख-दुख का ध्यान इन्हें नहीं होता। दुनिया कहाँ से कहाँ चली गयी, ये बरात मेला और बजार लिए बठे हैं। लेकिन बनवारी बाबा अपनी जिद पर अड़े थे कि वे बरात जायेंगे ही चाहे जो भी हो जाए। बस इसी पर कहा-सुनी हो गयी और यह कहा-सुनी कोई नयी बात नहीं थी, प्राय रोज ही होती थी किसी न किसी बात पर।

गुस्सा शात होने पर रामकुमार ने शाम को रामप्रकाश से कहा— जा देख तो चेल्या के यहाँ, ढूँढ ला। रात को दीखता है नहीं,

कहीं कोई गोरू-ओरू मार दे तो बस एक दूसरी ही उपाधि शुरू हो जाए। अब स्कूल खुलने वाला है, मैं स्कूल चला जाऊँगा तो पता नहीं क्या नाटक करें ?'

रामप्रकाश चला गया। रामकुमार चिंतामग्न हो गया। क्या होगा ? उसका परिवार तो प्राय कस्बे ही रहता है रामप्रकाश भी दो एक साल में यहाँ से इन्ट्रेंस कर लेगा तो इसे कहीं और भेजने की समस्या आयेगी। घर की हालत ऐसी है कि कैसे कोई बाहर भेजेगा इसे। उसे तो वह अपने पास ही रखता लेकिन पिता जी की हालत देखते हुए उसे घर से हटाने की हिम्मत नहीं होती। पिता जी अकेले रहें तो दो दिन म घर को बेच-खोच कर खा जाएँ। एक अजब समस्या है। इनके ही मारे उसे बार बार कस्बे से दौड़-दौड़ कर आना पड़ता है। स्कूल की भी राजनीति ऐसी विकट होती जा रही है कि बार-बार कस्बे को छोड़ना हानिकारक सिद्ध हो सकता है। वह स्कूल क्षत्रियो का है प्रिंसपल भी क्षत्री है उन्ही लोगों का आदमी। हालाँकि वह बहुत ही मूर्ख है और उससे कम क्वालिफाइड है लेकिन वही प्रिंसपल रहेगा कोई ब्राह्मण कसे बन सकता है प्रिंसपल ? हालाकि वह सीनियारिटी में उससे आगे है। पहला हेडमास्टर था, वह गोरखपुर के एक स्कूल में चला गया। कुमार को उम्मीद थी कि उसके बाद वही प्रिंसपल होगा। उसके बाद वही सीनियर और योग्य था लेकिन क्षत्रियो ने उसके ऊपर एक नये गँवार को लाद दिया। इसे वह कसे बर्दाश्त करता ? उसने साथ काम करने वाले ब्राह्मण शिक्षकों को उकसाया कि इस स्कूल में ब्राह्मणों के विकास की कोई सभावना नही है, क्षत्रियों का ही राज रहेगा। उसने दो पक्ष बनाकर शीत युद्ध शुरू कर दिया। लड़के उसे मानते थे। कस्बे के पास के पसियाने-अहिराने के बहुत से लडके पढते थे। वह प्राय इन गाँवो में जाता, लड़को को भेजने के लिए उकसाता, उनके यहाँ बठकर नाश्ता करता, प्रेम से बतियाता, उनके लडको की सहायता

करने का वचन देता। इस तरह वह दोहरा चीर मारता था—
उनके बच्चों की ताकत अपने पक्ष में तैयार करता और दूसर
बदनाम चोर अहिराने-पसियाने के बदमाशों को अपने दुश्मनों की
लेने के लिए इस्तेमाल में ले आता। इन बदमाशों की कृप
उसके खेत खलिहान बैल आदि सुरक्षित तो रहते ही, दूसरों की उ
के लिए इन्हें संकट बना कर अपना बदला लेता, स्वार्थ सिद्ध करत

सो उसने बच्चो को उकसा कर प्रिंसपल के खिलाफ हड़ता
दी। लड़को की शिकायत थी कि पढ़ाते अच्छा नही ह और
व्यवहार अच्छा नही ह। बड़ा कौआरोर मचा। कार्यकारिणी के
और प्रतिष्ठित लोग बीच में पड़े तो मामला शात हुआ। रामकु
भी लड़कों को समझाया-बुझाया और प्रकट किया कि वह प्रिंसप
समर्थक ह। लेकिन प्रिंसपल समझ गया और-और लोग भी समम
यह सारा विष कुमार का बोया हुआ ह। एक बार वे सोचने
इन्हें तथा इनके समर्थको को चुन चुन कर निकाल दिया जाए
फिर लोगों ने सोचा कि बड़ी-बड़ी समस्याएँ खड़ी हो जाएँगी।
के करीब आधे लड़को को वह इस स्कूल से हटवा कर कहा अ
देगा। और क्षत्रिय ब्राह्मण का एक साफ सघर्ष शुरू हो जाए
स्कूल को खुलेआम साम्प्रदायिक रूप दे देगा नहीं यह ठी
है, बस सावधानी बरतनी चाहिए और तभी से एक शीतयु
रहा है, यह युद्ध भीतर भीतर बहुत जटिल हो गया ह, उसका
बना रहना आवश्यक है

वह सोच रहा है कि वह कहाँ से कहाँ चला गया। बचपन
गरीबी में, उपेक्षा में। कुछ बड़ा हुआ तो पढाई के साथ राज
आ गया, कांग्रेसी बना, सोसलिस्ट हुआ और जब यह कुछ भी
आया तो कमाने में लगा। वह अभी भी सोसलिस्ट ह, बड़े बड़े
से भेंट करता है, बडे बडे अफसरो और सेठो से भेंट करता ह, प

रहने से यह एक बड़ा लाभ है और तो और तो—वह क्या कर रहा है पार्टी के लिए ? वह कर भी क्या सकता है ? पहले तो उसने पार्टी के लिए घर द्वार छोड़ दिया था, भाई मर गया, डिवीजन गया और अब घर के लिए अगर पार्टी को छोड़ दिया है तो क्या बुरा किया है । मगर छोड़ कहाँ दिया है ? यह छोड़ना ही हुआ, बल्कि छोड़ने से बदतर हुआ इसलिए कि जो छोड़ देते हैं वे कम से कम पार्टी के नाम पर अपना स्वार्थ तो नहीं न साधते हैं नहीं साधते हैं ठीक है, लेकिन वे लोग और भी कमाने होते है, जहाँ हरियरी देखो, पगहा छुड़ा कर उधर को लपक पड़े । वह कई ऐसे हुए सोशलिस्ट नेताओं को जानता है जो बहुत सिद्धांत वादी बनते थे और कई बार पार्टी के टिकट पर कई तरह के चुनाव हार चुके थे, वे अब कांग्रेसी हो गए हैं इस आशा से कि अगले चुनाव में जीत जाएंगे तथा मंत्री बन जाएंगे । और सरकार ही जब इतना कुछ अनीति करती है, बड़े-बड़े पैमाने पर बड़े-बड़े गोलमाल होते हैं, तो वह पार्टी का मम्बर बना रह कर, उसके लिए सक्रिय नहीं बन पाता तो क्या पाप करता है ? पार्टी कौन उसे खान को देती है, उसने भाई की बीमारी में सबका आदर्श देख लिया था, सभी अपने-अपने पेशे में जुड़े हुए हैं उसकी राजनीति धीरे धीरे देश की ओर से हट कर स्थानीय समस्याओं की ओर उन्मुख होती जा रही है । स्कूल की समस्या है, गाँव की समस्या है इनमें वह राजनीति का प्रयोग कर रहा है स्कूल हो चाहे गाँव चाहे देश, सभी जगह गुंडई भर गयी है । गुंडे राज्य करते हैं । या तो इनकी गुंडई को खत्म करने के लिए सामूहिक प्रयास किया जाए या इनसे मिल कर अपनी रक्षा की जाए । वह देख रहा है देश में जो गुंडई बढ़ी है बड़े से लेकर छोटे पैमाने तक उसका प्रतिरोध करने की शक्ति किसी में नहीं दीख रही है । गुंडई सामूहिक है और प्रतिरोध अलग-अलग । गाँव पर ही उसने चाहा था कि सतीश काका और कुछ नये लोगों को मिला कर एक संगठन कायम किया जाए जो गाँव में होने वाले सारे अत्याचारों का विरोध करे, लेकिन सतीश तो सनकी आदमी है कुछ समझते ही नहीं,

अपना आदश लिए हाँकते रहते हैं। वह उनके करीब होने की बार-बार कोशिश कर चुका और चाहा कि वे दोनों एक दूसरे की बातों का आँख मूँद कर समथन करते हुए तथा अपने दल के जितने लोग हों उनका पक्ष लेते हुए अत्याचारियों का दमन करें लेकिन वे कुछ समझते ही नहीं। जहाँ कहीं मौका मिलता है हमी लोगों का विरोध कर देते हैं, डीह की जमीन के मामले में उन्होंने उसका पक्ष न लेकर बड़ा विचित्र ढंग अपनाया तो वह उन्हें सरपच क्यों बनने देता ? अपने ही लोग अपने काम नहीं आयेंगे तो कौन आयेगा ? बिना राजनीति के अब गाँवों में भी काम नहीं चलने का। और सतीश काका हैं कि सीधे-सीधे चलना चाहते हैं। चलना चाहते हैं तो चलें, दूसरे लोग उनके साथ क्यों सती हों ? उसकी राजनीति में पराया कोई नहीं है और सभी पराए हैं। गाँव में अगर गुंडई से ही गुजारा होना है तो वह गुंडई भी करेगा, लाठी चलायेगा लेकिन दूसरो को दूसरो से लड़ा कर ही अपना काम बनाना अधिक अच्छा है। बलई ने कितना परेशान किया है उसे। बार-बार खेत उखाड़े उसने, बढ़ कर खेत जोत लिए हैं, झगड़ा हुआ है तो खलिहान फूँक दिया है लेकिन अब दौलत राम को भिड़ा दिया है। अब दोनो कटें मरें। डीह की जमीन वाला मामला है जो उसके और बसी के बीच झगड़े में पड़ा है, उसे भी वह ले लेगा चाहे कोई भी विरोध क्यो न करे ? सतीश काका का खेत है उसे महीपसिंह ले ही लेते, वह न खरीदता तो दीनदयाल ही खरीद लेता। सुना है साला पूरा खेत हड़पने की कोशिश कर रहा था। कितने सपने हैं उसके मन में, कितनी योजनाएँ हैं लेकिन पिताजी सारे सपनों और योजनाओं पर पानी फेर देते है, ऐसे ऐसे निकम्मे काम करते हैं कि सहा नहीं जाता। इच्छा होती है कि वह अपना सर फोड़ दे या उनका। कितना समझाया, मानते ही नहीं।

बनवारी बाबा की आवाज उतरा रही थी, बकते झकत लौट आये थे रामप्रकाश के साथ। कुमार कुछ नहीं बोला, उठ कर खेतों की ओर चला गया।

: २२ :

आधा आषाढ़ बीत गया लेकिन आकाश में बादल नहीं आये थे। खेतों में धूल बलबलाती रही, लोग बेचैनी से इन्तजार करते रहे कि कब बादल बरसें और खेत बोने शुरू कर दिए जाएँ। अमलेश जी मेघ दूत पढ़ रहे थे—'आषाढस्य प्रथम दिवसे' 'दुनिया कितनी बदल गयी' सतीश बोल रहा था 'जब से मैंने होश सँभाला है कभी भी आषाढ़ के पहले दिन बादल नहीं आये, पहले तो लगता है ठीक पहले दिन नियम से आ जाते थे अब तो बड़ी मान मनुहार होती है तब कहीं आते हैं और आते हैं तो थमते ही नहीं, मल्हार की पूरी धरती डुबो कर ही जाते हैं।'

'हाँ बाबू, आदमी बदले हैं तो प्रकृति भी बदल गयी—लोग पहले प्रकृति पर्वों पर उल्लास से नाचते गाते थे। अब तो लोग अपने स्वार्थ के प्रति इतने सजग हो गए हैं कि बादल आने और न आने का सम्बन्ध केवल उनकी हानि-लाभ से होता है। कोई सामूहिक उल्लास नहीं, कोई पर्व आयोजन नहीं। प्रकृति-नाराज हो गयी है, वह सोचती है अब जी में जो आयेगा करूँगी।' अमलेश जी इतना कह कर आगे की पंक्तियां में बहुत गए मगर सतीश की दृष्टि आकाश में उठते हुए बादल के एक टुकड़े को देख रही थी। वह पुलकित हो उठा। 'पिता जी, देखिए बादल का एक काला टुकड़ा आकाश में फैल रहा है। हवा भी धीरे-धीरे ठंडी हो रही है, लगता है आज कुछ होगा।'

अमलेश जी ने आकाश की ओर देखा, 'हाँ ठीक कहते हो बाबू, ये श्याम मेघखंड मेरे चिर-परिचित हैं, ये जलस्रवित करने वाले मेघखंड हैं, पवन का यह शीतल स्पर्श भी मेरा जाना हुआ है, आज निश्चय ही आकाश पृथ्वी पर अपनी कृपा बरसायेगा।'

क्षमलेश जी उठकर टहलने लगे। सामने का नीम का पेड़ ठंडी हवा में बछड़े की तरह पुलकित होकर पत्तियाँ कँपाने लगा।

सतीश उठ कर खेतों की ओर चला गया। वह बादलों की ओर देख रहा था। धरती प्यासी है, कब से प्यासी है, जीवन प्यासा है, कबसे प्यासा है। गाँव प्यासा है, उसका घर प्यासा है लेकिन उसके पिता क्षमलेश जी इस प्यास के बीच भी अविचल हैं—अपनी सारी वेदना और तड़प को छिपाये हुए शान्त हैं। उसका घर फिर धीरे धीरे उदासी और अभाव में गिर रहा है, लेकिन पिताजी की हँसी कोई नहीं छीन सका। वे गाँव की हालत देख-देख कर कभी-कभी बेचन हो उठते हैं, उनकी आँखों की गहराई में एक यातना भीग जाती है जीवन जलती चट्टान सा भीतर ही भीतर दरक जाता है और कहीं कोई बादल नहीं दीखता लेकिन उनकी वाणी से झरता है—आषाढस्य प्रथम दिवसे

कौन दोनों वक्त चूल्हा जलाये, एक वक्त भूजाभरी में ही कट जाए तो ठीक और न चाहते हुए भी कुजू को गोड़साल आना पड़ता है दूसरा कौन जाए? आता है, भूजा के लिए चना या जौ गोड़साल रख कर चला जाता है—भूज कर घर भेज देना या मैं ही थोड़ी देर में आकर ले जाऊँगा। बदमी कुछ नहीं कह पाती। आज कल उसका गुड़साल तमाम औरतों से घिरा रहता है। प्राय लोग एक वक्त सत्तू ही खाते हैं। बदमी पसीने से तरबतर भड़भड़ भड़भड़ पूजा या सत्तू भूजती रहती है, काली काली लकीरें उसके गोरे गोरे चेहरे पर खिंची रहती हैं आँच से उसका मुँह तमतमाता रहता है पत्ता झोंकती है, चूल्हा चिटचिटा कर भभक उठता है और औरतें मधुमक्खियों की तरह भनभनाती रहती हैं। दुनिया भर की बातें, तरह तरह की बातें। बदमी चुपचाप अपने काम में लगी रहती है, पास ही बाँस की छाया में उसका छोटा भाई बैठा बैठा ऊँघता रहता है या रोता रहता है या कुछ खाता रहता है और जब कुजू आता है तो लगता है झटके से परा चूल्हा बदमी के भीतर भक्क से जल उठा

'नहीं बस यों ही ठीक है।'

'क्यों डर लगता है?'

'हाँ।'

'बादल बढ़ते आ रहे हैं।'

'हाँ अभी दो-एक घंटे में आयेंगे, तब तक जल्दी-जल्दी अपना सब काम निबटा लो।'

'और नहीं निबटा तो?'

'तो मैं क्या करूँगा?'

'तो कौन करेगा?'

'मैं क्या जानूँ?'

दो-एक स्त्रियाँ आईं और अपना-अपना सामान उठाकर चलती बनी लेकिन बाकी तो यही सोचती रहीं कि अभी तो रखकर आयी हूँ एकाध घंटे में ले आऊँगी?

'बूँदें।' कुंजू चौंक कर बोला।

'हाँ। लगता है अब बारिश आ जाएगी।'

'अभी देर है लेकिन तुम सामान समेटो और घर निकल जाओ।'

'हाँ, ऐसा ही लग रहा है।

पट पट पट पट पड़ाक, पानी अचानक गिरने लगा। बौछारी एकाएक तेज हो गयी, हवा के झोंकों में सांय-सांय हिलने लगी, बाँस लपक-लपक कर धरती छूने लगे, पास बरगद का पेड़ हहराने लगा।

तिवारी अब क्या होगा, सारा सामान भीग जाएगा?'

कुंजू का घर गुड़साल के पास ही था। वास्तव में गुड़साल कुंजू की ही जमीन में थी। कुंजू ने सारी डलियों और सिकहुतो ( बड़ी डलियो ) को जल्दी-जल्दी बटोरते हुए सर पर, रखते हुए कहा—चल उठा ले अपनी इस पूँछ ( भाई ) को और भाग कर चल मेरे घर में।'

'नहीं तुम्हारे यहाँ नहीं चलूँगी।'

'क्या डर लगता है ?'

'हाँ।'

'तो मत आ, जहाँ जाना हो जा' कहते हुए कुजू घर की ओर भाग गया। ओसारे में जाकर देखा तो बदमी भी पीछे-पीछे भागती हुई आ खड़ी हुई थी।

'तो तू आ गयी ?'

'और कहाँ जाती ?'

'ले ये सारे सामान कोठरी में रख ले। और तू भी भीग गयी है मेरी धोती बदल ले।'

बदमी मुसकराई 'जैसे तुमने मेरी साड़ी पहनी थी उस दिन।'
'हाँ ठीक वैसे ही।'

खूब जोर की बारिश हो रही थी और तेज हवा चल रही थी। तपी धरती के अंग-अंग से भाप निकल रही थी। ऊपर से झरती झड़ियाँ, धरती से निकलती अविरल भाप, एक अदृश्यता बिछ रही थी पूरे आकाश और धरती के बीच। कहीं कुछ दिखाई नहीं दे रहा था। बस पेड़ों और हवाओं के टकराने, पेड़ों की शिखाओं और डालियों के हहरा कर झुकने, बूँदों की चोटों की आवाजों में सब डूब रहा था और रह रह कर बिजली तड़तड़ाती थी तो अदृश्यता में डूबे हुए गाँव, खेत, बागीचे, ताल एकाएक धधक उठते थे सीमान्तों तक।

बदमी कोठरी में चली गयी थी, कुजू अपने टूटे-फूटे ओसारे में बैठा तेज-तेज बौछारों के झोंके खाता रहा।

'तिवारी आ जाओ, वहाँ क्यों भीग रहे हो ? कमरा इतना बड़ा है कि हम दोनों समा सकें।'

कुजू ने उधर देखा, मुसकराया और कमरे में चला गया।

कमरे में भी बौछारें आ रही थीं और जगह-जगह से चू रहा था। बदमी ने चूते की जगहों पर टूटे-फूटे बरतन लगा दिए थे और उनमें गिरते हुए पानी से लगातार एक ध्वनि आ रही थी।

'इसे ठीक करा लो तिवारी, एक ही तो कमरा है और वो भी चूता है।'

'किसके लिए ठीक कराऊँ? अकेली जान के लिए तो पेड़-पालव भी काफी हैं।'

बदमी कुछ नहीं बोली, बोलती भी क्या?

कुजू कमरे में पड़ी एक खटिया बिछा कर बैठ गया। बदमी खड़ी रही।

'तू भी बैठ जा रे।'

बदमी तिवारी के पाँव के पास जमीन पर बैठ गयी।

'वहाँ नहीं यहाँ बैठ खाट पर, डर लगता है तो मैं उठ जाता हूँ।'

'बदमी का भाई हवा के गीले झोंके पाकर बेखबर सो गया था, बदमी ने उसे जमीन पर एक टुकड़ बिछा कर सुला दिया था।

बदमी ने हँसते हुए कहा—'हाँ डर तो लगता है, हाय, कैसा जालिम मौसम है। यह बरखा, यह बिजली, यह हवा, यह कमरा और तुम और मैं '

'तो तुझे डर लगता है तो ले मैं जाता हूँ, बाहर भीगूँगा—खूब भीगूँगा '

कुजू जाने को उठा तो बदमी ने बाँह पकड़ते हुए कहा—'अरे रे रे बुरा मान गए, बैठो न।'

'नहीं तुम डरती हो न!'

दोनों में हाथा-पाई होने लगी और बदमी ने जबरदस्ती कुजू को खाट पर बैठा दिया लेकिन उस पकड़ धकड़ में लिपटी वह भी कुजू की गोद में जा गिरी और उसने तिवारी की ओर इस नजर से देखा मानो पूछ रही हो—'उठ जाऊँ?

कुजू भी क्षण भर हतप्रभ रहा लेकिन दोनों को लगा कि दोनों के भीतर से लपटों ने निकल कर दोनों को बाँध लिया हो—एक बन्धन,

अबोला बन्धन। दोनों के अंग अंग से बेबस लावा फूट रहा था। कुंजू ने बदमी की ओर देखा और बदमी ने कुंजू की ओर, और दोनों के हाथ पास-पास आते गए, साँसें टकराती गयीं, बाँहें जकड़ती गयीं। दोनों के भीतर युगों से बैठी हुई आदिम गुहावासी प्यास तमाम दीवारों को तोड़ कर बाहर आ गयी थी।

पानी और तेज हो गया था, लगता था सारा आसमान आज फट पड़ेगा, हवाएँ जोर-जोर से पीटने लगी थीं पेड़ों को, मकानों को।

'बदमी!' कांपती हुई एक आवाज कुंज के भीतर से फूटी।

'तिवारी!' एक बेबस जलती हुई सांस-सी आवाज फूटी। बदमी का भरा भरा अंग जोर-जोर से उठ गिर रहा था, तिवारी उसे कसे हुए उसके होठों को होठों से जकड़े हुए था।

फिर जैसे दोनों के बीच के शब्द चुक गए, सारे फासले खतम हो गए साँसें आपस में बुन गयीं

काफी देर के बाद बारिश बन्द हो रही थी। बादल बरस कर चुक रहे थे, धरती अघा गयी थी, कुंजू और बदमी दोनों अपने भीतर बरसे हुए बादल और अघाई हुई धरती को पा रहे थे।

बदमी उठी और लजा गयी जैसे नयी दुलहन हो। कुंजू ने उसे फिर बाँहों में भर लिया। बदमी ने बंगले के भीतर से कम होती हुई बारिश की ओर इशारा किया—देखो, बादल धीरे धीरे छँट रहे हैं। बारिश कम हो रही है। अब हम लोगों को एक-एक करके बाहर जाना चाहिए ताकि किसी को सुबहा न हो।'

ये बादल छटेंगे नहीं बदमी, ये बरसात के बादल हैं, ये घिर घिर कर बार बार आयेंगे और बार-बार बरसेंगे और अब तो लगता है संसार के सुबहा शंका बदनामी-बदनामी को लात मार कर कुछ कर गुजरें।'

'अच्छा पहले बाहर चलो, बढ़ो तो मैं भी आऊँगी। बारिश के बन्द होने पर लोग आने-जाने लगेंगे और हम लोगों को कमरे में से निकलते देख लेंगे तो क्या होगा ?

'यानी आपका मतलब यह है कि ये हलवाहे नौकरी आपकी करें और इन्हें हलवाही सरकार दे। और यह तो सरकार की व्यवस्था का ही फल है कि ये इतना माँगने की हिम्मत कर रहे हैं ?'

'सो कैसे ?'

'वह ऐसे कि शहरों में, कल कारखानों में, खानों में, सेना में पुलिस में इतनी खपत हो रही है मजदूरों की, उसी से ये गाँव छोड़ छोड़ कर भागे जा रहे हैं और गाँव में मजूरों का अकाल पड़ता जा रहा है। इसलिए इन्हें इतना माँगने की हिम्मत हो रही है। एक एक हलवाहे पर, एक एक मजदूर पर, बीस बीस आदमी टूटते हैं सो उनकी माँग तो पूरी ही करनी होगी।'

'नहीं, कुछ नहीं, इस बदमाश जगपतिया ने बहकाया है। गाँव के गरीब लोग मर जाएँगे इस उत्पात से। बताइए कि जिनके पास थोड़े से खेत हैं, जिनके यहाँ दो महीने को खाने को नहीं होता, जो उपवास पर उपवास करते हैं उनका क्या हाल होगा ?

'हाल होगा तो उठायें हल कंधे पर। दो पैसे का जनेव पहन कर सारा धर्म ओढ़ने का दम भर रखा है इन लोगों ने। मैं तो कब से चिल्ला रहा हूँ कि धर्म के मिथ्या आडम्बर को छोड़ो, अपना काम करना सबसे बड़ा धर्म है लेकिन कोई सुनता ही नहीं। सारा पाप करेंगे लेकिन अपना खेत नहीं जोतेंगे।

'लेकिन समस्या का हल यह नहीं है, जिसके घर कोई करने वाला नहीं है उसका क्या होगा ?'

'यह एक अलग बात हो गयी। दुनिया भर की समस्याओं का समाधान इसी से थोड़े हो जाएगा। जिनके यहाँ करने वाले लोग हैं उनकी समस्या का समाधान तो हुआ न। और तब हलवाहों की इतनी छीना-झपटी भी नहीं होगी। तब मजूरी भी इतनी नहीं बढ़ पाएगी। फिर भी इससे मजदूरों और हलवाहों की भूख की समस्या का समाधान कहाँ हुआ ?'

'नहीं नहो, हमने एक ही हल सोचा है वह यह कि जगपतिया आपकी बात मानता है आप उसे समझाइए, लोगो को सकट में न डाले।'

'मैं क्यो समझाऊँ ? आपकी पार्टी का मेम्बर है, आप समझाइए और वह तो सही अर्थो में पार्टी का काम कर रहा है, आप उसे मना भी कैसे कीजिएगा ?'

'आप राजनीति नही समझते, उस गुंडे को पार्टी मेम्बर मान बैठे है। इसमें क्या राज की बात है आप नही समझते।'

क्रोध हो आया सतीश को। बोला—नही समझता तो मेरे पास क्या आये हो ? जाओ अपने दादा महीपसिंह के यहा, चाहे दीनदयाल के यहाँ। वे ही लोग समझेंगे तुम्हारी अनखई बोली।' सतीश का तमतमाया चेहरा देख कर कुमार वहा से उठा। मुसकराता हुआ चल पड़ा। सतीश ने पुकार कर कहा—'कामरेड हल उठा लो अब, नेता हो। लेकिन नही उठाओगे क्योंकि सोचते होगे तुम्हारे यहा हल चलाने वाला कोइ है ही नही, खामखाह क्यो क्राति कर धम नष्ट करो।' कुमार जाते जाते बोलता गया—मैं तो बहुत दिनो से क्रान्ति किये बैठा हूँ जबकि आप लोगो ने क्रान्ति का नाम भी नहो सुना था और मेरी हर हरकत का विरोध करते थे।'

'हाँ हाँ क्राति का अर्थ तो तुम्ही समझते थे—क्रान्ति माने अवाट-बवाट खाना, अवाट-बवाट जगह जाना, अवाट-बवाट पहनना, तब तो बल्या सबसे अधिक क्रान्तिकारी है।' सतीश बुदबुदाता रहा। कुमार ने कुछ सुना, कुछ नहीं सुना।

सारे गाँव में अलग अलग यही चर्चा थी। लोग धीरे धीरे इकटठे हो रहे थे दीनदयाल के यहाँ, इस पर चर्चा करने के लिए। सतीश बुलाया गया, नही गया। उसने कहला भेजा उसे जो करना होगा अपने विवेक से करेगा, लोगों को जो निर्णय लेना हो लें और करें। उसने यह

भी कहला दिया कि उसे हल जोतने में भी कोई संकोच नहीं लेकिन उससे समस्या हल नहीं होगी। एक तो उसके यहाँ कोई ऐसा नही ह जो हल जोते, दूसरे औरों के घरों पर जो लोग जोतने वाले ह वे भी एकाएक हल कैसे जोत सकेंगे? अभ्यास के लिए समय चाहिए और यह अभ्यास का समय नही है।

लोग मीटिंग कर रहे थे कि सभी लोग सम्मिलित तौर पर हलवाहों का विरोध करें, इसके लिए और गाँवा के लोगो का भी सगठन किया जाए।

'चल भाई चल सीवान वाले खेत पर चल, हाँ चल बकने दे लोगा को। हलवाहे खायेंगे नहीं तो खेत कसे जोतेंगे।'

लोगो ने देखा फेंकू बाबा अपने हलवाहे के पीछे चलफल झलफल बकते हुए और दीनदयाल के द्वार पर बठे लागो को सुनाते हुए चले जा रहे थे। लोगो ने फेंकू बाबा को देखा और फिर आपस में देखा। लोगो ने नजरें उठाई तो गाव के बाहर दो एक हल और चलते नजर आए। रामकुमार मीटिंग में नहीं गया क्योकि बाहर-बाहर वह दिखाना चाहता रहा कि वह मजदूरा के विरोध में नहीं ह लेकिन अपने पक्ष के लोगो में चाबी भर दी थी खूब बहस करने के लिए—हलवाहो की इस माँग के खिलाफ। लागा ने देखा कि कुछ हल चल रहे हैं तो धीरे धीरे वहा से उठने लगे और उठ कर अपने-अपने हलवाहो के घरो की ओर भागने लगे और दिन के दूसरे पहर गाव के बाहर हल ही हल दिखाई पडने लगे।

'हो गयी मीटिंग?' सतीश ने व्यग्य करते हुए कहा। जाते हुए दीनदयाल ने कहा—अरे इस दोखो गाव के मारे कुछ चलने पायेगा? कोई ईर घाट कोई बीर घाट।'

'हाँ यह तो है लेकिन गाँव के सगठन की याद आपको आज कसे आयी?'

दीनदयाल को वाक्य तीर का तरह लगा, लेकिन मुसकरा कर चलते बने—यह कहते हुए कि समय-समय की बात है भाई ।

जिसके हाथ में पैसे थे या लाठी थी उन्हें तो हलवाहे आसानी से मिल गए, बाकी लोगों को खासी परेशानी हुई। दो-दो तीन-तीन ने मिल कर मांज किया और किसी कदर हलवाहा खोज निकाला। महावीर को हलवाहा नहीं मिल रहा था, सुग्गन मास्टर को नहीं मिल रहा था, कुजू को नहीं मिल रहा था। एक तो इन लोगों के पास इतने खेत नहीं थे कि अलग-अलग हलवाहे रखते। दूसरे इन्हें हलवाहे मिलते भी नहीं थे। आखिर सुग्गन मास्टर ने अपने एक हरिजन विद्यार्थी के बाप को पकड़ा। वह भी तयार नहीं हो रहा था। वह भी जानता था कि प्राइमरी स्कूल के मास्टर की क्या बिसात ? लेकिन जब मास्टर ने धमकाया कि वह उसके लड़के को फेल कर देगा तब किसी कदर आया। सुग्गन, कुजू और महावीर ने भाज कर लिया। दर्लासगार को भी हलवाहा नहीं मिला लेकिन कोई चिन्ता नहीं, हलवा ही हल जातेगी। धलई ने लाठी तान कर और एक हरिजन की झोपड़ी की ओर इशारा कर कहा कि बस समझ लो। उस हरिजन को अपनी झोपड़ी जलती हुई नजर आयी और अपनी पीठ पर बहता हुआ रक्त अनुभव हुआ और उसने कहा, चलिए मालिक।

खेत बोये जा रहे थे—यह समझते हुए भी कि बाढ़ आयेगी, सब डूब जाएगा। फिर भी खत बोये जा रहे थे, गरीब लोग अपन खान के अन्न को वेच-बेच कर नये बीज खरीद रहे थे—उन खेतों में डालने के लिए जहाँ बाढ़ आयेगी, सब कुछ लूट ले जाएगी फिर भी एक आशा थी, भविष्य के प्रति एक आस्था थी जो, उन्हें बीज बोने के लिए प्रेरित कर रही थी, सदियों से इनकी यह जिजीविषा इन्हें जीवन देती आयी है, नहीं ता न जाने कबके खत्म हा गए होते।

●

## : २३ :

स्कूल कालेज खुल गए थ। फेंकू बाबा के लडके वकील साह का दूसरा विवाह भी हो गया। काम क्रिया के बाद ही लाग आन लग ये शादी के लिए। और एक महीना भी नही बीता कि शादी हो गयी वकील साहब फिर एक बार दूल्हा बने तो खिल गए। फिर एक बार दहेज लिया फेंकू बाबा ने। और कुल मिला कर पहली बहू क मरन का गम गलत हो गया, गलत ही नही हुआ खुशी म बदल गया। वकील साहब फेंकू बाबा की किसी बात का प्रतिवाद न करते ह, न किया। छोटा और मोटा शरीर, दो छटाँक का सिर, मध्यम भाव, अभी स पट निकला हुआ, चलते ह तो लगता ह कोई हाथी का बच्चा जा रहा ह। बैठते ह तो अकारण झमते रहते हं और बात-बात में हें हें किया करते हं। फेंकू बाबा कहते ह कि 'लडका हो तो एसा लायक हो, कभी मेरे सामने सिर नही उठाया, कभी किसी बात का जवाब नही दिया।' और यह बात सही ह लेकिन गाँव वाले उन्हें गाऊ कहते ह। कुछ तो मजाक में यह भी कहते ह कि वकील साहब रात को जोरू के पास सोने जाते होंगे तो भी पूछते होंग।

रामकुमार कहता ह, ऐसे गोरू लोग समाज के ऊपर भार हं। बाप नालायक हो और बेटा उसकी बात को ब्रह्म वाक्य की तरह स्वीकारता चले तो वह जीवन में क्या करेगा? भस का बच्चा ह यह वकील। ऐसे ऐसे लोग समाज में क्या क्रांति लाएगे? इनकी सारी पढ़ाई लिखाई दो कौडी की ह। अपने-अपने नालायक बापों की छाया बन कर रह जाते हैं ये लाग। तिस पर लाग कहत हं कि नयी पीढ़ी क्रांति करेगी? जब कभी ऐसा प्रयास किया गया ह, इनके बापों ने गालियाँ देकर इन्हें मारन को दौडाया ह और ये समाज सुधार का ओढ़ना-बोढ़ना फेंक-फांक कर भाग खडे हुए ह। ये क्रांति करेंग तो इनक बाप धारी कत करेंग,

घम के नाम पर खायेंगे पियेंगे कैसे ? दूसरों का घर कैसे फूँकेंगे ? और तमाम बातें। सतीश भी वकील साहब को कुछ इसी निगाह से देखता है—गवदा है, निरा बैल। लेकिन तुर्रा तो देखो, अंग-अंग से अहकार फूटता है। गाँव में किसी को पैलगी (नमस्कार) भी नही करते। सायकिल से आते हैं गोरखपुर से और उतरते हैं एकदम दरवाजे पर और जब जाते हैं तो एकदम दरवाजे पर चढ़ते हैं और किसी की ओर देखे बिना चले जाते हैं। गाँव में से कभी गुजरते हैं तो किसी की ओर देखते नहीं। सो वकील साहब शादी करके चले गए। शादी भी इनकी महोबा की लड़ाई ही होती है, पहली लड़ाई में बेटी वाले के गाँव से बरातियों की मार हो गयी, जानें जाते-जाते बचीं। इस शादी में बेचारा एक चमार मर गया, हैजा हो गया उसे, कमबख्त तेल की पूड़ियाँ कस कर खा गया। फेंकू बाबा तो यही कहेंगे कि उनके समधियान में जैसा भोजन मिला था वैसा कहीं नहीं मिला लेकिन जैसे को तैसा मिला है। फेंकू बाबा का बाप है उनका समधी बहसू होने में। दोनों पक्के कमीने हैं। उसके यहाँ बक्स की इतनी कमाई आती है लेकिन नीच ने तेल की बासी पूड़ियाँ खिलाईं, कितनों का पेट खराब हो गया, कितने मरते मरते बचे। और तुर्रा यह कि दोनों बहस में आसमान छू लेते हैं। फेंकू बाबा ने माड़ो हिलाई में मिले हुए पाँच रुपये फेंक कर कहा—ले जाइए ये पाँच रुपये, पाँच रुपये तो मैं भिखमंगे को भीख दे देता हूँ। समधी ने कहा—'तो फेंकते क्यों हैं ऐसा समझिए कि मैं भी भीख ही दे रहा हूँ।' फेंकू बाबा गरज कर बोले—'तो आप मुझे भिखमंगा समझते हैं, आप जैसे लोगों को खरीद सकता हूँ, आप समझते क्या हैं ? मैं रोज छोटे में नोट लेकर सुबह बैठता हूँ और जितने लोग माँगने आते हैं मुट्ठी भर भर कर देता हूँ। हें हें मुझे महमूली समझ रखा है।' समधी बोला कि 'मैं तो नोटों को चूल्हे में जलवा कर खाना बनवाता हूँ।'

'झूठ बोलते हैं आप।'

'आप झूठ बोलते हैं।'

दोनों गाँव वाले हँस रहे थे, दोनों को जानते थे वे। आखिर किसी कदर दोनों को अलग किया गया।

सो वकील साहब फिर चले गए वकालत पास करने के लिए।

और स्कूल खुल गया।

रिमझिम पानी बरस रहा था। शारदा अपने दीवानखाने वाले कमरे में बैठी हुई पढ़ रही थी। दीनदयाल गोरखपुर गए थे किसी मुकदमे के सिलसिले में।

शारदा पढ़ कम सोच अधिक रही थी। हाय, वह किससे पूछे कि मास्टर जी आए कि नहीं सौ तरह की बातें सुनती है। कोई कहता है कि नोटिस दे दी गयी है कोई कहता है कि नहीं वे जरूर आयेंगे। कल तो स्कूल खुल गया, आ गये होंगे, यम्मी को मालूम होगा लेकिन इधर वह भी दिखाई नहीं पड़ी। दो-एक बार उनके घर के पास से गुजरी भी तो दिखाई नहीं पड़ी

रिमझिम रिमझिम पुरवा हवा के झोंके बादलों की छाया लिए उड़ रहे हैं, सामने ताल का पानी कांप रहा है नहें-नहें अकुर और घासें पुलकित होकर बच्चों की तरह हिल रही है अमराई में पपीहा सिहर रहा है सामने के बागीचे में लड़के जामुन के फलों के लिए घिरे हुए हैं.. सब कुछ भरा भरा नजर आ रहा है लेकिन वही अभागी क्यों खाली-खाली लग रही है? सूनी-सूनी-सी वह किताब पढ़ने में मन लगाना चाहती है एक कविता खोलती है, वर्षा वर्णन तुलसीदास जी का—

'बरषा काल मेघ नभ छाये।
गरजत लागत परम सोहाये॥'

बिजली रह रह कर चमक रही है ...शारदा बाहर की ओर देखती है, दूर तक के रास्ते चमक उठते हैं काले-काले और फिर उदास मन से किताब पर निगाह फेरती है—

'घन धमंड नभ गरजत घोरा।
प्रिया हीन डरपत मन मोरा॥'

शारदा सिहर उठती है। हाय, राम को भी सीता जी के बिना डर लग रहा था। आकाश में बादल गरज उठते हैं और शारदा डर कर तड़प उठती है—

'प्रिया हीन डरपत मन मोरा।'

अभागा मौसम ही ऐसा है—कहां कुछ अच्छा नहीं लगता प्रियतम के बिना।

'दामिनि दमक रही घन माही।'

बिजली बादल की गोद में रह रह कर छटपटाती है

ताल का जल कांपता है, तमाम छोटी-छोटी लहरें मछलियों की तरह तैरती हुई किनारे की ओर आती हैं और किनारे से टकरा कर टूट जाती हैं। शारदा कमरे से बाहर आकर पेड़ के नीचे खड़ी हो जाती है और सब देखती है।

हवा में उसका आँचल उड़ता है। नन्ही नन्ही बूँदें फुहार बन कर आती हैं और उसके गोरे-गोरे मुखमंडल पर बिखर जाती हैं

फिर कमरे में लौट आती है।

तिवारी जी!'

हड़बड़ा कर शारदा किताब खोल लेती है, हाँ वही हैं, वही हैं, मारे खुशी के वह अपने को सँभाल नहीं पाती। सोचती है यदि वह एकाएक भागती हुई उनके पास चली जाए तो उसका हल्कापन सिद्ध होगा। किताब खोल कर बैठी रहे तो मास्टर जी समझेंगे कि पढ़ती थी, बहुत खुश होंगे। उसने वहीं से जवाब दिया—

'तिवारी जी गोरखपुर गए हैं।'

मास्टर जी को लगा कि शारदा उसकी आवाज पहचान कर भी सामने नहीं आ रही है, कुछ बेरुखी व्यक्त कर रही है, कहीं कुछ हुआ

तो नही, कही इन छुट्टिया मे बेकार की चर्चाएँ तो नही उठी कि वह वही मे बैठे बठे बेरागी व्यक्त कर रही हैं। वे उदास हो गए और उल्टे पाँव लौटते हुए बोले—

'अच्छा कोई बात नही, कहिएगा कि उमाकात पाठक आये थे।'

'अच्छा। कह कर शारदा चुप हो गयी और चुपके से हँसती रही। फिर जब कोई आवाज नही आयी तो उसे आशका हुई कि कही चले तो नही जा रहे ह। उठकर कमरे के दरवाजे पर आई तो उसका जी धक्क से रह गया। 'अरे मास्टर जी तो जा रहे हैं।'

उसने एकाएक पुकारा—'मास्टर जी!'

पाठक जी गुस्से में थे कि यह क्या बदतमीजी ▪ वह आये और शारदा लाट साहब बनी हुई अन्दर बठी रही। व मुडे नही चलते गये। शारदा ने फिर पुकारा—'मास्टर जी!'

पाठक जी ने अनुभव किया कि शारदा की आवाज भीगी हुई ह। एकाएक उसके पाँव रुक गए। मुडकर देखा—'शारदा की भीगी हुई आँखें उसके लिए बिछी हुई थी। उनके पाँव आगे नही बढ सके। वे धीरे धीरे लौट आये। बरामदे के गोसवारे पर चढ कर छाता बन्द किया और खडे हो गए, मानो पूछ रहे हो—अब क्या करना है?

शारदा ने कमरे की ओर इशारा करते हुए कहा, 'चलिए बठिए अभी आती हूँ।' मास्टर जी बठ गए और शारदा अन्दर गई। चाची से कहा—चाची एक प्याला चाय बना दो।'

'किसके लिए?'

'अरे वो आये हैं न।'

'वो कौन?' चाची ने हँस कर पूछा।

'अरे वो ही, वो ही, अरे मास्टर जी।'

'अच्छा, हाँ-हाँ तुम्हारे वो, यानी मास्टर जी।' एक राजभरी मुसकान से चाची ने शारदा को देखा। फिर कहा—'अच्छा तुम्हारे

चो के लिए जरूर चाय बना दूँगी। इतने दिना पर बेचारे यो आये हैं और मैं एक प्याला चाय नहीं बनाऊँगी।

'जाओ चाची तुम तो मजाक करने लगी।'

'नहीं रे, मैं मजाक क्यों करने लगी ? मैं सचमुच तुम्हारे मास्टर जी का बड़ा आदर करती हूँ, जिसे हमारी बेटी चाहे उसे मैं क्यो न चाहूँ।' 'हाय'! शारदा एक लम्बी-सी सास लेकर रह गयी। और फिर चाची से लिपटती हुई बोली, 'चाची तू कितनी अच्छी है।'

'अरे तू जा मास्टर जी अकेले बठे होगे, चाय बन जायेगी तो आ कर ले जाना।'

शारदा चली गई। चाची सोचने लगीं—कैसी खिल गयी है मेरी प्यारी शारदा। अच्छी जोड़ी रहेगी मास्टर जी की और इसकी। मगर कौन कहे भाई जी से। मुझे तो शरम आती है। मास्टर जी बहुत पढ़े लिखे हैं, भले लगते हैं, सुन्दर भी हैं, पता नहीं शादी-वोदी हुई है कि नहीं।'

शारदा कमरे में जाकर बैठ गयी। मास्टर जी शारदा की किताब से खेल रहे थे। वे कमरे में गए तो किताब खुली हुई मिली—एक कविता जिस पर जगह-जगह पेंसिल से रेखाएँ खींची गयी थी। मास्टर जी की आँखों के आगे वे पंक्तियाँ उभर रही थी—

'घन घमंड नभ गरजत घोरा।
प्रिया हीन डरपत मन मोरा॥'

पढ़ते-पढ़ते मास्टर जी गुनगुना उठे थे। शारदा ने आकर किताब छीन ली—'छोड़िए।'

किताब छीन कर जमीन पर बैठ गयी। कुछ देर तक कोई नहीं बोला।

'शारदा!'

शारदा नहीं बोली।

'शारदा !'

'जाइए नहीं बोलती।' और वह फफक पड़ी।

'रोती क्यों हो शारदा ? इतने दिनों बाद मिले तो क्या रोने के लिए।'

'हाँ इतने दिनों बाद मिले तभी तो बेगाने की तरह लौट कर चले जा रहे थे। नहीं मालूम कि छुट्टियों के पल छिन कैसे कटे हैं। और आप हैं कि परदेसी की तरह आये और परदेसी की तरह लौट चले।'

'मेरा क्या कसूर शारदा, तुम्ही तो अन्दर बैठी रह गयी। मैं समझा तुम मुझसे मिलना नहीं चाहती हो, नाराज हो।'

'चुप रहिए चुप, आप तो तिवारी जी को पूछने आए थे तो मैं क्या बीच में टपक पड़ती—मान न मान मैं तेरा मेहमान। आपको मेरा दर्द होता तो मुझे पूछते।'

'क्या कहती हो, मुझे तुम्हारा दर्द नहीं, तो किसका है ? अरे मैं कैसे तुम्हारा नाम लेकर पुकारता दरवाजे पर से ? मुझे लाज शरम नहीं है क्या ? और जो अपने भीतर बसा हो उसे पुकारना क्या ?'

'सच मास्टर जी !' शारदा रोना छोड़ कर लाज से लाल हो रही थी।

'हाँ सच।'

झूठे कहीं के।' शारदा इस मोहक अदा से कह गयी कि मास्टर जी लहरा पड़े।

'अच्छा उठ उठ अब जो पढ़ना हो पढ़ ले।'

'इतने दिनों बाद मिले मास्टर जी तो क्या यह सौत किताब बीच में आयेगी ?'

'नहीं नहीं, यह सौत नहीं है, यह तो हम दोनो के बीच दूती है।' दोनो मुसकरा पड़े।

शारदा नहीं उठी तो मास्टर जी ने कुर्सी पर से झुक कर उसे उठाने के लिए उसका हाथ पकड लिया। तभी जोर की बिजली तडपी और फैले हुए काले बादलो के बीच प्रकाश थरथरा उठा।

मास्टर जी के हाथो में शारदा की गोरी-गोरी पतली अँगुलिया छटपटा उठी। किसी ने हाथ नही खीचा। बाहर एक जडता-सी बिछ गयी और भीतर खून उछालें लेने लगा।

शारदा ने भोली भाली बडी-बडी आँखो से मास्टर की ओर देखा। मास्टर को लगा कि वह उनमें डूब जाएगा। हाथ में उँगलिया तडपती रही, एक स्पदन वातावरण म तरता रहा, बादलो म बिजली का प्रकाश छटपटाता रहा।

चेतना लौटी, धीरे धीरे मास्टर जी का हाथ ढीला पडने लगा और शारदा का हाथ छूट गया। शारदा को लगा जसे उसकी उँगलिया पर किसी ने थाम लिख दिया हो और मास्टर जी को लगा कि उसकी हथेली में पतली पतली उँगलिया ने जलती लकीरें खींच दी हो।

'आपने आज हाथ थाम लिया मास्टर जी।'

मास्टर जी ने आँखों में अगाध विश्वास और ममता भर कर उसकी ओर देखा मानो वह कह रहा हो—'विश्वास रखो।'

खाँसने की आवाज आयी मास्टर जी हडबडा गये। शारदा खिल-खिला कर हँस पडी—'घबडाइए नहीं मास्टर जी, चाची जी बुला रही हैं चाय लाने के लिए।'

मास्टर जी भी मुसकराने लगे।

शारदा ने गरम गरम पकौडियाँ और चाय लाकर रख दी।

'अरे, यह सब तकल्लुफ क्यों किया शारदा ?

'मौसम कितना प्यारा है मास्टर जी ! गरम-गरम चीज खाने-पीने लायक।'

'हूँ' कह कर मास्टर जी हँसने लगे।

'कैसे दिन बीते शारदा ?'

'जैसे बीतते हैं, वैसे बीत गए।' शारदा हलके मूड में आ गयी। हँस रही थी।

'अच्छा अब तुम पढ़ती भी चलो, कुछ काम भी होता चले। इस साल तुम्हें मैट्रिक की परीक्षा में बैठना है, अब खेल तमाशा नहीं।'

'अच्छा अच्छा बाबा, खेल तमाशा नहीं तो पढ़ाइए न, लीजिए हिन्दी की किताब।'

शारदा ने वही वर्षा वर्णन वाला अंश निकाल कर सामने रख लिया।

'अरे तू हमेशा हिन्दी ही पढ़ती है ?'

'जो मुझे नहीं आता वही पढ़ती हूँ। पढ़ाइए मास्टर जी! आपके आने के पहले यही कविता पढ़ रही थी और जहाँ-जहाँ समझ में नहीं आ रहा था वहाँ वहाँ निशान बना रही थी।'

'अच्छा! मैंने तो समझा कि जहाँ जहाँ तुम्हें अच्छा लग रहा था वहीं-वहीं निशान बना रही थी।'

'धत्त।' कह कर शारदा लजा गयी।

'अच्छा तो पढ़ो—'

'घन घमंड नभ गरजत घोरा।
प्रिया हीन डरपत मन मोरा॥'

मास्टर जी भाव विह्वल होकर अर्थ करने लगे, शारदा चुपचाप सुनती रही। मास्टर जी ने शारदा से कुछ हूँ हाँ न सुनकर किताब से निगाह उठा कर शारदा की ओर देखा—'अरे तुम रो रही हो ?'

शारदा ने आँचल से मुँह पोछ लिया। उसने काँपती आवाज में कहा—'हाँ आगे पढ़ाइए।'

'नही तुम्हारा जी स्वस्थ नहीं है। आगे कैसे पढाऊँ? छुट्टिया म कोई घटना तो नही घटी ?'

'घटना तो रोज ही घटती थी मास्टर जी। रोज ही मरती-जीती थी।

'वह क्यों ?'

किसी न कह दिया था कि स्कूल की ओर से आपको नोटिस दे दी गयी ह। किसी ने कहा कि नही दी गयी है, इसी जीवन मौत के बीच भटक रही थी। किससे पूछती हाय! म किससे पूछती? आप बहुत सताते है मास्टर जी, रहते हैं तो भी सताते हैं, नही रहते ह तो भी सताते है।'

'अरे अपने पिता जी से पूछ लिया होता।'

'भक्क, कैसी बात करते ह मास्टर जी, बाबू जी से म कसे पूछती? आपकी बात करते हुए मुझे लाज आती है।'

'तब तो मैं बहुत भाग्यशाली हूं शारदा। मास्टर जी ने एक सास भरी। 'लेकिन मेरे आने न आने से क्या बिगडता? इतना परेशान क्यो होती हो ?'

कसी-कसी बात करने लगते हैं मास्टर जी, क्या म खुद परेशान होती हूं। मेरा कुछ भी तो अपना नही रह गया ह—सोना, जागना, सपना, खाना, पीना और सभी कुछ। लगता था कि गर्मी के क्षण सिल बन-बन कर मेरे ऊपर जम गए है सरकते ही नहीं। कोई भी तो अपना नहीं लगता इतने बडे गाव में। लडकिया एक एक करके ससुराल जा रही हैं। यद्यपि उनसे मेरी कोई दोस्ती नहीं ह लेकिन उनके जाने से एक अजब सूनापन मुझे घेरने लगता है। पिता जी मुझसे कोई बात ही नहीं करते। वे अपनी राजनीति में उलझे रहते है। एक भाई है सो रूठ बागडा ह, एक चाची ह जो थोडा सन्नाटा हल्का करती हैं। ऐसे में आपकी बहुत याद आती ह मास्टर जी! और जब बादल बरसने लगे,

स्कूल खुलने को हुए तो जी धक-धक करने लगा, पता नहीं आप आयें कि न आयें और जब आये तो बिना बोले निर्मोही की तरह लौटे जा रहे थे—'

'हाँ मैं आ गया शारदा, इस बार भी आ गया लेकिन स्कूल की राजनीति इसी तरह चलती रही तो पता नहीं कब यहाँ से रवाना हो जाऊँ। ये तो सतोदा हैं जो सब समझते हैं और मेरा जोरदार समर्थन करते हैं, बड़े महान आदमी हैं वे।'

शारदा का जी भारी हो गया—पता नहीं कब मास्टर जी को नोटिस मिल जाए और इसके आगे वह सोच नहीं सकी

मास्टर जी ने वातावरण को हलका करने का प्रयास करते हुए कहा—'लेकिन इतना आगे की कौन सोचे ? फिल्हाल तो मैं आ ही गया हूँ और साल भर तो रहूँगा ही। तब तक तुम्हारी परीक्षा भी पूरी हो जाएगी '

'अच्छा !' कहते हुए मास्टर जी उठ खड़े हुए।

शारदा चौंकी तो मास्टर जी ने बाहर मौसम की ओर इशारा किया। शाम हो रही थी। पानी बरस रहा था, बिजली उसी तरह रह रह कर चमक रही थी।

'अच्छा।' शारदा ने हाथ जोड़ दिए। उसे लगा कि उसने उँगलियों के पोर-पोर में अँगठियाँ पहन रखी है जिन पर मास्टर जी का नाम लिखा हुआ है।

मास्टर जी छाता खोल कर बाहर हो लिए। लोग खेतों से अब लौटने लगे थे। शारदा किवाड़ की आड़ में होकर जाते हुए मास्टर जी को देख रही थी। उधर से कुजू राग अलापता हुआ आ रहा था जो बरसात में भीग कर और करुण हो रहा था—

'नदिया बिच मीन पियासी रे
मोंहि सुनि सुनि आवे हाँसी।'

शारदा और मास्टर जी दोनों ने एक साथ यह गीत सुना और उन्हें लगा कि यह गीत मानो उन्हीं के भीतर का एक दर्द है जो कुजू के ओठों से फूट रहा है और यह खुद भी तो इसी नदी में डूबा हुआ प्यासा छटपटा रहा है

पानी बढ़ने लगा था। शारदा भीतर लौट आयी।

× × ×

पानी रह रह कर बरस रहा है। खेतों में नन्हीं-नन्हीं फसल लहरा रही है, सीमान्त तक हरे-हरे खेत हवा में उड़ते नजर आते हैं। छाहें खेतों में तैरती हुई चली जाती हैं, खेत सोहे जा रहे हैं।

रिमझिम पानी बरस रहा है। कुछ मजूरिनें कजली गा रही हैं—

'दइया बड़ा कड़ा जल बरसे
कइसे जइबऽ बिदेसवाँ ना'

सतीश इन मजूरिनों के साथ अपना खेत सोह रहा है। जमींदार की इतने दिनों तक नौकरी करने और आराम करने के बावजूद मजूर की तरह अपने खेतों में काम करता है। और सच बात तो यह है कि जमींदार के यहाँ नौकरी करते समय भी वह आराम तलब नहीं था। दो-दो बजे रात तक काम करता था, निकम्मी जिंदगी उसे कभी पसंद नहीं आयी। जमींदार के यहाँ काम नहीं रहा तब उसे वहाँ बैठना कष्टकर लगने लगा। इसीलिए वह महीपसिंह का निकम्मा दरबार छोड़ कर चला आया। वह स्वभाव से ही मजदूर था इसलिए इतने दिनों की जमींदारी की नौकरी उसे बिगाड़ नहीं सकी।

'कइसे जइबऽ बिदेसवा ना
दइया बड़ा कड़ा जल बरसे'

सतीश को अपने पिछले दिन याद पड़ गए जब वह कलकत्ते गया था नौकरी के लिए, और एक भयानक अभाव ठंडी उदासी उसकी स्मृति

में उभर आयी। इस जवार के साथ विदेश की कल्पना ऐसी जुड़ गयी है कि उसके बिना यहाँ की जिन्दगी का चित्र नहीं उभरता। पति बिदेस जा रहा है, प्रिया पूछती है, कसे जाओगे? हाय दई, कितना बड़ा जल बरस रहा है। यह भरा भरा-सा मौसम चारों ओर लहराते खेत, यह मस्त पवन, कजली का प्यारा गीत लेकिन इन सबके बीच तरता हुआ मन का दद विदेश यात्रा का दद, विरह का दद अभाव का दद। इस जवार की पूरी जिन्दगी की यही सच्चाई है अभी लहराते खेत हैं, कल बाढ़ का पानी सवनाश सन्नाटा। इसीलिए यहाँ के गीतों म भी एक दद है, भाव में भी अभाव है, खुशी से छलकती आँखों में भी दद की परछाई काँपती रहती है। यहाँ जितनी मजूरिनें गा रही है इनमें से किसी का पति कोइलरी में है, किसी का कलकत्ते के कारखाने म—किसी का लडाई में, किसीका कहीं, किसी का कहीं, और किसी ने भरपेट खाना नहीं खाया होगा कई दिन से आषाढ आते ही उपवास शुरू हो जाते हैं मजूरिनें ही क्यों ब्राह्मणों के घरों में भी अभाव लोटने लगता है फिर भी ये गीत और गीतों में विरह का दद।

'बाढ आकर रहेगी सतीश भाई!'

सतीश चौंकता है।

'हाँ हाँ भाई, नदी में उफान आ गया है, नाले भरने लगे हैं किसी साल यह राक्षसी जान नहीं छोडेगी।'

सतीश देखते हैं—बड़ी व्यथा से भउगा दर्लसिंगार, मेड के पास खड़ा होकर कह रहा है।

सतीश अनुभव करता है कि दुःख कितना करीब ला देता है लोगों को। दर्लसिंगार जो उसके खिलाफ तरह-तरह के प्रपच रचता घूमता रहता है, इस समय कितनी व्यथा से उसके पास खड़ा होकर बाढ़ के आने की बात कर रहा है।

सबके हाथ एकाएक रुक जाते हैं मानो बाढ़ सामने आ गयी हो।

और सतीरा खड़ा होकर दूर नदी की ओर देखता है। दिखाई कुछ भी नहीं पड़ता केवल दूर-दूर सीमा तक लहराते हुए पौधे नजर आते हैं।

'हूँ' कह कर सतीरा बैठ जाता है और खेत सोहने लगता है। दलगिगार चला जाता है, मजदूरिनें फिर कजली गाने लगती हैं।

× × ×

पानी बरस रहा है। जमुना भौजी उदास बैठी हैं। मास्टर सुगन और दिनेश के स्कूल से आने का समय हो गया है, घर में कुछ खाने को नहीं है। एक तो यों भी क्या होता है खेतों में। दूसरे गितवा की शादी में दाना-दाना खतम हो गया। गितवा की याद आते ही जमुना भौजी के भीतर एक चट्टान सी टूट कर गिर पड़ी। कितना रोई थी और अहक अहक कर मेरी बछिया कह गयी थी कि माई रे, सावन में बुला लेना। कम बुलऊँ बछिया का? घर में कौन सा सुख है जो बुलाऊँ? काफी दिनों से खबर नहीं मिली कैसे है? यही सावन है जब मरी बेटा के गीतों से गाँव गूँजता रहता था। कितना अच्छा गाती या कजली, आज सब कुछ उदास हो गया है। पानी बरस रहा है और भरभरा कर मिट्टी की भीत गिर पड़ती है, जमुना भौजी चौक कर भागती है फिर खड़ी होकर उदास आँखों से देखती हैं, आस पास के कुछ लोग जुट आते हैं और पानी बरसता रहता है।

× × ×

काली-काली रात फिर घिर आयी है। पानी जोर-जोर से बरस रहा है झींगुरों का स्वर रात की कालिमा को और भी गाढ़ा कर रहा है। सलोना की आँखों में नींद नहीं है ऐसी ही काली रात थी वह, जब उसकी नन्हीं-सी पुतली को साँप डँस गया था। कितना सूना लगता है घर अब। पारवती चली गयी है, ईश्वर कैसे होगी? घर में चहल-पहल रहती थी, अब घर काटने को दौड़ता है। बाहर महावीर

और अर्जुन सोये थे, भीतर अकेली सलोना। घर चू रहा था, झपटी मार रही थी और भूखे पेट सब सोये हुए थे, थोड़ी-बहुत जौ की खिचड़ी बना ली गयी थी अर्जुन का इन्ट्रेंस है, पास हो जाए, कोई नौकरी-चाकरी कर ले तो कुछ कष्ट कटे घर का। परवतिया के बापू अकेले क्या-क्या करें? न जाने कैसे होंगे? धरर कर दीवार गिरी सलोना बुदबुदाई, पड़ोस में किसी की दीवार टूटी ह। बरखा-बरखा-बरखा नहीं होगी तो नहीं होगी और होगी तो परलय मचा देगी लगता ह बाढ इस साल भी आयेगी सलोना को नींद नहीं आ रही ह और पानी बरस रहा है



: २४ :

इस साल बाढ़ नहीं आयी। नदियाँ फुफकारती हुई आगे बढ़ीं लेकिन आस पास के खेतों को चाट-चूट कर लौट गयीं और कछार फसलों की उष्मा से महक उठा। कोदो और धान के खेत, बीच-बीच में टांगुन की लाल बालियाँ लटकी हुई बाजरे के खेत मक्के की फसल जिसमें जवान बालियाँ दानों से कसमसा रही हैं, बीच-बीच में ककड़िया की लतरें फैली हुई हैं फलों से लदी हुईं। बच्चे तोड़-तोड़ कर खाते हैं, घर ले आते हैं और अभाव टूटता है, उपवास टूटता है। टांगुन की बालें टूँगी जा रही हैं और गाँव की गरीबी लाल लाल दानों से भर जाती है, एक अजब खुशी छाई है गाँव में। लोगों के चेहरों पर चमक है। बाजारों में चहल-पहल है। धान के खेत दूर दूर तक लहरा रहे हैं और उनकी जड़ों में पानी तर रहा है बबूलों के पीले-पीले फूल दिशाओं को रंग रहे हैं, तीज-त्योहारों में नई रंगत आ गयी है, झूलों में पेंग बढ़ गए हैं।

'किलो किलो किलो हो किलो हो' मचानों पर बैठे लड़के-लड़कियाँ किलहटी और कौवे उड़ा रहे हैं और उनकी आवाजें दूर दिशाओं तक तर जाती हैं किलो हो किलो हो

दलसिंगार अपनी मचान पर सोया हुआ था हलवा के साथ। चटाक चटाक चटाक कौन है हो। डरते डरते दलसिंगार ने आवाज दी।

एक खामोशी-सी छा गयी

दलसिंगार ने सोचा कोई जानवर रहा होगा। हवा का एक भागा झोंका आया और दलसिंगार से लिपट गया।

चटाक चटाक चटाक

'कोई चोर मालूम पड़ता है हलवा।'

'हाँ, लग तो रहा है।'

'कौन है साला, आता हूँ।' दलसिंगार लाठी लेकर उतरा। और अँधेरे में उसी ओर बढ़ा जिस ओर से आवाज आ रही थी। दो तीन आदमी मक्के की बालियाँ लिए हुए खेत में से भागे। दलसिंगार ने आवाज लगाई चोर-चोर-चोर। डलवा ने डाँटा, क्या हल्ला कर रहे हो मुरदा कहीं के। लेकिन यह हल्ला कर चुका था इसलिए आस-पास के खेतों के लोग जाग पड़े और चोर चोर करते हुए दौड़े। बल्ई ने अपनी मोटरी दूसरे को थमा कर कहा—भाग जाओ तुम लोग। और खुद अपने खेत में आकर चिल्लाया—चोर चोर और चिल्लाता हुआ दलसिंगार के खेत की ओर भागा। हल्ला सुनकर डलवा घबड़ा गयी और मचान से उतर कर भागी। बलई चोर-चोर चिल्लाता हुआ दलसिंगार के खेत में आ गया था और दो-एक आदमी अपने खेतों से आ रहे थे कि डलवा को भागते देखा। डलवा ने मरद की तरह दा काछ मार रखे थे और भाग रही थी। लोगों ने चोर चोर कहते हुए उसका पीछा किया और पकड़ लिया। 'कौन हो तुम?' लोगों ने पूछा—वह नहीं बोली। लोग उसे पकड़ कर दलसिंगार के खेत में लाए और कहा यह देखिए—चोर भाटपार की ओर तेजी से भाग रहा था।

एक आदमी ने टार्च की रोशनी उसके मुँह पर मारी। सब लोग चौंक उठे 'डलवा!' डलवा चुप थी और दलसिंगार हकलाने लगा—ये ये चोर ये न नहीं हो सकता।

'नहीं हो सकता तो यह कहाँ आयी थी और यहाँ से भाग रही थी?'

डलवा अपने बलबलाते स्वर में बोली—'अरे मैं चो चोर कहाँ से हुई? मैं तो देखे-देखने आई थी कि दलसिंगार बाबा अपने खेत में ह कि नहीं, किसी ने कहा था कि वे बाहर गए ह तो मैं खेत रखाने आ रही थी, त-त तब तक शोर हुआ चोर चोर और मं डर कर भागी।'

'तो तू इतनी रात को देखने आ रही थी कि खेत खाली है कि कोई है ?'

'क्या करती घर पर तमाम काम पड़े थे—छुट्टी मिली तो आई।'

दलसिंगार बुझा हुआ चेहरा लिए अंधकार में खोया हुआ था और और बलई मन ही मन हंसता हुआ डलवा से सवाल पर सवाल कर रहा था।

किसी ने टिपासा जड़ा—'चलो भाइयो, क्या खलल डालते हो इस बेचारी को नींद में। जा भाई दलसिंगार, ले जा डलवा को और रखाओ खेत-वेत।'

'लेकिन डलवा ने बाल तो नहीं न तोड़ा होगा। मने अपने काना सुना था चटाक चटाक की आवाज और कुछ लोग खेत में से निकल कर भागे भी थे। मुझे लगा कि वे कई हैं आप लोग मजाक में उड़ा दे रहे हैं। दलसिंगार व्यथा से बोला।

'हाँ भाई ठीक है बेचारे की बाल तोड़ी गयी है और आप लोग मजाक कर रहे हैं डलवा को लेकर। साला गाँव भर तो अब चोर ही हो गया है। पहले तो एक मैं ही था।' बड़ी गम्भीरता से बलई बोला और उसने धीरे धीरे संकेत कर दिया कि यह दौलतराय और उसकी पार्टी की करामात है। लोगों को विश्वास भी हो चला कि जरूर उसी पार्टी की करामात है।

'क्या भाई दलसिंगार, तुम खेत में ही सोते रहे और चोरी हो गयी। न तो किसी ने तुम्हें किसा ऐसे-वैसे के पास भेजा जिसे साँप ने काटा हो और न तो दारोगा-वारोगा ही बुलाने गए थे, सबके साथ रहते हुए भी तुम्हारे खेत में चोरी हो गयी।' कुंजू ने मर्म पर चोट की।

'देखो कुंजू, अनाप शनाप बकोगे तो मार हो जाएगी।' चिलचिलाता हुआ दलसिंगार बोला।

'क्यों अपनी बारी इतने से ही अखर गया। जब दूसरों को बदनाम करते घूमते हो तो अच्छा लगता है ?'

'देखो कुंजू, बात मत बढ़ाओ, लगता है चोरी भी तुम्हीं ने की कराई है। अभी-अभी ।'

'हाँ-हाँ तुम्हें संतोष हो तो यही कह लो। जो-जो इलजाम न लगाओ मेरे ऊपर। अच्छा सोओ प्रेम से मचान पर, हल्ला भी ह और तुम भी हो।' कुंजू चला गया।

'देख रहे हैं आप लोग कुंजुवा का! आप लोगों के सामने ही यह सब बक गया ह। लगता है चोरी इसी ने की-कराई है।

लोग गम्भीरता से दलसिंगार की बात को नहीं ले रहे थे। हलवा के मामले ने बीच में आकर सारी परिस्थिति को हल्का बना दिया था। लोगों ने कहा—'अरे क्या बात करते हो दलसिंगार, कुजू चोरी करेगा ? उस बौड़म से चोरी होगी ? वह तो या ही सब कह गया है तुमने उसे सताया था न, उसे भी मौका मिल गया।'

बलई ने लोगों की हामी भरते हुए कहा 'हाँ भाई, कुजुआ बौड़म है, वह क्या चोरी-बोरी करेगा ? अरे यह सब तो नये नये खिलाड़ियों का काम है।'

सब लोग चले गए। दलसिंगार के मन में रह रह कर यही बात उभर रही थी कि यह दौलतराय की करतूत ह। साला आजकल बड़ा सरहँग बना फिरता है। बलई बलई तो अपने खेत से दौड़ा हुआ आया था, वह नहीं हो सकता।

और जब बात सुलझती हुई नजर नहीं आयी तो हलवा का पुकारा वह चली गयी थी।

सियार हुआँ-हुआँ बोल रहे थे, रिमझिम रिमझिम पानी अभी भी बरस रहा था। दलसिंगार सोच रहा था—पता नहीं कितना नुकसान किया है बदमाशों ने ? कल देखा जाएगा और दौलत के बाप को देखूंगा



## : २५ :

हाई स्कूल की ओर से तहसील भर के विद्यालयों की खेल-कूद और सांस्कृतिक प्रतियोगिता आयोजित की गयी थी। स्कूल के सेक्रेटरी लालमणि ने बड़ी लगन से इस प्रतियोगिता का आयोजन किया था ताकि इसी बहाने यह स्कूल अधिक प्रख्यात हो। लोग अपने लड़के भेजें। इसी अवसर पर उसने एक नेता-सम्मेलन भी किया था जिसमें प्रांत के कृषि मन्त्री तीन-चार एम०एल०ए०, एम० पी० और कई अन्य वरिष्ठ अधिकारियों को बुलाया था। खेल-कूद की प्रतियोगिता के बीच यह एक दिन का कार्य क्रम था। सिंचाई मन्त्री तथा अन्य नेताओं के सामने इस उपेक्षित जवार की तमाम समस्याओं—विशेषतया बाढ़ की समस्या का चित्र पेश करना था और उनसे इस विषय में आश्वासन प्राप्त करना था।

कृषि मन्त्री नहीं आये, उन्हें कुछ और काम आ पड़ा था शायद कोई विदेशी शिष्ट मंडल आ रहा था उसके स्वागत-समारोह में उन्हें रहना था। लेकिन कई एम० एल० ए०, दो एम० पी०, पंचायत अधिकारी और शिक्षा बोर्ड के अध्यक्ष आये थे। इनके अलावा आसपास के तमाम गाँवों के बड़े आदमी लोग जमा थे। पुलिस के कुछ अधिकारी भी आये थे। पंचायत विभाग की ओर से लाउड स्पीकर भी आया था। कवि-सम्मेलन भी होने वाला था। कई जन कवि पधारे थे।

लालमणि ने इस सभा का संचालनसूत्र अपने हाथ में रखा था। सानह्वा के पारसमल लालमणि के साथ साथ लगे थे। महीपसिंह नहीं आये थे, वे अपनी एक दूसरी छावनी पर नौटंकी कराने में व्यस्त थे। पारसमल ने लालमणि से तै कर रखा था कि वे भी कुछ बोलेंगे।

लालमणि ने विशेष आग्रह से सतीश के छोटे भाई चन्द्रकान्त को भी लखनऊ से बुला लिया था। चन्द्रकांत भी यह सोच कर कि अपने

जवार का मामला है चलना चाहिए, आया था और वह बोलने को तत्पर था। नेता लोग जब काफी देर बाद आये तो पहले उन्हें मिष्ठ जलपान कराया गया, फिर वे धीरे धीरे रंगमंच की ओर पधारे, मानो वे इस भूखी-नंगी जनता का अपने दर्शन द्वारा उद्धार करने आये हों।

कृषि मंत्री के न आने से एम० पी० बाबू सागर सिंह ने अध्यक्ष पद सँभाला। लालमणि ने अपने स्वागत भाषण में इस जवार की तमाम समस्याओं का जिक्र किया। इसके बाद पारसमल बोलने खड़े हुए। पारसमल पहले एक रियासत में एक राजा के सलाहकार रह चुके थे वहाँ से निकाले जाने के बाद बहुत दिनों से घर पर ही रहते थे। घर पर भी अच्छी खेतीबारी थी। सो पारसमल ने अपना चाटुकारिता भरा शैली में नेताओं का गुणगान शुरू किया और फिर अवांतर ढंग से इस जवार की समस्याएँ भी रखीं। लालमणि की शैली जितनी ही खरी और साफ थी पारसमल की शैली उतनी ही चिकनी और परोक्ष थी। दोनों अपने अपने ढंग से नेताओं को प्रभावित करने की होड़ मचाए थे। सतीश ने अपने तल्खी भरे भाषण में यह आक्षेप लगाया कि सरकार इस क्षेत्र के प्रति उदासीन है। हर साल बाढ़ आती है फसल तो बहा ही ले जाती है, सैकड़ों लोगों और मवेशियों की जानें जाती हैं सैकड़ों घर बरबाद हो जाते हैं हमारे नेताओं का कहीं पता ही नहीं चलता। न नावें मिल पाती हैं भागने के लिए, न असहाय लोगों की जीविका की व्यवस्था हो पाती है।

हमारे क्षेत्र के एम० एल० ए० महोदय बाढ़ के दिनों में एकाध बार आ जाते हैं और थोड़ी-बहुत घुघुरी बाँट कर अपना कर्तव्य पूरा समझ लेते हैं... इतना ही नहीं विधानसभा और संसद में कोई इस गरीब जवार की ओर से बोलने वाला नहीं दिखाई पड़ता। आज हमारे नेता जी लोग पधारे हैं इनका स्वागत है और हमें यह आशा है कि ये लोग मिल-जुल कर कोई समाधान ढूँढ़ेंगे, इस जवार के लिए। यह उपेक्षित

गरीब अभागा जवार भी अच्छी जिंदगी जी सके, इसका इन्तजाम नेताओं को करना है।

संतोश के भाषण से जनता बहुत खुश हुई। अब तक के भाषण जो रल्लो चप्पो की गई थी और उलझी-उलझी बातें कही गयी थीं उनमें जनता अपनी आवाज नहीं सुन पाती थी। लालमणि के भाषण में तेजी थी लेकिन वह मूलतः स्कूल की समस्याओं पर केंद्रित हो गया था और उसमें जितनी अपने को प्रस्तुत करने की चेष्टा थी उतनी जनता को प्रस्तुत करने की नहीं।

एक एक कर नेता बोलने खड़े हुए, गोल-गोल भाषण, पार्लियामेंटरी भाषा, सरकार की मजबूरियाँ, झूठे आश्वासन, दुनिया भर की वाहियात बातें। कोई भी नेता इस जवार की समस्या और उसके समाधान पर नहीं उतरा।

कालाप्रसाद पांडे इस खित्ते के एम० एल० ए० हैं। पुराने कांग्रेसी कार्यकर्त्ता हैं। ऐंठ ऐंठ कर बोलते हैं। पहले होमियोपैथी के डाक्टर थे। डाक्टरी नहीं चली तो स्वाधीनता संग्राम में शामिल हो गए, फटेहाल फिरते रहे। और अब एम० एल० ए० हैं। गोरखपुर में दो दो कोठियाँ बनवा ली हैं घर के पास की बहुत बड़ी जमीन को (जो एक दूसरे आदमी की थी) कब्जे में कर लिया है। राजनीतिक पीड़ित के नाम पर तराई में चालीस पचास एकड़ जमीन प्राप्त कर ली है। बड़े सात्विक वृत्ति के आदमी हैं पचास वर्ष के हो गए हैं, लेकिन बागवानी अपने हाथ से करते हैं अपने बच्चों को और सम्पर्क में आने वालों को अपने हाथ से काम करने का उपदेश देते हैं। ये नियम से रहते हैं नित्य दो मील टहलते हैं और नियम से इसबगोल की भूसी खाते हैं इसीलिए इस बुढ़ौती में भी लाल गाजर बने हुए हैं। लोग कहते हैं कि इनका पौरुष कुछ स्त्रियों से नया सिलसिला जोड़ रहा है और खानदानी परम्परा का निर्वाह कर रहा है। उनका बड़ा बेटा दो बार थानेदारी से मुअत्तल किया गया

और दोनो बार कालीप्रसाद जी ने अपने पुण्य प्रभाव से उसे उसके पद पर बरकरार कर दिया। वे इस जवार में केवल वोट के ही टाइम पर आते है, पिछली बार बाढ में भी आये थे घुघुरी बाँटने के लिए। सो नेता जी भाषण देने लगे और ऐंठ ऐंठ कर कहा कि आप लोगो ने सारा का सारा दोष नेताओं और सरकार पर डाल दिया है परन्तु यह नही सोचते कि सरकार के सामने पूरा देश है, कोई एक इलाका नही। क्षेत्रीय भावना को उकसाना देश की एकता को खडित करना है इसलिए हम लोग कभी अपने अपने इलाके के लिए लडाई नही करते। सरकार की आँखें चारो ओर देखती है, समय आने पर सबके भाग्य का उदय होगा। लेकिन इस इलाके के पिछडे होने का खास कारण सरकारी उपेक्षा नही, इसकी भौगोलिक स्थिति है। सरकार के हाथ में जादू की छडी थोडे है कि इन तमाम नाला-नालियो का मुँह बन्द कर यहाँ सड़कें बिछा दे। प्रकृति का प्रकोप यहाँ इतना भयंकर है कि सरकार की सारी योजनाएँ यहाँ निष्फल हो जाएँगी। इसीलिए सरकार को सौ बार सोचना पड रहा है कि यहाँ क्या किया जाए? सब धीरे धीरे होगा और सभी लोग अपना-अपना भाग्य लिए पैदा होते हैं। इस जवार का भी अपना एक भाग्य है, उसे इतनी आसानी से मिटाया नही जा सकता। रहा बात मेरी, जो कुछ बन सकता है सेवाएँ करता रहा ही हूँ। घुघुरी की बात नहीं गयी है। उतना भी तो मन किया न। मने किया, इसका दाद कोई नही दे रहा है, उलटे लोग मेरी निन्दा कर रहे है। अरे भाई, बाढ के दिनो में घुघुरी ही क्या कम है? डूबते को तिनके का सहारा तो है न? और बाढ में घुघुरी नही तो क्या हलुआ-पूडी बँट सकती है? आप लोग घबडायें नही, सब धीरे धीरे ठीक हो जाएगा। जयहिन्द।'

लोग ऊबने लगे थे। कोई भी काम की बात उनके हाथ नही लग रही थी। लोग बडी-बडी उम्मीदें लेकर आये थे लेकिन गोल गोल बातें सुनकर जम्हाई लेने लगे थे।

सतीश तथा गाँव के कुछ और लोग बहुत क्रुद्ध हो रहे थे कि चन्द्रकांत को विशेष तौर पर बुला कर इस जवार की ओर से बोलने का मौका ही नहीं दिया गया। चन्द्रकांत भी चुपचाप बैठा हुआ भाषण पी रहा था। लालमणि को शायद नेताओं का स्वागत करने और अपने को प्रदर्शित करने की धुन में इस बात का ख्याल ही नहीं रहा कि उसने चन्द्रकांत को विशेष तौर से बुलाया है। कुछ लोगों के संकेत करने के बाद उसे एकाएक ख्याल आया और अध्यक्ष के कान में फुसफुसाया। अध्यक्ष ने मुड़ कर एक बार चन्द्रकांत की ओर देखा मानो तौल रहे हों कि यह है।

अध्यक्ष ने भी अपने भाषण में वही गोल गोल बातें कीं। कोई आश्वासन नहीं, कोई साफ बात नहीं, कोई समस्या नहीं, समाधान नहीं, केवल सरकार की सफलताओं और मजबूरियों की गुण गाथा, बीच-बीच में गांधी और नेहरू के नाम की छौंक। फिर बैठ गए।

एक मिनट बाद उन्होंने घोषणा की कि अब श्री चन्द्रकांत तिवारी का भाषण होगा। चन्द्रकांत अचकचा गया। वह क्या बोलता? अध्यक्ष के बोल चुकने पर कौन-सा बोलना? बुरे फँसा। लेकिन जनता बेचारी क्या समझती है कि अध्यक्ष के बोलने के बाद नहीं बोला जाता। लोग तो यही समझेंगे कि मैं बोलने से डर गया। वह उठ खड़ा हुआ। धीरे धीरे माइक के सामने गया एक बार अध्यक्ष महोदय की ओर देखा। अध्यक्ष महोदय टमाटर की तरह लाल लाल गालों में मुसकरा रहे थे कि अब उनकी प्रशंसा, आभार धन्यवाद का पुल बँधेगा। उन्होंने पधार कर यहाँ के लोगों को कृतार्थ किया है।

'अध्यक्ष महोदय, पधारे हुए नेता गण और भाइयो, चन्द्रकांत बोल रहा था—मैं नहीं समझ पाता कि अध्यक्ष के भाषण के बाद क्या बोलूँ? अध्यक्ष के भाषण के बाद केवल धन्यवाद देने का काम बचता है लेकिन उस काम के लिए यहाँ अनेक लोग हैं। मुझे बोलने को कहा

गया है मैं चाहता रहा यहाँ की समस्याओं को रखना और अपने नेताओं से उनका जवाब पाना। लेकिन खेद है कि मुझे बहुत असमय उठाया गया है बोलने को। और मुझे तो लगता है कि इन नेताओं के सामने रोना भी बेकार है। पहले के भाषणों में जो समस्याएँ रखी गयी हैं उनका सीधा समाधान खोजने से नेता जी लोग कतराते रहे हैं। पता नहीं ये लोग जनता को क्या समझते हैं? जिस जनता ने इन्हें अपना प्रतिनिधि बनाकर भेजा है उसकी आवाज इन्होंने कभी विधानसभा या संसद में उठाई ही नहीं। यहाँ के एम० एल० ए० पं० कालीचरण पाडे और एम० पी० बाबू सागरसिंह दोनों आये हुए हैं। दोनों सज्जनों से सवाल किया जा सकता है कि ये कितनी बार विधानसभा और संसद में बोले हैं? तमाम क्षेत्रों के नेता दहाड़ते हैं और ये लोग हाथ उठाते हैं। इसके अलावा इनसे यह भी सवाल किया जा सकता है, ये जनता के बीच इसका दुखदर्द समझने के लिए कितनी बार आये हैं? आज कल के नेता लोग तो जनता में पिकनिक करने आते हैं—दो घड़ी के लिए मनबहलाव करने को ।'

अध्यक्ष सागर सिंह का लाल चेहरा और भी लाल हो गया। क्रोध के मारे हाँफने लगे और तमतमा कर खड़े हो गए चन्द्रकांत की ओर मुखातिब होकर बोले—'यही आपकी विद्वत्ता है, यही आपकी काबिलियत है? हम लोग पिकनिक करने आये हैं?

'और क्या करने आते हैं? चन्द्रकांत मुसकरा कर बोला और अनेक युवकों ने चन्द्रकांत की आवाज में आवाज मिलाते हुए कहा—'हाँ हाँ और क्या करने आते हैं?'

सागरसिंह उठकर चले गए और नेता लोग तो पहले ही जनता को तार कर रंगमंच से उतर कर भोजन के करीब पहुँच गए थे। चन्द्रकांत बोलता रहा लेकिन पंचायत आफिस की ओर से आया हुआ माइक तुरत बन्द कर दिया गया। नेताओं के खिलाफ वह आवाज कैसे सुनता?

रहा था, जो इस समय या तो मजदूरी करते थे या अपने पुश्तनी धंधे में लग गए थे। जगपतिया हाथ में सोसलिस्ट पार्टी का झंडा लिए हुए आया और जोर जोर से बोला—'वाह रे चन्द्रकात बाब, आपने तबियत खुस कर दी, ई नेता लोग भो समझेंगे। ससुरे आते ह जनता को बेकूफ बनाने और लिट्टी दूध खाने। और लोग तो मिमियाते ही रह गए लेकिन आपने और सतीश बाबा ने तो इहाँ की जनता की आवाज को ऊँचा किया।

गुरदीन पासी बडा सा लटठ लिए हुए आया और चन्द्रकात को पैलगी करते हुए कहा, 'वाह रे बाबा बडी अगिन है आप में तो। आप तो सतीश बाबा से भी दो परग (पग) आगे ह तेजी म। खूब मारा ससुरा को। ससुर लोग आते ह नेकुरा भर दूध पीने और दही खाने।'

इसी प्रकार अनेक लोग आये और चन्द्रकात को घेर कर बातें करने लगे। मास्टर उमाकात पाठक आये और चन्द्रकात से लिपट गए। बहुत अच्छा तिवारी जी, बहुत अच्छा। सतीश ने दोनो का परिचय कराया। चन्द्रकात ने बडे प्यार स मास्टर उमाकात को फिर लिपटा लिया—'हाँ हाँ सुना था आपक बारे म, कभी भेंट नही हो सका थी।' 'मुझे भी आपसे मिलने का सौभाग्य आज ही मिला ह। आपके भाई साहब स आपके बारे म बातें हाती रहती था। आप इस जवार की शान ह चन्द्रकात जी, आपको पाकर इस जवार को धन्य होना चाहिए लेकिन दुर्भाग्य ह कि यहाँ उनकी आवाज काम करता ह जो छला ह, राजनीति क जाल लिए घूमत हैं, बदमाश ह, पैसे वाले ह हाँ यही सब होता ह यहाँ। सतीश जी जसे न्याया विवेकशील व्यक्ति के साथ कोई नहो आयेगा लेकिन बदमाशों, स्वार्थियो और पैसेवालों के साथ तमाम चेहर दिखाई पड जाएँगे। पता नहीं जमाना किधर जा रहा ह?'

लालमणि, दीनदयाल, रामकुमार और पारसमल इस संवाद को

सुन-सुन कर कुढ रहे थे और मास्टर उमाकांत की बातों पर सबके भीतर अनजाने ही यह प्रतिक्रिया पैदा हो रही थी, 'अच्छा तो तेरी यह हिमाकत? मास्टर न लगे तुम्हें।' वे सब घर की ओर जाने लगे।

चन्द्रकांत ने उमाकांत की बात का उत्तर देते हुए हँस कर कहा—जमाना अपने घर जा रहा है। सभी लोग खिलखिला कर हँस पड़े। उधर तम्बू उखाड़ा जा रहा था और पंचायत आफिस का सारा सामान बाबू महीपसिंह के डनलप पर लादा जा रहा था। पंचायत अफसर ने सतीश को एकान्त में बुलाया। एक मिनट उससे बात की—

'आपके खिलाफ कई शिकायतें पहुँची हैं हमारे यहाँ?'

'कैसी शिकायतें?'

'हूँ। मैं जानता हूँ कि आप बहुत ही न्यायी और साफ पाक सरपंच हैं, लेकिन सँभल कर काम किया कीजिए।'

सतीश कुछ समझा नहीं वह उनकी ओर ताकता रहा और अफसर ने हँसते हुए कहा—'बस इतना ही मुझे कहना था जाइए आप।'

सतीश कुछ समझ नहीं पा रहा था—बड़े न्यायी और साफ पाक सरपंच हैं लेकिन सँभल कर काम कीजिए। क्या मतलब? यानी न्यायी और साफ-पाक होने के अतिरिक्त भी सरपंच को कुछ होना होता है, वह क्या होना होता है? यह उलटबाँसी उसे उलझा रही थी फिर कुछ समझा और वितृष्णता से एक गाली देकर मन ही मन बुदबुदाया—साला पूरा समाज ही खराब हो गया है, किसी में सत्य के प्रति निष्ठा नहीं रह गयी है सभी दोगले, दगाबाज और फरेबी हैं। सत्य और न्याय के नाम पर साला पंचायत अफसर बनता है, दोगला कहीं का।



सतीश सोच रहा था क्या करे ? उसके दो बीघे खेत महीपसिंह द्वारा बोये गये थे और काट भी लिए गए थे। वह जानता था कि वह लाठी नहीं चला सकता, गाँव वाले इस झगडे में नहीं पड सकते, केवल मुकदमा ही शेष बचता है। उसने मुकदमा दायर कर दिया था, लेकिन एक तो महीपसिंह की ओर से उसे इस खेत के सिलसिले में पक्के कागज नहीं मिले थे, दूसरे महीपसिंह द्वारा सारा जायज-नाजायज दबाव डाले जा रहे थे पटवारी पर, चकबन्दी अफसर पर और बडे-बडे अधिकारियों पर। उसके पास घूस देने के लिए पैसे नहीं थे पैसे होते तो भी घूस देना उसके लिए मौत के समान होता। हालांकि वह अनुभव कर रहा था कि बिना घूस दिये आज दुनिया का एक भी काम नहीं होता, इस लम्बी घूसखोर भीड में वह अपना आदर्श लिए अकेला छटपटा रहा है। मूर्ख है वह, उसे अपना रवैया बदलना होगा। लेकिन उसके भीतर ऐसा कुछ है जो उसे बार बार उधर बढने से रोकता है, अमरेश जी का स्वर उसके रक्त मे बजता रहता है और चन्द्रकान्त-सा भाई उसकी आत्मा में उभरता रहता है और स्वयं उसका अपना संस्कार कदम डगमगाने से रोकता है जगपतिया का खेत नहीं ले सके महीपसिंह। पूरा बल लगा हो गया। गडांसा लेकर और महीपसिंह के हाथी घोडे भागे दुम दबा कर। एक उसके गाँव वाले हैं जो तमाशबीन बन कर आये और इस ताक में थे कि खेत उसके हाथ से निकले और ये लोग चील कौआ की तरह उस पर टूट पडें। और हुआ भी ऐसा ही। दीन दयाल और रामकुमार ने एक एक बीघा खेत खरीद लिया। सतीश की इच्छा हुई कि इन दोनों व्यक्तियों से साफ-साफ निबट ले लेकिन लाठी लठौवल कौन करे ? और इन्होंने तो महीपसिंह से खरीदे है, इनसे सीधे कोई कैसे टकराये ? मुकदमा वह हार गया है, हाईकोर्ट में अपील

की है, देखें क्या होता है ? पिताजी बहुत दुखी हैं, कह रहे थे कि वे खेत में किसी को पैठने नहीं देंगे, अपनी जान दे देंगे, भीतर भीतर बहुत टूटे हुए से लग रहे हैं।

सुना ह जगपतिया वाले मामले में उसने जो फैसला दिया था वह ऊपर के कोर्ट से रद्द कर दिया गया ह। वह सोचता है ऊपर के कोर्ट में तो यह होना ही था—बाबू महीपसिंह कई रूपों में बठे ह जगह जगह। जगपतिया बौखलाया घूमता है। वह कहता ह कि महीपसिंह को काट देगा। सुना ह कचहरी में दोनों आमने-सामने भिड़ते भिड़ते बच गए थे। जगपतिया ने महीपसिंह के मैनेजर छलबिहारी को कचहरी के अहाते में ही लतिया दिया था। और ललकार कर कहा था—'बुला अपने बाप महीपसिंह को, उसका भी देख लूँ।' उसके साथ हमेशा दो चार कामरेड घूमते रहते हैं। घूम घूम कर वह लेक्चर झाड़ता ह, मजदूरों को उभाड़ता है और महीपसिंह की तो जान का दुश्मन हो गया ह। छैलबिहारी की मार का समाचार सुनकर महीपसिंह एक बार बौखलाये कि चल कर जगपतिया को लात मुक्का से मारें, लेकिन कुछ सोच कर बचा गए। जगपतिया गुर्राता ही रह गया।

एक वह ह कि सरपच होकर पढ़ा लिखा होकर, बड़ा आदमी कहला कर महीपसिंह के अन्याय का प्रतिकार नहीं कर रहा है। वास्तव में जगपतिया महीपसिंह की गुडई का उत्तर सीधे लाठी से दे सकता है और उसके साथ चालीस पचास आदमी खड़े हो सकते ह लेकिन वह लाठी नहीं उठा सकता, उसके साथ लोग मार करने नहीं आ सकते और कागजी न्याय, पुलिस वगरह झूठे झमेले हं जो कभी भी सत्य का पक्ष नहीं ले सकते, सब उलझा कर छोड़ देते हैं। न्याय तो वह भी करता ह दो टूक और उसी का फल उसे भोगना पड़ता है लेकिन कचहरी का न्याय सब फरेब है। वेश्याओं की तरह अपने ईमान को बेचने वाले हरामखोर वकील, मुख्तार सत्य और असत्य को ऐसा सानते

सुनते हैं कि सत्य का पक्ष कभी उभर ही नहीं पाता। पुलिस के हथकंडे तो विचित्र ही हैं। इस सरकार की एक कृपा हमपर हुई है—वह यह कि माटपार में पुलिस चौकी खोली गयी है। अब दीवान और चार-पाँच सिपाही यहाँ रहते हैं। अब शायद चोरों का आतंक कुछ कम हो और मारपीट करने वालों को रपट लिखाने के लिए चार कोस दूर थाने पर नहीं जाना पड़ेगा। पता नहीं क्या हो? पुलिस की छाया अपने आप में बड़ी अर्थगर्भित होती है। हाँ, सुना है दीवान बढ़िया घूसखोर है, वह चोरों को पकड़ता है, खूब पीटता है और घूस लेकर छोड़ देता है। वह बड़ा सम्मान करता है सतीश का। कहता है आपके समान शरीफ और न्यायी सरपंच मैंने नहीं देखा। और उसने आश्वासन दिया है कि आपके न्याय को व्यवहृत करने के लिए मैं भरसक अपना सहयोग दूँगा और इस गयगरत इलाके को मैं ठीक करते रहूँगा। चाहे तो कर सकता है। यहाँ पढ़े लिखे लोगों का उतना सम्मान नहीं है जितना कि पुलिस के डंडा का, आतंक का। सोशलिस्ट नेता रामकुमार दीवान साहब को सलाम बोलता है और, उससे दोस्ती करना चाहता है। दीन दयाल तो सरकार-सरकार करके बात करता है और अपने घर से तमाम उपहार भेजता है तथा अपने घर खाने को भी बुलाता है। दौलत राम आगे-पीछे घूमता रहता है कुत्ते की तरह पारसमल को भी अक्सर उनके साथ घूमते देखा है हो चुका न्याय और हो चुका सुधार। जितने भी न्याय को निगलने वाले लोग हैं वे दीवान को घेरे हुए हैं। वह क्या करे न्याय को व्यवहृत करेगा क्या करेगा सुधार?

सत्य की चोट सबको लगती है। जनता में नेता लोग भी सत्य की हलकी-सी चोट बरदाश्त नहीं कर पाते। उस दिन कैसे सागर सिंह तमतमा कर भागे थे लेकिन हाँ उस दिन की चोट का एक असर तो हुआ कि रातो और गोर्रा के पास लम्बा चौड़ा बाँध बंधने की योजना स्वीकार कर ली गयी है और बाँध बंधना शुरू भी हो गया है, तमाम

मजदूरो की मजूरी की समस्या इस समय कुछ हल हो गयी है, बाभन लोग भी पैसे की लालच में खाँची-कुदाल लिए पहुच रहे हैं। लेकिन बाँध पता नहीं कब तक बँधे, इसलिए सरकार ने एक तात्कालिक योजना बनाई है, वह यह कि सारे गाँव के चारों ओर ऊँची मिट्टी पटवा दी जाय और जो लोग अपने मकान की जमीन को ऊँचा कराना चाहते हैं वे ऊँचा करा सकते हैं। बस लोगो में होड मच गयी है। हर गाव से पैसे वाले धूर्त लोग शहर को दौड रहे हैं और इंजीनियर को मोटा-मोटा घूस दे दे कर कई-कई गाँव अपने नाम करा रहे हैं तिवारीपुर से दीनदयाल और दौलतराय ने ठोका लिया है पाँच पाँच गाँवों का। दलसिंगार दौलतराय का मुसाहिब बना हुआ है। पहले तो वह तना रहा यह जानकर कि दौलतराय ने उसके खेत में चोरी की-कराई है। वह दौलत राय के बार बार समझाने पर कि चोरी बलई ने ही कराई है, नही माना। उसने स्वयं अपनी आँखों देखा था कि बलई अपने खेत में से दौडा हुआ आया था। दौलतराय परेशान था कि झूठे यह फटी ढोल गल पड गयी। दलसिंगार और कुछ तो नही लेकिन चारो ओर हल्ला गुल्ला तो कर ही सकता था। दलसिंगार जो छाया की तरह उसके साथ-साथ घूमता था, फिरट बना घूमता रहे, यह तो बहुत बुरी बात है। लेकिन जब दलसिंगार धीरे धीरे अभावो का शिकार होता गया तो उसका तनाव कम पडता गया और फिर कुत्ते की तरह दौलतराय के पीछे-पीछे घूम रहा है। वह दौलतराय की ओर से गाँवो में जाता है, वहाँ मिट्टी डलवाने की व्यवस्था करता है। मजदूरो को दूनी मजूरी मिल रही है इसलिए दौडे हुए जाते हैं इस काम पर। दूनी मजूरी क्यो न दें ये ठेकेदार लोग। इनकी गाँठ से क्या जाता है? लूट रहे हैं। जनता के रक्त को बाँट-बूट कर पी रहे हैं। इंजीनियर को घूस देकर ठीका लेते हैं और जितनी मिट्टी डलवाते हैं उससे दूनी तिगुनी मिट्टी का हिसाब पेश करते हैं, हजारो रुपये पीट रहे हैं ठीकेदार लोग, हाई स्कूल के कई मास्टर भी

ठीका लिए हुए हैं। ठीके के चक्कर में वे न तो टाइम से स्कूल आ पाते हैं और न दिमाग से ध्यान दे पा रहे हैं। सभी लोग लाभ में हैं लेकिन ये पैसे कहाँ से आयेंगे जो इन्जीनियरों और ठीकेदारों की झोली में भरत रहे हैं ये पैसे जनता के ही तो हैं, टैक्स द्वारा दिये गए हैं पैसे ?

गाँव में जो जोरदार लोग अपने अपने घरों के पास मिट्टी अधिक डलवा रहे हैं। गरीबों को कोई नहीं पूछता। चमरौटी की झोपड़िया के आस-पास थोड़ी-थोड़ी मिट्टी फेंक दी गयी है और मिट्टी तो दानदयाल, रामकुमार, दौलतराम आदि के (जिनके घर गाँव के किनारे पड़ते हैं) घरों के आस-पास पटवा दी गयी है और अधिकांश लोग अपने खेतों में मिट्टी डलवा रहे हैं यह कह कर कि उनमें वे मकान बनवायेंगे।

कुछ मास्टरों ने सतीश से भी कहा कि सरपंच साहब, आप भी दो-एक गाँव ले लीजिए—हम अपने में से देने को तैयार हैं। सतीश ने एक बार अपने घर की हालत देखी—पैसा की कितनी आवश्यकता है। चारों ओर से अभाव ही अभाव गरजता है। उसका मन हुआ कि कुछ कमा लिया जाए। लेकिन-लेकिन क्या-क्या उससे यह सब लीचड़पन बरदाश्त होगा ? नहीं-नहीं वह यह सब नहीं कर सकेगा ? और ये मास्टर लोग जो बच्चों के हितों को ताक पर रख कर ठीकेदारी कर रहे हैं इनका हिसाब एक दिन सामने आयेगा कार्यकारिणी इनसे जवाब तलब करेगी। हेडमास्टर उस दिन बहुत ही खिन्न हो कर इन लोगों की शिकायत कर रहे थे, तब, तब वह कैसे बोल पाएगा ? नहीं वह इनके पाप में शामिल नहीं होगा, अपनी आत्मा की आवाज को चुप नहीं करेगा। लेकिन घर के इन अभावों का क्या होगा ? क्या होगा—क्या होगा उसे चाहिए कि कुछ पैसे इकट्ठा कर ले, दुनिया भर के न्याय और सत्य का ठीका लिए बैठा है। जब घर में अकाल पड़ेगा तब कोई भी सत्य और न्याय सहायता के लिए नहीं आएगा, केवल पैसा ही साथी होगा। हाँ ठीक ही तो है लेकिन पैसे को खींचने के लिए भी तो पैसे

चाहिए मजूरा को रोज पसे चुकाने पड़ेंगे, कुल डेढ दो हजार रुपये खर्च करने पड़ेंगे पहले। बाद में सरकार सब हिसाब किताब साफ करेगी ? कहाँ पाये वह डेढ़-दो हजार रुपये ? नहीं, वह नही कर सकता, यह उसका रास्ता नहीं ह सतीश रास्ते से गुजरता है तो जमुना भौजी रोक कर अनुनय करती ह, सतीश बाबू, जरा दौलतराय से कह देते कि मेरे बाहर वाले कोले के आस-पास माटी डलवा देते। म तो कई बार कहवा चुकी, गितवा के बाबू भी एकाध बार कह चुके लेकिन दौलत राय सुनते ही नहीं, वे अपने साले, बहनोइयों की ही सेवा म लगे हैं, हमें कौन पूछता है बाबू ? न हमारे हाथ में पैसा ह, न डडा ह, न दा चार सवाँगो ही है। गितवा के बाबू परेशान ह, देख ही रहे हैं। गितवा ससुरे से आई है सख्त बीमार होकर। उसी के लिए यहाँ से कस्बे और कस्बे से गोरखपुर तक दौड रहे हैं। इस्कूल का काम अलग से।

सतीश बोला— वह दूँगा भौजी वह दूँगा, लेकिन वह बड़ा पाजी ह, जबस उसके पास पैसा हुआ है उसे उन्माद हो गया ह। मेरा भी कहा वह कहा मानता ह ? तो भी कहूँगा।'

सतीश चला गया। जमुना भौजी गितवा के पास आकर बठ गयीं। गितवा जसे रक्त मास की एक निर्जीव प्रतिमा हाय, मेरी बिटिया का क्या हा गया ? कितनी साध से बियाह किया था लेकिन चुडल ने खा डाला इसे। मेरा जी डर रहा था मयभा ( सौतेली माँ ) को सौंपते। ब बेचारे तो अभी छोटे ह, पढते हैं, घर पर उनकी मयभा चुडैल थी, साख गयी सारा खून मेरी बछिया का। बछिया कहती ह कि वह बाँझ ह, कई साल बियाह हुए हो गया, कोई सतान नहीं हुई। गाँव म लोग सबेरे-सबेरे उसका मुँह नहीं देखत, शकल से साँपिन है, वैसी ही मन से क्रूर और राक्षसी ह। मरद भी डर के मारे नही बोलता। बछिया कहती ह कि पहले तो दहेज को लेकर इसे गालियाँ देती रही,

फिर दात-बाग में पटक-पटक कर मारने लगा। बछिया कहती है कि बेटे, गड़ाऊँ और चने से मारती थी। हाँ खड़ाऊँ पहनती है न। पुजारिन है। बच्चा होताने के लिए बहुत पूजा-पाठ करती है, तीरथ-बरत करती है, साधु-सन्तों की आवभगत करती है, दिन में जितनी बार पेशाब टट्टी जाती है उतनी बार नहाती है संतान के लिए क्या-क्या करना है!—ध्यान करती है पुरुष, दूसरा को पार नहीं जानती ता अपनी संतान के लिए पूजा-पाठ करने से क्या होगा? भगवान पुरुष का भरम में डालेगा, नहाये चाहन अपने दस बार। निठुली साँड़िन की तरह मस्त है तो नहाये, नहाने से क्या बिगड़ता है उसका? लेकिन मेरी बछिया ता इतनी सुकुमार है कि थोड़ा-सा भी गरम-गरम सहा सह पाती—बछिया बीमार पड़ गयी तो भी चाहन दिन में चार-चार बार नहलाता रही। आग लगे इस निठुली के धरम-करम में पाऊ [illegible] छाती का खून पी जाऊँ राँड़ का।

'माई।'

'बछिया।'

गीता कुछ बोली नहीं, खाली ओठों में कुछ बुदबुदाती रही।

'हाय, कितने दिन से बेहोश सी पड़ी है यह। देहाती बैद की दवा का कुछ फायदा ही नहीं हुआ। पंडित जी दौड़-दौड़ कर कस्बे जा रहे हैं दवा के लिए। पता नहीं वहाँ का डाक्टर भी कौन-सी दवा दे रहा है कि बीमारी बढ़ती ही जा रही है। डाक्टर को यहाँ बुलाने की औकात नहीं। लोग कहते हैं कि अस्पताल में सस्ती दवाएँ मिलती हैं। अच्छी दवाएँ तो डाकटर खुद ले लेता है और उन बीमारों को देता है जो उसे अपने घर बुलाते हैं यहाँ तो खाने का ठिकाना ही नहीं कोई डाकटर की फीस कहाँ से दे? दवा का दाम कहाँ से दे? बड़ी मुश्किल से तो एक बार बैलगाड़ी किराया करके पंडित जी गितवा को कस्बे के अस्पताल ले गए थे।—डाकटर बोलते हैं—निमोनिया है। पता नहीं यह

क्या बला है ? लोग कहते हैं गोरखपुर ले जाओ बड़े बड़े डाकडर हैं वहाँ कैसे ले जाये कोई ? शहर का खरचा कहाँ से आयेगा ? अस्पताल में दवाई का खरचा तो नहीं लगेगा लेकिन वहाँ रहने-वोहने का तो लगेगा ? और घर बिला जाएगा। गाँव के लोग दिन आछत घर मूस लेंगे, और खेत-वोत काट पीट लेंगे

'माई।'

एक करुण चीख सी निकली और पूरा कमरा थर्रा गया।

जमुना भौजी ने थर्रा कर देखा—

गीता वैसे ही आखें मूँदे ओठों के भीतर ही भीतर कुछ बुदबुदा रही थी।

'क्या लिखा है भगवान ? मेरी बछिया को मुझसे मत छीनना। हाय, उस राँड ने मेरी बछिया को मार ही डाला। बीमारी में नहवा-नहवा कर इसकी बीमारी को और बढ़ा दिया। निपूती को मेरी बछिया अपविस्तर लगती थी, हरजाई को गंध आती थी। बेहल्ला बनी घूमती रहती है अपने गाँव भर, सेन्ट पाउडर लगाती है नानी इस बुढ़ौती में और मेरी बिटिया बीमारी में उन्हें गन्धाती है। हाँ, डाकडर कहते थे कि बीमारी में नहाने से ही ठंडक लगी है और वही बढ़ते-बढ़ते निमोनिया हो गया है। रात हो रही है पंडित जी इसकूल से ही दवा लेने चले गए हैं। रमेश इसकूल से लौट कर खेत घूमने चला गया है। पूस की रात ओस से भीग कर भारी होती जा रही है, चारों ओर सन्नाटा हो रहा है, बहुत जी घबरा रहा है आज की रात

गीता रह रह कर घर घर साँस खींचती है। हे ईश्वर, पत रखना ले-देकर यही एक लड़की है करजे की पुतरी, मत छीनना हे दीनबन्धु, बहुत गरीब हूँ, दुखिया हूँ, सताई हुई हूँ प्रभु। हे नाथ, हे मालिक

पंडित जी नहीं आये। इसकूल से असपताल तक आने जाने में टाइम तो लगता ही है, अढ़ाई कोस आना अढ़ाई कोस जाना।

'भौजी।'

'कौन है ?'

जमुना भौजी आँख पोछती हुई बाहर आई ।

'मैं हूँ भौजी, उस मुहहार के बच्चे को ढूंढ़ने में दो घटे लगे और मिला तो फिर कहने लगा कि अभी तो नम्बर में कई घर पड़े हुए हैं, उन्हें करके ही पडित के यहाँ मिट्टी डलवाऊँगा ।

मुझे बड़ा गुस्सा आया और डाँटा कि क्या सरकार के घर से यह नम्बर दिया गया है ? यह नम्बर तुम्हीं बनाते हो और तुम्हें इस बात का ख्याल रखना चाहिए कि खेत में जो घर बने हैं उन्हें बाढ़ का खतरा अधिक है। जो घर खुद ही ऊँचे बसे हुए है उन पर मिट्टी डालनी ही है तो बाद में डालो या जिन खेतों में मकान बनने वाले हैं उनमें बाद में डालो। मै कहता गया और वह 'हूँ हूँ' करता गया और बाद में मैं यह कह कर चला आया कि सुगन भाइ के कोले में मिट्टी नही पडी तो बहुत बुरा होगा। वह कहने लगा कि आप तो खामखाह दूसरों के लिए लड़ते है ।

जमुना भौजी फफकने लगी

'अरे भौजी क्या हुआ ? आप इस तरह रो रही है ?

उन्होंने फफकते हुए ही कहा—'बाबू अभाग मेरे करम में लिख गया है गरीबी जो है सो है ही, भगवान भी मेरे ऊपर खफा है। गितवा की हालत बड़ी गिर गयी है। पडित जी दवा लेने गए हैं और इधर इसकी हालत बड़ी खराब हो गयी है मुझे तो बहुत डर लग रहा है बाबू।'

'अरे भौजी, मुझे तो पता ही नही लगा कि उसकी हालत इतनी नाजुक हो गई है। चलो मैं बैठता हूँ तुम्हारे साथ।'

'नही बाबू नहीं, आप तो खुद सौ तरह के कामों में फसे रहते है थके हारे से।'

'अरे नहीं भौजी, काम तो लगे ही रहते है। भौजी मन छोटा मत करो। यहाँ सभी गरीब हैं, दूसरों का छीन झपट कर पेट भर लेने वाले राक्षस धनी नहीं कहलाते, ईमानदारी नेकनीयती ही धन है।'

सतीश ने गीता को देखा तो धक्क से उसका कलेजा उड़ गया— रक्त-मासहीन एक निर्जीव प्रतिमा-सी। इसमें जान नहीं रह गयी है। फिर भी सतीश जमुना भौजी को दिलासा देता रहा।

दिनेश बैठा-बैठा ऊंघने लगा था। जमुना ने उसे सोने को कह दिया। रात भीग कर और गाढ़ी होती जा रही थी, कभी-कभी सियार गोईंड की रहर में से जोर-जोर से हुआं उठने थे। रात और भी गहरी हो जाती थी। 'बड़ी भयानक रात ह भौजी।'

'हां बाबू, पंडित जी नहीं आये चिन्ता हो रही है।'

'गितवा की माई दरवाजा खोलो।' लो सुग्गन भाई आ गये

'ए जल्दी से यह दवा पिलाओ, डाक्टर ने आज दवा बदली है, जमुना भौजी ने सुतुही में दवा ले ली और गीता के मुंह को खोल कर दवा डाल दी घर्र घर घर्र और मुंह खुला का खुला रह गया, आंखें एक बार खुली, कुछ देखने-पहचानने का प्रयास किया, फिर बन्द हो गयी।

सतीश चौंक उठा—भौजी सब कुछ समाप्त हो गया।

'क्या ?'

'हां'

और सुग्गन और जमुना भौजी दोनों चिग्घाड़ मार कर गीता की देह पर गिर पड़े। जमुना भौजी उसकी लाश को अकवार में भर कर बिसूरने लगी। दिनेश जाग कर चिल्लाने लगा।

रुदन शीत के भारी लबादे को फाड़ता हुआ सारे गाँव में फैल गया, धीरे धीरे लोग जुट आये सुग्गन मास्टर खंभिया के सहारे झांवा की तरह संवाया चेहरा लिए स्तब्ध बैठे थे और जमुना भौजी लाश पर गिर कर रोते रोते बेहाल-हो गयी थीं। सियार जोर जोर से फेंकरने लगे थे और कुत्ते चौंक-चौंक कर रोने लगे थे।

●

# : २७ :

चकबन्दी हो रही है बहुत दिनों से शोर था चकबन्दी का लेकिन अब इस इलाके का भी नम्बर आ ही गया। भूपेन्द्र लाल इस इलाके के ए० सी० ओ० होकर आये हैं। बड़े खुश मिजाज, मिठबोल्वा और दरबारी वृत्ति के अफसर हैं। बनारस के ही ग्रेजुएट हैं। बाबू महीपसिंह की छावनी पर ठहरे हुए हैं।

'आइए, आइए दीनदयाल जी आइए। कैसे हैं?'

'सब इकबाल है सरकार का।'

हँसते हुए दीनदयाल खाट पर बैठ गए। खाट के नीचे बैठे हैं बलई दर्लासिगार, दौलतराम, बनवारी बाबा, मास्टर सुगन, सभापति रघुनाथ महावीर, फेंकू बाबा और-और गाँवों के लोग।

भूपेन्द्र लाल रह रह कर लतीफे छोड़ते हैं, हा हा ही ही चल रही है। लोग अघा रहे हैं कि बड़ा हीरा अफसर आया है। दीनदयाल भी रह रह कर अपनी चुटकियाँ छोड़ता है। महावीर को घेर कर मजाक का चक्र चल रहा है। महावीर सभी लोगों को गाली देते हुए सबके मजाकों का उत्तर दे रहे हैं और हैं हैं-हैं कहते जाते हैं। कहकहों का दौर चलता [illegible]। बड़ा अच्छा अफसर आया है जनता के साथ घुल मिल कर बातें करता है, खुल कर हँसता है। बलई और महावीर को भिड़ा दिया है, दोनों में गाली गलौज हो रही है, बीच-बीच में दीनदयाल बलई का शह दे रहे हैं और भूपेन्द्र लाल महावीर को उत्तेजित कर रहे हैं।

'दूबे बाबा, यह दर्लासिगार तो कहता है कि मैं महावीर दूबे का इस होली में गाँव छुड़ा दूँगा। कहता है कि मेरे डर से तो महावीर की धुकधुकी चलती रहती है। भूपेन्द्र लाल महावीर को उकसाते हैं।

'अरे ए साहब ई मउगा क्या कर लेगा, ई तो जनखा [illegible] जनखा, हौ ए साहब आ ई बात तो ई ठीक कहता है कि इसके डर के मार मरी

धुकधुकी चलती रहती है। ए सरकार इसके पास ऊ गुन है कि मेरी क्या सारे गाँव की धुकधुकी चलती रहती है।'

एक जोर का ठहाका मचता है। भूपेन्द्र लाल जोर जोर से देर तक हँसते रहते हैं। दर्लसिंगार कहता है—'अरे ए सरकार महावीर दूबे क्या, सारा दुबाना मउगा है।

'अच्छा तो तुम्हारे जैसे मउग को भी दुनिया मउग दिखाई पड़ रही है। अरे ए सरकार ई तो हरजाई हैं, कभी दीनदयाल के साथ, कभी दौलतराय के साथ। ईहि दौलतराय अउर ईहि दीनदयाल बइठे हैं पूछ लीजिए।' दौलतराय और दीनदयाल बेचारे शरमा जाते हैं और फिर हँसी का फौआरा फूटता है, दर्लसिंगार फिर नहीं बोलता। गोष्ठी ग्यारह बजे रात तक चलती है। लोगों को ठढक लग रही है, लेकिन सवाल होता है पहले कौन उठे। सबको अपने अपने नाटक से साहब को खुश करना है। गोष्ठी के बीच-बीच में लोग अपने काम की बात करना नहीं भूलते। भूपेन्द्र लाल सोचते हैं— कितने काइयाँ हैं सब, मूर्खों की तरह घंटों बैठे हुए हा हा ही-ही करते रहेंगे, एक दूसरे का मजाक करेंगे, लेकिन सबकी गाँठ में अपना अपना स्वार्थ है सभी किसी न किसी उद्देश्य से बैठे हैं, वास्तव में ये मूर्ख नहीं हैं, मूर्खता का नाटक करते हैं, हैं बड़े स्वार्थ सजग और काइयाँ।'

हजूर आपने मेरा खेत उनको दे दिया है, हजूर वह खेत नम्बर एक में आता है और आपने मुझे उसके एवज में दोयम नम्बर का खेत दे दिया है हजूर मेरे सबसे अधिक खेत तो गाँव के गोइँड में ही हैं मेरा चक वहीं कटना चाहिए, आपने मुझे सिवान के पास दे दिया है भूपेन्द्र सब सुनते हैं और हँस कर मजाक का एक चूहा भीड़ में छोड़ देते हैं और सारी काम की बात भुला जाती है, लोग हँसने लगते हैं और सवाल करने वाला दो-एक बार अपना सवाल पेश कर, फिर हार कर

# : २७ :

चकबन्दी हो रही है बहुत दिनों से शोर था चकबन्दी का लेकिन अब इस इलाके का भी नम्बर आ ही गया। भूपेन्द्र लाल इस इलाके के ए० सी० ओ० होकर आये हैं। बड़े खुश मिजाज, मिठबोलवा और दरबारी वृत्ति के आदमी हैं। बनारस के ही रहने वाले हैं। बाबू महीपसिंह की छावनी पर ठहरे हुए हैं।

'आइए, आइए दीनदयाल जी आइए। कहिए क्या हाल है?'

'सब इकबाल है सरकार का।'

हँसते हुए दीनदयाल खाट पर बैठ गए। खाट के नीचे बैठे हैं बलई दलसिंगार, दीनदयाल, बनवारी बाबा, मास्टर गुप्ता सभापति रघुनाथ महावीर, पेंदू बाबा और-और गाँवों के लोग।

भूपेन्द्र लाल रह रह कर लतीफे छोड़ते हैं, हा हा ही-ही चल रहा है। लोग समझ रहे हैं कि बड़ा हीरा अफसर आया है। दीनदयाल भी रह रह कर अपनी फुलझड़ियाँ छोड़ता है। महावीर को घेर कर मजाक का चक्र चल रहा है। महावीर सभी लोगों को गाली देते हुए सबके मजाक का उत्तर दे रहे हैं और हैं हैं-हैं करते जाते हैं। कहकहों का दौर चलता है। बड़ा अच्छा अफसर आया है, जनता के साथ घुल मिल कर बातें करता है, खुल कर हँसता है। बलई और महावीर को भिड़ा दिया है, दोनों में गाली-गलौज हो रही है बीच-बीच में दीनदयाल बलई को दाद दे रहे हैं और भूपेन्द्र लाल महावीर को उत्तेजित कर रहे हैं।

'दूबे बाबा, यह दलसिंगार तो कहता है कि मैं महावीर दूबे को इस होली में गाँव छुड़ा दूँगा। कहता है कि मेरे डर से तो महावीर की धुकधुकी चलती रहती है। भूपेन्द्र लाल महावीर को उकसाते हैं।

'अरे ए साहब, ई भड़वा क्या कर लेगा, ई तो जनखा है जनखा, हाँ ए साहब आ ई बात तो ई ठीक कहता है कि इसके डर के मारे मेरी

धुकधुकी चलती रहती ह। ए सरकार इसके पास ऊ गुन ह कि मेरी क्या सारे गाव की धुकधुकी चलती रहती है।'

एक जोर का ठहाका मचता ह। भूपेंद्र लाल जोर जोर से देर तक हसते रहते हं। दलसिंगार कहता ह—'अरे ए सरकार महावीर दूबे क्या, सारा दुवाना मउगा ह।

'अच्छा तो तुम्हारे जसे मउग को भी दुनिया मउग दिखाई पड़ रही ह। अरे ए सरकार ई तो हरजाई हैं, कभी दीनदयाल के साथ, कभी दौलतराय के साथ। ईहे दौलतराय अउर ईहे दीनदयाल वइठे हैं पूछ लीजिए।' दौलतराय और दीनदयाल बेचारे शरमा जाते ह और फिर हसी का फौआरा फूटता ह, दलसिंगार फिर नहीं बोलता। गोष्ठी ग्यारह बज रात तक चलती ह। लोगों को ठढक लग रही है, लेकिन सवाल होता ह पहले कौन उठे। सबको अपने-अपने नाटक से साहव को खुश करना ह। गोष्ठी के बीच-बीच में लोग अपने काम की बात करना न॰। भूलत। भूपेंद्र लाल सोचते हं—'कितने काइयाँ हैं सब, मूर्खों की तरह घटों बठे हुए हा हा ही-ही करते रहेंगे, एक दूसरे का मजाक करेंगे, लेकिन सबकी गाँठ में अपना-अपना स्वार्थ ह सभी किमा न किसी उद्देश्य से बठे ह, वास्तव में ये मूख नही ह, मूखता का नाटक करत ह, ह वड स्वाथ सजग और काइयाँ।'

हजूर आपन मेरा खेत उनको दे दिया ह, हजूर वह खेत नम्बर एक में आता ह और आपने मुझे उसके एवज में दोयम नम्बर का खेत दे दिया ह हजूर मेरे सबसे अधिक खेत तो गाँव के गोइंड में ही हैं, मेरा चक वहा कटना चाहिए, आपने मुझे सिवान के पास दे दिया ह भूपेन्द्र सब सुनते हैं आर हँस कर मजाक का एक चूहा भीड में छोड देते हैं और सारी काम की बात भुर्रा जाती है, लोग हसने लगते हैं और सवाल करने वाला दो-एक बार अपना सवाल पेश कर, फिर हार कर

मूस की तरह सबके साथ हँसने को बाध्य हो जाता है। गोष्ठी नित्य ग्यारह बजे रात तक चलती रहती है।

सबके चले जाने के बाद दीनदयाल बच जाते हैं।

'चलो हो भाई दीनदयाल, घर चलें।'

'मुझे थोड़ा सा काम है गाँव में, आपलोग जाइए मैं आता हूँ।

'चलो हो चलो, ई गाँव में काम का बहाना करके साहब के पास फिर आयेगा और पोटेगा।' हँसी बहती है।

और सचमुच दीनदयाल इधर-उधर घूम घाम कर साहब के पास पहुँच जाते हैं।

कमरे की लालटेन के प्रकाश में भूपेन्द्र लाल की हँसती हुई आँखें पूछती है—'कहो क्या हाल है ?'

'सरकार, थोड़ा-बहुत ख्याल कीजिए उस बाभन का नहीं तो मर जाएगा।' कह कर दीनदयाल दो सौ रुपये की गड्डी साहब के हाथ में पकड़ा देते हैं।'

साहब एक बार प्रश्नवाची निगाह से देखते हैं। 'ठीक है सरकार, इतने ही से काम चलाइए बहुत नहीं निकल सका, उसका गोईंड वाला खेत न निकलने पावे, और उसका चक भी वहीं लगा दिया जाए।'

'बहुत थोड़ा है आप ऐसा घाटे का सौदा मत किया कीजिए। गोईंड का चक लगाना कोई आसान है क्या ?'

'अरे तो लौटाने से क्या फायदा होगा। आखिर उसके खेत तो गोईंड में हैं ही, थोड़े से और जोड़ दीजिए।'

साहब ने रुपये रख लिए। दीनदयाल ने और कुछ बातें की धीरे धीरे—'इसका मामला है, उसका मामला है, और मामले ही मामले हैं ' साहब रस के साथ सुनते रहे और अंत में दोनो ठठा कर हँस पड़े।

दीनदयाल चले तो उनकी जेब सौ रुपयों से गरमा रही थी दो सौ साहब के लिए, एक सौ उसके लिए ।

चकबन्दी हो रही है। ए० सी० ओ० के यहाँ सुबह ही भीड़ जमा हो जाती है, खेतों की पड़ताल हो गयी है, मूल्यांकन हो रहा है और खेतों को इकट्ठा किया जा रहा है। गाँव भर के लोग इन दिनों घबराये रहते हैं और साहब के पीछे-पीछे लगे रहते हैं ताकि कोई उनके खेत छीन न ले और उन्हें खराब खेत न दे दिये जाएँ और वे स्वयं दूसरों के खेतों का अच्छा हिस्सा अपने नाम करा लें। फेंकू बाबा खुद तो साथ-साथ दौड़ते ही हैं अपने बेटे वकील साहब को भी बुला लिया है। वे मूर्ख हैं खेतों के बारे में क्या समझेंगे ? वकील साहब कानून समझते हैं इसलिए उन्हें धोखा नहीं होगा और साहब पर उनका दबाव पड़ेगा। वकील साहब कोल्हू की तरह साहब के पीछे-पीछे हिलता हुआ घूमता रहता है, साहब उसकी ओर देखते भी नहीं। लोगों ने साहब से उसका परिचय कराया था कि 'ये हैं फेंकू बाबा के सपूत वकील साहब, गोरखपुर में चार साल से वकालत पढ़ रहे हैं।' साहब ने मुसकरा कर वकील साहब की ओर देखा था और वकील साहब बैठे-बैठे झूमते रहे। रामकुमार भी साइकिल से अक्सर गाँव आ जाता और एकान्त में भूपेन्द्र लाल से मिल आता। वैसे बनवारी बाबा आते जाते रहते थे। दर्लसिंगार कभी दौलत राय के साथ, कभी दीनदयाल के साथ लुटुर-लुटुर चलता हुआ साहब के दर्शन कर आता। इनके अलावा आसपास के तमाम गाँवों के लोग घेरे रहते, हमेशा मेला सा लगा रहता। सुमन मास्टर दो जोड़ी जनेऊ लेकर बोले—दोहाई सरकार की, मैं बहुत गरीब हूँ, मेरी लड़की भी मर गयी है मेरा ख्याल रखिएगा। भूपेन्द्र लाल उनकी ओर देख कर मुसकराते रहे।

अर्जुन को ए० सी० ओ० ने अपने यहाँ लेखपाल के रूप में रख लिया था। अर्जुन ने इन्टर पास कर लिया था, नौकरी की तलाश में चक्कर काट रहा था। फिलहाल भूपेन्द्र लाल ने अपने यहाँ उसे लगा

लिया था। वह स्वभाव से बड़ा विनोदी था, इसलिए साहब से खूब पटती थी लेकिन यहाँ का हाल चाल देख कर वह घबरा गया था।

रात का समय था, नव बज रहे होंगे। दौलतराय एक पाँव पर खड़े थे और उनके हाथ में पाँच सौ रुपयों के नोट काँप रहे थे। 'दोहाई है हजूर की। नारा पर वाले खेत के एवज में मुझे डीह के पास दे दिया जाए।'

'लेकिन यह कैसे हो सकता है ? जो खेत आप माँग रहे हैं वह तो सरपंच साहब का खेत है और उसी के आसपास उन्हें और खेत दिए जा चुके हैं।' साहब ने अंदाज लिया।

'हजूर आप सब कर सकते हैं, माई बाप हैं, सरपंच वाला खेत नहीं दे सकते, तो उन्हीं की बगल में सुगन मास्टर का या बलई का या फेंकू बाबा का चक पड़ता है वहाँ का मेरा खेत बड़ा आबिल है सरकार, उसी के जोड़ का खेत वहीं कहीं मिलना चाहिए।'

'आपका खेत दूसरे दर्जे का है, वह जरा ताल में बलुही जमीन पर पड़ता है और सरपंच के, बलई के, फेंकू तिवारी के खेत पहले दर्जे के हैं। वे मटियार हैं और ऊँचाई पर हैं इसलिए आपको वहाँ चक कैसे मिल सकता है ?'

'हजूर माई-बाप हैं कर सकते हैं।'

'कर क्या सकते हैं इतना बड़ा अन्याय तुम्हारी इन पाँच सौ रुपल्लिया पर कर सकते हैं।'

दौलतराय को कुछ राह मिली। उन्होंने गिड़गिड़ा कर कहा—सरकार से कहीं बाहर थोड़े ही हैं हम और उन्होंने सौ रुपये का एक और नोट निकाल कर साहब के कदमों पर रख दिया। साहब ने झल्ला कर छ सौ रुपये दौलतराय की ओर फेंक दिए।

दौलतराय गिड़गिड़ाते खड़े रहे। 'हुकुम हो सरकार।'

'एक हजार से कानी कौड़ी कम नहीं।' साहब एक झटके से कह

गए। कुछ देर तक दौलतराय खड़े रहे, फिर उन्होंने सौ के चार और नोट निकाल कर साहब के चरणों पर अर्पित कर दिये।

'जाइए काम हो जाएगा।' कहते हुए साहब ने जम्हाई ली। दौलत राय निकले तो अर्जुन कमरे के बाहर चक्कर काटता हुआ मिला। दौलतराय चौंके— अरे आप अर्जुन बाबा! कब से खड़े हैं?'

'बहुत देर से खड़ा हूँ। सोचता था कि आप बाहर निकलें तो मैं साहब के पास जाऊँ।

दौलतराय चौंका। उसे विश्वास हो गया कि अर्जुन ने सारी बात सुन ली है। अर्जुन मुसकरा रहा था व्यंग्य से। दौलत ने अर्जुन का पाँव छान लिया और रोते हुए बोला—'दोहाई बाबा की, किसी से कहिएगा मत।

'अरे जा मदवा मुझे क्या गरज है कि मैं किसी की बात कहता फिरूँ।'

दौलतराय का विश्वास नहीं हुआ तो भी वह धीरे धीरे वहां से चल पड़ा।

अर्जुन को बड़ी पीड़ा हुई। सतीश काका का खेत काट कर साहब अच्छा नहीं करेंगे। बेचारे कितने भले आदमी है. सारा गाँव साहब के पीछे-पीछे दौड़ रहा है मनकी सच्ची तसवीरें उसके सामने खुल रही है लेकिन सतीश काका कभी नहीं दौड़े। बस दो-एक बार आये साहब से मिलने, वो भी बाजार के दिन यहाँ से गुजरते हुए। खेत-बारी की कोई बात नहीं की। साहब भी बड़ा अदब करते हैं उनका। बड़े सम्मान से उन्हें बैठाते हैं और कहते भी हैं कि अर्जुन तुम्हारे गाँव में एक ही आदमी पानी का है—बाकी का तो पानी मैंने देख लिया। तुम्हारे गाँव के पढ़े लिखे लोग भी कितनी दीनता और नीचता से अपना स्वार्थ साधना चाहते हैं। एक हैं तुम्हारे गाँव के वकील साहब,- अरे वही वकील साहब जो वकालत के दरजे में चार साल से फेल होकर वकील साहब बने हुए हैं

कोल्हू की तरह पीछे-पीछे घूमते हैं और अंग्रेजी म बात करते हैं सबके सामने। मूर्ख को अंग्रेजी बोलने तो आती नहीं, बस अंग्रेजी बोलता ह। एक हैं मिस्टर रामकुमार तुम्हारे गाँव के नेता, हाँ-हाँ वही तुम्हारे भाई, प्रोफेसर और और न जाने क्या क्या ? वे भी अंग्रेजी म बोलते ह और तरह तरह से तिकड़म की बातें करते हैं भाटपार के लालमणि जो अंग्रेजी स्कूल के सेक्रेटरी हैं, सोनइचा के पारस मल अनश पढ लिखे सभ्रान्त लोग नंगे हो रहे हैं...लेकिन ये गाँव के अपढ गँवारा का वे बराबरी नहीं सकते, ये ता काइयाँपन म उनके भी बाप ह, कैसा-कैसी पेचीदा बात करते हैं

अर्जुन को विश्वास था कि साहब सतीश के साथ खराब सलूक नहीं करेंगे फिर भी उसका जी धकधका रहा था रुपये की माया जो न कराए। सतीश काका का नहीं तो सुग्गन मास्टर का कुछ बिगाड़ेंगे। बेचारे गरीब सुग्गन मास्टर का बिगाड कर तो ये बहुत बड़ा पाप करेंगे। वसे मास्टर सुग्गन दो जोडी जनेऊ दे गए थे लेकिन रुपयो के आगे जनेऊ की क्या बिसात ? बलई और फेंकू का भी बिगाड सकते है बिगाड उन कमीनो का ये लोग इसी लायक ह ।

यह दौलत राय जब से पैसे वाला हो गया ह तब से गाव मे एक नया खुराफाती पैदा हुआ ह। वह सतीश काका से संकेत करेगा।

उसने सतीश और मास्टर सुग्गन दोनो से संकेत कर दिया कि सावधान रहेंगे, गाँव के कुछ लोगो की निगाह डोह के खेतों की ओर ह। उसने सतीश से दौलतराय का नाम भी लिया, मगर मास्टर सुग्गन से नहीं कहा। सतीश गुस्से से पागल हो उठा—इस भुइहार साले का मैंने क्या बिगाडा ह जो मेरे पीछे पडा ह, इसको बडा घमंड है अपने पैसे का। सिधाई और आदर्श से काम नही चलेगा, अब इसे ठीक करना पडेगा। मास्टर सुग्गन ने सुना तो साहब के पास दौडे हुए गए और दो जोडी जनेव और दे आए। साहब ने विनोद में कहा—अरे मास्टर जी,

इतने जनेव लेकर म क्या करूँगा, अभी तो आपके पहले वाले ही काफी दिन चलेंगे।'

'सरकार और मेरे पास है ही क्या ? सरकार माई बाप हैं ख्याल रखेंगे।'

भूपेन्द्र लाल ने सतीश का खेत नहीं छुआ, बलई और कुजू के खेतो में कुछ काट-काट कर दौलत राय को दे दिया। फेंकू बाबा का भी दोम काटा था मो फेंकू बाबा को मालूम हो गया। वे और वकील साहब दोनों साहब के यहाँ पहुँचे। पहले वकील साहब ने अंग्रेजी में बातचीत शुरू की, भूपेन्द्र लाल हिन्दी में बोलते रहे। भूपेन्द्र लाल ने समझाया कि आपके खेत के साथ जो खेत जुडे थे वे एक नम्बर के हैं जबकि वह खेत जिसके एवज में यह चक दिया गया था दोयम नम्बर का है। वह गल्ती से जुड गया था उस पर तनाजा हो गया इसलिए उसमें से कुछ हिस्सा काट कर आपको दोयम नम्बर के खेत दिए जाएंगे। आपको घाटा भी क्या ह अधिक खेत मिलेंगे। वकील साहब और साहब में कानूनी बात होने लगी। वकील साहब को कानून तो कुछ आता नही था खाली गिलबिला रहे थे। अन्त में वकील साहब ने गुस्से में आकर पिटा पिटाया वाक्य उगल दिया—'आई विल सी यू —मैं देख लूँगा।' भूपेन्द्र लाल एकाएक तश में आ गए चिल्लाकर बोले— गेट आउट इडियट ( मूर्ख बाहर निकल जा )। अब फेंकू बाबा ने बात सँभाली— आ हजूर माफ किया जाए। ई आज के लौंडे लफाडी लोग बात करने की भी तमीज नहीं जानने ह। सहूर नही ह कि हाकिमों से कसे बात करते ह। सरकार मालिक हैं, इनसे अपना हर्ज गर्ज प्रेम स कहना चाहिए कि झगडे से। सरकार हम बात करते हैं।'

अच्छा आप को बात करनी हो तो पहले आप अपने इन वकील साहब को घर रवाना कर दीजिए फिर ।

'हाँ, हाँ, जा हो, जा हो वकील साहब, घर जा मैं अभी आऊँगा।

और जब फेंकू बाबा उठे तो प्रसन्न थे, साहब भी प्रसन्न थे। और फेंकू बाबा के जाते हुए खेत रह गए।

जब बलई ने सुना कि उसके खेत का हिस्सा काट कर दौलत राय को दे दिया गया है तो लाठी निकाल कर माँजने लगा, उसमें तेल चभोरने लगा। लेकिन पहले वह सतीश से कुछ बात कर लेना चाहता था। सतीश के पास पहले से ही कुंजू मुँह लटकाये बैठा था। सतीश ने दोनों को समझाया कि अभी मारपीट करने से कोई फायदा नहीं है, पहले तनाजा दाखिल करो—बाद में देखा जाएगा। यह भुइहार बहुत अगरा गया ह, इसको ठीक करना ही पड़ेगा। कुंजू और बलई ने तनाजा दाखिल कर दिया। रामकुमार ने भउगा दर्लसिंगार के चक को कटवा कर अपने नाम करा लिया और दीनदयाल ने सतीश वाला वह दोनों बाधा खेत अपने चक में ले लिया। कुमार का तर्क था कि जितने खेत दीनदयाल चाचा [redacted] ह, उतने ही उसके भी, फिर उसे वहाँ क्यों नहीं चक दिया गया? उसके बदले उसे अधिक खेत दूसरी जगह दिए गए थे। एक विचित्र समस्या मच गया था गाँव में। कुमार ने दीनदयाल वाले चक पर तनाजा किया, दर्लसिंगार ने रामकुमार वाले चक पर। भूपेन्द्र लाल ने अपने सारे फैसले को बहाल रखा। उन्हें एक बात का बहुत दुख हुआ कि सरपंच साहब जिनकी जमीन को उन्होंने छुआ तक नहीं, बलई और कुंजू की ओर से उनके तनाजे को बल दे रहे थे। उन्होंने भूपेन्द्र लाल से स्वयं भी बहस की थी कि कुंजू बेचारा गरीब सीधा आदमी, उसके पास खेत भी थोड़े ह, उसे क्यों मारते हैं, बलई भी चोर है लेकिन दौलत राय उससे बड़ा चोर ह, बदमाश ह, उसका खेत काट कर दौलत राय को देना कोई न्याय तो नहीं ह।

भूपेन्द्र लाल ने कहा था कि पंडित जी, आप अपनी देखिए, काहे को दुनियाँ भर [redacted] चक्कर में पड़ते ह? किसी की जमीन तो नहीं मार रहा हूँ उन्हें तो अधिक ही खेत मिले हैं। आपका मैं आदर करता हूँ और

आपसे यही निवेदन है कि दुनिया भर की चिन्ता छोडिए। आप लायक जो सेवा हो, कहिए।

सतीश ने कहा—'अपने लिए तो सभी जीते हैं सिंह जी। लेकिन मेरा निवेदन कि आप विद्वान व्यक्ति हैं, गरीबों को न्याय दें।'

सतीश बोलता चला गया और भूपेंद्र लाल सोचते रहे बात तो सही कही ह सतीश जी ने। वह विद्वान हैं—'हां हिंदू विश्वविद्यालय से सस्कृत से एम०ए० ह मालवीय जी के विश्वविद्यालय से। उमने वाल्मीकि कालिदास को पढा ह, बहुत-बहुत से आदश ग्रंथ पढे हैं और उसकी नसों मे भी आदर्श का रक्त उछलता था बहुत कुछ कर गुजरने की उमग उठती थी। लेकिन एम० ए० करन के बाद मारा-मारा फिरता रहा, लोग कहते रहे संस्कृत भी कोई विद्या ह—भिखमंगई विद्या, इससे कोई नौकरी होती है? और उसे लगा कि सस्कृत में उसन राम, कृष्ण, रघु के जो आदर्श पढे हैं वे सब भीख मांगने के लिए । भला हो एम० एल० ए० महोदय का जिनकी कृपा से यह नौकरी मिल गयी। अस्थायी नौकरी ह आदश की प्रणाली पर चलते रहे तो चार-पांच साल बाद फिर ठोकरें खानी पडेंगी। कुछ इकट्ठा कर लो ताकि नौकरी छूटने तक मकान दुकान सब सज जाए। उसे आदश अब बडा खोखला लगता ह। सतीश जी को क्या हुआ है कि दुनियां भर की खुदाई खिदमतगारी लिए फिरते हैं

भूपेंद्र लाल ने सारे तनाजों पर विचार कर फैसला बहाल रखा किन्तु उसके मन में सतीश के प्रति एक कांटा-सा चुभ गया सतीश ने सी० ओ० के यहाँ तनाजा दाखिल करा दिया। उसे जिद इस बात की थी कि दौलत राम ने इन दोनो की जमीन नाजायज तरीके से अपने चक मे डलवा ली है। सी० ओ० ने भी ए० सी० ओ० का फैसला बहाल रखा। ए० सी० ओ० ने सी० ओ० की जेब गरम की। सतीश ने हार नही मानी, उसने सेटलमेन्ट अफसर के यहाँ तनाजा पेश करवा

दिया। सेटलमेंट अफसर ने बड़े गौर से सारे तनाजा को देखा, सी० ओ० और ए० सा० ओ० के फसला का देखा, उसे फसले की बात बड़ी असगत लगी और फैसला रद्द कर दिया और ए० सी० ओ०, सी० ओ० का बुला कर विचार किया, उन्हें डाटा भी कि इतना बड़ा असतुलन कैसे हुआ न्याय में ? उसने पहले की सी स्थिति कायम रखते हुए बलई और कुजू के निकले हुए खेतों को उनके चका म जोड़ दिया। ए० सी० ओ० मर्माहत-सा रह गया। दौलत राय गूँछिन से हो गए उनके हजार रुपये भी गए और खेत भी। बलई और कुंजू बहुत खुश थे। बलई लाठी में तेल पोतने लगा था कि अब दौलत साले को समझूँगा। सतोश ने कहा अभी मूखता मत करो समय से सब कुछ होगा। बाकी तनाजो पर भूपेन्द्र लाल का फैसला बहाल रहा और कुमार ने सोचा—दीनदयाल *कितना नीच है! साला मेरे ही साथ मिल कर खेत लिया इसने, और* मेरे साथ भी दगा कर गया। दलसिंगार कुमार पर झल्लाया हुआ था—कितना दोगला ह यह कमीना, मेरे ही खेत पर चढ दौड़ा। दीन दयाल ने दलसिंगार से कहा—घबड़ाओ नहीं, म साहब से कह कर सब ठीक करा दूँगा। लेकिन हुआ कुछ नहीं और दलसिंगार तथा कुमार में भयकर कटुता बढ गयी। कुछ दिन बाद सुना कि फेंकू बाबा ने सभापति रघुनाथ के चक में से खेत कटवा कर अपने नाम करा लिए ह रघुनाथ फेंकू बाबा पर तड़पने झड़पने लगे और कहा कि देख लू गा। सम्बन्धो के सूत्र उलझते गए और सभी लोगों को यह विश्वास हो गया कि भूपेन्द्र लाल किसी का नहीं ह, पैसे का ह। ऊपर के साहबो को भी आशका होने लगी कि भूपेन्द्र लाल बहुत गोलमाल कर रहे ह तभी तो इतने मामले उलझे हुए आ रहे हैं। गुमनाम शिकायतें भी भेजी गयी थी कि भूपेन्द्र लाल घूस ले-लेकर इधर उधर कर रहे ह।

भूपेन्द्र लाल सोच रहे थे कि सतोश को किसी जगह बड़ा धक्का देना चाहिए, इन्हीं के कारण उसे यह नाचा देखना पड़ा। नहीं तो

बसी और बलई जैसे पिद्दिया की क्या मजाल थी कि वे उससे जीत पाते। किसी चक में उन्हें वह लोटायेगा।

तब तक आर्डर आ गया उसके तबादले का। जी मसोस कर रह गया।

अबकी बड़ा कड़ा अफसर आया है, न कचहरी करता है, न किसी से बोलता बतियाता है, न मुँह लगाता है, न घूस लेता है, एकदम कड़ा, एकदम गुमसुम—नाम है अनजान राय। यह लखनऊ विश्वविद्यालय से एम० ए० है, हाँ बड़ा काबिल है।

अनजान रात के सन्नाटे में मकान के बाहर बैठा हुआ काम कर रहा है। चन्द्रकांत घर आया हुआ है। अनजान राय ने एक चिट्ठी लिख कर उससे अपने यहाँ आने का निवेदन किया है। लिखा है—सौभाग्य की बात है कि आप जैसे लोग इस जवार में हैं जिनसे मिलने का सौभाग्य मुझे प्राप्त हो सकता है। चन्द्रकांत ने सोचा, वह क्यों जाए उसके यहाँ। अफसर हैं तो अपने घर का है और अफसर भी क्या है ऐसे-ऐसे अफसर तो शहरों में मारे-मारे फिरते हैं। नहीं जाएगा वह।'

सतीश ने कहा—'नहीं, जाओ। मुझसे भी तुम्हारे बारे में एक दिन बात कर रहे थे। वे यहाँ किसी से बोलते-बतियाते नहीं, एकदम अकेला अनुभव करते हैं।'

चन्द्रकांत गया तो राय साहब ने उठ कर स्वागत किया और देर तक नाना साहित्य, राजनीति पर बातें करते रहे।

'कौन है भाई उस कोने में?' राय साहब ने अँधेरे कोने में जमीन पर बैठे किसी व्यक्ति की ओर देखते हुए पूछा—

'यह तो मैं हूँ सरकार, दीनदयाल।

चन्द्रकांत ने विस्मित होकर सोचा कि दीनदयाल भाई हैं ये। वह तो समझा था कि छावनी के नौकर-चाकर हैं।

रायसाहब ने सख्त आवाज में पूछा—'कहिए, यहाँ क्यों बैठे हैं?

'एक काम था सरकार ?' दीनदयाल ने दीन वाणी में कहा।

'काम है तो कल दिन को आइएगा जब मैं सबके बीच बैठा होऊँ। यह मेरे काम का वक्त नहीं है, आराम का वक्त है।'

दीनदयाल नहीं उठे, अरमरा कर रह गए, दो क्षण बाद बोले—'आ जरा सुन लिया जाता सरकार अकेले में, बड़ा जरूरी काम है।'

'नहीं आप जा सकते हैं, मेरा कोई काम अकेले में नहीं होता। खेतवारी सम्बन्धी सारे काम खुले आम होंगे आप कष्ट न कीजिए। जाइए।

दीनदयाल चन्द्रकांत के सामने अपमानित-सा अनुभव करते हुए उठ खड़े हुए और जाते-जाते बोले—'सलाम सरकार।' रायसाहब बिना बोले हुए चन्द्रकांत से बातें करते रहे।

'देखा आपने, ये लोग दलाल हैं। पहले के अफसरों ने इन्हें मुँह लगा कर बिगाड़ दिया है।' राय साहब बोले।

हाँ मैंने सुना है कि भूपेंद्र लाल के यहाँ ग्यारह ग्यारह बजे रात तक कचहरी होती थी—हा हा ही-ही होती थी। और यह दीनदयाल तो जन्मजात दलाल है।'

'हाँ बड़ा काइयाँ और मीठा बोलने वाला है। आपका गाँव बड़ा बीहड़ है, यह तो मैंने पहले ही सुन रखा था। तरह तरह के लोग हैं, कोई मामला सुलझाना यहाँ मुश्किल है। इन्हें मुँह लगाया तो गया काम से। अब देखिए आपके भाई साहब ने प्रस्ताव रखा था और सरकारी योजना में इसका जिक्र भी है कि सार्वजनिक उपयोग के लिए कुछ जमीन छोड़ी जाए जिसमें गाँव के लिए कोई भी काम हो सकता है—चरागाह हो सकता है, स्कूल खुल सकता है, बच्चों के खेलने की जगह हो सकती है, पंचायत भवन बन सकता है, लेकिन गाँव वालों ने सख्त विरोध किया, क्योंकि उनकी थोड़ी थोड़ी जमीन कटने वाली थी। दीनदयाल ने तो यहाँ तक कह दिया कि आपकी जमीन हम लोगों की

अपेक्षा थोड़ी कटेगी न, इसीलिए जोर मार रहे हैं, मैने भी उन्हें बहुत समझाया लेकिन ये नहीं माने। जब तक जबर्दस्ती न किया कराया जाए, ये कोई काम करने वाले नहीं, इनमें सार्वजनिकता की भावना है ही नहीं, यदि है भी तो मर सी रही है। सरकार का स्पष्ट निर्देश है कि खेतों के बीच रास्ते और चौड़ी सड़क छोड़ी जाएँ। यदि यह वैकल्पिक होता तो ये रास्ते और सड़कें भी नहीं छूटतीं। यह तो सरकारी आदेश होने की वजह से भख मार कर इन्हें रास्ता के लिए जमीन देनी ही पड़ी। वैसे हर गाँव में मैं यही रंग ढंग देख रहा हूँ किन्तु आपके गाँव का जोड़ नहीं। हाँ, बहुत से गाँव ऐसे भी हैं जहाँ के लोगों में सार्वजनिकता की भावना का इतना विकास हुआ है कि जिद करके सार्वजनिक भूमि छोड़वा रहे हैं।'

हाँ, मुझे भी लगता है कि मेरा गाँव अद्भुत है, जहाँ-जहाँ ऊँची जातिवालों के गाँव हैं खास करके ब्राह्मणों, क्षत्रियों के वहाँ-वहाँ यही हाल दीख रहा है—सभी भीतर से टूट रहे हैं, बाहर से गरज रहे हैं, सारे मूल्य हाथ से छूटते जा रहे हैं—कहीं कुछ सूझता नहीं इन्हें, वे केवल अपने अपने स्वार्थ को देख रहे हैं। शहरों से बदतर हो गए हैं। शहर तो कई माने में इनसे बहुत अच्छे हैं। लोग कहते हैं कि 'आप गाँव नहीं आते हैं यह अपनी जन्मभूमि है, यहाँ आना चाहिए आपको।' सुन लेता हूँ मगर सोचता हूँ क्या करने जाऊँ, दो दिन भी यहाँ रहना मुश्किल हो जाता है। नोचता पूर्ण झगड़े टंटे, लूट पाट, मार-पीट, फूँका तापी, चुगली निंदा यही तो गाँव में रह गया है। शहरों में अकेले रह कर आप चैन की साँस तो ले सकते हैं, वहाँ अकेलेपन के तमाम साथी हैं। यहाँ तो आप अकेले हैं मगर चाह कर भी अकेले नहीं रह सकते, न सार्वजनिकता का सुख है यहाँ न अकेलेपन का। कोई सहायता नहीं करता, लेकिन आपके अकेलेपन को छोड़ने के लिए अनेक आलोचनाएँ, गालियाँ शिकायतें और आक्रामक कारवाइयाँ टूट पड़ती हैं और तमाम साधनों के

अभाव की बात तो छोड दीजिए क्योकि इन म गाँवो का क्या दोष ? बेचारे अभागे गाव साधनविहीन और विपन्न होकर और भी गिरते जा रहे ह । और सरकार ह कि उसकी दृष्टि शहरो की ओर लगी है, दिल्ली सजाई जा रही ह, प्रातो की राजधानियाँ सजाई जा रही ह, सबकी दृष्टि गाँवो की ओर से हटकर शहरो की ओर लग गयी ह, सारी चमक-दमक निमाण-कार्य, सम्पन्नता, सुविधाएँ शहरो के हिस्से पड गयी ह और विपन्नता, सुविधाहोनता और कोआरोर गाँवों के हिस्से में । गांधी जी सत्ता, उद्योग, सुविधा सबका विकेन्द्रीकरण कर गाँवा म बिखेर देना चाहते थे लेकिन उनके उत्तराधिकारी नेता लोग गाँवा का दूर कर केन्द्रों को सजा रहे ह लेकिन फिर भी गाँवो के पास जो ह उस काफी सुन्दर बनाया जा सकता ह लेकिन गाँव वाले अपन अपने स्वाथ म धसे हुए न कुछ और देखते ह, न सुनते ह । और पढे लिखे लोग तग आकर अपनी व्यापक राजनीति को छोडकर गाँव की राजनीति पकड लेते ह देखिए हमारे गाँव के रामकुमार को । म उन बेचारे को कोई दोष नही देता, उन्हें हार मान कर जीने के लिए गाँव की राजनीति की माला पहननी पडी है ।

राम साहब हँसे— बडे विचित्र जीव ह कुमार साहब । एक तो वे बात-बात में अपनी तारीफ करते है और दूसर उन्हें किसी के बडप्पन में आस्था नही ह, सबको वे चोर-बेईमान समझते ह । और और भी बहुत सी बातें हैं । और मैं आपकी इस बात से सहमत नहीं कि गाँव में रह कर हर आदमी को गाँव की राजनीति स्वीकार करन के लिए मजबूर होना पडता ह । कुमार जी तो बहुत पढ़े लिखे ह, बड-बड नेताओ के सम्पक में रह चुके हैं, समाजवाद का आदश उनके सामने ह, उन्हें ता गाँव की सीमाआ से सघष करना चाहिए । अपने भाई साहब को देखिए गाँव में रहते हुए भी, जमींदारी नौकरी में रह चुकन के बावजूद जूझ रहे हैं अकेले ही। गाँव की सीमाओं से लड रहे ह एक प्रकाश ह उनके भीतर ।

'तभी न भोग रहे हैं भाई साहब, अपने न्याय, सत्य प्रियता और साफगोई के कारण सबको नाराज करते चलते हैं, कहीं जमीन निकल रही है, कहीं साथी टूट जाते है, कहीं खेत उखाड़ जा रहे है, एकदम अकेलापन ।'

'चन्द्रकान्त जी, परिणाम से न्याय और विवेक का नहीं तौला जा सकता, इतना कम नहीं है कि इन आँधियों में बीच भी आदमी प्रकाश को न बुझने दे। सत्य के लिए मूल्य तो देना ही पड़ता है। और जब तक कुछ लोग संगठित होकर मूल्य देने को तयार नहीं होंगे और दूसरा की देखा-देखी असत्य की ओर उन्मुख होते रहेंगे तब तक गाँव का क्या, देश का और पूरे विश्व का उद्धार नहीं होगा।'

चन्द्रकान्त को अपने भाई साहब के विषय में अनजान राय की यह धारणा बहुत गौरवप्रद लगी और वह मन ही मन बड़ा सम्मानित अनुभव करने लगा। कुछ भी हो, गाँव के ये भेड़-बकरे भाई साहब के बारे में चाहे कुछ भी कहें, तटस्थ और बाहर से आये हुए भद्र लोगों की धारणा बड़ी ऊँची है सभी उनका सम्मान करते हैं और यह कम प्राप्य नहीं। दीनदयाल छल कपट से भले कुछ छीन-झपट लेता हो, रामकुमार भले ही अपनी राजनीति में बहुत-कुछ पा लेता हो, महीपसिंह अपनी गुंडई से भले हमारे खेतों के ग्रह बने हो, लेकिन उनके बारे में लोगों की धारणाएँ कितनी फूहड़ और अपमानजनक है। भाई साहब के लिए और उसके परिवार के लिए इतना सम्मान कम प्राप्य नहीं है।

काफी देर तक बात करने के बाद चन्द्रकान्त चला आया और अनजान राय ने उससे फिर आने का वचन ले लिया।

अनजान राय के आगे पीछे लोगों का दौड़ना कम हो गया वह किसी से बोलता नहीं था किन्तु जब वह खेतों पर पैमाइश करने जाता तो काफी लोग इकट्ठे हो जाते और सबको अपनी-अपनी बात कहने की काफी छूट थी।

लोग कहते थे—बड़ा कड़ा हाकिम आया है, न ऊधो की लेनी न माधो की देनी, अपने काम से काम। लोग तरह-तरह की चर्चाएँ करते थे कि उसने दीनदयाल को अपने यहाँ से गाली देकर निकाल दिया, दौलत राय जाति-पाँत जोड़ कर अपना काम कराने गए थे। उन्हें उसने ऐसी सुनाई कि नानी याद आ गयी। और तो और वह महीपसिंह को भी कुछ खतियाता नहीं है।

रामकुमार हमेशा यही कहता—'अरे यह सब प्रपंच है, मैं जानता हूँ इसका सारा इतिहास। पहले यह बस्ती जिले में था, वहाँ इसने इतनी घूस लिया कि नौकरी जाते जाते बची, अब यह कम्पन का ओढ़ना ओढ़े हुए है, देखिए कब तक चलता है यह सब। यह तो बहुत ही बड़ा घूसखोर है—सौ चूहा खाइ के बिलारि चलें हज का। और मैं जानता हूँ कि आज भी यह कैसे घूस लेता है?'

अच्छा! है! ऐसा। कह कर लोग रामकुमार की बात का रहस्य जानने की कोशिश करते जैसे वे स्वयं अपने भीतर की निन्दकी वृत्ति को खुराक पाकर तृप्त होना चाहते थे। लोग अर्जुन से पूछते तो वह बड़े भोलेपन से यही उत्तर देता—'भाई मेरे तो ऐसा कुछ भी नहीं दखा रामकुमार भइया जानते हों तो जानें, मैं कुछ भी नहीं कह सकता।'

तनाजे कम नहीं हुए। अनजान राय अपनी ओर से अच्छा से अच्छा हमला करना चाहते थे और लोगों को सताये मन हो पाता था, झगड़ा लग ही जाता था। मामले सी० आ० और परगना हाकिम तक पहुँचते थे। सी० ओ० असंतुष्ट था मिस्टर राय से। कोई सामग्री नहीं हो पाता था। उसने उनके खिलाफ कई कुछ रिपोर्ट और उनकी रिपोर्ट लिख दी और अनजान राय का तबादला हो गया। हाकिम परगना ने उनसे कहा कि आपका काम हर जगह असंतोषजनक हो रहा है मिस्टर राय बात क्या है?—

मिस्टर राय ने हँस कर कहा—'बात-वात कुछ नहीं है पर, म

अपने हाकिमों को खुश नहीं कर पाता क्योंकि मैं जनता को खुश करने में विश्वास रखता हूँ। तबादले की नोटिस रखिए, मैं त्याग पत्र दे रहा हूँ।'

मिस्टर राय ने त्यागपत्र दे दिया लेकिन वह तिवारीपुर की चकबन्दी का काम निबटा चुका था। रामकुमार ने लोगों से कहा—'देखा आप लोगों ने रँगे सियार का। यह मुँहहार घूसखोरी में पकड़ गया था निकाल दिया गया।

'गलत बात है, वह घूसखोर नहीं था। उसने त्यागपत्र दिया है।' सतीश ने प्रतिवाद किया।

'अरे कहाँ की बात करते हो सतीश बाबू, कायथ और मुँहहार कभी सच्चे हो सकते हैं? मैंने उसे घूस दिया है।' फेंकू बाबा ने ललकार कर कहा। 'अरे देखा दौलतराय को बना गया कितने अच्छे-अच्छे खेत दे गया है।'

दीनदयाल को राम थी कि बड़ा घुटा हुआ उस्ताद था, बड़ी महीन मार करता था। मुझसे हो वह घूस माँग रहा था औरों की क्या बात कहूँ?

'हाँ-हाँ चन्द्रकांत भी बता रहा था कि आप गए थे उसके यहाँ और '

दीनदयाल सतीश के इतना कहने पर हतप्रभ हो गए।

●

लोग कहते थे—बडा कडा हाकिम आया है, न ऊधो की लेनी न माधो की देनी, अपने काम से काम। लोग तरह-तरह की चर्चाएँ करते थे कि उसने दीनदयाल को अपने यहाँ से गाली देकर निकाल दिया, दौलत राय जाति-पाँत जोड कर अपना काम कराने गए थे। उन्हें उसने ऐसी सुनाई कि नानी याद आ गयी। और तो और वह महीपसिंह को भी कुछ लतियाता नहीं है।

रामकुमार हमेशा यही कहता—'अरे यह सब प्रपच ह, म जानता इसका सारा इतिहास। पहले यह बस्ती जिले में था, वहाँ इसने इतनी घूस लिया कि नौकरी जाते जाते बची, अब यह कडेपन का ओढ़ना ओढ़े हुए है, देखिए कब तक चलता है यह सब। यह तो बहुत ही बडा घूसखोर ह—सौ चूहा खाइ के बिलारि चलें हज को। और म जानता हूँ कि आज भी यह कसे घूस लेता ह ?'

अच्छा ! है ! ऐसा। कह कर लोग रामकुमार का बात का रहस्य जानने की कोशिश करते जसे वे स्वय अपने भीतर की निन्दकी वृत्ति को खूराक पाकर तप्त होना चाहते थे। लोग अजुन स पूछते तो वह बडे भोलेपन से यही उत्तर देता— भाई मैंने तो ऐसा कुछ भी नही देखा, रामकुमार भइया जानते हो तो जानें, मैं कुछ भी नही कह सकता।'

तनाजे कम नहीं हुए। अनजान राय अपनी ओर से अच्छा से अच्छा फसला करना चाहते थे और लोगो को सतोष नही हो पाता था अडगा लग ही जाता था। मामले सी० ओ० और परगना हाकिम तक पहुँचते थे। सी० ओ० असतुष्ट था मिस्टर राय स। कोई आमदनी नही हो पाती थी। उसने उनके खिलाफ कई फ़ाइलें किए और उल्टी रिपोट लिख दी और अनजान राय का तबादला हो गया। हाकिम परगना ने उनसे कहा कि आपका काम हर जगह असंतोषजनक हो रहा है मिस्टर राय बात क्या ह ?—

मिस्टर राय ने हँस कर कहा—'बात-बोत कुछ नहीं है सर, म

अपने हाकिमो को खुश नहीं कर पाता क्योंकि मैं जनता को खुश करने में विश्वास रखता हूँ। तबादले को नोटिस रखिए, मैं त्याग पत्र दे रहा हूँ।

मिस्टर राय ने त्यागपत्र दे दिया लेकिन वह तिवारीपुर की चकबन्दी का काम निबटा चुका था। रामकुमार ने लोगो से कहा—'देखा आप लोगों ने रँगे सियार का। यह मुट्ठहार घूसखोरी में पकड़ गया था निकाल दिया गया।

'गलत बात है, वह घूसखोर नही था। उसने त्यागपत्र दिया ह।' सतीश ने प्रतिवाद किया।

'अरे कहाँ की बात करते हो सतीश बाबू, कायथ और भुइँहार कभी सच्चे हो सकते है? मैंने उसे घूस दिया है।' फेंकू बाबा ने ललकार कर कहा। अरे देखा, दौलतराय को बना गया, कितने अच्छे-अच्छे खेत दे गया है।'

दीनदयाल की राय था कि बड़ा घुटा हुआ उस्ताद था, बड़ी महीन मार करता था। मुझसे हो वह घूस माग रहा था औरो की क्या बात कहूँ?

हाँ हाँ चन्द्रकांत भी बता रहा था कि आप गए थे उसके यहाँ और

दीनदयाल सतीश के इतना कहने पर हतप्रभ हो गए।



## : २८ :

यही सनसनी थी—अखबार में एक अदालत पंचायत के सरपंच का दिन दहाड़े खून कर दिया गया था। एक सभापति को मार डाला गया था। ऐसी घटनाएं प्रायः सुनने में आती थीं। चारों ओर पंचायत गुटबन्दी, गंवई राजनीति को लेकर ऐसी भयंकर अराजकता फैली हुई थी कि कभी भी किसी का कत्ल हो सकता है। सतीश की पत्नी बार बार डर कर समझाती है कि चूल्हे भाड़ में जाए यह सरपंची, छोड़िए, मगर सतीश नहीं छोड़ता है—यह तो बुजदिली हुई देखा जाएगा जो कुछ होगा

सतीश के न्याय से सबको संतोष है केवल उसके गांव वालों को शिकायत सूझती है। उसका खरापन अभिजात वर्गीय लोगों को जरूर खलता है किन्तु सामान्य जनता तो अंततोगत्वा न्याय ही पाना चाहती है इसलिए वह प्रसन्न और संतुष्ट है। ऐसी हालत में उसे खतरा क्या होगा? वह न किसी से घूस लेता है, न पक्षपात करता है लेकिन असंतोष तो ईर्ष्यावश भी होता है न। उसके गांव के कई लोग अपनी आदतवश ईर्ष्या करते हैं दीनदयाल सरपंच होना चाहता है होगा ही कभी न कभी, और तमाशा दिखाएगा।

कितने कितने पेचीदे मामले आए, उसने बखूबी उन्हें सुलझा दिया। लोग शिकायत करते हैं कि ये बड़े आदमियों का कोई भी लिहाज नहीं करते, छोटे लोगों का पक्ष करते हैं हां रमधनिया का मामला फिर एक बार आया था। दीनदयाल के एक अहिर चेले ने रमधनिया का खेत उखाड़ लिया था। रमधनिया ने उसे पकड़ा था। उसने पंचायत में दावा किया तो सतीश ने उस अहिर को बहुत बड़ा दंड दिया। दीनदयाल प्रचार करते फिरे कि ये तो रमधनिया से घूस खाते हैं और उसके पक्ष में फैसला करते हैं लेकिन सुननेवालों ने सुना दिया कि

दीनदयाल बाबा, लोग तो यह कहते हैं कि आपने ही अपने चेले से रमधनिया के खेत उखड़वाये हैं, बदला लेने के लिए।

गाँव में बड़ी सरगर्मी आ गयी है। चकबन्दी ने सम्बन्धों के तमाम सूत्र उलझा दिए हैं। बलई और दौलतराय एक दूसरे के जानी दुश्मन हो गए हैं। रामकुमार को नरसिंगार और दीनदयाल दोनों से खटक गयी है, रघुनाथ और फेंकू बाबा में गटक गयी है, बिरजू अब केवल बाँसुरी ही नहीं बजाता लाठी भी लेकर चलने लगा है और वह दौलत राय से खार खाये है बलई का उसकी दोस्ती हो गयी है, सतीश से दौलतराय चिढ़ा हुआ है, चाहता है उसका घर-द्वार फूँक-ताप दना पता नहीं कब क्या हो जाए ? दीनदयाल का बड़ा रामबहादुर खुलेआम लाठी लेकर दौलतराय के साथ घूमने फिरने लगा है। बलई कहता है— 'अच्छा अच्छा सारी लाठी एक ही दिन निकाल दूँगा।'

एक दिन दोपहर को रामबहादुर खून से डूबा हुआ रोता गाँव की ओर भागा आ रहा था।

क्या है—क्या है ?' कई आदमी एक साथ चिल्लाये।

'बिरजुआ ने मारा है।'

बिरजुआ ने ?' लोगों ने आश्चर्य से पूछा। अरे पगला तो नहीं गए हो, वह तो बेचारा जेल में है।'

'अभी-अभी आया है। मैं बागीचे में से आ रहा था वह भी उधर से आ रहा था, मुझे देखते ही बोला—'कौन है रे दिनदयला का सार है का। और दौड़ा कर लाठी से मारने लगा।

दीनदयाल तड़पें तब तक बिरजू ने अपने मकान के पास से ललकारा—'आ जाओ साले दीनदयाल, मैं छूट कर आ गया हूँ।' और दीनदयाल सिटिया कर रह गए।

गाँव में खलबली मच गयी—आ गया बिरजुआ, अब कितना का खैर नहीं है। बिरजू की शक्ल और भी डरावनी हो गयी थी, उसका

छोटी छोटी भूरी आँखों में संसार के प्रति एक अजब तरह की प्रतिहिंसा चमक रही थी।

उसने गाँव आने पर एक-एक से बदला लेने की सोची थी। कुजू ने धीरे धीरे गाँव का सारा इतिहास बताया, यह भी कहा कि दौलत राय ने उसका चक अपने नाम करा लिया था, सतीश भाई की माग दौड़ से बच गया। दीनदयाल और दर्शसिंगार का प्रपंच भी बताया। बिरजू ने हुमच कर लाठी उठायी और कहा—'इस साले मुर्दहार की यह मजाल ? कल तक तो यह साले बिना मरता था आज यह पसे वाला हो गया ह ? निकालना हूँ सारा पैसा इसका।'

वह लाठी उठा कर चलने को हुआ लेकिन कुजू ने रोक दिया, 'अरे भाई, इतने दिनों बाद तो मिले हो अभी तुम्हें भर आँख देखा भी नहीं कि तुम चल पड़े मार झगड़ा करने। भइया, जमाना बड़ा खराब ह, सँभल कर रहना है, ये साले बदमाश फिर कोई झकड़ा लगा देंगे। अब तो पुलिस चौकी भी भाटपार में खुल गया ह।'

'म किसी स नहीं डरता, एक-एक को समझूँगा।' वह लाठा भाँजता हुआ घर से निकल पड़ा। कुजू की आखा में आँसू आ गए, गला भरा गया और उसने उसे पकड़ लिया—नहीं मेरे भइया मत जा, पहले सतीश भइया के पास जा, उनके दर्शन कर दुख-सुख सुना, जो हलका होगा फिर कुछ सोचा जाएगा।'

'अच्छा तुम रोते हो तो नहीं जाऊँगा अभी दौलत के यहाँ। सतीश भइया के यहाँ भी बाद में जाऊँगा।'

बिरजू नाई के यहाँ गया, बाल कटवाया। वहाँ स लौट कर नहाया। फिर उसने पूछा—'वो कहाँ ह भइया ?'

'वो कौन ?

बिरजू थोड़ा सकुचाया फिर कमरे की ओर ताकने लगा।

'अच्छा अच्छा समझा, वो तो अपने बाप के यहाँ ह।'

'कब से ?'

'तुम्हारे जाने के कुछ ही दिन बाद से।'

'क्यों वहां क्या छोड रखा ह ?'

'इसलिए कि तुम्हारे बिना उसका जी लगता नही था। अरल अकेले घर में ऊबता था। घर में अकेली बहू और गाँव के लोग इतन खराब कि । इसलिए मने बाप के घर भेज दिया कि वहाँ मनबहलाव रहेगा। अब तुम आये हो तो जाकर ले आओ।'

बिरजू सतोश क पास गया तो बौखलाया हुआ था। सतीश भइया अब तो जेल का आदी हो ही गया हूँ। किसना को पार लगाकर एक बार फिर जेल हो आऊँ या चाहे फाँसी पर ही चढ जाऊँ दीनदयाल और दौलत को नही छोडूँगा।'

वह क्रोध से हाँफने लगा। फिर बोला—'आप नही जानते, जेल में मेरे इतने दिन कम बाते ? दिन रात म दीनदयाल से बदला लेने की सोचता रहा और दाँत पीस-पीस कर रह जाता रहा। अब मेरा खून उछल रहा ह अब मान का नही आ रहा है।

'पागल मत बनो बिरजू धीरज से काम लो। अभी आये हो, गाँव का रंग ढंग पहचानो। गाँव बहुत बदल गया ह उसे परखो। सारा काम लाठी से ही तो नही होता। धीरज धरो और खेती-बारी में मन लगाओ। बीवी मायके में पडी ह ले आओ, ढंग से गृहस्थी चलाओ। तुम्हारे एक भाई है भोलेनाथ, उन्हें भी सँभालो।'

'नही भइया मैं चुप नहीं बैठ सकता। खेती-बारी तो होती जाती रहेगी, मैं इन लोगों को छोडूँगा नहीं और मानता हूँ आज कल सारे काम लाठी से ही नही होते मगर मेरे हाथ में लाठी को छोड कर और है ही क्या ? न पइसा ह न कलम।'

'ठीक ह, तुम्हारे हाथ में लाठी ह मगर उस लाठी का उपयोग सही ढंग से करो, इस गाँव में राजनीति चलती है भाई।'

'राजनीति क्या भइया ?'

'राजनीति का मतलब यह कि साँप भी मरे और लाठी भी न टूटे, बहुत से काम करने हैं तुम्हें। धीरज से काम करो एकाएक कोई काम कर बैठोगे तो पुलिस पकड़ लेगी और तुम्हारी बात मन की मन ही में रह जाएगी।'

'हूँ।' कह कर बिरजू चुप रहा। जैसे वह कोई बात समझ नहीं पा रहा है। उठा और चुपचाप चल दिया। वहाँ से बलई के यहाँ पहुँचा। बलई उससे गले मिला। और कहा— अच्छा हुआ दोस्त तुम आ गए। गाँव में बहुत-से बदमाश उभर गए हैं उन्हें ठिकाने लगाना है। दीनदयाल और दौलत एक हो गए हैं, उनके साथ दलसिंगार हैं। पहले रामकुमार भी था लेकिन चकबन्दी में दिनदयाला ने उसे पट्टी पढ़ा दी और आज कल वह अकेला पड़ गया है। वैसे है वह दोगला कभी इधर, कभी उधर पता नहीं क्या पढ़ा लिखा है उसने ? फेंकू बाबा अपने साथ हैं लेकिन रघुनाथ सभापति का उन्होंने चक तुड़वाया था इसलिए रघुनाथ दीन दयाल के साथ अधिक उठने-बैठने लगा है। साला सभापति है नम्बरी दोगला और जनता कोई मामला साफ ही नहीं कर पाता, दिन रात चमरौटी की ओर दौड़ता है। एक अपने सतोग भइया हैं देखो कितने करकरे सरपंच हैं, दूध का दूध और पानी का पानी कर देते हैं। बचारे को बड़ा परेशान किया, मनीपसिंह ने इन्साफ को ही लेकर। और गाँव के ये दो नपुंसक दीनदयाल और रामकुमार न उनका खेत खरीद लिया।

'हाँ, मैं सुन चुका हूँ बलई भाई, इसीलिए तो इच्छा होती है अभी दीनदयाल और दौलत दोनों को मार गिरा दूँ तुम चलो मेरे साथ।' बिरजू की आँखों में अंगारे दहकने लगे।

'देखो, बेवकूफी मत करो।' बलई ने डाँटा— यही सब करोगे तो कल ही पकड़ जाओगे और कुछ भी नहीं कर पाओगे—हाँ, माटपार में ही पुलिस चौकी खुल गयी है।'

'तो ?' विरजू ने गम्भीर आवाज में पूछा।

'तो वो कुछ नहीं, मैं तुम्हें बताऊँगा कि क्या करना है। अभी घर जाओ।'

विरजू के मन के भीतर उमडता हुआ तूफान भीतर ही भीतर बन्दी होकर उसे ही तोडने लगा नहीं-नहीं वह अभी मारेगा दीनदयाल को और दौलत को भी

लेकिन सभी मना कर रहे हैं कि अभी नहीं, अभी नहीं।

विरजू कई दिनों तक यों ही बावला बना फिरता रहा और दिन दिन गुमसुम होता चला जाता। धीरे धीरे कुजू से कटने लगा, मिलता तो एक अजब विरक्ति से।

कई दिनों बाद कुजू ने कहा—'जाकर बहू को अब ले आओ न।'

विरजू ने कुजू को जलती आँखों से घूरा—कुजू कुछ समझा नही। फिर बोला—हाँ-हाँ जाओ बहू को ले आओ, कितने दिनों बाप के घर रहेगी।'

विरजू अब अपने को सभाल नहीं सका, तडप कर बोला—'क्या सताने से मन भर गया। उसके सामने बुरी-बुरी बातें रखी और जब वह नहीं तैयार हुई तो मारपीट कर उसके नइहर भेज दिया। सोचते थे कि विरजू जेल में ही मर जाएगा। कभी जेल में देखने भी तो नहीं आये। मनाते रहे होंगे मर जाए साला और तुम खुद उस कहाइन को ऐश्वर रहो। आज जब जेल से छूट कर आ गया हूँ तो मोह लग रहा है मेरा और बहू का।'

'विरजू!' कुजू जोर से तडपा। तुम्हें क्या हो गया है? गाँव वालों ने यह जहर भी भर दिया तेरे भीतर। और तू बिना मुझसे पूछे यह जहर गटागट पी गया। तुम्हें शरम नहीं आती ऐसी बातें करते।'

'चुप रहो, बकवास मत करो। मैं सब-सुन चुका हूँ एक से नहीं,

कइयों से, तुमसे क्या पूछना ?' उसकी आँखों में भयानक प्रतिहिंसा घूरने लगी थी।'

'हे राम ! क्या मैं इसी लाछन के लिए जिंदा था। पता नहीं किसने इसे यह जहर पिला दिया है। देख भाई, तेरा यह सारा संदेह गलत है। तू जानता नहीं, इस गाँव में कैसे जी रहा हूँ ! इन गाँव ने हमें तुम्हें नष्ट करने के लिए यह आग लगा दी है और इसमें भी दीनदयाल का ही हाथ होगा ताकि तुम्हारा गुस्सा उसकी ओर से हट कर मेरा तरफ चला आये। अगर मैं तेरी राह का काँटा मालूम होता होऊं तो तू जब कह देगा मैं घर छोड़कर कहीं और चला जाऊँगा।

'और वह कहाइन कहाँ जाएगी ?'

बिरजू नालायक' ! तू क्या क्या बकवास कर रहा है। तड़प कर कुंजू ने एक चाँटा बिरजू के गाल पर जड़ दिया।

'हूँ' कह कर बिरजू उछला और कुंजू की बाँह पकड़ कर मरोड़ने लगा। कुंजू टेढ़ा हो गया और बिरजू ऐंठता हुआ कहता जा रहा था—'बोलो बोलो इसी दम पर चाँटा मारने चले थे तोड़ दूँगा।

बिरजू ने कुंजू की बाँह छोड़ दी तो कुंजू भरी भरी आँखों से बिरजू की ओर देखता हुआ बोला—'मैंने गलती की बिरजू, जो तुझे चाँटा मारा। मैं आज तक तो यही समझता रहा कि मैं तेरा बड़ा भाई हूँ और यह कुपद करने पर तुझे चाँटा मारने का अधिकार है लेकिन यह मेरी गलती थी। ठीक है, तू घर सँभाल मैं कहीं चला जाऊँगा। अकेले आदमी का क्या ? कहीं भी कुछ खा लिया कुछ पी लिया और सो लिया। लेकिन गाँव वालों का ठीक मत समझना, तुझे मुझसे तोड़ कर फिर तुझे तुझसे तोड़ने की कोशिश करेंगे।'

बिरजू अविश्वास के साथ ग्वाला हूँ हूँ करता रहा।

कुंजू उस दिन बहुत उदास रहा। सोचता रहा क्या करे ? भीतर भीतर रोता रहा। गाँव वालों ने इसके भीतर आग लगा दी है। यह

आग इसी को खायेगी, इतना बडा लाछन उसपर लगाया गया और उसके भाई के ही द्वारा। नही वह इस घर में नहीं रहेगा। अब । बदमी बदमी उसका क्या होगा? इतनी नजदीक आ गयी है मानो दोना एक हो हो गए ह उससे कह दे कि वह कहीं जा रहा ह नही, नहीं कहेगा। परेशानी बढ जाएगी। वह साथ जायेगी नही, और उसे कहाँ-कहाँ ढोता फिरेगा? फिर देखा जाएगा

दूसरे दिन सुबह बिरजू ने देखा कुजू कही नही ह। सोचा कि दिसा-मदान होने गया होगा, आ जाएगा। लेकिन घडी बीती, पहर बीता, दिन बीता रात बीती वह नही आया तो उसे पता हुआ कि वह कही चला गया।

धीरे धीरे गाव में बात फल गयी कि कुजू घर छोड कर भाग गया, शायद दोनो भाई म कुछ मारपीट हुई थी तरह-तरह की चर्चाएँ चलने लगीं।

बिरजू का प्रतिहिंसा का भावना कुजू के जाने के बाद भी कम नही हुई, लोगा ने सुनाया—देख, पाप में हिम्मत नही होती, वह शुद्ध होता तो इस तरह नही भागता डट कर सामना करता। पापी चोर की तरह भाग गया। बिरजू का शक और भी मजबूत हो गया और गाली देकर कुजू के नाम पर थूकते हुए कहा—थुडी ह, साला भाई बनता है, छोटे भाई की अमानत में खयानत करता ह और नही तो उसे मारपीट कर घर से निकाल दिया। जाए पापी जहाँ जाना हो, मर जाए। उसका मुह नहा देखूँगा अब।

कई दिना बाद बिरजू ससुराल गया बीवी का लाने के लिए। लेकिन वहाँ स मानो खाली उदास उदास-सा लौट आया जैसे मार खायी हो। गुमसुम। लोगों ने पूछा कि बहू का क्या नही ले आये? तो वह साफ कछ मने बाना टाल-टल दिया। लेकिन साथ जो गाँव का नाऊ गया था उसने सारे सारे सब बता दिया और बात फल गयी कि बिरजू

के ससुर ने अपनी लड़की फिर दूसरे को बेच दी। वहाँ काफी गड़की-गड़का हो गयी थी, बिरजू ससुर के सामने तन कर खड़ा था तो ससुर ने डाँट कर कह दिया 'जा जा क्या मेरी लड़की जिन्दगी भर अकेली घर में पड़ी रहने के लिए है? तुम जेल में कालापानी भोगो और मेरी लड़की घर में कालापानी भोगे। सीधे से घर चले जाओ, आँख दिखाओगे तो कहीं पता नहीं चलेगा।'

बिरजू चुपचाप लौट आया और तभी से गुमसुम घूम रहा है। उसके भीतर ही भीतर न जाने कितने उपद्रव सुलग रहे थे। सबकी जड़ यह दीनदयाल है, इसे नहीं छोड़ूँगा। और कुजुआ मेरा भाई नहीं है दुश्मन है, न मेरी औरत को मार-पीट कर नइहर भेजता, न यह नौबत आती।

बिरजू बलई के यहाँ खूब उठने-बैठने लगा, उधर दौलत राय, रायबहादुर, दर्लासगार दल साजने लगे। दीनदयाल खुद बिरजू से भागते रहते थे और भाटपार चौकी पर जाकर रपट लिखा दी थी कि बिरजू जेल से छूट कर आया है वह धमकी देता फिर रहा है, उससे उसके जान माल को खतरा है। पुलिस ने आश्वासन दिया आप निश्चिन्त रहें साले को पकड़ कर मुश्क चढ़ा दूँगा, ठीक हो जाएगा। आप किसी केस में उसे फँसाइए तो। दीनदयाल ने पुलिस की मुट्ठी गरम की और थोड़े बहुत आश्वस्त होकर चले आये।

बिरजू ने बलई से कहा—चलो एक दिन आमने-सामने दिनदयला और दौल्तवा को ठिकाने लगा दिया जाए। बलई ने समझाया—'मूरख हो तुम, सामने आने पर फँस जाओगे, आड़ में रह कर इन्हें खूब नचाओ, इनके खेत काटो, खलिहान फूँक दो, सेंध लगा दो, बैल चुरा लो, इनके हलवाहों को तंग कर दो, जब आमने-सामने जकड़ने की नौबत आये, तभी सीधे-सीधे भिड़ो।'

'लेकिन बलई भाई, भीतर तो आग जल रही है और चाहता हूँ

दिनदयला को खूब कचर कर मारूँ और अपनी आतमा शान्त करूँ।'

'तो तुम कुछ नहीं कर पाओगे। दिनदयला पुलिस वालो से मिला हुआ ह, साले आयेंगे तुम्हें बाँध ले जाएगे।'

'तो क्या हुआ बलई भाई, उस साले को मारने के बाद तो म फाँसी पर भी चढ सकता हूँ।'

'देखो बेवकूफी मत करो, म जो कहता हूँ करो। इन सालो को ऐसी मार मारो कि ये मरें, हम न मरें।'

बिरजू अपनी उफनती आग दबाये लौट आता।

फसल सब अच्छी आयी हुई थी, अरहर के सघन खेत यहाँ से वहाँ तक जगल की तरह लगते थे। बच्चे डर के मारे अरहर के बीच के रास्तो से गुजरते नही थे। किसी ने हवा फला रखी थी कि भेडिया आया हुआ ह। अरहर के पड छीमियो स लहक रहे थे, मटर भी लद गयी थी। गेहूँ-जौ भी बालियो से भर रहे थे, कछार बहुत सुहावना लग रहा था। माघ की सर्दी ठाट से पड रही थी तो भी लोग शाम को अपने खेत एक बार घूम आते थे और कुछ लोग तो रात को भी एकाध बार गश्त लगाते थे।

ओस से लदी हुई एक सुबह। दीनदयाल का एक बीघा अरहर का खेत कटा हुआ बिछा पडा था। दीनदयाल उदास आँखो से खेत को देख रहे थे और मन ही मन कुछ फसला करते हुए जान पडते थे। गाँव म बडी सनसनी थी। दूसरे दिन रात को दौलतराय की गाँव के बाहर की घारी हहरा कर जल पडी। दौलतराय खुद ही घारी में सोये हुए थे आहट पाकर जाग गए और हल्ला करना चाहा कि बिरजू ने झपट कर पीछे से उनका गला पकड लिया और पटक कर छाती पर चढ बैठा। बलई ने मना किया कि लाठी से मत मारना भीतरघावें यूर दो साले को, किसी काम का न रहे।

बलई ने दौलतराय का मुँह पकड लिया और बिरजू ने लात

मुश्कों से खूब कूटना शुरू किया, जब दौलतराय बेहोश हो गया तब उसे खेत में फेंक कर झोपड़ी में आग लगा दी। बलों के पगहे छोड़ दिये गये, वे सनपाते हुए भागने लगे। आग लगा कर दोनों सघन अरहर में गायब हो गए।

गाँव के लोग दौड़े। दौलत राय बेहोश और नंगे पड़े थे—ठंडक में सिकुड़े हुए से।

दूसरे दिन दीनदयाल दौलतराय के यहाँ आये और कहा कि—चौकी पर रपट लिखा दो। दौलतराय हल्दी छोपवाए कौड़े के पास आग ताप रहे थे। कराहते हुए बोले—चौकी तक जाऊँ तो कैसे जाऊँ? अच्छा हो जाऊँगा तो समझूँगा।

'अरे बैलगाड़ी पर बैठ जाओ और रपट लिखा दो माल की हानि का, और मार खाने का। और पहचान तो लिया ही होगा तुमने चोरों को।'

'अरे वे किसी से छिपे हैं। वही बलई और बिरजू थे। वे मुँह ढके हुए थे लेकिन मैं पहचान तो गया ही।'

'तो फिर नाम भी दे दो इन दोनों का।'

'अरे भाई नाम दे देने से क्या होगा कोई सबूत तो चाहिए।'

'सबूत वोमूत सब मिल जाएगा, तुम नाम तो दे दो।'

दौलत राम चौकी पर रपट लिखा आये। बलई और बिरजू का नाम भी दे आये।'

थाने के दीवान साहब मुआइने पर आये। उन्होंने बलई और बिरजू दोनों को पकड़वा लिया।

दोनों ने बार बार दीवान साहब से यही कहा कि हम कुछ नहीं जानते। हमें दौलतराय ने दुश्मनी के कारण फँसाया है।

दीवान ने कहा—'मैं जानता हूँ तुम दोनों को। तुम्हीं लोगों ने दीनदयाल जी का खेत काटा है, तुम्हीं लोगों ने दौलतराय की मारी

फूँको ह, तुम लोग इस गाँव के ही नहीं, इस जवार के लिए कलंक हो।'

बलई तो चुप रहा लेकिन बिरजू गरजा—'दीवान साहब, हम नहीं, ये दोनों कलंक हैं। ये दोनों दूसरों का खेत अपने नाम लिखवाते हैं, कर्ज देकर दूसरे का घर-दुआर सब हड़प कर जाते हैं, ई दोनों घूम-घूम कर घटियाई करते ह, किसी की बहू-बेटी इनकी निगाह में बहू-बेटी नहीं ह। आप नहीं जानते दीवान साहब, ई दीनदयाल कितना बड़ा जालिम ह। बड़आदमी बना फिरता ह न। लेकिन है बड़ा कमीना। इसके भाई बंबा में चोरी चकारी करके रुपये भेजते ह तो बड़ा आदमी बन गया है और यही हाल इस दौलतिया का है, नया धनी बना है। इसको आग फूँके हुए ह, बड़ी गरमी बैठे हुए हैं। सो चोर-डाकू गिरहकट, घटिहा जो कुछ कहिए—दीवान साहब, ये दोनों हैं। हम लोग तो गरीब आदमी ह किसी तरह अपनी ही गुजर-बसर में लगे रहते हैं।'

दीवान साहब मजा ले रहे थे मन ही मन कि दीनदयाल ने टोका—'देखिए दीवान साहब, आपके सामने ही यह कैसी बदजबान बोल रहा ह।'

दीवान को होश आया और अपना रोल उठा कर डाँटते हुए तड़पा, 'चुप रहो बेशरम, मेरे सामने ही सटर-सटर जीभ चला रहा है।'

कहने दीजिए दीवान साहब, जब बात छिड़ गयी ह तो आज आपके सामने ही फैसला हो जाए कि इस गाँव का कौन क्या ह? आप इंसाफ करने आये ह तो सारे छिपे और उजागर चेहरों को असली रूप में आपको पहचानना ही चाहिए। बिरजू जो कह रहा ह, ठीक ही तो कह रहा ह। इन दोनों ने बड़े आदमियत का चोंगा पहन कर गाँव को परेशान कर रखा ह और भी चोंगे वाले लोग हैं। लेकिन बिरजू हो चाहे बलई हो, चाहे इस किस्म के और लोग हों, जो है सो साफ है।' बड़े तेश में और दर्द भरे स्वर में सतीश एकाएक बोल गया।

दीनदयाल और दौलतराय इस आक्षेप से तिलमिला गए और

प्रतिवाद में घिघियाने लगे। वहां मुखी होने लगी। दीनदयाल ने सतीश पर अनेक आरोप लगाए लेकिन सतीश ने इतना ही कहा कि 'आप लोगों से वहस में नहीं पड़ता, सभी लोग जानते हैं कि कौन क्या है। आपके आरोप लगाने से क्या आता-जाता है? लेकिन अब समय आ गया है कि यह साफ हो जाए कि कौन क्या है। छिप छिप कर वार करने की हद हो गयी।'

'देखिए दीवान साहब, सतीश हम चोरों को दाह दे रहे हैं आपके सामने ही। मुझे लगता है कि इन्हीं का बल पाकर इन चोरों का यह सब करने की हिम्मत हो रही है।' दीनदयाल ने चीखते हुए कहा।

'चुप बेईमान, अधिक बोला तो मूछ उखाड़ लूंगा। सहते सहते मक्दूम हो गया है। दलाल तू है, चोर तू है घटिहा तू है कपटी तू है, छली तू है और मुझे चोरों का साथी समझ रहा है। और ई साले भकभुहरी आये हैं राजा बन कर। कल तक सूअर पर फटहा चिथड़ा लपेटे घूमते थे, आज राजा बन गए हैं। भाई है सो परदेस में चपरासी है, पता नहीं किस किस का जूता साफ करके, पेट काट करके रुपए भेजता है और ई साले राजा बने फिरते हैं गढ़ेरिरा रखते हैं कल तक चारों ओर लात खाते फिरते थे आज पहलवान बने फिरते हैं। दीवान साहब, हम सबका भी हिसाब रखिए।'

दौलतराय तो चुप रहे मगर दीनदयाल आहत होकर तड़पने लगे—आप सरपंच हैं इस तरह बेबुनियाद बातें करते हैं। एक भी प्रमाण दे सकते हैं क्या? आप नहीं जानते कि इसका फल क्या होगा।'

'फल क्या होगा? जो कुछ फल आप दे सकते हैं दे ही रहे हैं, मुझी को नहीं गाँव भर को। आपके कारण कुंजू का घर उजड़ गया, आप के कारण कितनों के चक खराब हो गए आपके कारण गांव में दलबन्दी शुरू हुई, आपके कारण पंचायत के चुनाव में गन्दगी फैली आपने कुंजू को पकड़ाया, उसका खेत उखड़वाया, आपने महीपसिंह जसे

नर-पशु की चापलूसी कर-करके मेरे दो बीघे खेत निकलवा लिए। बनिया पर झूठा इलजाम लगाया। पचायत के चुनाव में आपने खेत उखड़वाये क्या-क्या नहीं किया है आपने?'

'सारे आरोप झूठे ह, मैं आपके खेत क्या उखाड़ने लगा? म एक सम्मानित आदमी हूँ मेरे खिलाफ आप यह आरोप लगा रहे है बहुत बुरा होगा।'

दीवान साहब बीच-बीच म दोनो को चुप करा रहे थे। सारा गाव इकट्ठा हुआ था और सतीश के आरोप से सबको एक राहत भी मिल रही थी।

सतीश आज तयार होकर आया था, अपने लडके से कहा—'जरा गुरदीन को बुला तो लाना।'

गुरदीन एक काम से सतीश के यहाँ आया हुआ था। बडा-सा लट्ठ लेकर आ पहुँचा—'क्या है बाबा?' 'गुरदीन तुमसे मैंने कुछ भी कहने को मना कर रखा था लेकिन आज सबूत की जरूरत आ पडी है, वो भी दीवान साहब के सामने। यह बताओ तुम उस दिन मेरा खेत कटवा रहे थे, उसका क्या राज था?'

गुरदीन एक बार ठिठका यह सोच कर कि कौन-सी आफत आ पडी है। सिपाहिया के सामने उसे कुछ कहने में भय नही लगा क्यो कि ये तो उसके दोस्त थे। बोला—'बाबा, म झूठ नहीं बोलता और चाहे जितने भी कुकरम करता होऊँ—भरी सभा में मैं ईमान की कसम खाकर कहता हूँ कि बाबू महीपसिंह ने कहा था खेत काटने के लिए और दीन दयाल बाबा वहीं बठे थे। इन्होंने ही लाकर खेत दिखाया था। मैंने पूछा था कि किसका खेत ह तो बोले थे किसी का भी हो, तुम खाली खेत काटो। जब बाद में मुझे मालूम हुआ कि खेत सतीश बाबा का है तो मैं महीपसिंह और दीनदयाल बाबा की धोखादेही पर गुस्से से पागल

हो गया था और उसी समय मैं दीनदयाल बाबा से निपटारा कर लेना चाहता था लेकिन सतीश बाबा ने रोक दिया।'

दीनदयाल का मुँह तांबा के समान काला पड़ गया और गुरदीन सहजता से हँसता रहा। गाँव के लोग आपस में काना-फूसी कर रहे थे।

दीवान ने बीच में रोकते हुए कहा, 'छोड़िए आप लोग यह विवाद, इससे कोई फायदा नहीं है। इस समय जो सवाल सामने है वह यह कि दौलतराम की रपट के अनुसार कलुई और बिरजू पकड़े गए हैं। इनका चालान करना है।'

'लेकिन दीवान साहब, यह कैसे हो सकता है? कोई भी किसी का नाम दे दे तो आप उसका चालान कर देंगे। मैं ही कल दीनदयाल का नाम दे दूँ तो करेंगे आप चालान?'

'अरे सरपंच साहब, छोड़िए अपने और दीनदयाल साहब के बीच के विवाद को। सबको पोड़ पकड़ सकता है। ये दोनों तो शातिर बदमाश हैं, इसलिए इन्हें सन्देह में पकड़ा जा सकता है। इनके लिए चोरी चिकारी और बदमाशी कोई नयी बात तो नहीं है। और फिर कचहरी तो है ही, साफ पाक होंगे तो छूट ही जाएंगे।'

'शातिर चोर और बदमाश तो बहुत से लोग हैं दीवान साहब, लेकिन ऊपर से बड़े रंगीन रंगीन चोगे ओढ़े हुए हैं, पुलिस भी धोखा खा जाती है और उन्हें पकड़ने की हिम्मत उसे नहीं होती, खैर जो भी उचित समझें करें।' सतीश बोला।

दीवान ने बीच का रास्ता अपनाते हुए कहा—'यह ठीक है कि कोई सबूत नहीं है कि इन्होंने ही दौलतराय की धारी फूँकी है, दौलत को मारा है लेकिन दौलतराय ने रपट में इनका नाम लिखाया है तो मुझे कारवाई करनी ही पड़ेगी। हाँ, यह हो सकता है कि कोई जमानत हो जाए तो इन्हें छोड़ दूँ और कारवाई करता रहूँ।'

गाँव के लोग एक दूसरे की ओर ताकते हुए सरकने लगे। सतीश सबको तौलता हुआ खड़ा रहा। बलई और बिरजू सबके चेहरों की ओर देख रहे थे। दीवान साहब ने मुसकराते हुए कहा—'मैं जानता था कि कोई इनके साथ नहीं होगा।'

'मैं इनकी जमानत ले रहा हूँ दीवान साहब।'

घर की ओर खिसकते हुए अनेक पाँव सहसा ठिठक गए। दीनदयाल और दौलत स्तब्ध थे।

'तो आप जिम्मा लेते हैं इनका सरपच साहब!' दीवान ने व्यग्य किया।

'दीवान साहब, जब आप इन लोगों (दीनदयाल और दौलत की ओर सकेत था) का जिम्मा ले रहे हैं तो मुझे बलई और बिरजू का जिम्मा लेने में कोई खतरा नहीं है।' सतीश मुसकराते हुए बोला। दीवान भी हँसने लगा।

दीवान चले गए बड़बड़ाते हुए कि बड़ा विकट जवार है यह। दीनदयाल ने गुरदीन की ओर घूर कर देखा। गुरदीन ने उन्हें देखते हुए लाठी को ऊपर उठा कर जमीन पर उसका हूरा दे मारा और हँसता हुआ सतीश के साथ चल पड़ा।

दौलत को लेकर दीनदयाल दीवान साहब को पहुँचाने चला गया। दौलत सोच रहा था कि दीनदयाल ने ही उसे इस फाँस में डाला है। जब इनका खेत कट गया, तब इन्होंने बलई और बिरजू का नाम नहीं दिया, मेरे मत्थे खेल गये। झूठे फजीहत हुई।

दीवान साहब बिदा होने लगे तो कहा कि मामला उलटा हो गया। आपलोगों ने इन दोनों के खिलाफ रपट दी है। और बिना सबूत के इनका नाम दिया है। अब ये चाहें तो आपके खिलाफ मुकदमा दायर कर सकते हैं।

'अरे दीवान साहब, आपके रहते हुए केस कैसे बिगड़ने पाएगा?

आप खुद ही इन्हें पकड़िये या पुलिस से पकड़वा कर किसी केस में साक्षात खड़ा कर दीजिए।' दीनदयाल ने कहा।

दीवान ने मुस्कराते हुए कहा—'बड़े उस्ताद हो दीनदयाल महाराज, सरपंच साहब ठीक कहते हैं कि आप बड़े महीन हैं।'

'अरे सरकार, मजाक न कीजिए, सरपंच तो ऐसा ही भकमकिया आदमी है, बकता रहता है। आप बिरजू और बलई को पकड़ कर कुछ कीजिए, नहीं तो गाँव चौपट हो जाएगा।'

'देखूँगा, मैं तो अपना फर्ज कर ही रहा हूँ। जो होगा सो होगा ही।'

दीवान साइकिल पर चढ़ने को हुआ तब तक दीनदयाल ने दौलतराय को कहुनी से कोंच कर संकेत किया, दौलतराय ने दो सौ रुपयों का एक बंडल दीवान साहब के पाकेट में ठूँसते हुए हाथ जोड़ कर घिघियाते हुए कहा—'सरकार मेरी इज्जत आपके हाथ में है।'

दीवान ने रहस्यमय दृष्टि से दीनदयाल की ओर देखा। दीनदयाल ने कहा—'दो सौ है हुजूर।'

'घबराइए नहीं राय साहब, सब ठीक कर दूँगा।' कहते हुए दीवान साहब सायकिल पर चढ़े और उड़ गए।

× × ×

रामकुमार ने स्कूल से आने पर सारी घटना सुनी तो सताद्य के पास आया और हँसकर कहने लगा—'चाचा जी, आपने कमाल कर दिया। सुना है आपने दीवान के सामने दीनदयाल चाचा को खूब पिलाई। तबियत भक्क हो गयी साहब की। और दौलतवा को भी खूब रगड़ा आपने। मैं बधाई देने आया हूँ।'

'बधाई किस लिए भाई, इसमें तो राजनीति की कोई पेचीदगी है नहीं। मैंने साफ-साफ बात सुना दी और इस तरह दुश्मनी ही मोल

री। आपके राजनीतिक सिद्धांत के अनुसार तो मैंने गलती ही की है, आपको तो इस पर दुखी होना चाहिए।'

रामकुमार कुछ काम की बात करने आया था। सतीश के व्यवहार से उसका उत्साह ठंडा हो गया। लेकिन चतुर खेलाडी के रूप में सतीश का बात का बुरा न मानते हुए हँस कर कहने लगा—'हाँ, बात तो आप सही कह रहे हैं काका जी! मगर कभी-कभी सफाई भी राजनीति म जरूरी होती ह। ठीक मौके पर यानी सबके सामने आपने दौलत और दीनदयाल की कलई खोल दी, यह भी राजनीति का ही दाँवपेंच है। इसका गहरा असर होगा। यदि अकेले में आप बडबडाये होते तो वह राजनीति नहीं होती।'

'अच्छा-अच्छा छोडो यह राजनीति की शिक्षा, यह बताओ किस काम से आये हो।

'लीजिए काका जी, आप मेरे साथ ऐसा ही क्यो सोचत ह? क्या म हमेशा काम से ही आता हूँ?

'भाई राजनीति बेकाम स थोडे कहीं ले आती ह। राजनीति का मतलब यही ह कि हर काम में, हर संकेत में कोई अभिप्राय हो। क्यों यही न?'

'छोडिए-छोडिए इस प्रसग को। अब सचमुच वक्त ऐसा आ गया ह जब सोचा जाए कि गाँव में भले आदमियो का गुजारा किस तरह हो।'

सतीश एकाएक कटु हो गया, जहर पीता-सा बोला—क्या वक्त इतनी देर से कैसे आया ह? तब वक्त नही आया था जब तुमने दूसरे गाँव वालों से मिल कर पचायत चुनाव में मेरा विरोध किया, तब वक्त नही आया था जब अपने स्वार्थ के लिए या ईर्ष्या-द्वेष की तृप्ति के लिए महीपसिंह जैसे राक्षस से साठ-गाँठ कर रहे थे और तब भी समय नहीं आया था, जब दीनदयाल जैसे बेईमान आदमी से मिलकर मेरा

खेत खरीदने की साठ गाँठ कर रहे थे। जब दीनदयाल ने तुम्हारा खेत अपने चक में डलवा दिया और गाँव में इतनी भयंकर अराजकता फल गयी है कि किसी की जान-माल की सुरक्षा नहीं ह तो सगठन का वक्त आया ह? भाई, मं तो राजनीति नही जानता, इसलिए साफ-साफ कह रहा हूँ कि इस गाँव में सगठन होना बडा मुश्किल ह, अपनी अपनी सभी सँभाल लो।

रामकुमार को सतीश से ऐसी आशा नहीं थी। वह हतप्रभ हो गया। फिर भी निराश नहीं हुआ, बोला—बीती बातें याद करने से क्या फायदा चाचा जी? जो बातें हुई हैं उन सबके पीछे कोइ न कोई वजह थी। आज स्थिति ऐसी आ गयी ह कि बिना सहयोग के भले आदमियो का गाँव में जीना मुश्किल है। ऐसे ऐसे तत्व पदा हो रहे ह जो गाँव के सुख चन को एकदम खा जाएगे।

'ह तो बहुत दिन से खा रहे ह, कोई किसी के साथ नहीं जाता। और चिन्ता तो मुझे होनी चाहिए क्योंकि कोई मेरे साथ नहीं ह। मैं किसी का मन नहीं रख पाता। आप लोगो का क्या? किसी से भी दोस्ती कर सकते ह और दस पाँच आदमी आप लोगों के साथ लाठी लेकर चलने वाले भी ह। इसलिए मुझे जो अच्छा लगेगा करूँगा। किसी संगठन और राजनीति के चक्कर में पड कर कुछ कर पाना मेरे लिए मुश्किल होगा।

रामकुमार चला गया तो सतीश हसा—वाह रे नेता जी, आज संगठन सूझा आपको। पार्टियों म सगठन करने वाले को गाँव के नहे लोगों का सगठन करने की कैसे सूझी? अकेले पड गए हैं नेता जी इसीलिए परेशान ह। दोनो दलो के बीच म कहीं पिस न जाए इसलिए बेचैन हैं।'

× × ×

दर्लसिगार डलवा के साथ खेत में सोया था। तीन चार आदमी आये और दोनों की छाती पर चढ कर दोनों को आपस में कसकर रस्से से बाँध दिया और झापडी से दूर हटा कर झोपडी में आग लगा दी। लोग दौड, डलवा और दर्लसिगार आपस म ढिमलाते हुए खेत में छिपने का प्रयास करने लगे लेकिन कहाँ तक ढिमलाते। लोग आ गए और यह दृश्य देखकर हँसने लगे। झोपडी को आग खेत पकडने लगी थी। दर्लसिगार घिघियाया—अरे पचो, जल्दी आग बुझाओ, मेरा खेत जला। अरे बाप रे बाप ई साले चार मेरे पीछे पड गए ह। डलवा को पकड कर लाते ह और मुझमे बाँध देते ह। हाय मइया ई गाँव नही राक्षस ह। डलवा अलग बलबला रही थी। बिरजू भी आग बुझाने आ गया था बोला—बुढ़ौ ह—साला चमाइन के साथ सोता ह।

रामकुमार के द बल चारो चले गए। बनवारी बाबा चारो ओर बकबकाते फिरे लेकिन खोजने कहीं नहीं गए। उन्हें किसी ने समझा दिया कि रामकुमार न दर्लसिगार का बक छोडवाया था। उसी ने दौलतराय से मिल कर बक चोरी करा दिए ह। दीनदयाल की भी राय-बात ह उसमें। बनवारी बाबा गाँव भर बकते फिर रहे थे कि देख लूँगा दर्लसिगार का, देख लूँगा दौलत का मारते मारते खोपडा दुरुस्त कर दूँगा।

दौलतराय ने सुना तो बनवारी बाबा से बोला—'आप इस तरह झूठमूठ इलजाम क्यों लगाते ह? आपने देखा ह मुझे बैल चुराते हुए इस तरह बकते फिरेंगे तो अच्छा नही होगा।'

बनवारी बाबा तन में बोले—'म मत्र जानता हूँ तुम मेरा क्या कर लोगे एकाध बल और चुरा लोगे, यही न। देखता हूँ मैं तुमको भी और मउगा को भी। सारा जिनगी भर का मउगा अब चोरी भी करने लगा ह।

रामकुमार ने बैल की चोरी का समाचार सुना तो दौड़ा-दौड़ा घर आया और आते ही बनवारी बाबा को डाँटा कि घर पर ही रहते ह और बैलों की देख रेख नहीं कर सकते। बलों के पास तो सोते नहीं, घर में सोते हैं। घर का नाश कर डाला। वह देर तक बडबडाता रहा और बनवारी बाबा सुनते रहे। जब अति हो गयी तो झल्ला कर बोले, 'घर का नाश म नहीं तुम कर रहे हो। गाँव भर से दुश्मन माल लागे किसी का खेत तोडोगे किसी का खेत लिखाओगे किसी का कुछ करोगे किसी का कुछ। जाओ दलसिंगार का चक और तोडो। चक तोडोगे तो वह बैल नहीं चुरायेगा ?'

'चुप रहिए।' रामकुमार जोर से डपटा। दलसिंगार या किसी का नाम लिया तो मुझसे रा कोई नहीं होगा। बेवकूफ कहीं क घर की रक्षा तो करेंगे नहीं, चोरी होने पर लोगों के नाम ले लेकर और दुश्मनी मोल लेंगे। देखा ह आपने दलसिंगार को चुराते हुए ?'

'देखा नहीं ह तो क्या ? क्या म जानता नहीं हूँ ? क्या म बेवकूफ हूँ जो न समझूँ ? उसी का चक तुमने तोडा ह, उसी ने चुराया होगा।

'अच्छा अगर एक भी शब्द मुँह स निकाला तो अच्छा न होगा। कहकर कुमार उठ खडा हुआ। पास के दरवाजे पर बठे लोग तमाशा देख रहे थे इसलिए कुमार ने इस कांड को खत्म करना चाहा।

कुमार ने लोगों से कहा कि वह जानता ह किसने बल चुराए ह और उसके बैल नहीं मिले तो इसका मजा चखाएगा वह। बैलों की बहुत खोज हुई, पुलिस ने भी कोशिश की, बल नहीं मिले। कुमार न कुछ पासियों को भी लगा रखा था खोज पर, लेकिन सब कुछ बेकार गया।

दौलत और दलसिंगार मिथ्या लांछन से नाराज हो गए थे। वे अब मौके की खोज में थे।

रामकुमार का भतीजा रामप्रकाश सोलह साल का हो गया था। वर-देखुआ आने लगे थे। रामकुमार ने उसकी शादी ते कर दी। बरात

जाने वाली थी। कहारों का इन्तजार हो रहा था कि सुनाई पड़ा कि दौलतराय भाटपार के कँहार को बाँध कर मार रहा है, तिवारीपुर का कँहार भजन तो किसी काम का था नहीं, इसलिए डोली-वोली का काम भाटपार का ही कँहार सँभालता था। दौलतराय ने कहा कि उसे अपनी ससुराल भार भेजना है, वहाँ शादी है। कहार ने कहा कि यह कसे हो सकता है, पहले आप ने कहा नहो और अब जब डोली पर जाने का वक्त हो गया है तब आप भार ले जाने को कह रहे हैं।

दौलतराय ने उसे रस्से से बाँध दिया और डंडे से मारना शुरू किया। चारो ओर हल्ला हुआ। कुमार ने सुना—आग बबूला हो गया और धाती लुटियाते हुए बोला—'रमप्रकसवा, निकाल लाठी, बरात बाद में जाएगी पहले इस मुईंहार से निपट लूँ।' बनवारी बाबा ने भी लाठी निकाल ली। रामप्रकाश हल्दी-वोल्दी लगाए भाला लेकर दौड़ा। लोगों ने उसे पकड़ लिया। कुमार लाठी लेकर दौलतराय के घर की तरफ दौड़ पड़ा, बनवारी बाबा भी, और बहुत से लोग।

रामकुमार लाठी लेकर पहड़ रहा था—'हो जाए आज निबटारा लोग समझते हैं कि पढ़े लिखे हैं तो मार तो करेंगे नहीं, लूट-खसोट लो, काट पीट लो, सता लो जितना चाहो। शराफत से कोई नहीं जी सकता इस गाव में। आओ दौलत राय, लाठी का जोर भी तुम्हें दिखा दूं। दौलत राय भी पहड़ रहा था, उसके साथ भी दो एक आदमी थे। गाँव वालों ने बीच बचाव किया—'जाने दीजिए नेता जी, आपकी बरात जा रही है गम खाइए।'

'अरे गम खाते-खाते तो इतने साल बीत गए, कोई बैल चुरा लेगा, कोई खेत उखाड़ लेगा, कोई खेत लिखा लेगा, आज इस साले ने कहार को ही रोक दिया इसने पता नहीं हमें क्या समझा—अहिर गँड़ेरी या चोर चमार। बैल चोरी गया तो गम खा लिया, मोका पड़ी मार कौन मार करने जाए।'

दरहम बरहम किया गया। रामकुमार गुर्राता हुआ चला गया। बनवारी बाबा फड़कते रहे और दौलतराय भी हुमसता रहा। लोगों ने दौलतराय को बहुत डाँटा कि 'तुम इतने सिर चढ़ गए हो कि एक भाई की बरात जाने के वक्त कहार ही रोक लेते हो।' झगड़े के वक्त बिरजू भी लाठी लेकर पहुँच गया था और दूर खड़ा-खड़ा गुर्राता हुआ देख रहा था कि बजड़े तो दौलत पो मजा चखाये।

बलई और बिरजू खुश थे कि बैल की चोरी उन्होंने की और लगा दौलत पार्टी को। रामकुमार के साथ पसियाने के पासी तो थे लेकिन हर समय दो कोस से आकर गाँव के झगड़ों में उलझना उनके लिए सम्भव नहीं था। रामकुमार इसीलिए बलई और बिरजू के यहाँ अब उठने-बैठने लगा। लोगों ने उस दिन का उसका वह रूप देखा तो कहने लगे कि देखा अपने यहाँ के पढ़े लिखों का यह हाल है तो अपढ़ों का क्या होगा? और अब देखो बलई और बिरजू के यहाँ दरबार कर रहे हैं।

एक दिन रामकुमार पसियाने से पाँच-छः हट्टे-कट्टे पासियों को ले आया और उन्हें लेकर गाँव घूम आया। सब लोगों ने देखा और एक विशेष आशंका से काना-फूसी करने लगे। दौलत, दीनदयाल और दल सिंगार ने देखा कि वे पासी गुजरते समय उनको और उनके घरों को बड़े गौर से देख रहे थे। सोचा कि कोई योजना बन रही है।

कुछ दिनों बाद दीनदयाल के घर में सेंध पड़ गयी। दीनदयाल एक केस के सिलसिले में गोरखपुर गए हुए थे। चोरी में काफी जेवर चले गए, कुछ रुपये भी। शारदा जाग गई थी तो चोरों ने उसे मारा भी और उसके तन के सारे गहने झटक लिए। वह चिल्लाई तो सब भाग खड़े हुए।

पासियों के आने से इस चोरी का सम्बन्ध जोड़ा जाने लगा। दीवान साहब मुआइने पर आये। वे भी परेशान थे। किसे पकड़ें? उन पासियों को कि रामकुमार को कि बलई को कि बिरजू को। रामकुमार

को तो कसे पकडते, यह तो स्कूल पर रहा और दूसरे रामकुमार जैसे लोग पकडे नहीं जाते। पासियों को पकडने को योजना बनी लेकिन सनडब्बू उन्हें कैसे पकडा जाए? ले देकर बात यही आई कि बलई और बिरजू को ही पकडा जाए लेकिन मालूम हुआ कि दोनों गाँव पर ह ही नहीं। दो दिनों से बाहर गए हुए ह। खैर, मुआइना पूरा हुआ और दीवान चले गए लेकिन गाँव में यही कहा जाने लगा कि इस चोरी में रामकुमार का हाथ ह अरे भाई क्या कहने रामकुमार जी के! अब तो बहुत-बहुत गुन सास रहे है—पढे-लिखे लोग हैं।

फेंकू बाबा के वकील साहब घर पर आये हुए थे। मटर का खेत कटवा रहे थे। उनकी बगल में रघुनाथ सभापति का खेत था। वकील साहब ने एक पग बढकर खेत कटवा लिया। रघुनाथ ने आकर देखा तो माथा ठोक लिया—अरे वकील साहब यह क्या किया?'

मूसते हुए वकील साहब ने कहा—'अरे किया क्या, यह तो मेरा हा खेत है आपने बढकर घर लिया था, सभापति होकर भी यही सब अन्याय करते हैं।'

'अरे अन्याय मैं कर रहा हूँ कि आप? वकील होकर भी कानून-न्याय को गोला मार रहे ह, अगर आपको यही सुबहा था तो नपवा लिया होता। हमारी जायदा" क्या खराब की?

'सुबहा मुझे था ही नहीं, नपाऊँ क्यों? मेरा खेत ह मैंने कटवा लिया। क्या मैं कमजोर हूँ कि आपसे प्राथना करने जाऊ? आप लोगों ने बेवा का घर समझ रखा ह, जिसके जी में आता ह वो पग बढकर जोत-बो लेता ह।'

'अरे मालूम होता ह कि इस गाँव के सारे पढ़े लिखे पगला गए हैं, कोई कहीं अन्याय कर रहा ह, कोई कहीं। इनसे तो गाँव के गँवार ही अच्छे ह।'

'देखिए जबान संभाल कर बोलिए रघुनाथ जी, पाप अन्याय आप करते हैं मुझे सब मालूम है। घर में पतोहू रखे हुए है।'

'अरे है वकील की पूँछ, अपने बाप से नहीं पूछो है पतोहू रखने की बात। अंड-बंड बकोगे तो यहीं लाठी से मार कर छिनगा दूँगा।'

वकील लाठी तान कर खड़े हो गए—'आइए देख लिया जाए। उठा रे बोझ और पहुँचा खलिहान में।'

रघुनाथ ने लाठी तान कर कहा—'अगर मेरे खेत का मटर किसी ने छुआ तो खून हो जाएगा। देखें कौन छूता है?'

मजदूर सिटिया गए तो वकील साहब खुद आगे बढ़े और ताव में डाँठ बटोरने लगे। तब तक रघुनाथ ने उनकी मोटी देह पर एक लाठी जमा दी। वकील साहब भहरा पड़े। फिर उठकर गाली देते हुए लाठी लेकर रघुनाथ पर पिल पड़े। फेंकू बाबा भी दौड़े हुए आए और रघुनाथ को बाप-बेटा मारने लगे। रघुनाथ के बेटे ने सुना तो दौड़ा हुआ आया और वह वकील साहब को मारने लगा। वकील साहब भहरा कर बोझे पर गिर पड़े और रघुनाथ का बेटा उनकी छाती पर चढ़ कर उन्हें पीटने लगा। उधर फेंकू बाबा अपनी लम्बी धोती में एँड़ी के फँस जाने से भहरा कर गिर पड़े। रघुनाथ लाठी तान कर खड़ा हो गया—'फिर बोलो तो लाठी से कुचल दूँ।' गाँव के लोग दौड़े और झगड़ा शात हो गया।

— फेंकू बाबा ने अदालत पचायत में दावा दाखिल किया। सतीश उनका नजदीकी पट्टीदार था, सोचा कि कुछ न कुछ तो ख्याल करेगा ही। रोज सतीश का दरबार करने लगे। वकील साहब ने फेंकू से कहा था—'अरे छोड़िए देहाती पचायत-संचायत को, कचहरी में दावा कीजिए, मैं वकील हूँ, फौजदारी का केस लड़ाते-लड़ाते इन्हें मार डालूँगा, हूँ हूँ, इन्होंने समझा क्या है?'

लेकिन फेंकू बाबा ने जिद करके पचायत में ही दावा दाखिल

किया सतीश ने बड़ी सफाई से मुकदमे को देखा। फेंकू बाबा और वकील साहब को दोषी ठहराया। उसने व्यक्तिगत रूप से वकील साहब को बहुत फटकारा कि आपका रवैया एक अपढ़ गुंडे का रवैया है, पढ़े-लिखे वकील बनने वाले आदमी का नहीं। फेंकू बाबा को उसने आदेश दिया कि रघुनाथ की मटर वापस कर दें और जुरमाने के तौर पर पन्द्रह रुपये पंचायत में जमा करें।

सतीश ने रघुनाथ को भी डांटा—'आप खुद सभापति हैं और कानून का उल्लंघन कर मारपीट पर उतारू हो जाते हैं। न्याय का पक्ष लेने वालों को कुछ सहन करना पड़ता है।'

फेंकू बाबा बहुत दुखी हुए और वकील साहब मार खा-धोकर गोरखपुर वकालत पढ़ने चले गए थे।



## : २४ :

फागुन चढ चुका था । फसलें पकने लगी थीं । सघन अरहरों की छीमियाँ गदरा कर पक रही थीं ।

बदमी बहुत लुटी-लुटी-सी दिशाओं की ओर देखती हुई बागीचे में पत्ता बटोर रही थी । उन्मत्त हवा उसके आँचल को गिरा गिरा जाती थी । उसे किसी चीज की सुधि नहीं थी । वह उदास-उदास-सी दिशाओं में खोई हुई थी, कहीं से कोई आहट नहीं, इन्हीं दिनों बाँसुरी उत्पात किया करती थी, अब कहीं कोई सुराग नहीं । कितने दिन हो गए पता नहीं कहाँ चले गए । राछम बिरजुआ ने उन्हें मारा था । वे घर छोड कर चले गए मुझसे क्यों नहीं मिले ? क्या सारे मरद एक से दगाबाज होते हैं । नहीं, मैं ही अभागी ऐसी हूँ कि अंचरा में कोई चीज पडती है तो वह फट जाता है और वह चीज गिर जाती है इतने दिनों बाद मेरा सुख जागा तो भगवान से देखा नहीं गया सिपारी, मेरे दुख सुख के साथी, कहाँ हो ? क्यों मुझसे कहे बिना चले गए, मुझे भी ले चले होते आह कितना सुख था उनकी बाहों में, कितनी शान्ती थी उनकी गोद में भूखी धरती को जैसे बादल सींचता है, मेरा अंग-अंग वे सींच उठते थे एक झटका लगा—कई महीने हो गए, महीना नहीं हुआ । लगा जैसे उसके पेट में किसी ने जोर से कोंचा हो । तबियत भारी भारी-सी लगती है, उलटी-उलटी आती है, कोई काम नहीं किया जाता । हे भगवान, अब क्या होगा? अब गाँव में कौन-सा मुँह दिखाऊँगी । लोग कोंच-कोंच कर मार ही डालेंगे । यह पेट कहाँ छिपाऊँ ईश्वर ! वे अपने तो गए, लेकिन यह क्या देते गए ?

पत्ता बटोरते-बटोरते उसे आलस से मूर्च्छा-सी आने लगी । वह अलसा कर बैठ गयी, धीरे-धीरे बटोरे हुए पत्ते पर ही लेट गयी । धीरे-धीरे आमों के मौर की गन्ध से लदी हवा उसे छूने लगी, उसे

धीरे धीरे ताजगी महसूस होने लगी। उठ बैठी और फिर पत्ता बटोरने लगी। इच्छा होती है कहीं भाग जाए। भाग कर कहाँ जाए? कई घरों को तो देख चुकी है, जहाँ वह शादी करके गयी है। भगोड़े की तरह जाएगी तो कहाँ सरन मिलेगी? इच्छा होती है कहीं डूब मरे, सारे अभाग से छुट्टी मिल जाए। लेकिन उन्हें एक बार देखने की बचनी है मन में। उसका मन करता है कि तिवारी जरूर आएँगे उसे लैन। व सारे मरदों से अलग एक मरद हैं वे दगा नहीं देंगे उसका मन करता है जरूर आयेंगे फागुन की हवा हुहुकारती हुई बहती है, बदमी को लगता है यहाँ से वहाँ तक एक सुनसान चिल्ला रहा है। कुऊ कुऊ सौत कोइलरि बोल रही है सभी बोलेंगे, बाँसुरी नहीं बोलेगी

'हमरो सनेस लिहले जइहे रे बटोहिया!'

कोई राही गा रहा है। वह किससे सनेस भेजे, कहाँ भेजे? हे राम, चक्कर आ रहा है। ओफ, क्या होगा राम?

× × ×

बिरजू ठीक वहीं बैठा है, जहाँ कुजू बैठ कर मुरली बजाया करता था—अपने खेत के मेड़ पर स्थित पेड़ की छाया में। वह बहुत उदास है, भूरी भूरी छोटी-छोटी आँखों में सूनी व्यथा उमड़ आयी है—वह देख रहा है दूर दूर तक केवल सूनापन, एक चीखता हुआ सन्नाटा। कितना अभागा है वह, बचपन में ही माँ-बाप से हाथ धो बैठा। कुछ बड़ा होते ही जेल चला गया। लौटा तो बीवी गायब। कितनी मुश्किल से मिली थी वह। आह, कितनी सुन्दर थी, गोरा-गोरा रंग, बड़ी-बड़ी आँखें, लिलार पर बड़ी-सी टिकुली चम्म-चम्म करती थी, भरी हुई देह जब उसकी बाँहों में भर उठती थी तब आह, वह सब लुट गया। दीनदयला ही उसके घर की बरबादी का कारण है इसे अभी तक मार नहीं लगा सका, इसी का मलाल रह गया। बलैया रोक रोक दे रहा

है, कह रहा है घुला घुला कर मारो, फाँसी मत चढ़ा। पता नहीं कहाँ होगा कुजू भइया, मैंने उस पर शक किया, शक तो अब भी है लेकिन सतीश भाई उस दिन बुरी तरह डाँट रहे थे—कह रहे थे कि तुम मूर्ख हो, कुजू जसे भाई पर सुबहा किया और घर से निकाल दिया। सतीश भाई झूठ नही कहेंगे, लेकिन मन से सुबहा जाता नहीं, जरूर कोई बात रही, नहीं तो वह न मेरे घर से भागती और न दूसरा बियाह करने को तयार होती। खैर अब तो सब लुट ही गया पता चलता तो जाकर कुजू भइया को ले आता, पता नहीं कहाँ हैं व

बिरजू को लगा कि फागुन की हवा उसके हाड़-हाड़ को तोड़ रही है चटका रही है, उसके भीतर खून खौल रहा है, एक समुन्दर बिल्ला रहा है, उसकी कनपटियाँ उड़ी जा रही हैं, वह लाठी के हूर से अनजाने ही पास के ढेलों को तोड़ने लगा। उसे इच्छा हुई कि वह खेतों में हवाओं के साथ यहाँ से वहाँ तक बेतहाशा दौड़े और रास्ते में जो भी आए उसे कुचल दे उसने लाठी उठाई और चल पड़ा, अनजाने ही किसी दिशा की ओर मन में कुछ फैसला करता हुआ।

× × ×

शारदा उदास उदास ओसारे वाले कमरे में बैठी है। अभी-अभी मास्टर उठ कर चले गए हैं, उसे लगता है जैसे कमरे में वे ही वे भरे हुए हैं। उसकी उँगलियाँ गरम गरम स्पर्श से तप रही हैं उसके गालों पर दो तरल आँखें बह रही हैं। फागुनी हवा बेरहमी से पेड़ों को झकझोरती पत्तों को उड़ाती उड़ रही है।

'इस होली में तुम्हें रंगने की इच्छा हो रही है शारो।

'हूँ, हूँ तो रंगिये न, है हिम्मत?'

'हिम्मत तो बहुत है शारो लेकिन लेकिन तुम्हारी बदनामी से डरता हूँ।'

'हूँ ऊँ बदनामी से डरते हैं तो हिम्मत किस काम की ?'

'हिम्मत तो इतनी है कि तुम्हें उठा ले चलूँ गोद में भर कर सबके सामने। लेकिन।

'लेकिन क्या ?

'लेकिन यही कि यह मेरी और तुम्हारी प्रतिष्ठा के अनुरूप नहीं।'

'गुरु जी तो भूल गए लेकिन आपकी शिष्या को याद है—

पीया चाहे प्रेमरस, राखा चाहे मान।
एक म्यान में दो खड्ग, देखी सुनी न कान॥'

'अच्छा तो चलो तुम्हें इसी वक्त ले चलता हूँ आओ मेरी बाँहों में भर जाओ।'

'धक, आप बड़े वसे हैं ?'

मास्टर जी खिलखिला कर हँस पड़े। बस हो गया न। तुम्हीं नहीं आओगी साथ मेरे। मैं तो आखिरी दमतक तुम्हारी प्रतीक्षा करूँगा।'

'आप तो मेरी साँस-साँस में समा गये हैं मास्टर जी, आपके बिना म जी भी कसे सकती हूँ ? लेकिन रह रह कर बड़ा डर लगता है। मास्टर जी, पता नहीं क्या होगा ?'

इस साल मैट्रिक पास कर लो तो अगले साल गोरखपुर पढ़ने जाना। फिर मैं वहीं से तुम्हारा हरण करूँगा, क्यों ठीक है न ?'

मैट्रिक पास के तो भगवान ही मालिक हैं। पढ़ाई लिखाई तो कुछ हुई नहीं, जब किताब खोलती हूँ तो अक्षर-अक्षर में आपही दिखाई देते हैं, फिर आपही में डूब जाती हूँ। आप मिलते हैं पढ़ाने के लिए लेकिन मेरे और आपके बीच से किताब की दीवार ही टूट जाती है क्या होगा पता नहीं।'

'चिन्ता न करो तुम पास हो जाओगी जितना पढ़ा है उतना बहुत है, तुम्हारा दिमाग इतना अच्छा है कि थोड़ी-सी पढ़ाई से तुम्हें पार लगा सकता है।

'अच्छा चलता हूँ परीक्षा के दिन बहुत थोड़े रह गए अब जम जाओ।'

'तो होली के दिन आयेंगे न ?'

'वहूँ।'

मुझसे नहीं तो वपई से तो रंग खेलने आयेंगे न ?'

'ऊँ हूँ यहाँ आने पर तुम्हें नहीं रँग सका तो कैसा लगेगा शारो होली के दिन भीग कर भी कोरा ही रह जाऊँगा। और तुम्हें उस दिन रँगना इतना आसान न होगा।'

मास्टर जी चले गए। शारदा उदासी-सी बैठी है। इन दिनों वह मन से बहुत गिर गयी है, उसे नइहर अच्छा नहीं लगता। गाँव में भयंकर उथल पुथल मची है, उसके पिता जी चारों ओर अपमानित हो रहे हैं, उसे अच्छी नहीं लगती अपने पिता जी की राजनीति। सुना है सतीश काका ने उस दिन इन्हें बहुत अपमानित किया, पता नहीं क्या क्या कहा। हाँ उसके बाबूजी का सम्मान धीरे धीरे काफी गिर गया है, वे काम ही ऐसा करते हैं, सुनती हूँ किसी का खेत लिखवा लेते हैं, किसी के खिलाफ अफसरों से चुगली करते हैं। और सौ तरह की बातें। उनके साथ मउगा दलसिंगार का रहना फूटी आँखों नहीं सुहाता। मगर वह करे क्या। पिता जी उसे इन सब मामलों में चुप कर देते हैं। उस दिन सेंध पड़ गयी उसके घर में। हाय मइया, कैसा काला-काला राक्षस उस निगोड़े ने कैसी बेरहमी से उसके तन पर के जेवर खींच लिए थे। हल्ला हो गया नहीं तो वह राक्षस उसके शरीर का भूखा हो रहा था। हाय उसने भला-बुरा कर दिया होता तो उसके जीने की जगह कहाँ बचती इस से उसका शरीर काँपने लगा। हाँ उसे नइहर अच्छा नहीं लग रहा है, मास्टर जी उसे अब यहाँ से ले चलें, उसका मन दरद से टूट रहा है उस दिन पिता जी दलसिंगार से बातचीत कर रहे थे उसकी शादी के बारे में 'इस साल शरदवा मट्रिक हो जाएगी। इसके लिए

इस साल वर खोजना है, सयानी लड़की अब अपने घर जाए तो चिंता दूर हो।

वह झटके में यह बात सुन कर थर्रा गयी थी। मास्टर जी से उसने कहा था तो मास्टर जी बोले थे—देखा जाएगा शारो, उदास न हो।'

क्या देखा जाएगा? मास्टर कुछ साफ नहीं बोलते। कबीर की तरह उलटबांसी बुझाते हैं। उसे बार-बार रुलाई आती है, इच्छा होती है कि फफक कर रो पड़े।

'चट्ट चट्ट'

चाची ताली बजा रही है।

'क्या है चाची?'

'अरे बेटी, याद में खोई ही रहोगी कि रसोई बनाने के लिए लकड़ी-वकड़ी आयेगी।'

'लायी चाची।'

× × ×

अर्जुन की शादी हुई है।

बसी की बेटी पारबती नइहर आयी है। गाँव भर छम्मक-छम्मक घूमती है। मोटा गयी है, चाँदी के जेवरों से लदी है, सखियों से बात करती है कि मेरे वे तो मुझे परान की तरह मानते हैं। मेरे घर तो यह है वह है और दुनिया भर की बातें। गोद में एक बच्चा है। बहुत सुख रहती है वह। बात-बात में माँ को डाँटती है। माँ हँस कर कहती है 'अरे बेटी, तू धनी घर की है, हम गरीब-गुरबों को यह सहूर कहाँ से आवे?' माँ बहुत खुश है कि उसकी बेटी रानी की तरह सुख भोग रही है, अंग-अंग में रगत निखर आयी है, देह खिल कर फूल-सी हो गई है किसी की बेटी इतने सुख में... ?

छम्मक-छम्मक-छम्मक पारबती जा रही है जमुना भौजी देखती हैं, एक आह भर लेती हैं एक किसमत यह है कि बेची हुई बेटी इतने मौज में है, एक उसकी किसमत है कि करज-पताई लेकर पढ़े लिखे लड़के से गितवा की सादी की और दुरदसा भोगते भोगते मर गयी। हाय मेरी बछिया।

छम्मक छम्मक छम्मक सारदा देखती है और मुसकराती है कितने सुखी हैं दुनिया में ये लोग कि बूढ़े-खोर पति को पाकर भी इतना सुखी हो लेते हैं।

छम्मक छम्मक छम्मक हँसिया देखता है और एक आह भर लेता है।

'क्यों रे क्या देखता है ?'

'कुछ तो नहीं पारबती बहिनी।'

हँस कर पारबती बोलती है—'झूठ बोलता है मरकौनवना, अभी तक मेरे लिए तेरी भूख नहीं गयी।'

'भूख तो उसी दिन चली गयी जब मेरे ऊपर सारा कलंक लगा कर मुझे मार खवाती रहीं।'

पारबती एक अजब ढंग से मुसकराती है जो हँसिया को तोड़ती हुई निकल जाती है। 'ओ छोड़ दहिजरा उन बातों को—बोल कैसा है ?'

'अच्छा हो हूँ आपकी मेहरबानी से।'

पारबती को नइहर आये काफी दिन हो गए थे, उसे अजब टूटन टूटन-सी लगती थी—फगुनहट उसे तोड़ रही था।

'ए हँसिया !'

'का हैं पारबती बहिनी ?'

'बोल आज रात को मिलेगा ?'

'कहाँ ?'

'अरे यहीं कहीं, इस साल तो रहर में इतने गझिन-गझिन खेत हैं।'

'ना पारवती बहिनी, अब तो घरवाली के बिना मेरी रात ही नही कटती।'

'तो तेरा वियाह हो गया है?'

'हाँ पारवती बहिनी, हो गया है और अब सोचता हूँ कि अच्छा हुआ जो आप मेरे साथ नहीं भागीं, नहीं तो इतनी सुन्नर मेहरारू कहाँ से,मिलती?'

'बहुत सुन्नर है रे?'

'हाँ, बहुत।'

'मुझसे भी?

हँसिया हँसा और धारे से बोला—'आपको क्या बराबरी उससे।'

'हूँ, तुझे इतना घमड हो गया ह? चमार कही का, अरे चमाइन ही न लाया है सूअरखोर।'

छम्मक छम्मक छम्मक आँचल फेंकती कूल्हा मटकाती अरहर के सघन खेता के बीच के रास्ते म चली जाती ह। हँसिया मुसकराता रहता है।

'एँ हूँ हूँ' बिरजू जोर से खँखारता है। पारवती उसकी ओर देखती ह। 'मार मरकीमवना के, राछस की तरह घूर रहा है।' वह दूसरी ओर उड जाती ह छम्मक

## : ३० :

अगला चुनाव पास आ रहा है। बाबू महीपसिंह जोर-शोर से कांग्रेस मेम्बर बना रहे हैं। इन दिनों वे महीन खद्दर के कपड़े पहनने लगे हैं और लखनऊ तक नेताओं के पास दौड़ने लगे हैं। लोग सोचते हैं कि अगले चुनाव में महीपसिंह को कांग्रेस का टिकट जरूर मिल जाएगा और वे एम० एल० ए० होकर रहेंगे।

महीपसिंह पर गोरखपुर के एक बनिया ने पचास हजार का दावा किया है, कई साल पहले महीपसिंह ने उससे कर्ज लिया था। बसे बहुतों के कर्ज हैं इन पर, लेकिन अभी सभी लोग इन्तजार कर रहे थे। अब शायद सभी लोग दावा करें और तब तक महीपसिंह दिवालिया बन कर निहंग खड़े हो जाएं।

कई सालों से सरकारी मालगुजारी बाकी है। कानूनगो बार-बार छैलविहारी को तंग करता है, तब छैलविहारी कहता है कि बाबू साहब से क्यों नहीं कहते? कानूनगो सिंहपुर कितनी बार गया, गरीबों की जायदाद कितनी ही बार कुर्क की, लेकिन महीपसिंह से साफ-साफ कभी नहीं बोला और महीपसिंह हैं कि जमीन पर जमीन बेच रहे हैं। और पेट पाल रहे हैं। रमधनिया बनिया ने उधार देने से इनकार कर दिया तो उसे पिटवा दिया। रमधनिया ने आकर सतीश से कहा।

सतीश ने कहा—'दावा कर दो।'

'दावा करके क्या करूँगा? कोई साथ आयेगा?'

'तुम दावा तो करो, न्याय तुम्हारे साथ है न। गवाह तैयार किए जाएंगे।'

रमधनिया ने दावा कर दिया अदालत पंचायत में। महीपसिंह नहीं आए। सतीश ने सम्मन तामील कराया, महीपसिंह नहीं आये। सतीश ने चौकी के दीवान से कहा, 'आप [मेरी सहायता कीजिए—

महीपसिंह को अदालत में हाजिर कीजिए। दीवान साहब अचकचाये, साहब, यह बड़ा टेढ़ा मामला है। महीपसिंह को पकड़ कर लाना बड़ा मुश्किल है।'

सतीश ने मामला आगे बढ़ाया, थानेदार ने भी उन्हें पकड़ने में अपनी असमर्थता जाहिर की। कौन रार मोल ले इस गुंडे से। सतीश ने जिले के नेताओं के नाम, पंचायत अधिकारियों के नाम चिट्ठियाँ लिखी, कहीं से कोई उत्तर नहीं आया। एम० एल० ए० कालीप्रसाद पांडे ने भी कहा—अरे छोड़िये तिवारी जी, कहाँ चक्कर में पड़े हैं आप, ऐसे ऐसे मामलों में क्या उलझते हैं ?"

जगपतिया सोसलिस्ट नेताओं से मिला, सोसलिस्ट नेताओं ने विधान-सभा में सवाल उठा दिया, कांग्रेस के ऐसे-ऐसे लाडले गुंडे हैं जो पंचायत में हाजिर होने में अपना अपमान अनुभव करते हैं। बड़ा होहल्ला हुआ। फिर वहाँ से गोरखपुर के कलक्टर को आदेश दिया गया कि मामले की छान-बीन करें। कलक्टर नया-नया आया था करकरा जवान बंगाली। बिगड़ कर बोला, कौन है यह महीपसिंह हम ऐसे-ऐसे गुंडे को रगड़ कर रख देगा। साला लोग देश को तबाह कर रहा है। संसार भर का गुंडा लोग कांगरेस में चला आ रहा है और बरबाद हो जाने पर भी साहब बना हुआ है। हम देश के ऐसे-ऐसे दुश्मनों का नाश करके रहेगा।

बंगाली कलक्टर ने पुलिस को आदेश दिया कि मामले की छानबीन की जाए। कौन है यह इडियट। बड़ा रोब था इस कलक्टर का। नया-नया आया था लेकिन थोड़े ही दिनों में इसने तहलका मचा दिया। अनेक सरगना बनने वाले धनी गुंडों को, चोरबाजारी करने वाले सेठों को, पुलिस को, घूसखोर अफसरों को छद्मवेश में होकर पकड़ा और पूरे जिले में सनसनी फैला दी।

परगना हाकिम स्वयं मुआइने पर सिंहपुर, भाटपार और तिवारी-पुर गया, परगना हाकिम भी कलक्टर के सामने ही नया-नया आया

बधाई स्वीकारें उन्होंने जनता से फिर वही बात दोहराई, जो सिंहपुर में दोहराई थी। फिर पुलिस चौकी के दीवान को फटकारना शुरू किया।

जाते-जाते सतीश से कहा—'आपका हर सम्मन तामील होगा, सबको उसे स्वीकार करना पड़ेगा चाहे वे महीपसिंह हों, चाहे लाट साहब। आप अपना काम चालू रखिए।'

सतीश के सामने का अंधकार फट गया। वह जो इधर सोचने लगा था कि उसके न्याय का कोई मूल्य नहीं है, उसे कोई गम्भीरता से स्वीकारता नहीं और नहीं तो लोग उसको बेवकूफी मानते हैं। न्याय के पीछे उसका अपना हित नष्ट हो रहा है, यह बेवकूफी नहीं है तो क्या है? लेकिन नहीं न्याय का मूल्य है। जनता जाने-अनजाने उसे स्वीकारती है। इतना बड़ा हाकिम इतने लोगों के बीच उसके न्याय की प्रतिष्ठा कर गया है यह कम गौरव की बात नहीं है। नहीं, वह सत्य का पथ नहीं छोड़ेगा चाहे कितने भी खतरे उठाने पड़ें, उसे टूट ही क्यों न जाना पड़े। देश में और लोग भी हैं जो इस पथ से चल रहे हैं। यह परगना हाकिम, स्वयं कलक्टर साहब सभी तो इस पथ पर हैं ।

उसने दो बार सम्मन निकाला और इस बार झख मार कर महीपसिंह को जनता के दरबार में हाजिर होना पड़ा। हाँ उनके लिए इतनी रियायत जरूर की गयी थी कि उनके बैठने के लिए विशिष्ट इन्तजाम कर दिया गया था। बाबू महीपसिंह अपने संस्कारवश बहस करते-करते रमघनिया पर बिगड़ जाते थे और सतीश के खोद बिनाद करने पर उसके साथ भी भड़ पड़ते थे। सतीश ने दृढ़ स्वर में कहा—'बाबू साहब, यह न भूलिए कि आप अदालत में हैं और मैं इसका न्यायाधीश हूँ। यह न आपका दरबार है और न मैं आपका नौकर। शराफत से जवाब दीजिए।'

महीपसिंह भीतर भीतर कसमसा कर रह गए—'ओह ये मेरे ही कुत्ते अब मेरा ही इस तरह अपमान कर रहे हैं। ये सारे दरिद्र जिनसे मैं जूतों से बात करता था पंच-पुरान करने के लिए पंचायत में इकटठे हुए हैं।' मगर वे बोले नहीं।

सतीश ने फैसला सुनाया कि महीपसिंह या तो रमधनिया से माफी माँगें या पचास रुपया दंड भरें।

महीपसिंह ने अदालत में ही चिचिया कर कहा—'इस सूअर के बच्चे से म माफी मागूँगा। ऐ छैलबिहारी! लाकर फेंक दे पचास रुपये अदालत के मुँह पर।'

'बाबू साहब आप अदालत में खड़े होकर रमधनिया को सूअर का बच्चा कह रहे हैं, अदालत चाहे तो आपको अदालत का अपमान करने के बदले में फिर फँसा सकती है लेकिन जाइए आप पर रहम करती है। और हाँ छलबिहारी जी, पचास रुपये हा तो लाइए जमा कीजिए।'

सतीश जानता था कि पचास रुपये ता क्या पचास पैसे भी इसके पास नहीं होंगे। वह मुसकरा कर छलबिहारी की ओर देखने लगा। महीपसिंह ने सतीश की यह मुसकान देखी और जलभुन कर रह गया, छलबिहारी ने महीपसिंह के कान के पास मुँह ले जाकर कुछ कहा। महीपसिंह न तड़प कर कहा—'अच्छा कल लाकर जमा कर देना।'

महीपसिंह जाने लगे घोड़े पर चढ़ कर तो जगपतिया ने महीपसिंह को सुना कर छलबिहारी से कहा—'अरे ए छैलबिहारी जी, कहो तो पचास रुपये मैं जमा कर दूँ खेत-बोत बेचना तो द देना।'

महीपसिंह ने सुनकर अनसुनी कर दी और घोड़े को जोर का एँड लगा कर आगे बढ़ गए। छैलबिहारी बकबकाता रहा।

जगपतिया ने जोर का नारा लगाया—'जनता की जै, पंचायत की ज।' उसके साथ आए हुए सोशलिस्ट किसान मजूर जै जै बोलते रहे।

चौरी की पुलिस तो थी ही, स्वयं थानेदार आये हुए थे कि कोई अशोभन घटना न घटने पाये। वे सब चुपके से चले गए।

सतीश का जी आज बड़ा हल्का था, उसे लग रहा था कि उसने सारे अपराध को आज मुँहतोड़ उत्तर दे दिया है।

आज यही चर्चा थी इस घटना की। कुछ लोग उदास से घर लौटे थे—हारे हुए से। लेकिन जैसे अपने को संतोष देने के लिए कह रहे थे कि यह भी कोई बात हुई, बनिया बक्काल के लिए एक बड़े आदमी को बेइज्जत कर दिया जाए। देखना महीपसिंह सतीश को छोड़ेंगे नहीं, ऐसी भलंगी लगायेंगे कि वे भी बच्चू समझेंगे।

× × ×

महीपसिंह जोर शोर से कांग्रेस की रसीद बेच रहे हैं। आजकल और जल्दी जल्दी लखनऊ आ रहे हैं। चन्द्रकांत ने उन्हें कई मन्त्रियों के साथ घूमते देखा है। गोरखपुर कांग्रेस दफ्तर में भी बहुत बैठने लगे हैं। एम० एल० ए० कालीप्रसाद पांडे का भी दरबार करते हैं और दोनों देर तक जोर-जोर से हँसते हैं। हाँ जरूर उन्हें इस बार कांग्रेस टिकट मिलेगा।

महीपसिंह के हाथ में हाथ मिला कर कालीप्रसाद पांडे अपनी ऐंठनी आवाज में हँसते हुए कह रहे हैं—'लो अब मौज करो—गये दोनों पापी यहाँ से।'

कौन पापी?'

'अरे वह बंगाली छोकरा जो यहाँ कलक्टर बन कर आया था और उसकी पूँछ वह परगना हाकिम। दोनों साले भाँग खाकर आए थे।'

महीपसिंह खुशी से चौंकते हुए से बोले—'सचमुच।'

'हाँ, सचमुच नहीं तो क्या झूठमुच?'

'बहुत अच्छा हुआ साले गए, किसी बड़े आदमी की इज्जत आबरू समझते ही नहीं थे।'

'अरे गये नही भेजे गए है। आपने उस दिन की घटना सुनाई, कई बड़े आदमियों ने व्यथा गाई, फिर मैंने अलगी लगाई और।'

'और आपके अलगी लगाने पर ये कब बच सकते हैं ?'

दोनों हँसने लगे।

× × ×

गरीब जनता को मालूम हुआ कि कलक्टर और डिप्टी कलक्टर बदल गए तो वह बहुत रोई, अब दीन-दुखियों का कौन होगा ?

जब कोई अच्छा अफसर आता है तो बदल दिया जाता है। पता नहीं कैसी सरकार है यह ?



## : ३० :

खलिहान डाँठों से भर गए हैं, लोग अपने-अपने खलिहानों में तमाम पड़े भर भर कर सोते हैं, पता नहीं कौन डाँठों में लुत्ती लगा दे और देखते-देखते सब कुछ स्वाहा हो जाए।

बनवारी बाबा रामकुमार के मना करने पर भी चुपचाप एक रिश्तेदारी में बरात करने चले गए थे। रामप्रकाश खलिहान में सोया था कि एकाएक भकभका कर आग जल उठी। रामप्रकाश जोर से चिल्ला उठा, लोग घड़े ले-लेकर अपने-अपने डाँठों के पास खड़े हो गए। रामकुमार के खलिहान के पास जिनके खलिहान थे वे रामकुमार का डाँठ बुझाने लगे, यदि नहीं बुझायेंगे तो उनके खलिहान को भी यह आग निगल लेगी। कुमार के खलिहान के पास बलई का भी खलिहान था। वह बुझाने में अधिक सक्रिय था, बलई के बाद बिरजू का खलिहान था, वह भी बहुत अधिक सक्रिय हो उठा था।

बहुत नुकसान नहीं होने पाया, लेकिन दिलों में भयंकर आग लग गयी, बात साफ थी कि बिरजू और बलई तो आग लगाएंगे नहीं क्योंकि उनके खलिहान भी पास ही थे, जरूर यह आग दौलत पार्टी की करतूत है।

रामकुमार घर आया और यह सुनकर कि बनवारी बाबा बरात करने चले ही गए, बहुत आग बबूला हुआ। आते हैं तो मार कर घर में से निकाल दूंगा। बड़ा दरिद्र जनमा है यह बाप यह बाप नहीं, मुद्दई है, सारे परिवार को खा जाएगा।

वह इस क्रोध से मुड़ा तो दौलतराय का ध्यान आया। वह बलई के घर पहुँचा, बिरजू भी वहाँ मौजूद था। कुमार के हाथ में मोटी-सी लाठी थी, वह दो काछ मारे हुए था और सिर पर पगड़ी बाँधे था।

'अरे यह क्या नेता जी ?' बलई बोला।

'उठो तुम दोनों उठो और चलो मेरे साथ। आज दौलत को खतम करके ही आयेंगे।'

बलई बोला—'अरे, अरे नेता जी, जरा दम तो लीजिए। ऐसे कहीं किसी को खतम किया जाता है। गौर से मारो। सालों ने एक ही पत्थर में तीन शिकार करने चाहे थे तुम जाते, मैं जाता, और बिरजू जाता।'

'तभी तो कह रहा हूँ कि चलो आज इस पाप को दूर कर दें।'

'यही तो मैं भी कहता हूँ लेकिन ई बलया रोकता रहता है। मैं तो चाहता रहा कि दिनदयला और दौलतवा दोनों को साफ कर दूँ तो गाँव साफ हो जाए। लेकिन ईहे भउगई खेलवा ह।'

'तो जाओ, चढ़ जाओ फाँसी पर।' बलई बोला। 'तुम्हें क्या, तुम तो अकेले हो, फाँसी पर भी चढ़ सकते हो। अरे इन ससुरों को रेवठा रेवठा कर मारो। एक बार मार देने में क्या फायदा?'

बिरजू को एक हूल-सी उठी—'हाँ वह अकेला है आह! इस बलया के मारे दिनदयला को मार नहीं पाता है।' वह कुछ बोला नहीं, गुमसुम बना रहा।

रामकुमार को बलई ने कहा—'आप तो राजनीति जानते हैं, इस तरह मारपीट करने से क्या फायदा? जिस दिन बजड़ जाएगी उस दिन देखा जाएगा। हाँ, आप ऊपर-ऊपर सँभालिएगा। हम लोग नीचे-नीचे देख लेंगे।'

रामकुमार ने पगड़ी खोल दी, एक काछ खोल दिया और लाठी लेकर घर चल पड़ा। बनवारी बाबा आएँ तो आज निबटारा हो जाए। ऐसा जाहिल और निकम्मा बाप भगवान किसी को न दें।

शाम को एक डोली आकर रुकी। बनवारी बाबा उसमें लकवा मारे आदमी-से तड़फड़ा रहे थे। रामकुमार ने देखा और एक बार तड़पा—'चलो अच्छा हुआ, अभागा मर क्यों नहीं गया?'

बनवारी बाबा खाट पर उठा कर लिटाए गए—वे मुल्हर मुल्हर ताक रहे थे। डोली वालों ने बताया कि वे रात को ओसवारे पर से गिर गए थे। बनवारी बाबा ने धीरे धीरे बताया कि वे रात का पेशाब करने उठे तो लगा कोई उन्हें उठाकर फेंक रहा ह।

वे लँगड़े हो गए थे। यह शायद लकवा था। रामकुमार कुछ बोला नहीं, मारे गुस्से के चुप रहा। शराब-शोरबा मँगा कर उनकी मालिश का इन्तजाम कर स्कूल चला गया।

बनवारी बाबा का घाव कुछ ठीक हुआ तो दोनों हाथों के बल घिसटते घिसटते आस पास के दरवाजा पर जाते और नहीं अच्छा लगता तो लौट आते। इस हालत में भी वे स्थिर नहीं रहते, न उनकी वाणी ही काबू में आई, वे खाने-पीने के लिए और जोर जोर से चीखने लगे। नाकों दम कर दिया।

रामकुमार के आने पर हमेशा झकझूमर होती। रामकुमार से वह मिठाई खाने को पैसे माँगते। रामकुमार डाँट कर चुप करता और अंत में कहता—तुम मर जाओ तो घर साफ हो जाए। अन्त में बनवारी बाबा अपनी मटमली आँखों से रो पड़ते और रामकुमार भी चुप रह जाता।

बनवारी बाबा को रामकुमार डाँटता कि आप एक जगह पर क्यों नहीं पड़े रहते? बनवारी बाबा चुपचाप सुनते लेकिन उनसे एक भी क्षण स्थिर बैठा नहीं जाता। किसी न किसी बहाने आस पास के घरों के दरवाजे पर घिसनी काटते पहुँच ही जाते। आँखों से कम सूझता था इसलिए कभी-कभी किसी बल या गाय से टकराते-टकराते बो हो जाते तो कोई लड़का देखता और चिल्लाता—'अरे बाबा आगे बल है।'

रामकुमार कहता—'अरे लोगों की सहानुभूति पाने के लिए नाटक करते हैं, जानबूझ कर पशुओं के पास जाते हैं। टट्टी तो खटिया पर

करते हैं लेकिन घूमने के बिना जी नहीं मानता। जिंदगी भर आवारा-गर्दी करके भूजा हो, अब भी भूज रहे हैं।

रामकुमार दौलत, दर्लसिंगार और दीनदयाल को अपना जानी दुश्मन मान रहा था। वह फिर दो-एक बार पसियाने के पासिया को लेकर गाँव घूम आया और लोग फिर सोचने लगे कि कुछ होने वाला ह। उसने बनवारी बाबा को सख्त मना कर दिया था कि इन तीनों पापियों के दरवाजे पर कभी मत जाइएगा, न बोलिएगा और इनकी कटी अँगुली पर पेशाब भी नहीं करने का। इनके घर पर किसी को साँप काट ले और लोग मरते रहें तो भी मत जाइएगा झाड़ने-फूँकने। अगर गए तो ठीक नहीं। बनवारी बाबा बमक कर बोले—'इन ससुरों से हमें क्या मतलब ह? ये कुपंथी साले मरें या जियें, हमें क्या पड़ी है? हमारे घर की जड़ खोद रहे ह और मैं इन दोगलों के घर जाऊँगा?'

× × ×

जेठ बहुत जोर से बरसा था। तेज आँधी भी आई थी तमाम पेड़ उखड़ गए थे, मकान की छतें उजड़ गयी थीं। मेंढक टरटराने लगे थे और झींगुर झनझनाने लगे थे। आधी रात को हल्ला हुआ कि दौलतराम को साँप काटे हुए ह, बड़े जाविल साँप ने काटा है। लोग बनवारी बाबा के यहाँ दौड़े हुए आए—बाबा दौलत को साँप काटे हुए है।

'काटे हुए ह तो मैं क्या करूँ? मर जाए साला, गाँव को मुक्ती मिले अभागों से।' लोग बनवारी बाबा की मनुहार करने लगे लेकिन वे बमकते रहे—'मैं नहीं जाऊँगा साँप-वोप झाड़ने। उसने हमारा क्या-क्या अहित नहीं किया। मैं उस अभागे को बचाने जाऊँगा? जब बहुत अपेल करता ह आदमी तो उसे सजा भोगनी पड़ती ह। नाग देवता हैं, इसके पापों का फल देने के लिए ही इसे काटा होगा।' लोग मनाकर हार गए लेकिन बनवारी बाबा नहीं गए। लोग चकित थे उनके नये व्यवहार से।

भाटपार को आदमी दौड़ाया गया लेकिन मालूम हुआ कि ओझा कहीं बाहर गया हुआ है।

इस बीच बलया आकर बनवारी बाबा से कह गया कि बाबा ई घालो दौलतवा तुम्हारे ही घर चोरी करने आया था, मैंने उसे देखा तो भागा और आपवाली अंधेरी गली में ही उसे साँप ने काटा है।

'अच्छा तो मेरे ही घर चोरी करने आया था तो ले बच्चू! अरे हमारी कोठी का साँप तो मेरे घर का देवता है, रखवाली करता है। अरे अभागा।'

लोग परेशान थे।

'रामपरसाद!'

'क्या है ए बाबा?'

'बच्चा जी नहीं मानता है, मुझे ले चल दौलतवा ससुरे के यहाँ?'

'का सूतऽ बाबा, जाने दीजिए उसे, मर जाए तो मर जाए।'

'नहीं बचवा, मेरा जी नहीं मानता, दोस्त हो चाहे दुसमन, मंतर जानने वाले का फरज होता है कि वह सबकी सेवा करे।'

'बाबा! कहाँ जाएँगे कीचड़ पानी में? सो जाइए।'

'नाहीं रे बचवा, मुझे उठा कर ले चल, नहीं तो मैं घिसनी मारता हुआ पहुँचता हूँ।'

रामप्रसाद भुनभुना कर उठा और बाबा को पीठ पर लाद कर चला।

'कौन ह भाई यह?'

'अरे यह तो बनवारी बाबा हैं पीठ पर लदे आ रहे हैं।'

लोग सुगबुगा उठे। दौलत कटे हुए रूख की तरह गिर पड़ा था और फेंचकुर फेंक रहा था।

बनवारी बाबा ने दौलत को उठवा कर बैठवाया और फिर झाड़ने के सामान मँगाए। पीली सरसों से परोर-मरोर कर मंत्र मारने लगे।

पहले तो दौलत को लहर ही नहीं आयी लेकिन बहुत देर बाद उसे लहर आने लगी।

मंत्र मारते-मारते भिनसहरा हो गया, बनवारी बाबा अथक भाव से मंत्र मारते ही गए। सवेरा होते-होते दौलत होश में आ गया। होश में आने पर उसने शराबी की तरह चारों ओर देखा, कुछ पहचानने की चेष्टा की फिर पलकें फड़फड़ाईं और अपने आस-पास घिरे तमाम चेहरों को देखा।

अब इसे नहलाओ धुलाओ, ठीक हो गया। अब मैं चलता हूँ और वे घिसनी काटते घर की ओर चले। इस बीच दौलत को स्थिति का बोध हो गया और वह दौड़ कर बनवारी बाबा के चरणों पर गिर पड़ा। 'आपने मेरी जान बचाई है। मैं आपको कंधे पर उठा कर घर पहुँचा दूँगा।'

'नहीं, नहीं, मुझे छूना मत, मैं या ही घर पहुँच जाऊँगा। तुम्हारी जान बच गयी तो ठीक ही हुआ, तुम्हें अभी गाँव में बहुत से काम करने हैं। जाओ। और कइया के टोकने के बावजूद बनवारी बाबा घिसटते ही घर की ओर चल पड़े।

रामकुमार ने सुना तो बहुत बिगड़ा—'आखिर आप अपनी आदत से बाज नहीं आयेंगे, मैंने मना किया था लेकिन आप नहीं माने। साला यह मुहहार मर गया होता तो गाँव का एक कष्ट तो कटा होता।'

बनवारी बाबा कुछ नहीं बोले। चुपचाप रामकुमार का डाटना सुनते रहे। अंत में तरल होकर बोले—बच्चा, उसकी चाल खराब है तो मरने के और भी बहुत से तरीके निकल आएँगे। मैं मंतर जानते हुए यह पाप क्यों लूँ? बच्चा मंतर जान बचाने के लिए होते हैं वह चाहे किसी की जान हो, जान लेने के लिए नहीं होते।

रामकुमार थोड़ा नरम पड़ा—'पिता जी, आप ठीक कह रहे हैं लेकिन जान-जान में अन्तर होता है, एक जान सबको प्यारी होती है

उसकी रक्षा के लिए सभी लोग अपनी जान कुरबान करते हैं, एक जान ऐसी होती है जिससे सब नफरत करते हैं। ऐसी जान बचाना मंत्र का दुरुपयोग करना है। दौलत की जान ऐसी ही जान है।'

मनधारी बाबा मुसकराने लगे—'नहीं बच्चा, किसी को जान को मारना हो तो आदमी मरदानगी से लड़ते-लड़ते मारे। साँपों को आदमी मारने की छूट क्यों दी जाए? साँपों के खिलाफ मेरे मंतर की लड़ाई है।'

'अरे नहीं पिता जी, अगर साँप आदमी को मारे तो उसके खिलाफ लड़ाई लड़नी चाहिए। अगर साँप, साँप को काटे तो हम इनके बीच क्या पड़ें? दौलत, दीनदयाल ये सभी साँप के खानदान के हैं।'

मनधारी बाबा ने रामप्रकाश को पुकार कर कहा—'बचवा, जरा सुरती तो दे जाना।'

× × ×

दीनदयाल और दौलत ने दलसिंगार से कहा—'अरे देख भउवा, लगा तेरे बबूल की डालें काट रहा है।' दलसिंगार ने कहा—'क्या करूँ? इसके मारे जान आजिज आ गयी है। अब साला पेड़ ही काटने लगा।'

दौलत ने बढ़ावा दिया—'इस तरह सहने से काम नहीं चलेगा। आज मौका मिला है निबट ले। एक न एक दिन निबटना ही पड़ेगा। तो आज ही निबट लें हम लोग।'

दलसिंगार कुछ कदरा रहा था कि दीनदयाल ने ऐंड़ लगाई, 'हाँ दौलतराय ठीक कहते हैं, इस तरह तो इनका मन बढ़ जाएगा। चोरी जो करते हैं सो तो करते ही हैं, अब खुलेआम जायदाद पर डाका डाल रहे हैं। तुम चलो और तकरार करो और मौका पाओ तो माला धाप दो, हम लोग पीछे-पीछे आते हैं।'

दलसिंगार को धीरे धीरे क्रोध आ गया। उसने घर में से भाला निकाला और किचकिचाता हुआ खेत की ओर चल पड़ा।

वास्तव में बलई और दलसिंगार के खेत के मेड़ पर एक बबूल पड़ता था। यह कहता था कि मेरा है वह कहता था कि मेरा है। इसीलिए उसे कोई काटता नहीं था। आज कुदालों में बेंट लगाने के लिए बलई को बबूल की डाला की जरूरत पड़ गयी, वह काट रहा था।

दलसिंगार भाला लिए बबूल के नीचे पहुँचा और भाला तान कर बोला—'क्यों रे साला बल्या, बबूल क्यों काट रहा है, अभी भाला घोंपता हूँ।'

बलई ऊपर से चिल्ला रहा था 'अरे नहीं रे भयवा, भाला मत छोड़ना दोहाई भयवा की, भाला मत छोड़ना।'

दलसिंगार नहीं माना, भाला तानकर मारा, बलई ने टाँगी से वार को काट दिया, भाला उसके हाथ को छीलता हुआ निकल गया। दलसिंगार ने फिर भाला ताना, बलई बबूल पर से कूद पड़ा। सतीश अपने खेत में से ( जो पास ही था ) चिल्ला रहा था, अरे क्या करते हो तुम लोग? अरे किसी की जान चली जाएगी, दौलत दीनदयाल दूर से देख रहे थे माना स्थिति का अध्ययन कर रहे हों कि उन्हें कब जाना चाहिए। धीरे धीरे और लोग भी दौड़े।

दलसिंगार ताबड़तोड़ भाला चलाए जा रहा था और बलई कूद-कूद कर अपने को बचा रहा था। दलसिंगार ने एक जोरदार भाला मारा बलई को, लगा कि उसकी जान गयी। बलई ने बड़े जोर से टाँगी घुमा कर भाले के वार की काट करनी चाही। 'खच्च' से टाँगी दलसिंगार के पेट में लगी और क्षण भर में ही उसकी पोटी बाहर निकल आयी। 'अरे बाप!' कह कर वह चिल्लाया और भहरा पड़ा। खून का फौआरा छूटने लगा। देखते-देखते वह ठंडा हो गया। सतीश दौड़ा, दीनदयाल और दौलत दौड़े, बिरजू दौड़ा और अनेक लोग दौड़े।

दीनदयाल वहाँ से धीरे से सरक गए और चौकी पर जाकर इत्तला दी और साथ ही साथ दौलत के लिए हुए रुपये की याद दिलाई, गुद भी सौ रुपये दिए और दीवान साहब से कहा—बस दीवान साहब, इसी से बलई और बिरजू दोनों को साफ कर दीजिए।

दीवान आये। उन्होंने बलई को गिरफ्तार कर लिया, साथ ही साथ बिरजू को भी। बिरजू ने गरज कर कहा, 'मने क्या किया ह ? दुनिया भर के लोग गवाह ह कि मैं खून होने के बाद पहुँचा हूँ।'

इसका फ़ैसला तो बाद में होगा कि कौन दोषी है। खून एकाएक थोड़े होता है और न अकेले होता है। एक आदमी खून करता ह दूसरा दाह देने के लिए छिपा होता है।'

—'अरे मैं तो अपने खेत में कुदाल चला रहा था। खून की बात सुनी तो दौड़ा हुआ आया। मेरे पहले तो तमाम लोग आ चुके थे। बोलो भाइयो, आप लोग बोलते क्यों नहीं हैं ?

सभी लोग चुप थे, कौन पड़े इस भवानी के भवसर में ? पुलिस-वालों का चक्कर बड़ा बीहड़ होता ह। कौन बोले।

'देख रहे हैं सतीश भइया।' बाँधा जाता हुआ बिरजू सतीश की ओर देख कर दर्द से बोला।

'देख रहा हूँ, यही सब तो देखता आया हूँ आज तक। पुलिस को कौन रोके, पुलिस आरोप लगाएगी कि मैं उसके काम म दखल दे रहा हूँ। लेकिन यही सब कुछ तो नहीं है, अभी तो मुकदमा चलेगा तो सत्य का रक्षा के लिए जितना कर सकता हूँ करूंगा।'

पुलिस ने बिरजू और बलई दोनो को बाँध लिया। दीवान ने बलई का बयान लिया। बलई ने साफ साफ बयान दिया कि आत्मरक्षा करते समय उसकी टाँगी दलसिंगार को लगी है, वही उसे मारने आया था। दौलत और दीनदयाल ने बलई के खिलाफ बयान दिया—बताया कि दलसिंगार अपने खेत का बबूल काट रहा था। हम दोनो अपने खेत से

दलसिंगार के पास ही आ रहे थे कि देखा कि बलई भाला लिए दौड़ा चला आ रहा है और पीछे-पीछे बिरजू चिल्ला रहा है, मार मार साले को । और जब तक हम लोग पहुँचे गुत्थम गुत्थी हो गई और बलई ने दलसिंगार की टाँगी छीन कर उसके पेट पर मार दी ।

'झूठ है झूठ है ये दोना दोगले हैं हमारे दुश्मन ।' बिरजू और बलई दोनों साथ तड़पे ।

दीवान ने एक गाली देकर दोनों को चुप करा देना चाहा ।

दीनदयाल ने मुसकरा कर कहा—'अब जाओ जेल में, झूठ सच साबित करना ।'

बिरजू ने क्रोध में पागल होकर कहा—'देखो दीनदयाल, अबकी छूट कर आया तो मारते-मारते तेरी कचूमर निकाल दूँगा ।'

'अच्छा-अच्छा लौट कर आओगे तब न ।' दीवान ने धक्का दे कर कहा ।

लाश गाड़ी पर लादी गयी । दलसिंगार के आगे-पीछे कोई रोने वाला नहीं था । कलवा छिप कर रो रही थी उसे भोकर कर रोने की इच्छा हो रही थी लेकिन दबा दबा कर रो रही थी ।

गाँव के लोग चुप थे, कोई बयान देने को तैयार नहीं था ।

जाते समय बलई और बिरजू ने बड़े करुण नेत्रों से सतीश की ओर देखा । सतीश ने बलई और बिरजू को सुना कर दीवान से कहा—'दीवान साहब, ये सबके सब नकली बयान हैं कोई भी घटनास्थल के आस-पास था नहीं, केवल म चश्मदीद गवाह हूँ । लेकिन मैं अपनी गवाही कचहरी में दूँगा । जान देकर भी सत्य की रक्षा करूँगा ।'

पुलिस चली गयी । घटनास्थल से लोग धीरे धीरे अपने घरों को सरकने लगे । दौलत और दीनदयाल दोनों साथ हटे । घटनास्थल पर मास्टर सुगन के साथ सतीश खड़ा रहा । वह खून के चकत्तों को देर

तक देखता रहा। उफ कैसा-कैसा लग रहा है। 'गाँव में बड़ी अनीति बढ़ गई है सतीश भाई।' मुग्गन मास्टर धीरे से बोले।

'कहा नहीं जा सकता यह गाँव कहाँ जाएगा? क्या होगा इस गाँव का। सत्य तो बुरी तरह मर रहा है। इतने लोग थे और सबके बीच एक भयंकर असत्य उभर कर आया और सबने मौन होकर उसके आगे सिर झुका दिया।

'सभी डरते हैं सतीश भाई! कौन अपनी जान साँसत में डाले। गुंडागर्दी इस कदर फैली है कि सभी लोग अपनी-अपनी जान बचाने में पड़े हुए हैं। हे राम, एक आदमी का देखते-देखते खून हो गया और कहीं कुछ नहीं हुआ। जैसे कोई मक्खी मरी हो।'

'आप तो मास्टर हैं मुग्गन भाई, सत्य की रक्षा के लिए बच्चों को उपदेश देते होंगे। मौका पड़ने पर कुछ कर सकेंगे?'

'मैं समझता सब हूँ सतीश भाई, लेकिन चुप रहता हूँ, अकेला आदमी हूँ—कोई मार-पीट दे, फूँक-ताप दे, सेंध मार दे, महीपसिंह से शिकायत कर दे तो तबादला ही हो जाए। देखते हैं छः-छः महीने तक तनख्वाह नहीं मिलती है, किसी तरह हाथ पाँव समेट कर काम चलाता हूँ। सत्य के लिए लड़ने की परिस्थितियाँ होती हैं भाई।'

'हूँ।' एक बड़े ही मर्म भरे स्वर में सतीश ने कहा। 'अच्छा चलिए यहाँ से। मौके पर आपको याद करूँगा, सत्य की रक्षा के लिए कुछ कर सकें तो कीजिएगा।' सतीश ने घटना की सारी यथार्थता बता दी जो सारे गाँव में फैल गयी। मास्टर मुग्गन कुछ बोले नहीं। केवल मौन होकर साथ चलते रहे।

औरतें आँसू बहा-बहा कर कह रही थीं, अरे वल्या मरकानवना ने बेचारे मउगा की जान ही ले ली। कितना भला था बेचारा। साथ बैठता था, कितना प्यारा प्यारा बतियाता था, दुनियाँ भर की खबरें लाता था, मेला-हटिया में साथ जाता था और सौदा खरिदवाता था।

उसके नाते गाँव चुहुलगुल लगता था। हाय, मरकौनवना बलया को माता मइया ले जाएँ कितनी छई बूक रहा है दहिजरा।

× × ×

बदमी का पेट फूल कर उभर गया ह। गाँव में चर्चा हो रही ह कि बदमी को तो पेट ह, कई महीने का हो गया है। कुलच्छनो देखने में कितनी भोली लगती है। पता नहीं कहाँ-कहाँ मरती है अभागी। कई भतार छोड चुकी, मन नहीं भरा तो अब छुट्टी घोडी होकर मकलाती फिर रही ह। अरे उसी कुजुवा का गुन होगा, उसी से बडी पटती थी। इसे तो अपने घरों में नहीं आने-जाने देना चाहिए, वेस्सा ह, कहीं हमारे घरा की बहू-बेटियों को भ बहका ले जाए। कौन चलावे ऐसी छिनारों का।

बदमी रो रही है उसका बूढा बाप भी गाली दे-दे कर रो रहा है, बदमी का सौतेला भाई मुरतिया सूट-बूट पहन कर आया हुआ ह और बदमी की पीठ पर लात से मार-मार कर घर में से निकाल रहा है—निकल हरजाई कहीं की। दो दो भतार क्या इसीलिए छोड दिए? घर की नाक कटाने के लिए ही क्या यहाँ आई थी? इस गाँव में तेरा क्या रखा ह? कौन ह तेरा यहाँ? तेरी कुलच्छिनी माँ तो पाप करने के लिए तुझ पहले ही छोड कर चली गयी। और ये तुम्हारे बाप ह? ये तेरे बाप कैसे ह? ये तो मेरे बाप हैं? तेरा बाप किसी और गाँव में होगा जा तू वहीं खोज। निकल जा अपने पाप का पेट लिए यहाँ से। जा निकल जा और जो करना हो कर।

भजम मुरतिया को रोते हुए डाँट रहा था—'अरे मत मार मुरतिया, मत मार इसे। आहि ए भगवान ई सब का हो गया। मेरी बेटी एइसी तो नाही थी, ई हि किसने ई सब किया मेरी गऊ-सी बेटी के साथ। मत मार मुरतिया मत मार।

बदमी का छोटा भाई जोर जोर से चिचिया रहा था। मुरतिया ने उसे दो थप्पड जड कर कहा—'चुप साला चिचिया रहा ह।

भजन तडप उठा—'खबरदार मुरतिया जो उसे मारा, हाथ तोड दूँगा साले।' मुरतिया तन गया—तुम्हीं ने घर बरबाद किया ह बपई। तुम्हों ने सिर चढा रखा है इन सबको। बुढौती में शादी की तो लो फल भोगो।'

'अरे साला तू मेरी सादी उपट रहा है, जइसे तू ही मेरा बाप हो।' भजन तडप कर उठा और मुरतिया को मारने को दौडा।

'नहीं बपई नहीं इससे मत उलझो, यह पगलाया हुआ ह।

'अरे छोड, इसका पागलपन अभी दूर करता हूँ, साला कसबे जा कर एबा-केबा पहनता है, कमाता ह और मउज करता ह, इतने साल कमाते हो गया, यह नही पूछने आया कि हम लोगो के पास मरने को जहर के लिए भी पइसे ह कि नहीं। इस बुढउती में खाने के लिए मर रहा हूँ और यह बेटी है जो बियाह न करके मेरे छोटे बच्चे का पालने को घर पडी है और हाथी की तरह जाँगर पेरती ह और ई साला बाज आया है पद पुरान करने। मेरी बेटी कुछ भी करे तेरा क्या बिगडता ह रे साले। भाग तू ही भाग मेरे घर से।' मुरतिया ने भजन की बढी हुई बाँहें मरोड दी और चिल्लाया—'तोड दूँगा। बदमी मुरतिया से लिपट गयी—'छोड छोड, नहीं तो सिर फोड दूँगी। मेरे बपई को कुछ किया तो मुझसे बुरा कोई न होगा।'

मुरतिया ने जोर का धक्का दिया बदमी जोर से गिरती गिरती बची। इस बीच अनेक लोग जुट आए। एक तमाशा-सा लग गया। मुरतिया पर भूत सवार था, वह चिल्ला चिल्ला कर कह रहा था कि बोल कौन ह तेरे पेट के पाप का बाप, जा उसी के घर बठ। मैं अपने घर में रहने नही दूँगा, मार-मार कर निकाल दू गा। लोगों के आ जाने से बदमी एक कोने में सिमटी हुई मुँह छिपाए हुए सिसक रही थी। लोग

तरह-तरह की बोली बोल रहे थे। कुछ लोग मुरतिया का पक्ष ले रहे थे कि ठीक ही तो कहता है—इस तरह की आवारा लड़कियों का गाँव में रहना गाँव की इज्जत के लिए ठीक नहीं है। कुछ लोग बीच-बचाव कर रहे थे, जाने दो भाई अब तो जो होना था हो ही गया। कुछ लोग मजाक में यह भी कह रहे थे कि अरे भाई भला-बुरा हो ही गया तो इसे लेकर धूमन की क्या जरूरत थी, इसे गिरवा दिया होता।

बदमी का लाज से छिपा हुआ सिसकता हुआ चेहरा तमतमा गया, वह तन कर खड़ी हो गयी और बोली—'खबरदार रघुनाथ बाबा सभापति होकर ऐसी बात बोलते हैं। यह गिरने गिराने का काम आप लोगों के घरों की बाभनियाँ कराती है। मुझसे किसी के घर का कुछ छिपा नहीं है। औरों के घरों का तमाशा देखने सभी जुट जाते हैं, अपने घरों की ओर नहीं देखते। मैं पेट क्या गिरवाती? क्या यह कोई पाप का बच्चा है। यह अपने बाप का बच्चा है।'

'हा हा हा, बाप का बच्चा है? भतार को छोड़े कई साल हो गए, इतने साल से यह बच्चा पेट में है?' मुरतिया तनतना कर बोला। लोग हँसने लगे। रघुनाथ ने कहा—'बड़ी बकवास करती है और गाँव भर को गाली देती है, दो लात लगाऊँ तो तबीयत साफ हो जाएगी।'

दीनदयाल ने टिपासा जड़ा—'अरे नये बापों की क्या कमी इस गाँव में? बंशी बजाने वाले किसुन-कन्हैया तमाम भरे पड़े हैं लेकिन फैसला तो यह करना है कि किस किसन-कन्हैया की संतान है यह।'

बदमी की इच्छा हुई कि कह दे—'अरे अभागे अपनी सरग को नहीं देखा है, घर में ही आग लगी हुई है उसे बुझा तो बाहर देखना।' लेकिन सरदा और मास्टर साब दोनों के मासूम चित्र उभर आये, वह कुछ नहीं बोली।

मुरतिया पर खून सवार था, उसने लपक कर एक लात बदमी की

पीठ पर मारी और तड़पा—'निकल जा इस घर से और बोल इस पाप का बाप कौन है ?'

बदमी सिसकने लगी।

फिर उसने एक डंडा उठा लिया और उसकी ओर तान कर जोर से पूछा—'कौन है बाप इस पाप का ?'

'नहीं बताऊँगी ? नहीं बताऊँगी। नहीं बताऊँगी चाहे तुम लोग मेरी जान ही क्यो न ले लो।'

मुरतिया ने डंडा तान कर बदमी को मारना चाहा कि पीछे से किसी ने उसकी बाँह मरोड़ कर जोर का धक्का दिया, वह धड़ाम से नीचे गिरा। 'मैं हूँ इसके बच्चे का बाप।' एक गम्भीर आवाज गरजी।

लोगों ने इस विद्युत गति से घटने वाली घटना को देखा। एक दाढ़ी वाला पुरुष सामने खड़ा था। मुरतिया उठ कर खड़ा हो गया और भय से देखने लगा कि यह कौन है ?

बदमी जोर से चीख पड़ी—

'तिवारी !'

'कुंजू है, कुंजू है' लोग बुदबुदाये। 'हाँ, मैं कुंजू हूँ, बदमी के होने वाले बच्चे का बाप। पहचाना आप लोगों ने ? बदमी उठ चल, चल यहाँ से।'

लोग अवाक थे। सभापति रघुनाथ बोले—'अरे बड़ा बेहया है रे कुजुवा, तू इतना नीचे गिरेगा, किसी को क्या पता था ? तू अब चमार बन रहा है ?'

दीनदयाल, दौलत, मास्टर मुग्गन और अनेक लोग धर्म के नाम पर टीका टिप्पणी कर रहे थे। सभी कह रहे थे—चमार हो गया, पापी ने नाँव बोर दिया बाभनों के गाँव का।

कुंजू धीरे से मुसकराया—'दीनदयाल भइया ! जिस गाँव में आप हों, दौलतराय हों, रघुनाथ जैसे-सभापति हों और उस गाँव का

नाम कैसे डूब सकता है ? एक आदमी अगर नालायक ही निकल गया तो, क्या हुआ ? आप लोग तो हैं न। आप लोगों के कारण इस गाँव का नाम बहुत दूर-दूर तक रोशन हो रहा है, मैं तो सब छानता आ रहा हूँ। रही मेरे कहार होने की बात, सो इसकी चिन्ता आप लोगों को क्यों हो ! मैं कहार बन जाऊँ या चमार बन जाऊँ या धरिकार बन जाऊँ या डोम बन जाऊँ, इससे आप लोगों का क्या बनता बिगड़ता है ? फिर वह एकाएक तश में आ गया। ये कहार-चमार बहुत अच्छे हैं, मैं इनमें मिल कर रह सकता हूँ लेकिन तुम्हारे बामनों के गाँव में नहीं। दीनदयाल थुकता है तुम्हारे गाँव का। थुकता है तुम्हारे गाँव को। बदमी, उठ चल हम लोग चलें कहीं, जहाँ इन पापियों की सूरत न दिखाई पड़े।'

'कहाँ जा रहे हो कुजू ?'

कुजू ने मुड़ कर देखा—सतीश भइया ! उसने झुक कर उनके पाँव छुए। 'जा रहा हूँ सतीश भइया, मैं तो चला ही गया था लेकिन अब बाल बच्चे भी ले जा रहा हूँ लेकिन इनके पहले आपका आशीर्वाद लेने तो आता ही।'

सतीश की आँखें भर आईं। 'बड़ा संकट का समय आया है कुजू। तुम आ गए यह तो अच्छा हुआ, लेकिन अब जा रहे हो यह बहुत बुरा होगा। जानते तो होगे ही, यहाँ दलसिंगार का खून हो गया है उसी सिलसिले में झूठे बिरजू भी फँसा दिया गया है। मैं तो तुम्हें इत्तला देने वाला था लेकिन कहाँ देता ? तुम्हारा कहीं पता हो तब न। अब घर एकदम खाली पड़ा है, बिरजू आएगा तो जरूर। वह निर्दोष है, आएगा लेकिन तब तक क्या होगा तुम्हारे खेतों का, घर का। तुम सयोग से आ गए हो तो घर पर रहो। बिरजू के आने पर चाहे जैसा फैसला कर लेना।'

'संजोग से नहीं आया हूँ भइया, मैंने उस घटना के बारे में सुना था, उसी के बारे में पूछताछ करने आ गया था और आते ही भजना के

यहाँ यह भीड़ भाड़ देख कर उधर ही बढ़ गया। और जो कुछ देखा उसे आप जानते हैं। अब मुझे मत रोकिए भइया! अब मैं नहीं रुकूँगा। घर दुआर, जर जमीन किसी का मुझे मोह नहीं है। बिरजू आएगा, वह सब सँभालेगा। मैं तो इस गाँव से हमेशा को चला। चला तो गया ही था लेकिन एक बदमी के नाते यहाँ से डोर बँधी थी। इस गाँव में क्या रहूँ— बच्चा होने पर नीच, पापी और कमीने लोग भी कहेंगे कि महाइन का बच्चा है। लोग हमारा छुआ नहीं खायेंगे, ताने मारेंगे। क्यों रहूँ यहाँ? इस गाँव में किसी को नहीं जानता बस एक आपको जानता हूँ, आपके सनेह से लदा हूँ, आप हमें आसिरवाद दीजिए सिर लगा कर निकल जाऊँ?

'कहाँ जाओगे?'

'कहीं भी भइया, जहाँ कोई हमें जाति-पाँत से नहीं पुकारेगा, हम वहाँ के लिए अजनबी रहेंगे। किसी भी शहर में चले जाएंगे, मजूरी करके खायेंगे और खा रहेंगे। अच्छा भइया अब चलूँ? बिरजू के आने तक खेत-बारी, घर को सँभाल कीजिएगा। बदमी! चल मैं गाँव में नहीं रहूँगा।'

गाँव के लोग चकित थे और कुजू के इस फसले और हिम्मत से स्तब्ध। कई लोग तो चाहते रहे कि वे कुजू का रोकें टोकें, यह बात न होने दें। लेकिन कुजू पर किसी का क्या अधिकार था? मन मसोस कर सारा पड़ गये।

बदमी बड़ असमंजस में थी। वह क्या करे? इस घर में कहीं जगह है नहीं, मुरतिया उसे निकाल ही रहा है। वह अपने बाप को ओर कातर नेत्रों से देख रही थी। भजन रो रहा था बदमी ने अपने छोटे भाई की ओर देखा, वह करुण नेत्रों से बहिन को देख रहा था। बदमी रोती हुई झपटी और उसे गोद में भर लिया और सहकने लगी।

भजन ने रोते हुए कहा—'मैं तुम्हें कैसे रोकूँ बेटी, मैं तो अब दो दिन का मेहमान हूँ, यह मुरतिया तुम्हें घर में रहने नहीं देगा। अगर ई बाभन तुम्हें अपनाने को तइयार है तो जा, ई जहाँ [illegible] जा रहा है। आज तक मैंने कुजू की तरह मरद नहीं देखा बिटिया, जो भरी सभा में बाँह पकड़ कर अपना ले। ऐसे तमाम लोगों को देखा है जो पाप करके इनकार कर जाते हैं और सारी सजा औरत भोगती है। तू जा इसके साथ। हाँ जाति बिरादरी टाँचेंगे तो टाँचे। मेरा कोई क्या ले लेगा ? म दो चार िनो में चल बसूँगा। मुरतिया तो साहब ही हो गया है इसका कोई क्या कर लेगा ? रह गया यह छोटा बेटा, जिसकी तुम बहन भी हो महतारी भी हो, बाप भी हो, समझ नहीं पाता इसका क्या करूँ ? यह कइसे रहेगा तुम्हारे बिना।'

'ए भजन, इसको भी साथ साथ चलने दो, बदमी के साथ रहेगा, वहीं खाये पियेगा बड़ा होगा।' कुजू बोला।

'नहीं ई कइसे हो सकता है। अब ई सात-आठ साल का हो गया है बहल जाएगा। कुछ घर रहेगा, कुछ मेरे साथ रहेगा इसकूल पर, वहीं पढ़ेगा, लिखेगा।

बदमी ने भजन का गोड़ पकड़ कर छान लिया। भजन ने आँसू बरसाते हुए कहा—'जा, तू ही मेरा बेटा थी बुढ़ापे की लकड़ी, जा तुझे भगवान सुखी रखें।'

बदमी ने फिर छोटे भाई को गोद में भींच लिया। दोनों में से कोई किसी को छोड़ता ही नहीं था।

अंत में वह चली। गाँव के लोग धीरे धीरे सरकने लगे। बदमी मुड़ मुड़ कर घर की ओर देखती जाती थी—मुरतिया गुर्राया हुआ खड़ा था। उसका छोटा भाई रह रह कर बदमी की ओर भागना चाहता था लेकिन भजन उसे पकड़े हुए था।

× × ×

बदमी रास्ते में बहुत देर तक सिसकती रही। फिर बोली, 'तिवारी बहुत सताया तुमने मुझे। क्यों बिना बताए भाग गए जालिम ! मेरी बिलकुल याद नहीं आयी ?'

'क्या कहती है बदमी, तू तो मेरे रोयें रोयें में बसी है। मैं तुझे भूल कर कहाँ जाता ? मैं सोचता रहा कि कहीं जा कर ठौर ठिकाना कर आऊँ तो तुझे बाकायदा दुलहिन की तरह ले चलूँ, लेकिन मुझे यह नहीं मालूम था कि तेरे पेट में बच्चा आ गया है, नहीं तो तुझे छोड़ कर नहीं ही जाता। इस बीच तू कितनी रोई होगी, समझी होगी मैंने धोखा दिया हाय तू कितनी सताई गयी मेरी बदमी !'

'नहीं तिवारी धोखे की बात तो मेरे मन में नहीं आयी। यह तो मैं समझती थी कि तुम आओगे, आओगे जरूर आओगे, लेकिन कहीं समय से नहीं आये तो क्या होगा ? आज तुम नहीं आ गए होते तो क्या हो गया होता। मैं कहीं निकल गयी होती, या डूब मरी होती, फिर तुम्हारी आतमा खोजती फिरती।'

'नहीं बदमी, आतमा की आवाज झूठी नहीं होती, उसे आतमा सुन लेती है। मैं आता ही और तू जहाँ कहीं होती मैं खोज निकालता।'

'देख बदमी सिगल डौन हो गया है, गाड़ी आने वाली है जल्दी जल्दी पाँव बढ़ा, देख टेसन दीख रहा है।'

'अरे तिवारी यह तो वही टेसन है मेरी ससुराल वाला।

'हाँ वही है लेकिन पहले तुम्हें यहाँ रुकना होता था अब यहाँ से गाड़ी पर चढ़ कर कहीं और जाना है, दूर, दूर यहाँ से।'



: ३२ :

अजुन की शादी हो गयी थी। चकबन्दी का काम समाप्त होने से वहाँ से उसकी नौकरी छूट गयी थी, अब अदालत मंशी बन गया था। उसकी नियुक्ति गाँव से दो कोस दूर वाले एक हलके में हुई थी। वह रोज गाँव चला आता था। तनखाह के अलावा कुछ ऊपरी आमदनी भी कर लेता था। मौसमी सामान भी लाता था। घर कुछ मजे में चलने लगा था लेकिन उसकी औरत बडे कडे और स्वार्थी मिजाज की थी। उसे लगता था कि उसका मरद कमाता है और घर भर खाता है। बात बात में सलोना से झगडा करती, काम करने में तोर-मोर करती। उसे लगता कि वह अलग रहे तो अधिक सुखी रह सकती है। अर्जुन बार-बार समझाता कि 'झगडा मत कर। भइया भौजी ने बडे लाड-प्यार से मुझे पाला है, मेरे रोम रोम पर उनका कर्ज लदा हुआ है। भइया की आमदनी कम है तो क्या हुआ, सभी लोग बराबर थोडे कमाते हैं' लेकिन सब बेकार। उसका लडना बढता ही गया यहाँ तक कि घर में सोना, बैठना, खाना मुहाल हो गया। सलोना भी कहाँ तक सहती, वह भी मुँहतोड जवाब देने लगी और घर में अजब कौआरोर मचता। पारवती अपनी माँ की ओर से भयकर लडाई लडती। महावीर बेचारे दो चार बार डाटते फिर मुँह लटका कर तखते पर बैठे रहते। अर्जुन ने अपनी बीवी को मारना भी शुरू किया—रोहा रोहट भी शुरू हुई। सलोना ने बंशी को खत पर खत लिखा था वह आजिज आकर घर आया और घर की हालत देखकर हैरान रह गया। अर्जुन बहुत रोया उसके सामने। भइया, मैंने विवाह करके बहुत बडी गलती की, नहीं जानता था कि औरत इतनी बडी चुडैल मिलेगी। समझा कर, मार कर हार गया लेकिन नहीं मानती। आप लोगों की सेवा करने का समय

अरयर तो मरतवाल ने ये दिन दिखाये, —मझी औरत भीतर से गरगराई—
'हां हां रो लो रांड को तरह भतार के आगे।'

वंशी ने अजु न को प्यार से छाती स लगा लिया और बोला—
'भाई मने घर का हाल देख लिया। यह बीमारी किसी के मान की
नहीं। तुम मेरे बहुत प्यारे हो, और तुम मेरा बहुत आदर करते हो
लेकिन देख रहा हूँ कि तुम्हारी यह औरत ईश्वर के भी मान की नहीं
है। यह घर में आग ही लगाती जाएगी। इसलिए अच्छा हो इसी का
मन पूरा किया जाए। बँटवारा कर दिया जाए।'

भइया।' जोर से अजु न रोया।

'रो मत भाई, इससे मेरा तेरा प्रेम कम नहीं होता बल्कि एक में ही
रहने से कम होगा।

वंशी बँटवारा करके चला गया। टूटे मकान का एक हिस्सा अजु न
की औरत को भी मिल गया जिसे नयी ट्टी से घेर कर फूस से छा
दिया गया। अर्जुन बहुत उदास रहने लगा।

वंशी चम्पल लौट गया। इतने दिनों की छुट्टियों में जो घाटा
हुआ था उसे पूरा करने म जुट गया। मशीन और वह—वह और
मशीन खूब काम कर रहा है, उसे अधिक से अधिक पैसे चाहिए,
आने जाने में पसे खच हुए ह, कज लिया था सब चुकाने हैं वह
काम कर रहा है। खटाक बाप रे क्या हुआ अरे मशीन बन्द
करो क्या हुआ, क्या हुआ? अरे बाप रे वंशी चीख रहा ह। उसका
एक हाथ मशीन में आ गया है डाक्टर डाक्टर आपरेशन आह
और बाईं बाँह काट कर अलग कर दी गयी।

वंशी को होश आया तो अपनी कटी हुई बाँह देखकर फफक कर रो
पड़ा अब क्या होगा भगवान। अब कैसे गाड़ी चलेगी?

वंशी को पाँच सौ रुपये मुआवजे के दकर उसे नौकरी से अलग

कर दिया गया। वह अपने डेरे पर बैठ कर घटा रोता था क्या करे वह। घर चिट्ठी नही देगा, यहीं रह कर कोई काम खोजेगा कुछ रुपये भेजता रहेगा? लेकिन कब तक? वह कुछ सोच नही पाता और बठा-बठा रोता।

× × ×

बलई और बिरजू के मुकदमों की पेशी होने लगी थी। बलई तो जमानत पर छूट गया था, उसके मामा जमानत हुए थ लेकिन बिरजू नहीं छूटा—कोई उसका जमानतदार नहीं हुआ।

पुलिस की ओर से दीनदयाल और दौलत गवाह थे। मास्टर सुगन पर बहुत जोर डाला गया कि वह भी गवाही दे। मास्टर सुगन ने गवाही देने से इनकार कर दिया। बाबू महीपसिंह से मास्टर पर जोर डलवाया गया, मास्टर सुगन बहुत पसोपेश में पडे—कमबख्त यह महीपसिंह हर बार मुझे धम-सकट में डाल देता ह। नहीं वह इतना बडा पाप नही करेगा—नहीं करेगा। नहीं करेगा। दिनेश को मास्टरी लगाने के लिए बाबू साहब ने वचन दिया है उसका क्या होगा? दिनेश की भी नौकरी लग जाए तो कुछ काम चले। इट्रेंस पास हो गया, आगे पढाने का बेंवत नहीं नौकरी कहीं लगता नहीं—स्कूल मास्टरी ही क्या बुरी है? तनखाह दर से मिलती है तो क्या हुआ मिलती तो ह न। ठाले में बठे रहने से तो अच्छा ह स्कूल मास्टरी करना। तनखाह के अलावा पसकराई, तर-तरकारी और और भी फसली चीजें मिलती ही रहती ह। बाबू महीपसिंह ने कहा ह कि इसी साल स नौकरी दिला देंगे। लेकिन इतना बडा अधर्म वह कसे करेगा? हलफ उठाना पडता ह बाप रे इतनी बडी अनीति वह कसे करेगा? दीनदयाल और दौलत तो सब कुछ कर सकते है। उसने गवाही नही दी।

सतीश ने उससे कहा कि वह बिरजू और बलई के पक्ष में गवाही दे क्योंकि यह न्याय पक्ष ह। मास्टर ने कहा—भाई महीपसिंह की ओर

से दबाव डाला जा रहा है इनके खिलाफ गवाही देने के लिए। लेकिन वह नहीं करेगा। इसलिए अच्छा है कि वह किसी की ओर से गवाही न दे, नहीं तो वह खामखाह मुसीबत में पड़ जाएगा।

संतोषा मान गया। बलई ने बहुत दौड़ धूप की लेकिन गाँव में कोई गवाह नहीं मिला। वह रामकुमार के पास गया। रामकुमार ने कहा कि मैं तो स्कूल में था, कैसे गवाही दे सकता हूँ।

अरे भाई स्कूल कैसे था दिन तो इतवार का था आप घर पर रहे होंगे, इसका अन्दाजा तो कोई भी लगा सकता है।'

'नहीं भाई, इतवार होने पर भी मैं स्कूल में था उस दिन मीटिंग थी, उस मीटिंग में सबके दस्तखत हुई है, मैं चाहता रहा कि इन बेईमानों ने तुम्हारे खिलाफ जो जाल रचा है उसको तोड़ूँ और इन दुष्टों को सबक सिखाऊँ, लेकिन उस दिन मीटिंग होने से बुरी तरह फँस गया हूँ।' कुमार झूठ बोल कर निकल गया।

'तो बनवारी बाबा को ही जाने दीजिए।'

'अरे वे कैसे आएँगे इस हालत में।'

मैं उन्हें पालकी में ले जाऊँगा।'

'अरे क्या तमाशा कराओगे कचहरी में। यही दिखाने के लिए कि यही मशहूर नेता रामकुमार के पिता हैं।'

'अरे ये आपके पिता हैं, कहने की क्या जरूरत पड़ेगी ?

'अरे नहीं, तो भी इस हालत में इन्हें ले जाना अच्छा नहीं होगा। बीमार आदमी हैं कहीं हालत रास्ते में खराब हो तो लेने के देने पड़ जाएँ। और तुम तो जानते हो कि इनका कोई भरोसा नहीं है कब क्या अवाट-ववाट बक देंगे। हो सकता है कि उल्टा-पुल्टा बक कर तुम्हारा केस ही खराब कर दें। बलई समझ गया कि रामकुमार राजनीति खेल रहे हैं।

रामकुमार बनवारी बाबा को खूब समझा कर चले गए कि गवाही देने मत जाइएगा।

बाद में बलई बनवारी बाबा से मिला और रोया गिडगिडाया। बनवारी बाबा राजी हो गए लेकिन यह बताया कि किसी को मालूम न होने पाये, नही तो रामकुमार रोक देगा।

सतीश ने खुद ही बलई से कहा कि वह घबराये नही वह उसकी ओर से गवाही देगा। सतीश ने बनवारी बाबा को समझा दिया कि वे कहेंगे कि वे अपने बागीचे में बठे आम रखा रहे थे जो कि दुघटना स्थल के पास ही है, रामप्रकाश भी साथ ही था। हल्ला-गुल्ला होने पर रामप्रकाश से उन्होंने पूछा कि क्या हो रहा है रे। तो रामप्रकाश ने सारी घटना बताई।

बनवारी बाबा को गवाही हुई। वकीलो ने उन्हें बहुत हिलाया डुलाया लेकिन वे उखडे नहीं। उनके बाद सतीश को गवाही हुइ। सतीश ने बहुत जोरदार ढग से बलई का बचाव किया और बिरजू को तो बेदाग बचा ले गया।

× × ×

लोगो में चर्चा थी कि बलई को फाँसी होगी। लेकिन बलई के वकील ने कहा कि गवाहियाँ बडी अच्छी गयी हैं। फाँसी तो नही आजीवन कारावास हो सकता है। बिरजू के तो साफ-साफ छूट जाने की सभावना ह।

'बनवारी बाबा से बलई ने पूछा—क्या खायेंगे चाचा ?
बच्चा मुझे भर हिक्क मिठाई खिला आज।'

बलई ने खूब मिठाइयाँ खिलाइ। जेठ की गर्मी शिद्दत पर थी। मिठाइयों ने गर्मी फूँक दी। तिजहर को डोली में बठ कर बनवारी बाबा चले तो मुँह-पेट चलने लगा। राजघाट तक आते आते ठढे हो गए।

बलई घबरा गया और सतीश से बोला—'क्या होगा भइया ?'

'जो होना था सो हो गया। अब इनकी लाश गांव पर ही ले चलो। यहां कैसे फूंका जाए बिना इनके घर वालों से पूछे हुए और जब फूंकने वाला बेटा हो तो दूसरा कोई क्या फूंके ?'

रामकुमार घर आया हुआ था और यह सुनकर की बनवारी बाबा बलई की गवाही पर गए हुए हैं बौखला गया था। आज आयें तो सीधे उठा कर कुएं में फेंक दूं बड़ी छूट दे रखी है, कोई बात मानते ही नहीं।

वह डोली देख कर सावधान हो गया और क्रोध से होठ काटने लगा।

बलई और सतीश मुंह लटकाये खड़े थे। कुमार तड़पा—'अरे निकलते क्यों नहीं, डोली में ही बैठे रहेंगे। चिकनी चाटते हुए उतरिए न।'

'रामकुमार, बनवारी बाबा को डोली में से निकालिए, वे नहीं रहे।' सतीश ने कहा।

'क्या ?' रामकुमार तड़पा।

'हां।'

'मैंने तुम्हें मना किया था न बलई, कि इन्हें मत ले जाना, लेकिन कमीने तुम नहीं माने। गरज बावरा होती है। अब ले जाओ इस लाश से गवाही दिलाने फिरो, मेरे पास क्यों ले आए ?'

घर में रोना पीटना पड़ गया। रामकुमार हाथ मलता हुआ इधर-उधर घूमने लगा और बलई को गाली देता रहा।

'रामकुमार!' सतीश शांत भाव से बोला। 'बलई को गाली देने से क्या फायदा ? बनवारी भाई की हालत ऐसी थी कि आज नहीं तो कल मरते। ऐसी जिन्दगी से छुटकारा मिल जाए तो भी अच्छा। लेकिन एक बात बहुत बड़ी हुई। बनवारी भाई ने मरते-मरते एक महान

काम किया जो तुम जिंदगी भर नही कर सके। उन्होंने एक सत्य की रक्षा की। बल्कि यो कहा जाए कि उन्होंने सत्य की रक्षा के लिए ही आत्मोत्सर्ग किया।'

रामकुमार ने कहा—'क्या रक्षा की? बलई अपनी रक्षा के लिए धोखे से उन्हें उठा ले गया रक्षा बलई की हुई, सत्य की नही।'

'भूलते हैं रामकुमार जी आप! सत्य सत्य होता है चाहे वह बलई के पक्ष में हो चाहे दीनदयाल या महीपसिंह के पक्ष में। सत्य को किसी से बाँध कर नही देखना चाहिए। रक्षा बलई की तो हुई लेकिन सबसे अधिक रक्षा सत्य की हुई। एक झूठा केस करके इन दोनो को फँसाया गया और दो दो आदमी इनके खिलाफ यानी झूठ के पक्ष में गवाही देने है और गाँव में कोई भी व्यक्ति ऐसा नही जो इस झूठ का प्रतिवाद कर सत्य के पक्ष में गवाही दे। ऐसी स्थिति में अपंग बनवारी भाई का सत्य के पक्ष में गवाही देने जाना एक बहुत बड़ी बात है। यह बड़ी महान मौत हुई है।'

रामकुमार धीरे धीरे रोने लगा। पिता के जीवन की अनेक स्मृतियाँ आँखों में तैरने लगी, फफक कर बोला—'हाँ अपने घर के लिए चाहे जितने निकम्मे रहे हों वे, लेकिन सबका उपकार ही किया। मन में कोई छल-कपट नही, एकदम स्नेह की, करुणा की मूर्ति।'

धीरे धीरे अर-जवार के लोग जुटने लगे, लोग रो रहे थे। औरतें विशेष तौर पर आँसू बहा रही थीं—बाबा कितने अच्छे थे, किसी का दुख कलेस नहीं सह पाते थे

× × ×

शारदा का रिजल्ट निकला है वह इन्ट्रेन्स पास हो गई है। दीनदयाल वर खोजने गए हैं। शारदा उदास है हाँ उसका रिजल्ट निकला है थर्ड क्लास हुई है, पास हो गई यही क्या कम है? उसने पढ़ा

हो क्या था ? पास हो गई है लोग यह खुश-खबरी देने आए हैं और वह उदास बैठी हुई है। बाबू जी वर खोजने गए हैं। उन्हें कोई समझाता क्या नहीं कि वे शादी के लिए वर न ढूंढें, वर तो ढूंढा हुआ है। अगर कहीं और शादी हो गई तो म कैसे जिन्दा रहूँगी ?'

बाबू जी से कौन कहे ? वे समझते भी क्या नहीं हैं ? चाची सकोच संकोच में बोलती नहीं हैं। मास्टर जी ने कहा था कि सामने कहने में तो संकोच लगता ■ लेकिन चिट्ठी लिख कर उनसे प्रार्थना करेंगे।

मास्टर जी, कहाँ होंगे आप। वह गोरखपुर इंट्रेंस की परीक्षा देने गयी थी। मास्टर जी भी अपने विद्यार्थियों की परीक्षा दिलाने गए थे। वे अवसर अपने लड़को को पढ़ा कर उनके पास चले आते थे। पिताजी साथ गए थे लेकिन वे अकसर कचहरी और वकीलों के चक्कर में घूमने रहते थे। मास्टर जी पढ़ाते थे। शहर की चकाचौंध में, चमक-दमक में पता नहीं जी कैसा-कैसा होता था, कि कहीं खो जाएगी और उसे मास्टर जी का आधार चाहिए। इच्छा होती थी कि मास्टर जी के साथ छूट कर घूमे सड़कों पर, बागीचों में, रेस्तों पर दूर-दूर तक रातों को एकांत सड़कों पर उनके साथ घूमे। लेकिन, लेकिन हाय दइया, क्या कहेंगे पिता जी। उस दिन पिता जी से आग्रह किया था कि वह गोरखनाथ मन्दिर जाना चाहती है, उस दिन उसका परचा नहीं है। पिता जी बोले थे, हाँ-हाँ मन्दिर चली आए लेकिन मुझे तो काम है। मास्टर जी यदि तयार हों तो उनके साथ चली जाए।

मास्टर जी गोरखनाथ मन्दिर ले गए। रिक्शे पर साथ बैठने का सुख मिला। एक अद्भुत स्पर्श सुख। एक अद्भुत सूनापन। सड़कों पर केवल वह थी और उसके मास्टर जी, भीड़ अनजानी अपरिचित-सी उसके पास बह रही थी। उसके रोम रोम में फुरहरी उठ रही था—उसे विश्वास नहीं हो रहा था कि मास्टरजी उसकी बगल में बैठे हुए हैं और इतने बड़े संसार में वे दोनों एक साथ अनजानी-सी भीड़ में बह रहे हैं।

'मनौती मान ली गोरखनाथ बाबा से ?' मास्टर जी ने पूछा था।

'हाँ।'

'क्या मानी ?'

'नहीं बताऊँगी।

अरे नहीं बताओगी तो न बताओ, क्या मैं जानता नहीं हूँ। मानी होगी कि हे गोरखनाथ बाबा मैं फर्स्ट क्लास पास हो जाऊँ।'

'वाह रे मास्टर जी, जान गये मास्टर जी। मैं ई सब क्यों मानन लगी ?' वह हँसने लगी थी।

तो। मास्टर जी रहस्यमय ढंग से मुसकराये थे।

नहीं बताऊँगी।'

क्यों ? मास्टर जी ने अंगुली पकड़ ली थी, वह सिहरन से भर गयी थी अंगुलियाँ उनकी अंगुलियों के बीच छटपटा रही थीं।

'नहीं बताऊँगी मेरे मास्टर। मैंने तो एक अद्भुत चीज माँगी है मास्टर जी, पास-फेल जैसी निकम्मी चीज माँगने लिए मन्दिर तक क्यों जाऊँगी ?'

वह मुसकराने लगी थी और मास्टर जी ने जोर से अंगुली दबा दी थी—'उई' वह हलके से चीख उठी थी।

नहीं बताओगी ?'

'नहीं नहीं नहीं।

'तो जाओ मैं तुम्हारे साथ नहीं जाऊँगा अकेली चली जाओ ..।

मास्टर जी चलने लगे थे।

अरे मास्टर जी, रुकिये तो, मेरी कसम मास्टर जी रुकिये।

मास्टर जी चलते-चलते रुक गए थे और ताकने लगे थे—मानों पूछ रहे हों—हाँ बोल क्या बात है ?

'बड़े निरमोही हैं मास्टर जी—जो चीज मैं माँगने आयी थी वही गँवा बैठूँ क्या ?

'क्या चीज ?'

'आप।' कह कर लजा गई थी।

'पगली।' कह कर मास्टर जी सिहर उठे थे, वे ऐसे ताकने लगे थे मानो पूरी ताकत से गोद में भर लेंगे।

'आओ पैदल चलें धारो, अधिक देर तक साथ रहेगा।'

'चलिए मास्टर जी, जैसे भी चलेंगे साथ पायेंगे।'

'सच ?'

'सच।'

'धारो, इच्छा होती ह तुम्हें साथ लेकर सिनेमा चलूँ।'

'मेरी भी तो इच्छा होती है मास्टर जी! आपके साथ ता न जाने कहाँ कहाँ भटकने, कहाँ-कहा खो जाने की इच्छा हाती है। इच्छा होती ह कि चांदनी में भीगती हुई आपके साथ, रात भर घूमूँ, हुई पार्क में फूलों के बीच तैरूँ, फूल फूल से आपको मारूँ, आपके ऊपर जल फेंकू, हरी-हरी दूब पर अपने को फेंक दू। आप मेरा नाम ले-ले कर पुकारें और बावली बनी दौड़ू।'

'और मेरी इच्छा होती ह इच्छा होती ह नही बताऊँगा।

'बताइए न मास्टर जी।

'नही, नही बताऊँगा।'

'हाय क्या नहीं बताएगे, मेरी कसम बताइए न।'

तेरी कसम, इच्छा होती ह, होती ह, नहीं कुछ नही होती।

'जाइए आप बहुत सताते ह।'

'तुमसे भी अधिक ?

'बताइए न क्या इच्छा होती ह मेरी तो सब सुन लेते ह अपनी बताते ही नही।'

'तो ले सुन, इच्छा होती ह कि तुझे दुलहन बना कर घर ले चलू।'

वह शरमा गयी थी और एक पेड़ के नीचे खडी-खडी अँगूठे से

मिट्टी कुरेदनो लगी थी—

'लेकिन ।'

'लेकिन क्या मास्टर जो ।'

'लेकिन यह कि कभी-कभी डर लगता है कि तुम्हारे पिता जो नहो माने तो क्या होगा ?'

शारदा चुप रही जसे कह रही हो—हाँ यह तो ह ।'

'नहो मानेंगे तो तुम्हें भगा ले चलूँगा ।'

थुक । ऐसा कहो होता है ।'

'क्या नहो होता ह, इतिहास में ऐसा अवसर हुआ ह ।'

हाँ पढा ता उसने भो है । वह चुप चाप सोचती रही—कितना सुख होता होगा प्रियतम की गोद में भागने का । तो क्या मास्टर जी उसे भगा ले चलेंगे । नहा, मास्टर जो मजाक कर रहे हं ।

'ठीक ह मास्टर जी—जसे आप चाहें साथ चलने को तैयार हूँ । आपको आत्मा ने वरण किया ह तो चाहे जैसे भी ले चलिए ।

लेकिन मास्टर की हँसी उड गयी थी, वे गभीर हो गए थे, बोले—'सचमुच शारो कभी-कभी सोचता हूँ कि तुम्हारे पिता जो नहो माने तो क्या होगा ?'

क्यों अभी आपने एक रास्ता तो बताया था । उसने मुसकरा कर कहा ।

उच्छ्वास लेकर मास्टर जा बाले—'काश, यह हो पाता शारा । वह मर जाएगा लेकिन ऐसा नही करेगा, इससे उसको, उसके वश को, शारदा को, उसके पिता की इज्जत मिट्टी में मिल जाएगी । वह शान से बरात लेकर आएगा और सबके सामने ले जाएगा ।

लेकिन बादू जी से कौन कहे मास्टर जो ?'

'कहूँगा तो म भी नही, हाँ उन्हें एक चिटठी लिखूँगा, आशा ह

उन्हें अस्वीकार नहीं होगा। आखिर मुझमें क्या कमी है, पढ़ा लिखा हूँ, भला आदमी हूँ, नौकरी करता हूँ और-और '

'हाँ हाँ और

'हाँ हाँ और सुनो और मैं सुन्दर भी हूँ।'

'आ हा हा, अपने मुँह मिया मिट्ठू तो सभी बनते हैं।'

'तो क्या मैं असुन्दर हूँ ? तो फिर तू क्यों, तू क्यों मेरे लिए तड़पती है।'

कौन तड़पता है आप के लिए ? झूठे कहीं के।' कहते हुए उसने मास्टर जी का हाथ पकड़ कर अपनी आँखों से लगा लिया था और मास्टर जी ने हलके से उसके बालों को सूँघ लिया था।

'चल अब पैदल नहीं चलेंगे, धूप और थकावट से तेरा लाल मुँह और लाल हुआ जा रहा है। वह देख सामने का फूल देखती है न।'

'हाँ देखती हूँ।'

'क्या नाम है इसका।'

'मुझे क्या मालूम ?'

'इसे गुलमोहर कहते हैं।'

'बड़े प्यारे-प्यारे हैं लाल-लाल। ये फल देहात में नहीं होते।'

'होते हैं, इससे अच्छे होते हैं।'

'कहाँ, मने तो नहीं देखे

'मैंने देखे ह।'

'कहाँ ?'

'एक तो मेरे सामने ही बैठा हुआ मेरी आँखों में डूब रहा ह।'

'धत्त।'

मास्टर ने एक छोटे से गुलमुहर की डाली से फूलों का एक गुच्छा

तोड कर शारदा के बालों में खोंस दिया। उसने मुग्ध भाव से मास्टर जी को देखा, सचमुच वह उनकी आँखों में डूब रही थी।

शारदा को याद आती है गोरखपुर की अनेक शामें, अनेक क्षण, अनेक जगहें जो मास्टर जी के रंग में रंग कर लाल-लाल दहक रही हैं।

और वह शाम जिसके दूसरे दिन वह गोरखपुर से गाँव आने वाली थी। कितनी उदास शाम थी। मास्टर जी बडे थके-से लग रहे थे। आवाज वही भारी-सी लग रही थी।

'शारो, अब शादी के पहले अपना मिलना नहीं हो सकेगा। अब तक तो पढाने आता रहा, अब नही आऊँगा।'

'क्यो ? मास्टर जी।'

'नहीं अब लोग तरह-तरह की बातें उडायेंगे।'

'बाबू जी से तो मिलने आ सकते हैं मुझसे मत मिलिएगा।'

मास्टर जी उसकी रहस्यमयी मुसकान को देख रहस्यमय ढग से मुसकराये थे।

'नही शारो, विदा, अलविदा कुछ दिनो बाद स्कूल की भी छुट्टियाँ हो जाएँगी। विदा शुभ कामनाएँ।'

उस रात वह बहुत रोई थी। गाँव के पास ही रहेंगे और मिलेंगे नहीं, कितना बडा जुलुम करेंगे।

एक दिन बाबू जी बौखलाये हुए आये—देखो न इस मास्टर की हिमाकत, मेरी लडकी से शादी करेगा। यह मुँह और मसूर की दाल मैंने यहाँ उसकी नौकरी लगाई, लोगों के उपद्रव के बावजूद उसे यहाँ लगाए रखने की बार-बार कोशिश की—तो इसका मन बढ़ गया। मैंने अपनी लडकी को थोडा पढ़ा देने को कहा तो समझता है कि मैंने अपनी लडकी ही दे दी उसे। कमीना, जिस पत्तल में खाता है उसी में छेद करता है हुँह शादी करेगे मेरी लडकी से। शीशे में अपना मुँह

नहीं देखा है। मेरी शारदा से शादी करेंगे, दरिद्र कहीं के। घर का वेंवत नहीं देखते। डेढ़ सौ रुपल्ली पाते हैं, वो भी मेरी मरजी से, तो मेरी बेटी से शादी करने पर उतारू हो गए। पाठक-साठक कोई बामन होते हैं, 'बमने म नाह जात पाठक उपधिया' (पाठक और उपाध्याय ब्राह्मणों में छोटी जात ह)। मैं नहीं जानता था कि ये मेरी बेटी को पढ़ाते ह तो बदले में मेरी बेटी ही माँग लेंगे। पढ़ाया है तो फीस ले लें। फीस देने की बात कही थी तो लगा था आदर्श झाड़ने, मैं नहीं जानता था कि यह सारा आदर्श इसीलिए है। अब स्कूल से निकलवाता हूँ और ऐसी चिट्ठी लिखता हूँ कि बच्चू याद करेंगे। मैं अपनी बेटी की शादी किसी बड़े अफसर से करूँगा, क्या कमी ह मेरे पास ? पैसा ह, नाम है, लड़की सु दर ह, पढ़ी लिखी है।

शारदा सब सुनती रही और अन्त में उठ कर अ दर चली गयी और मुँह पर आचल लगा कर रोने लगी। चाची जी ने कहा—'क्या हुआ, बहिनी।'

चाची सुन तो रही हो, अब इससे अधिक क्या होगा ? मास्टर जी का पत्र आया है बाबू जी के नाम। उन्होंने मेरे साथ शादी का प्रस्ताव किया है सो बाबू जी लाल पीले होकर भला बुरा बक रहे हैं और गुस्से में उन्हें बड़ी खराब-सी चिट्ठी लिखने जा रहे हैं।'

'अच्छा तो आज सारा सकोच छोड़ कर मैं उनसे समझती हूँ।'

चाची ने रामबहादुर से दीनदयाल को बुलाया और रामबहादुर से कहला दिया कि चाची कुछ जरूरी बातें करना चाहती ह। दीनदयाल ने कहा—'कह दो अभी आता हूँ।'

दीनदयाल ने चिट्ठी पूरी की—लिफाफे में ब द किया और राम र ा ह₂ा —'जाओ डाकखाने में छोड़ आयो।'

फिर वे अ दर खँखारते हुए आये। चाची किवाड़ की आड़ में

खडो हो गई। खास-खूँस कर कहा—'भाई जी, मास्टर जी को चिट्ठी आई है ?'

'हाँ आई है उस कृतघ्न की।'

'क्या लिखा है ?'

दीनदयाल ने अपनी प्रतिक्रिया के साथ चिट्ठी का अहवाल दे दिया।

'भाई जी, इसमें बिगडने की क्या बात है ?'

'क्या ?' तडप कर दीनदयाल बोले।

'हाँ हा बिगडने की कौन सी बात ह इसमें ?'

'अरे बहू तुम्हें क्या हो गया ह ? शारदा मेरी लाड-प्यार की लडकी, एक ही लडकी, इसे म उस भुखमरे को दे दूँ। इसकी शादी तो किसी अफसर स करूँगा। किस बात की कमी है मेरी शारदा में ?'

भाई जी, मास्टर जी में किस बात की कमी है। पढे लिखे ह, सुन्दर हैं, स्वस्थ हैं, पैसे नहीं है तो क्या। आदमी में गुन होता ह तो पैसे कमा लेता है। हेडमास्टर है, कल पता नहीं क्या हो जाएँगे, इनके जैसे काबिल आदमी एक जगह ठहरते थोडे ही हैं। और इनका स्वभाव कितना मीठा और प्यारा ह ? सरधा बहिनी की ही तरह। कितनी पटेगी दोना में ।'

'नही कुछ भी हो, म मास्टर को अपनी बेटी नही दे सकता। उसमें ऐसा कुछ नही ह कि मै उसे अपना दामाद बनाऊँ। तुम्हें पता नहीं बहू कि उसके गाँव की बेटियाँ हमारे गाँव में आयी हैं, हमारे गाँव की बेटी उस गाँव म कसे जाएगी ?'

'यह तो कोई बात नहीं हुई भाई जी, आज के जमाने म इतना कौन देखता ह और सबसे बडी बात तो यह ह कि यह है कि

'हाँ हाँ कहो क्या बात है ?'

'बात यह है भाई जी कि सरधा बहिनी भी मास्टर जी को चाहती है।'

'क्या !'

'हाँ भाई जी।'

'तो तुम सब ने मिलकर मेरे खिलाफ षड्यन्त्र किया है। यही सब पुआ पकता रहा है इतने दिनों तक ? दीनदयाल गुस्से और अपमान से पागल हो रहे थे।

'पूआ पका तो क्या हुआ भाई जी, पूआ तो मीठा ही होता है। मैं तो यही समझती रही कि घर बैठे इतना अच्छा दामाद मिल जाए तो क्या बुरा है ? भाई जी दौड़ धूप से बच जाएँगे।'

'बहू उ उ ऊ ...! मैं तो तुम्हें जिम्मेदार समझता रहा लेकिन तुमने मेरी नाक कटा दी और इस शारदा को क्या हो गया है ? बेवकूफ लड़की ? कहाँ है शारदा, शारदा ...!'

शारदा रोती सिसकती कमरे के बाहर आई और सिर नीचा करके खड़ी हो गयी।

'यह सब क्या है शारदा क्या तेरी चाची ठीक कह रही है ?'

'शारदा सिर झुकाये केवल सहकती रही।'

दीनदयाल गुस्से से गरजते हुए बाहर जाने लगे—'अच्छा करो तुम लोग बेवकूफियाँ लेकिन मैं बेवकूफ तो नहीं हूँ न। मुझे अपनी लड़की के भले-बुरे का खूब ख्याल है। मैं यह सब नहीं होने दूँगा। उस मास्टर के बच्चे से शादी नहीं होगी हरगिज नहीं होगी।'

'मगर भाई जी, वह चिट्ठी तो न छोड़िएगा।'

'वह चिट्ठी डाकखाने पहुँच गयी है। बच्चू याद करेंगे।'

चाची !' कहती हुई शारदा चाची की गोद में भहरा गई।

'चुप रह, बहिनी, जो होना होगा सो होगा। रोने से क्या होगा ? भगवान मालिक है, उन्हीं को याद करो।'

शारदा दिन ब दिन उदास होती गई, खाना पीना कम कर दिया।

एक दिन एक चिट्ठी आई। शारदा ने पहचान लिया मास्टर जी की लिखावट है। क्या करे वह, चिट्ठी पिता जी के नाम है कैसे पढ़े। उसने पानी लगा कर लिफाफा सही सलामत खोल लिया और कमरे में छिप कर पढ़ने लगी—

मान्यवर तिवारी जी,

आपका कृपा पत्र मिला, बहुत बहुत आभारी हूँ। आपने मेरे लिए जो इतने अच्छे-अच्छे शब्दों का प्रयोग किया है उसके लिए किस प्रकार आपका ऋण चुकाऊँ। यह सही है कि मैं गरीब हूँ लेकिन मेरी आँख का पानी नहीं गिरा है जब कि बहुत से पैसे वालों की गरत दो दो पैसे में बिकती रहती है, वे स्वार्थ के लिए कमीने से कमीने आदमी की चापलूसी करते हैं, गरीब से गरीब आदमी की जमीन जायदाद हड़पने में वे नीच से नीच तरीके अपनाते हैं, शरीफ बने रह कर गुंडों से चोरियाँ करवाते हैं, जानें मरवाते हैं, खेत लुटवाते पिटवाते हैं, कामवासना तृप्त करने के लिए दूसरों का घर उजाड़ देते हैं, और बहुत से काम करते हैं। मेरा गरीब होना और मास्टर होना मेरे लिए गौरव की बात है तिवारी जी! मैं किसी का छीनता-झपटता तो नहीं। मैंने आप लोगों के स्कूल में हेडमास्टरी की इसके लिए मैं किसी का एहसान नहीं लेना चाहता। मास्टरी की है आपके इलाके की सेवा की है, चोर-बाजारी नहीं की है, घूसखोरी नहीं की है, सौदेबाजी नहीं की है। और हाँ, आपको एक सूचना दे दूँ कि आपको मेरे लिए आगे से कष्ट करने की आवश्यकता नहीं है, मैं त्यागपत्र भेज रहा हूँ। मेरी नियुक्ति एक कालेज में हो रही है।

आपकी सम्पत्ति, आपके मान, आपकी प्रतिष्ठा की यश गाथा बहुत सुनी है तिवारी जी! मेरा अनुमान है कि आँखों में पानी रखने वाला कोई भी आदमी आपकी इस अर्जित मणिमाला के लिए लालायित

नही होगा। म एक गरीब मास्टर हूँ लेकिन मुझे अपनी शान बडी प्यारी है। आप, आपकी सम्पत्ति और प्रतिष्ठा तो मेरे जसे आदमी के लिए सडे गोबर से अधिक मूल्यवान नही है मने आपकी बेटी से प्यार किया है वह आपकी बेटी होकर भी आप से बिल्कुल अलग ह, पूजा के फूल की तरह पवित्र, सुगंधित और सुदर। म केवल उसे प्राप्त करना चाहता था अपने को दे कर लेकिन आपकी इच्छा से। जलील होकर आपके यहाँ म भीख माँगने नहीं आऊँगा लेकिन वह पजा का फूल उसी तरह मेरे मन्दिर में पडा महकता रहेगा, दूसरा फूल उसमें चढ नही सकता आजीवन।

आपका
उमाकात पाठक

शारदा पत्र पढते पढते कई उतार चढाव झेल चुकी थी और तरह-तरह की आशकाएँ उसके मन में चीखती रहीं। मास्टर के पत्र को पढ कर उसे अनुमान होता रहा कि पिता जी ने उन्हें कितना खराब पत्र लिखा होगा। लेकिन पत्र का अतिम हिस्सा पढते पढते वह फफक कर रो पडी और मास्टर जी के प्रति श्रद्धा, स्नेह और विश्वास से भर आई। मास्टर जी, मेरे मास्टर जी आजीवन मेरे हृदय देवता।'

'क्या है बहिनी ?'

शारदा ने पत्र चाची को सुना दिया। चाची तरह-तरह की भाव तरगों में उठती गिरती सुनती रही।

'मैं कहती थी न कि मास्टर जी एक जगह पर ठहर नही सकते। देखो वे कालेज में परोफेसर हो गए न। भाई जी ने कितना खराब पत्र लिखा ह मास्टर जी को, लेकिन मास्टर जी तो तुझे जीवन भर पूजा के फूल की तरह अपने मन के मन्दिर में चढ़ाये ही रहेंगे मेरी सारो।'

दोनों ने चिट्ठी बद कर दी।

शाम को दीनदयाल लौटे तो राहत की साँस लेकर बोले—'चलो चिंता दूर हुई।'

पास बैठे रामकुमार ने पूछा—'क्या हुआ बाबू जी ?'

'घरच्छा दे आया सरयवा का।'

'कहाँ बाबू जी ?'

'बहुत अच्छी शादी है रे, बड़ी मुश्किल से त हुई। लड़का डिप्टी कलक्टर है, बड़ा ही खूबसूरत और सब बहुत ठीक है।'

शारदा ने सुना तो कटे हुए पेड़ की तरह गिर पड़ी।

और दीनदयाल मास्टर जी का खत पढ़ कर सिर के बाल नोचने लगे। उन्हें रात भर बेचैनी बनी रही, ओह कैसे जवाब दूँ इस मास्टर के बच्चे को।

●

## : ३२ :

पानी बरसने लगा था। इस बार आषाढ चढते ही महसूस हो उठा। मौसम बडा सुहावना हो गया था। आकाश में हमेशा काले काले बादल तरते ही रहते थे। इसलिए खेतो की बोवाई पहले ही शुरू हो गयी थी।

सतीश खेत घूमने निकला था। वह देख रहा था कि चकबन्दी में जो खतो के बीच चौडा ग्राम मार्ग छोडा गया था, वह दुबक कर आधा हो गया ह। दोनो ओर के खेत वालो ने हारा-हूँसी में बढ-बढ कर रास्ते जोत लिए थे। यहाँ से वहाँ तक यही हाल था। यह हाल ह हमारे गाँव का। सामाजिक मगल की भावना इतनी क्षीण हो गयी ह, हे भगवान! कैसे उद्धार होगा?

'अबे साले दीखता नहीं ह, खेत में से गाडा ले जा रहा ह।'

'अरे गाली क्या देता ह रे अभागा, यह तो गाडी का रास्ता ह।' गाडीवान गुर्रा कर बोला।

गाडी का रास्ता कहाँ ह देख नही रहा ह कि खेत जोते गए ह।' दौलतराय तर्रा कर बोला। उसके साथ रामबहादुर भी लाठी लिए हुए था।

देख तो रहा हूँ लेकिन तरा गाँव कितना बडा अभागा ह कि सरकारी तौर पर छोडा हुआ गाँव का रास्ता भी जोत लिया गया ह। इतना बडा कमीना गाँव मने नहीं दखा कि सडक भी जोत लेता ह और सडक पर चलने वाले से झगडा करता ह।' झगडा हो रहा है। दौलतराय के खेत क दूसरी ओर रघुनाथ का खेत था उन्होंने भी बढ़ कर जोत लिया था। वे भी गाडीवान से तर्राने लगे।

गाड़ीवान के आगे खडे होकर ये लोग बडबडाने लगे। गाडीवान

बिगड कर बोला—'हे बाबा लोगो, मुझसे मत गुर्राओ, नहीं तो एक एक को पटक कर यहीं चूर चूर कर दूँगा।'

दौलत ने गाडीवान पर लाठी छोड दी। लाठी बिचल कर गाडी के बाँस पर लगी। गाडीवान लाठी लेकर कूद पडा और चिल्लाया जगपति हो, गुरदीन हो दौडो। ये सभी लोग पीछे वाले बगीचे में सुस्ता रहे थे। दौडे सब। और आते ही सारा हाल जान कर दौलत, राम बहादुर और रघुनाथ को पीटने लगे। दीनदयाल भी टहलते हुए आए—'क्या है, क्या है' गरजते हुए आगे बढे—गुरदीन ने लपक कर उनकी गरदन पकड ली और उठा कर फेंकते हुए कहा—'बहुत दिनो से मैं खोज रहा था तुम्हें पापी बाभन! तूने मेरे साथ धोखा किया था। सताइ बाबा का खेत धोखे में कटवा रहा था।' दीनदयाल गिर पडे तो गुरदीन ने आठ दस लात मारते हुए लाठी से उन्हें दूसरी ओर ठेल दिया। जग पतिया ने रघुनाथ को उठाकर फेंकते हुए कहा—'ये सभापति हैं इस गाँव के, कहाँ तक सुधार करेंगे, बढकर रास्ता ही जोत ले रहे हैं और रास्ता चलने वालों को गाली बक रहे हैं। और ई देखो दौलतिया का। ई छोटका महीपसिंह बना हुआ है। मार साले को। दौलत भागने को था कि पकड लिया गया। गाँव में हल्ला हो गया कि बाहर के गाँव वालो से मार हो रही है सभी लोग चुपचाप बैठे रहे, कौन जाए दौलत और रघुनाथ के लिए मार खाने।

अहीरों की बारात गयी थी सिहपुर से, उसमें जगपतिया और गुरदीन भी थे। बारात वापस लौटकर आ रही थी कि यह घटना घट गई। सतीश ने दूर से यह दृश्य देखा, लपका हुआ आया और हाँ-हाँ करने लगा। 'हटिए, सरपच साहब आप हटिए, इन बदमाशों से निबटने दीजिए इन लोगो ने गाडीवान को गाली दी है। बनते हैं बाभन और जोत लेते हैं सडक। दुनिया हम लोगों को गँवार गुरवा, चोर-डाकू समझती है लेकिन बाभनों से नहीं पूछती है कि ये क्या हैं ?'

दौलत राय उत्तर कर गाली देने लगा कि गुरदीन ने लाठा तानकर मारी। बीच में हाय-हाय करती फुलवा महेरिए आ गयी और भरपूर लाठी उसकी पीठ पर लगी वह 'हाय मइया मरी' कहती हुई जमीन पर गिर पड़ी।

'ई ससुरी कहाँ से बीच में आ गई। कहते हुए गुरदीन अफसोस करने लगा। 'मेरी लाठी औरतों के लिए थोड़े ही है।'

सतीश ने डाँटकर कहा—'गुरदीन और जगपति, तुम लोग यहाँ से चले जाओ, बहुत बुरा होगा अगर आगे झगड़ा बढ़ाया तो।

'अरे सरपंच साहब, झगड़ा हम कहाँ बढ़ा रहे हैं, हमारी गलती बताइए तो हम यहीं अपना सिर झुका कर सौ जूता खाने को तैयार हैं लेकिन हम डरपोक थोड़े ही हैं कि कोई ललकारे, गाली दे और मारे तो चुपचाप सहते रहें।

फुलवा उठाकर ले जाई गयी। दौलत गुर्राता रहा कि 'अभी पुलिस को बुलाता हूँ, तुम गुंडों की अकल दुरुस्त करता हूँ।'

'अरे अकल तो दुरुस्त कर दी मैंने महाराजा महीपसिंह की तुम्हारे जैसे कीड़ों फतिंगों में क्या रखा है?' गुरदीन, जगपति और उसके साथ के तमाम लोग चले गए।

रघुनाथ ने अदालत पंचायत में दावा किया जगपति और गुरदीन के खिलाफ।

सतीश ने दोनों पक्षों को बड़े गौर से सुना। उसने सड़क की नाप जोख के लिए चुपके से दरख्वास्त दे दी। और फैसला होने के पहले कुछ अधिकारी आये और सड़क की नाप-जोख करने के बाद फैसला किया कि सड़क दोनों ओर से आधी जोत ली गयी है बड़ा अद्भुत न्याय। उसने सारे सम्बद्ध लोगों का जुरमाना ठोंक दिया।

सतीश ने इस नाप जोख के बाद जो फैसला किया उसमें रघुनाथ

और दौलत को ही झगडा करने का दोषी ठहराया, लेकिन चेतावनी देकर सबको छोड दिया।

गाँव के लोग सतीश से नाराज हो गए। सभी सोचने लगे, बडा उलटा आदमी है यह। गाँव का पक्ष लेना तो दूर रहा, पूरे गाँव की बेइज्जती कराता है, जुर्माना कराता है और हमेशा गाँव के खिलाफ फसला करता है अगले चुनाव में इसको वोट तो नही ही देना है। इससे अच्छे तो दीनदयाल ही होते, गाँव का पक्ष तो लेते।

फसले के बाद एक दिन सतीश रात के झुटपुटे में जब गाँव के बाहर वाले बागीचे से गुजर रहा था तो किसी ने पेड की आड में छिपकर गडासे से वार किया। गडासा गरदन पर तो नही लगा, फिसल कर उसकी बाईं बाँह पर लग गया। सतीश जोर से डपटा—कौन है पकडो पकडो। दो एक राही पीछे से आ रहे थे, हल्ला करते हुए दौडे और पेडों की आड लेते हुए दो आदमी भागे।

सतीश ने झटके से गडासा बाँह में से निकाला। खून का फौआरा छूट चला। राही सब उसे पकड कर घर लाए। आसपास के लोग जुट आए और इस घटना से स्तब्ध से टीका टिप्पणी करने लगे।

कुछ लोगों ने सुझाव दिया कि अस्पताल जाना चाहिए। सतीश ने कहा— नही अस्पताल वास्पताल जाने की क्या जरूरत?

उसने देहाती ढग से मरहम पट्टी करवा ली और खाट पर लेट गया।

× × ×

बिरजू साफ-साफ छूट गया और बलई को आजीवन कारावास हो गया।

बाबू महीपसिंह पर गोरखपुर के बनिये की डिग्री हो गई। एक लाख का, सुना है महीपसिंह की जमीन कुर्क होने वाली है लेकिन नह होगी। चन्द्रकात कहता है कि उनकी पहुँच मुख्यमत्री तक है तो

कोई रास्ता निकालेगा ही। हाँ, अगले चुनाव के लिए उन्हें टिकट जरूर मिलेगा, ऐसी चर्चा लखनऊ में है। जगपतिया उन्हें दाँव पर खोजता फिरता है, यह बड़ा नेता होकर रहेगा। महीपसिंह भी उसे दाँव पर लगायेंगे, जरा एम० एल० ए० तो हो जाएँ। रमधनिया अब उन्हें बिल कुल उधार नहीं देता, उसे भी दाँव पर चढ़ायेंगे। एम० एल० ए० तो हो जाएँ। फिर सारे बिखरे हुए, बिछुड़े हुए चोर-गुंडे उनके यहाँ आने लगेंगे फिर समझेंगे एक एक से।

मास्टर सुग्गन दौड़ते ही रह गए उनके पीछे-पीछे, लेकिन दिनेश मास्टर नहीं हो सका। 'हूँ मेरे कहने पर भी सुग्गन मास्टर बलई और बिरजू के खिलाफ गवाही नहीं देने गए न। अच्छा तो समझें।' महीपसिंह गुर्राते हैं।

और मास्टर सुग्गन को तबादले का आदेश मिल गया। तराई के एक बीहड़ इलाके में उन्हें जाना है घर से पन्द्रह कोस दूर। बाप रे, सुग्गन मास्टर सिर पीट रहे हैं।

पानी बरस रहा है, टूटा छाता काँख में दबाये, झोले में कुछ बरतन कंधे से लटकाये, चमरौधा जूता पहने, गन्दी गाधी टोपी लगाए मास्टर सुग्गन ओसारे में खड़े हैं, जमुना भौजी और दिनेश पास खड़े हैं, तीनों की आँखों में आँसू भरे हैं।

'अच्छा चलूँ, घर देखना मालता, भगवान मालिक है।' भर्राये गले से सुग्गन मास्टर बोलते हैं और छाता थाम लेते हैं, एक बार फिर जमुना और दिनेश की ओर देखते हैं फिर पानी में उतर पड़ते हैं। जमुना भौजी और दिनेश रो रहे हैं।

'बसी भइया आए, बसी भइया आये' लड़के हल्ला करते हैं। अरे बसी भइया की तो एक बाँह ही गायब है। आँखों में बड़ी गहरी व्यथा है। घर में हाहाकार मच जाता है बसी महावीर से लिपट कर

फफक कर रोता है—सलोना चिग्घाडती है—हाय दइया यह कइसे हुआ, कब हुआ ? आपने तो कुछ लिखा ही नहीं। आप कहते हैं कि दो-तीन महीने पहले ही बाँह कट गयी थी तो घर चिटठी क्यों नही लिखी हे भगवान्, सारी विपत्ति हमारे ही सर पर आएगी। बसी सलोना के पास चारपाई पर बठा-बैठा आँसू बहाता है। महावीर तख्ते पर बठे-बठे ऊब जाते हैं तो उठकर खेत की ओर चले जाते हैं हे ईश्वर ! एक उदासी पूरे घर को लील लेती ह।

× × ×

पेंकू बाबा के घर की एक दीवार बारिश में गिर गयी है लेकिन उनके यहाँ नगाडा बज रहा है और गुड का प्रसाद बँट रहा ह—हाँ, वकील साहब ने पाँच साल बाद वकालत का पहला दर्जा पास किया है वकील साहब रुआब लेकर चारपाई पर बठे हैं पतलून पहने हुए। पेंकू बाबा लोगो को प्रसाद बाँट रहे है, लोगो से बात कर रहे हैं लेकिन वकील साहब सिर नीचे गडाए हुए हाथी की तरह झूम रहे हैं किसी की ओर क्यों देखें, कौन है उनकी बराबरी का ?

× × ×

शारदा बीमार ह। उसका भाई बीरबहादुर बहुत दिना पर कहाँ कहाँ स घूम कर लौटा ह। बडे-बडे बाल हैं उसके, लचक कर चलता ह ऐंठ कर बोलता है। दीनदयाल कहते हैं कि बाबू यह बाल कटा डालो। क्या नचनियो की तरह बाल बढ़ा रखे हैं ?

'अरे बाबूजी आप नचनिया कहते हैं ? मुझे कलाकार कहिए, नाटक-कार कहिए, अभिनेता कहिए—नचनिया-वोचनिया क्या ?'

वह बताता है कि वह नाटक में काम करता रहा है, वह बहुत बडा कलाकार होकर लौटा ह। यह जवार तो ऐसा मूरख ह, पिछडा हुआ ह

कि कला की कोई कीमत ही नही जानता। अभिनेता को, नर्तक को नचनिया कहता है, वह लौटा है इस जवार का उद्धार करेगा। एक मंडली तैयार करेगा।

दीनदयाल सिर पीट लेते हैं, यह साला नालायक निकला सो निकला ही, अब नाच-मंडली बनायेगा और मेरी नाक कटायेगा।

दीनदयाल उसे डाँटते हैं कि नाच फाँच को झंझट में पड़ेगा तो बहुत बुरा होगा।

बीर बहादुर हँसता है—'आप कुछ नही समझते बाबूजी, नाटक का बड़ा सम्मान होता है दूसरे प्रांतो में। मैं तो बंगाल, उड़ीसा, आसाम गुजरात, मद्रास सभी घूम कर आ रहा हूं। यही एक अभागा प्रांत है जहाँ कलाकार को नचनिया कहा जाता है। मैं इस जवार का उद्धार करूँगा। ऐसे-ऐसे नाटक खेलूँगा कि लोगो के दिलो में उजाला फूटेगा।'

और दीनदयाल के लाख विरोध करने पर भी वह अपने गाँव में तथा आसपास के चमारों के लौंडो को इकट्ठा कर मंडली बना रहा है। वह नाटक खेलेगा, लोगो के दिलो में उजाला फूंकेगा।

चारों ओर हल्ला है कि बीरबहादुर चमारो की नाच मंडली तयार करा रहा है। किसी ने यह भी व्यग्य किया कि शारदा की शादी मे लड़केवालों की ओर से दीनदयाल भाई को नाच-बाच साजने की जरूरत नही पड़ेगी। अब तो उनके घर ही नाच-मंडली तैयार है। दीनदयाल इन दिनो बहुत थके हारे से दीखते है। दोनो लड़के नालायक निकल गए एक तो नाक ही कटा रहा है रही एक लड़की—उसका आशाओं का केन्द्र, सो बीमार पड़ी है दिन दिन हालत बिगड़ती जा रही है क्या करे वह ? शारदा कुछ बोलती नहीं, मूक पशु की तरह आँखो में व्यथा भरे ताकता रहती है। डाक्टर साहब आये थे, निदान करने के बाद बोले—'कोई सदमा पहुँचा है दवा लिख दे रहा हूँ लेकिन याद

रखिएगा कोई चोट पहुँचाने वाली बात इसे न सुनाइएगा, नहीं तो जान भी जा सकती है।'

चोट कहाँ पहुँचाई है इसे मैंने कभी। मैंने आँखों की पुतली की तरह पाला है इसे। इतने बड़े अफसर से शादी कर रहा हूँ इसकी, इतना दान-दहेज भी देने को तयार हूँ लेकिन लगता है इसका मन मास्टर में ही रमा हुआ है। शादी होने के बाद नया घर बर पाएगा तो इस टुच्चे मास्टर को भूल जायेगी।

'माई रे।' शारदा कराहती है।

'क्या है बेटी, कैसा जी है?' दीनदयाल पूछते हैं।

शारदा उनकी ओर व्यथा भरी आँखों से देखती है जैसे गाय कसाई को देखती है। दीनदयाल दहल जाते हैं। नये घर बर को पाकर सुखी होगी, भूल जाएगी मास्टर को। लेकिन अगर सचमें से शादी के साथ ही चल बसी तो तो तो-ओ ओ दीनदयाल की आत्मा काँप उठे। उन्होंने मन ही मन कुछ निश्चय किया और शारदा को सुनाते हुए बहू से बोले—'देखो बहू, कुछ सीधा ऊधा बाँध दो, मैं बड़ी सुबह मास्टर के घर जाऊँगा और हाँ, नाई के लिए थोड़ा सत्तू पिसान भी तयार कर देना, उसे डिप्टी साहब के घर भेजना है, मना करने के लिए। दस बीस रुपए बरच्छा के डूबेंगे तो डूबें, अपनी लड़की तो नहीं न डुबाऊँगा।'

बहू जहाँ की तहाँ विस्मय और खुशी से खड़ी रह गई। शारदा अविश्वास भरी आँखों से बाप की ओर देखने लगी।

दीनदयाल ने शारदा को डाँट कर कहा—'इस तरह क्या ताकती है रे पगली—मैं बाप हूँ, अपना लड़की की खुशी पर अपनी खुशी थोड़े लाद सकता हूँ। सच, मैं कल मास्टर के यहाँ जा रहा हूँ लड़की का बाप बन कर।'

शारदा के फीके ओठों पर हलकी-हलकी मुसकराहट आई और लजा कर दूसरी ओर देखने लगी।

दीनदयाल चले गए तो वह मारे खुशी के हलके-हलके सिसकने लगी।

चाची दौड़ी हुई आई—'अरे रोती ! रे पगली, उठ आज तुझे दुल्हन की तरह सजाऊँ, तेरे बिखरे हुए केश सुलझाऊँ, पाँवों में मेंहदी रचाऊँ, उठ नाच ।'

शारदा कमजोर बाँहों का सहारा लेकर खाट पर बैठ गई और धीरे धीरे चाची के सिर को पकड़ लिया और उसके गालों को चूमने लगी।

'दुर पगली, ये क्या कर रही है—अरे तेरे ओठ तो किसी और के लिए हैं, उन्हें यहाँ क्या जूठा कर रही है ?'

शारदा हँसने लगी। धीरे से बोली—'चाची नाच-गा तो नहीं सकती हाँ जरा मेरे उलझे बाल तो सुलझा देना और साफ धुले कपड़े ला देना और और और जरा, बिंदिया लगा देना।'

'और और '

'और कुछ भी नहीं चाची ! आज मुझे सब मिल गया' और वह चाची से लिपट गई।

चाची भीतर से कहीं उदास हो आईं, 'ओह कितने साल हो गए उन्हें बका गए हुए, पता नहीं कितने साल बाद आयेंगे ! वह बंजर भूमि की तरह पड़ी-पड़ी बादल के आने की राह देख रही है, देखती रहेगी। कितने दिनों बाद किसी ने मेरी देह को बाँहों में भरा है। लेकिन ऊपर से उच्छलित होती हुई शारदा को बाँहों में कसे हुए मुसकराती रही।

बड़े लड़के ही दीनदयाल मास्टर के घर की ओर चल पड़े। गाँव का सिवान पार करते ही एक आवाज की तड़प सुनाई पड़ी—

'कौन हो तुम ?'

मैं हूँ दीनदयाल, तुम कौन हो ?

'मैं हूँ बिरजू।'

दीनदयाल सिर से पैर तक कांप उठे—पता नहीं, आज क्या संयोग है ?' लेकिन खुशामद के स्वर में बोले—'अच्छा-अच्छा, बिरजू भाई तुम हो। बड़े सवेरे निकले हो कहाँ के लिए।

'हाँ, और तुम भी तो निकले हो। लगता है मेरी तुम्हारी मुठभेड़ जिन्दगी के हर मोड़ पर लिखी हुई है। कहाँ जा रहे हो दीनदयाल ?'

अरे भाई जा रहा हूँ बेटो की शादी खोजने।' इस सन्नाटे में दीन दयाल की आवाज कांपती हुई खो गई।

'अच्छा तो यह और भी अच्छा है, मैं भी जा रहा हूँ अपनी शादी खोजने। चलो साथ ही चलें।' दीनदयाल सकपकाये। बोले—'अरे चलो भाई, रास्ते सबके लिए हैं साथ रहोगे तो और मुँहबोलारो रहेगा।'

दीनदयाल भयभीत थे, सोचते थे किसी कदर यह सन्नाटा कटे, सुबह होने पर देखा जाएगा।

दीनदयाल के पीछे-पीछे बिरजू चलने लगा और बोला—'रास्ते तो सबके लिए हैं दीनदयाल, लेकिन कुछ लोग समझते हैं उन पर चलने का हक उन्हीं को है, दूसरे चलने वालों को हमेशा अलगी लगाया करते हैं।

दीनदयाल ने डरते हुए कहा—'मैं समझा नहीं।'

बिरजू ने पीछे से जोर की अलगी मारी और दीनदयाल भहरा कर गिर पड़े। उनका पडानुमा झोला दूर जा पड़ा, पगड़ी उधर गिर पड़ी। वे चिल्लाये, अरे रे ये क्या करते हो ?'

बिरजू दीनदयाल की छाती पर चढ़ बैठा और बोला—'वही कर रहा हूँ जो तुम औरों के साथ करते आये हो।'

उसने दीनदयाल का गला दबा दिया और दो थप्पड़ उनके गालों

पर जड दिया। गुर्रा कर बोला—'दिनदयाल, तुझे आज जिन्दा नही छोडूँगा।

दीनदयाल गिडगिडाये—'अरे भाई छोड दो, बेटी की शादी के लिए जा रहा हूँ। बेटी सबकी बेटी होती है।'

बिरजू गुर्राया—यह तू कह रहा है दीनदयाल—तूने मेरा घर उजाड दिया, तेरे कारण मेरी माँ मरी, बाप मरा, हम अनाथ हो गए, म जेल गया मेरी बीवी हाथ से चली गई मेरे बडे भाई की बेइज्जत कराया और गाँव के हर एक आदमी के साथ तू धोखा धडी करता है, तू नही जानता ह कि मैं अपने दिल के भीतर कितनी भयकर आग लिए फिरता हूँ, अगर तुझे नही मारा तो यह आग मुझे ही खा जाएगी। तू नही जानता कि म अपना सब कुछ खोकर भीतर से सूना हो गया हूँ। अभागे, तेरे कारन बहुत से घर उजड़े हैं और उजडेंगे, आज मैं तुमसे एक एक हिसाब माँग रहा हूँ।' उसने फिर दीनदयाल के गालो पर दो तमाचा मारा और धीरे धीरे एक चमकता हुआ छुरा निकाला। अँधेरे में कुछ लपलपा उठा। दीनदयाल के प्राण टँग गए, घिघियाये—देख बिरजू, मुझे मरने की चिन्ता नही है भाई, लेकिन मैं बेटी की शादी के लिए जा रहा हूँ। बेटी सब की बेटी होती ह, भइया उससे क्यों बदला लेते हो।' तुझे मेरी बेटी की कसम जो छुरे से वार किया। मेरे बाद मेरी बेटी का क्या होगा भाई, सोच ले।

'बेटी सबकी बेटी होती ह, ठीक कह रहा है दीनदयाल तू। तूने बेटी का कसम दिलाई ह। मुझे सरधा बेटी की कसम दिलाई ह। बेटी सबकी बेटी होती ह हाँ, तेरे बाद उसका क्या होगा? जा फिर तू छूट गया। सरधा बेटी के भाग से छूट गया, फिर मेरी आग जलती हुई मुझे चबायेगी म किसी लडकी का सुहाग नही छीन सकता, किसी का सुख नही लूट सकता। म जानता हूँ दरद क्या हाता ह, अभाग्य क्या होता है नही म किसी लडकी का भाग्य और सुख नहीं

छीन सकता। जाओ दीनदयाल, मेरे बेटी की शादी कर आओ।'

धीरे धीरे विरजू की वाणी भीग गई। दीनदयाल धूल झाड कर चलने को हुए तो विरजू ने फिर गरज कर कहा—'सुनो दीनदयाल, मैं तुम्हें जिन्दा नहीं छोड़ूँगा, शादी-वोदी कर लो तो तुमसे फिर मिलूँगा, मैं तुम्हें कभी माफ नहीं कर सकता।'

दीनदयाल जल्दी-जल्दी पाँव बढाते हुए चले गए। उजाला फूटने लगा था। विरजू लौट आया।



## : ३३ :

पानी लगातार बरस रहा है। गाँव के चारों ओर दलदल भरी मिट्टी गल-गल कर बह रही है। सतीश का घाव क्यों का त्यों है। रमधनिया बनिया अस्पताल से डाक्टर को पकड़ लाया है।

डाक्टर घाव देखते हैं, चिंतित होते हैं। इतने दिन का घाव हो गया और मुझे अब बुलाया गया है। सतीश ने डाक्टर से कहा—'ऐसे ऐसे घाव तो देहात में लगते रहते हैं डाक्टर साहब, सबके लिए डाक्टर कहाँ रखे हुए हैं और मने तो अब भी डाक्टर की आवश्यकता महसूस नहीं की थी।'

रमधनिया ने व्याकुल होकर कहा—'आपने नहीं महसूस की तो क्या हुआ दूसरों ने की न। आपकी जिन्दगी आपके लिए नहीं है हम सबके लिए है।'

डाक्टर ने पट्टी बाँध कर कहा—'घाव खराब हो गया है लेकिन खास चिन्ता की बात नहीं उम्मीद है कि अच्छा हो जाएगा लेकिन इस पर लगातार पट्टी बँधनी चाहिए इन्जेक्शन लगना चाहिए और जो दवा लिख रहा हूँ उसका सेवन होना चाहिए।'

'छोड़िए डाक्टर साहब, अब इतनी झंझट कौन पाले हर घाव के लिए।'

आप चुप रहिए बाबा सब हो जाएगा।

सतीश डाक्टर के जाते समय अपने फटे कुरते की फटी थैली में झूठे हाथ डाल कर कुछ टटोलने लगा। रमधनिया ने हाथ से संकेत करते हुए कहा—'बाबा चिन्ता न कीजिए सब हो जाएगा। डाक्टर रोज आएगा आपको चुपचाप ऐसे ही लेटे रहना है।'

'नहीं रामधनी, ऐसा कभी नहीं हो सकता, आगे से डाक्टर कभी नहीं आएगा। मेरे पास इतने पैसे नहीं हैं।'

बाबा पैसे की चिंता क्या करते हो?' रामधनिया गिडगिडा कर बोला।

'देख रामधनी, म तुम्हारा पैसा स्वीकार नहीं कर सकता। मने हमेशा फसला तुम्हारे पक्ष में किया है क्योकि सत्य तुम्हारे पक्ष में दिखा ह। अब लोग कहेंगे कि दोनो मे साँठ-गाँठ थी, मैंने तुम्हारे पक्ष में फसला किया और तुमने मेरे लिए रुपये खच किए। नही, मैं याय को बदनाम नही कर सकता।'

'बाबा, आप मुझसे पैसे उधार ले लीजिए जब सुविधा हो तो द दीजिएगा तब तो कोई नही न कहेगा, लेकिन डागडर आपके लिए आएगा आप चाहे जो भी कहें।

'नहीं, रामधनी उधार चुकाने को मेरे पास पैसे नही और जो चीज। मेरे पास नही होती उसका उपयोग करने की हविस मुझे नही होना म कज खाकर मरना नही चाहता।'

'राम राम, बाबा, ऐसी अशुभ बात मुँह से क्यों निकालते हैं? अभी तो आपको कितने बरस जीना है, अपने लिए नहीं तो गरीब जनता के लिए, इसाफ के लिए। और इस घाव में क्या लगा ह? डागडर साहब ठीक कर देंगे। डागडर लोग ऐसे ही दुविधा की बोली बोलते हैं।' रमधनिया रोती आवाज में बोल रहा था।

सतीश मुसकराया। 'हाँ', 'ना' कुछ भी नही बोला।

'आपको चोट इन्साफ के लिए लगी ह सबका फरज होता ह कि वे आपकी सेवा करें। लेकिन यह गाँव बडा अजीब ह बाबा। किसी को आपके पास आने की फुरसत नहीं है।'

'यही गाँव नहीं, सारे बडे आदमियों के गाँव इसी तरह टूट रहे ह। किसी को, किसी को दरतन सुनने की फुरसत नहीं है। खैर, इसका मुझे किसी से गिला नहीं।

'अच्छा बाबा मैं चलता हूँ, मेरे लायक कोई सेवा हो तो जरूर कहिएगा। और सुनिये डाक्टर रोज आयेगा। आपकी फीस नहीं लगेगी।

सतीश चुपचाप मुस्कराता रहा। गुरनैन आया, जगपति आया, गाँव के हरिजन, नाऊ, धोबी, तेली आये, भाटपार के लोग आये, मास्टर लोग आये, पुलिस चौकी के लोग आये लेकिन तिवारीपुर के तिवारियों के लिए इस घटना का कोई महत्व नहीं था।

सतीश फटी धोती और फटा कुरता पहने नंगी चारपाई पर लेटा था। घाव में दर्द होने से कभी-कभी कराह उठता था। पत्नी बीच बीच में आ-आकर देख जाया करती थी। सतीश उसे देखता था—पैबन्द लगी साड़ी में सुन्दर। वह सतीश के लिए चिंतित-सी दिनरात एक किये था। धीरे धीरे अभाव उसके घर में फैलता जा रहा था। बाढ़ से मकान का वह हिस्सा जो बन नहीं पाया था, बरसाती पौधों से भर गया था। खेती बारी में भी कुछ खास हो नहीं रहा था, बाहर की कोई आमदनी नहीं है।

उसके लड़के का रिजल्ट निकल चुका था तीसरी बार इन्ट्रेंस में फेल हुआ था। इतना गदहा लड़का उसका हो, इसकी कल्पना नहीं कर पाता था वह। यही इस खानदान की रोशनी है? क्या होगा उसके बाद? कोई बात ही नहीं समझता है, और नहीं तो समझाने पर झगड़ा करता है। ठीक ही कहा गया है, जो आदमी कहीं सर नहीं होता वह अपनी संतान से सर होता है। ऐसे बेवकूफ और झगड़ालू को तो गाँव वाले दिन-दहाड़े बरबाद कर देंगे। कैसे गाड़ी चलेगी राम! बेटी ब्याह के लायक हो रही है, अभी घर में कोई इन्तजाम ही नहीं। देह पर ढंग के कपड़े भी तो नहीं मिल पाते बेचारी को। पिताजी आह इस बुढ़ौती में भी उन्हें चैन नहीं मिला। कई दिनों से गये हुए हैं मामा के यहाँ अभी तक खेत नहीं बो गये। बीया का इन्तजाम करने गये हैं। देर हो गयी उनके आने में। लगता है इंतजाम होने में देर हो रही है।

आह कितना बेबसी है ? गोरखपुर से एक साहित्यिक समारोह का निमन्त्रण आया था लेकिन वे वहाँ नहीं जा सके।

घाव में दर्द होता है, सतीश कराह उठता है।

'कैसी तबियत है बाबा ?' जग्गू हरिजन पूछते हैं।

'आओ जग्गू ठीक ही है, यही घाव जरा रह रह कर टीस रहा है। डाक्टर मरहम पट्टी तो कर गए हैं और सूई भी दे गए हैं।'

'अरे बाबा ई कोई गाँव है ? आप जइस देवता को भी मारने में राछस को तकलीफ नहीं हुई।

'ठीक है जग्गू, मैं तो जो भोग रहा हूँ वह भोग ही रहा हूँ लेकिन चिन्ता इस बात की है कि गाँव का क्या होगा ? क्या इसी गाँव की कल्पना गांधीजी ने की थी ? हम, तुम आज हैं कल नहीं रहेंगे लेकिन इस गाँव का क्या होगा ? ऐसे ही अनेक गाँवों का क्या होगा ? हे प्रभु !

'बाबा, सुना आपने, जो बाँध सरकार ने बनवाया था वह जगह-जगह से कट रहा है। नदी का पानी बढ़ रहा है और बाँध को तोड़ तोड़ कर यहाँ-वहाँ से बह रहा है। लगता है इस साल बाढ़ पहले ही आयगी।'

सतीश चुप रहता है, फिर बोलता है कि तुम लोगों का क्या बहेगा जग्गू ? कौन तुम लोगों के पास खेत है। आजादी मिले इतने साल तो हो गए, लेकिन गांधी का सपना कहाँ पूरा हुआ ? ओह पूरा देश खाने पीने में लगा है पता नहीं क्या होगा ?

'ठीक है बाबा, हम लोगों के पास खेत नहीं है लेकिन हमारी खुश हाली भी तो गाँव की खुशहाली के साथ जुड़ी हुई है। मालिकों के खेत बह जायेंगे तो हरिजन भाइयों को जो खाने पीने का कहाँ से मिलेगा ?'

सतीश अनुभव करता है कि जग्गू की यह भाषा कितने साल पुरानी है, कई बार वह यह भाषा सुन चुका है। मालिक और नौकर की भाषा आज भी टूट नहीं सकी है।

'आह !

'घाव में दरद हो रहा है बाबा !'

'हाँ थोड़ा-थोड़ा हो रहा है भाई, ठीक हो जाएगा।'

बाँध जगह-जगह से टूट रहे हैं और पानी बिखरता हुआ फैल रहा है। न यह पानी रुकने में है और न एक साथ एक धारा के रूप में बहने में सतीश सोच रहा है—इस जवार का जीवन भी तो जल ही है लेकिन पहले एक साथ बहता था, बाढ़ में उमड़ता था, तब साथ गर्मी में सूखता था एक था। अब तो नये-नये बाँध बँध रहे हैं उस जल के किनारे ये बाँध भी पोल्ता नहीं हैं, जगह-जगह से दरक जाते हैं। जहाँ से देखते हैं थोड़ा पानी बह जाता है, थोड़ा कहीं और दरकता है तो कुछ पानी और बह जाता है दूसरी दिशा को। और ये पानी कहीं मिल नहीं पाते, विपरीत या समानांतर धाराओं में बहते ही चले जाते हैं हाँ टूट रहा है यहाँ का जल, टूट रहा है। धारा धारा में बिछुड़ रही है लहरें लहरों से टूट रही हैं, बाँध बँध रहे हैं लेकिन पोल्ता नहीं, जो जल को संयत कर एक दिशा में प्रवाहित करें और उनमें से शक्ति उजागर करें, बाँध जगह-जगह दरक रहे हैं और जल टूट रहा है, टूट रहा है।

'क्या टूट रहा है बाबा।' हड़बड़ा कर जगू पूछता है।

सतीश मुसकराता है 'नहीं जगू, मैं एक बात सोचते सोचते बोल गया।'

मैं तो घबरा गया बाबा।' जगू के स्वर में अब भी भय था।'

'आह् !' सतीश लेट गया।

'बाबा, चन्द्रकान्त बाबू आ रहे हैं। जगू ने खुशी से कहा।

कहाँ ?'

तब तक चन्द्रकान्त ने आकर सतीश के पाँव छुए।

'अरे यह क्या भइया, यह क्या हो गया और आपने मुझे बताया तक नहीं।

नहीं रे, थोड़ा सा घाव लग गया इसके लिए तुम्हें क्या लिखता ? सतीश आह को दबा कर बोला—फिर पूछा 'कहो अपने समाचार कहो।'

'समाचार ठीक है भइया, मेरा चुनाव आई० ए० एस० में हो गया।'

'भाई!' सतीश ने उठ कर चन्द्रकान्त को बाहों में भर लिया और खुशी से चीख सा उठा—'अब मुझे कोई चिंता नहीं। आज मेरी सारी मुराद पूरी हुई, मैंने बहुत कुछ खोया है लेकिन आज जितना पाया है वह अपार है मैं चाहता रहा तुम महान बनो और और, आह!'

'क्या है भइया?

'कुछ नहीं, यही घाव है कभी-कभी दुख जाता है।'

चन्द्रकान्त को बाँहों में भर लेने से सतीश के घाव पर दबाव पड़ा था और कुछ खून निकल आया था।

'आप लेटिए भइया, आपकी हालत इतनी नाजुक है और आपने मुझ सूचित तक नहीं किया।'

'क्या करता रे, तेरी परीक्षा खराब करता, अपनी बाँह के घाव का समाचार देकर? अब तो मैं मर भी जाऊं तो मुझे चिंता नहीं है आह!

'भइया!' चन्द्रकान्त चीख कर बोला—'ऐसी अशुभ बात क्या मुँह से निकालते हैं। आपके बिना मुझे रास्ता कौन दिखायेगा आप आप ऐसी बात मत बोलिए।'

सतीश हँसा—'चिन्ता मत कर पगले, मैं कहाँ मर रहा हूँ, डाक्टर आज आया था, कल फिर आएगा फिर आयेगा, और सबसे बड़ डाक्टर तो तुम आ गए हो मैं कहाँ मर रहा हूँ?

'पिताजी कहाँ हैं भइया?'

'वे मामा के यहाँ गये हैं।'

'अमलेसो बाबा की बान नहीं गयी नताइत करने की, अब ई काम-धाम का बखत नताइत करने का है? इहाँ सतीश बाबा पड़े हुए हैं उहाँ ऊ नताइत कर रहे हैं।' जग्गू हरिजन ने खैरख्वाही जताते हुए कहा।

चन्द्रकान्त ने जग्गू को एक विचित्र दृष्टि से देखा और सतीश सोचने लगा, कितनी बड़ी विडम्बना है पिताजी के जीवन की कि जग्गू हरिजन

जसे लोग भी उन्हें नालायक समझते हैं। काश, कोई पिताजी के चिर शान्त और हँसते हुए चेहरे मे भीतर की व्यथा को पहचान सका होता, उनकी महानता की एक झलक भी देखी होती। आह, उन्हें मैं कोई सुख नही दे सका। इस बुढ़ौती में भी वे क्या-क्या भोग रहे हैं और लोग उन्हें निकम्मा समझते ह। आह, भीतरी जिन्दगी को कोई नही देखता, लोग बडी-बडी घटनाओ को देखते हं, बाहरी सफलताओ का देखते ह, अखबारो में उछलते नामो को देखते ह, आदमी के भीतर बहुत शुद्ध जीवन को कोई नही देखता पिताजी ।

सारे गाँव में हल्ला हुआ कि चन्द्रकान्त कलट्टर होकर आया ह, कितने लोग अविश्वास से बोले 'एँ', कितने लोगों ने कहा झूठ है, कितने लोग विस्मय से दौडे हुए सतीश के घर की ओर आये कि देखें कल्ट्टर कसा होता ह।'

सतोश के यहाँ काफी भीड लग गई।

सतीश ने व्यग्य से लोगा से कहा, 'भाइयो, म जिन्दा हूँ घबडाने की काई बात नहा, डाक्टर कल फिर आएगा। और हाँ, जिसे तुम लोग विस्मय से देख रहे हो वह चन्द्रकान्त ही ह—इस गाँव के लिए हमेशा चन्द्रकान्त ही बना रहेगा, जिस दिन इस गाँव म वह कलट्टर होकर लौटेगा म समझूगा मेरा भाई मुझसे छिन गया।'

चन्द्रकान्त ने भाई का पाव पकड लिया—'आशीर्वाद दीजिए मुझमें हमेशा यह शक्ति बनी रहे।'

सतोश का आँखो से आँसू झर-झर कर चन्द्रकान्त के सिर पर बर सते रहे। और भीतर से उठती हुई आह को दबा कर उसके ओठ हँसी से भीगते रहे।



# शुद्धि-पत्र

| पृष्ठ | पंक्ति | अशुद्ध | शुद्ध |
|---|---|---|---|
| १४ | ४ | कम्युनिस्ट | सोसलिस्ट |
| ३०८ | ८, १० | दलसिंगार | दीनदयाल |
| ३४७ | १० | डाँडी | डाँटी |
| ३५१ | २० | खींचो | खिंचो |
| ३६७ | १४ | ब्राह्मण-ब्राह्मण | ब्राह्मण-अब्राह्मण |
| ३७१ | १६ | कर ही | कर नहीं |
| ४०८ | १९ | पूजा | भूजा |
| ४६५ | २२ | दलसिंगार | डलवा |
| ४६७ | ३ | सिंह जी | श्रीमान जा |



## शुद्धि-पत्र

| पृष्ठ | पंक्ति | अशुद्ध | शुद्ध |
|---|---|---|---|
| १४ | ४ | कम्युनिस्ट | सोसलिस्ट |
| ३०८ | ८, १० | दलसिंगार | दीनदयाल |
| ३४७ | १० | डीडा | डींटी |
| ३५१ | २० | सींची | सिंची |
| ३६७ | १४ | ब्राह्मण-ब्राह्मण | ब्राह्मण-अब्राह्मण |
| ३७१ | १६ | कर ही | कर महा |
| ४०८ | १६ | पूजा | भूजा |
| ४६५ | २२ | दलसिंगार | डलवा |
| ४६७ | ३ | सिंह जी | श्रीमान् जी |

